प्रकाशित ग्रंथ

...व्यवस्था—लेखक, मिस्टर अब्दुल्लाह ...।

..., रायबहादुर महामहोपाध्याय पंडित ...

...टर गंगानाथ झा, एम्० ए०, डी०

...मौलाना सैयद सुलैमान साहब नदवी।

... डाक्टर बेनीप्रसाद, एम्० ए०, पी-एच्० डी०, डी० एस्-सी० (लंदन)। मूल्य ६)

जंतु-जगत—लेखक, बाबू ब्रजेश बहादुर, बी० ए०, एल्-एल्० बी०। सचित्र। मूल्य ६॥)

गोस्वामी तुलसीदास—लेखक, रायबहादुर बाबू श्यामसुंदरदास, और डाक्टर पीतांबरदत्त बड़थ्वाल एम्० ए०, डी० लिट्०। सचित्र। मूल्य ३)

सतसई-सप्तक—संग्रहकर्ता, रायबहादुर बाबू श्यामसुंदरदास। मूल्य ६)

चर्म बनाने के सिद्धांत—लेखक, बाबू देवीदत्त अरोरा, बी० एस्० सी०। मूल्य ३)

हिंदी सर्वे कमेटी की रिपोर्ट—संपादक, रायबहादुर लाला सीताराम, बी० ए०। मूल्य १॥)

सौर-परिवार—लेखक, डाक्टर गोरखप्रसाद, डी० एस्-सी, एफ्० आर० ए० एस्०। सचित्र। मूल्य १२)

अयोध्या का इतिहास—लेखक, रायबहादुर लाला सीताराम, बी० ए०। सचित्र मूल्य ३)

प्रयाग-प्रदीप—लेखक, श्रीयुत शालिग्राम श्रीवास्तव, मूल्य सजिल्द ४); बिना जिल्द ३॥)

विज्ञान हस्तामलक—लेखक, श्रीयुत रामदास गौड़ एम्० ए०। सचित्र। मूल्य सजिल्द ६॥); अजिल्द ६)

संत तुकाराम—लेखक, डाक्टर हरिरामचंद्र दिवेकर, एम्० ए०, डी० लिट्० (पेरिस); मूल्य सजिल्द २); अजिल्द १॥)

यूरोप की सरकारें
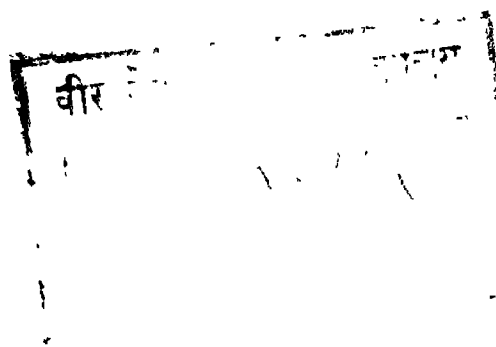
यूरोप की सरकारें

श्रीचंद्रभाल जौहरी

इलाहाबाद
हिंदुस्तानी एकेडेमी, यू० पी०
१९३८

प्रकाशक
हिन्दुस्तानी एकेडेमी, यू० पी०
इलाहाबाद

मूल्य } कपड़े की जिल्द ३॥)
साधारण जिल्द ३)

मुद्रक—रामनरेश त्रिपाठी, हिन्दी मन्दिर प्रेस, इलाहाबाद।

समर्पण

जिन्हों ने मुझे सरकार के कामों से पहले-पहल
शौक़ दिलाया था, उन्हीं पूजनीय पिता
बाबू मेवारामजी बी० ए० की
पुण्यस्मृति को

प्रस्तावना

हिंदुस्तान में राजनैतिक चहल-पहल दिन-दिन बढ़ रही है। चारों तरफ़ राजनैतिक तब्दीलियों की माँगें और कोशिशें हो रही हैं। बृटिश सरकार तक ने हिंदुस्तान के लिए स्वराज्य का ध्येय मंज़ूर कर लिया है। झगड़ा सिर्फ़ इस बात का रह जाता है कि उस स्वराज्य का क्या रूप और रंग होगा और वह किस तरह लिया जायगा। सभी के मन में ऐसी तब्दीलियों के ज़माने में हिंदुस्तान की नई सरकार के बारे में तरह-तरह के ख़याल उठने होंगे।

इन ख़यालों को अमल में लाने के लिए दूसरे देशों की सरकारों का हाल जान लेना हमारे लिए अच्छा होगा। अस्तु हम पाठकों के सामने यूरोप की सरकारों का हाल रखते हैं।

इस छोटी किताब में जितना हो सकता था उतना यूरोप की लगभग सभी सरकारों का हाल पाठकों के सामने रखने की कोशिश की गई है। इंगलैंड, फ्रांस, इटली, जर्मनी, स्विट्ज़रलैंड और रूस की सरकारों का हाल ज़्यादा दिया गया है। इन छः देशों की सरकारों का हाल विस्तार से जान लेने के बाद फिर दूसरे यूरोपीय देशों की सारी सरकारों का हाल उतना ही विस्तार से जानने की आमतौर पर ज़रूरत नहीं रहती। फिर भी यूरोप के दूसरे देशों की सरकारों का हाल भी जितना इस किताब में आ गया है, उतना हिंदी की दूसरी पुस्तक में, और शायद हिंदुस्तान की दूसरी भाषाओं के ग्रंथों में अभी तक नहीं दिया गया है। अस्तु हिंदी भाषा-भाषियों के आगे यह ग्रंथ रखते हमें ख़ुशी होती है।

इंगलैंड की सरकार का हाल जान कर हम अपने देश की राजनीति में अमली बुद्धि का इस्तेमाल करना सीख सकते हैं। फ्रांस की राजनैतिक दलबंदी इत्यादि की कठिनाइयों का हाल पढ़ कर हम अपनी राजनैतिक कठिनाइयों पर नाउम्मेद न हो जाने का सबक़ ले सकते हैं। इटली की राजनीति से हमें पता लगेगा कि दुनिया में कठिन रोगों के लिए राजनीति में कड़वी दवाएं पीनी पड़ती हैं। जर्मनी से हम राजनैतिक मौत के मुँह में पड़ कर निकल आना सीख सकते हैं। स्विट्ज़रलैंड से हम अपने ग़रीब देश की सरकार को किफ़ायत से चलाने और अपने देश के गाँवों में ख़ालिस प्रजासत्ता क़ायम करने, तथा अल्प संख्याओं की समस्या सुलझाने की शिक्षा ले सकते हैं। रूस की मज़दूरपेशा-

शाही सरकार तो हमें राजनीति की एक नई दुनिया में ही ले जाकर खड़ा कर देती है, जिस से हम प्रजा के हित में सरकार का संगठन करने की बहुत-सी नई बातें सीख सकते हैं। यूरोप के दूसरे राष्ट्रों की सरकारों, खास कर लड़ाई के बाद बनने वाले नए राष्ट्रों की सरकारों का हाल जान कर भी हमें अपनी विभिन्न राजनैनिक समस्याएं सुलझाने में बड़ी सहायता मिल सकती है। अस्तु आशा है कि यह ग्रंथ साधारण मतदारों से लेकर राजनीति के विद्यार्थियों और कौंसिलों के सदस्यों इत्यादि उन सभी लोगों के काम आ सकेगा जिन्हें इस देश की राजनैतिक उलझनों में दिलचस्पी रहती है।

दुर्भाग्य से अभी तक हमारे देश में सामाजिक विषयों पर आधुनिक ग्रंथ लिखने के लिए सहूलियतें बहुत कम हैं। बड़े-बड़े नगरों और विश्वविद्यालयों तक में एक ही स्थान पर सारे ज़रूरी ग्रंथों का संग्रह नहीं मिलता है जिस से एक जगह सहूलियत से बैठ कर कोई पुस्तक लिखी जा सके। आधुनिक ग्रंथों की भी इन पुस्तकालयों में बड़ी कमी रहती है। अस्तु इस ग्रंथ को लिखने के लिए सहायक ग्रंथों को प्राप्त करने में काफ़ी कठिनाइयां उठानी पड़ीं। बंबई की रायल ऐशियाटिक सोसाइटी और पेटिट इन्स्टीटयूट पुस्तकालयों में काफ़ी ग्रंथ मिले। मगर बंबई और मद्रास के सारे पुस्तकालयों की खाक छान कर भी जो ग्रंथ न मिल सके वह परम उपयोगी ग्रंथ मित्रों की सहायता और कृपा से प्राप्त हुए। इन मित्रों और स्नेहियों की सहायता के बिना इस ग्रंथ का इस रूप में निकलना संभव नहीं था। अस्तु इन सारे मित्रों का और खास कर मेहरअली, कृष्ण मेनन, विश्वनाथ, रंगीलदास कापड़िया, बी० शिवराव और श्रीराम का मैं आभारी हूं। कुछ यूरोपीय देशों के नागरिकों और कौंसलों से जो सहायता मिली उस के लिए उन को भी धन्यवाद देना जरूरी है। सब से ज़रूरी धन्यवाद हिंदुस्तानी एकेडेमी को है जिस के द्वारा ग्रंथ पाठकों तक पहुँचेगा।

अडयार मद्रास
१० जुलाई १९३२

चंद्रभाल जौहरी

पुनश्च

यह ग्रंथ लिख कर १० जुलाई सन् १९३२ ई० को मैंने हिंदुस्तानी एकेडेमी के पास छपने के लिए भेज दिया था। एकेडेमी अपनी कठिनाइयों से अब तक इस ग्रंथ को प्रकाशित न कर सकी। अब तक अर्थात् अक्तूबर सन् १९३८ ई० तक, जब यह ग्रंथ प्रकाशित हो रहा है हमारे देश में और यूरोप में बहुत कुछ तब्दीलियां हो चुकी हैं। हिंदुस्तान के लिए फ़ेडरल ढंग की सरकार की एक राजव्यवस्था बृटिश पार्लामेंट ने

स्वीकार कर ली है, और सबों में एक प्रकार का स्थानिक स्वराज्य क़ायम हो गया है, जहां पार्लीमेंटरी ढंग की प्रांतीय सरकारें काम चलाने लगी हैं। परंतु सात सूबों में कांग्रेस-दल की सरकारें होने पर भी चूंकि कांग्रेस ने बृटिश पार्लीमेंट की बनाई हुई फ़ेडरेल राजव्यवस्था को स्वीकार नहीं किया है, और उस का घोर विरोध कर रही है, अभी तक इस देश की राजव्यवस्था अनिश्चित ही है। हिंदू मुस्लिम और देसी रजवाड़ों की समस्याएं तय करके अभी हमें अपने देश की राजव्यवस्था निश्चय करनी है। अस्तु यूरोप की सरकारों का हाल जानना हमारे लिए इस समय ख़ास तौर से ज़रूरी है।

छः वर्ष के ज़माने में अर्थात् जब यह ग्रंथ लिख कर तैयार हुआ था तब से आज तक जब कि यह प्रकाशित हो रहा है यूरोप में इतनी शीघ्रता से राजनैतिक फेरफार हुए हैं और हो रहे हैं कि बदलने वाली इन यूरोपीय सरकारों के काम-काज का पूरा हाल लिखना इस ग्रंथ में संभव नहीं है। जहां तक मुमकिन हो सका है वहां तक इन तब्दीलियों का ज़िक्र करने की कोशिश की गई है, जैसे कि जर्मन सरकार में हिटलर के ताक़त में आने से जो तब्दीलियां हुई हैं उन का। परंतु आस्ट्रिया के बारे में हम इतना ही अधिक कह सके हैं कि चूंकि यह राष्ट्र अब जर्मन रीश में मिला लिया गया है, इस की सरकार भी जर्मन सरकार के रूप-रंग की होगी। स्पेन में गृहयुद्ध छिड़ा हुआ है। युद्ध के बाद न जाने इस देश की कैसी सरकार होगी ? आज कल आधे देश में इटली के अनुयायी जेनरल फ्रेंको का शासन है और आधे देश में रूस के अनुयायिओं का। अस्तु, हम ने पुरानी सरकार का ज़िक्र करके ही छोड़ दिया है। रूसी राज-व्यवस्था में स्टालिन ने बहुत-सी नई तब्दीलियां की हैं जिन से कहा जाता है यह सरकार बहुत कुछ व्यवस्थापकी ढंग की हो गई है। परंतु काग़ज़ पर व्यवस्थापकी ढंग की सरकार चाहे हो गई हो वास्तव में रूस में कम्यूनिस्ट दल की और स्टेलिन की अभी तक वैसी ही ताक़त क़ायम है। दूसरे यूरोपीय देशों में भी फेरफार हुए हैं। परंतु इन सब तब्दीलियों का पूरी तरह हाल कुछ समय बाद ही लिखा जा सकता है।

चंद्रभाल जौहरी

विषय-सूची

पृष्ठ

सहायक ग्रंथों की सूची

1. Modern Constitutions. 2 vols. By Dodd.
2. The State. By Woodrow Wilson.
3. Modern Democracies. 2 vols. By Bryce.
4. Governments of Europe. By Munro.
5. Mechanism of Modern State. By Marriot.
6. New Constitutions of Europe. By H. Morley.
7. Governments and Parties in Europe. 2 vols. By Lowell.
8. How we are Governed. By A. de Fontblanque.
9. The European Commonwealth. By Marriot.
10. The Governments of Europe. By F. A. bgg.
11. Political Institutions of the World. By Preissing.
12. Modern Political Constitutions. By C. F. Strong.
13. The New Constitutions of Europe. By Mc Bain.
14. Select Constitutions of the World—prepared for Dail Eireann by order of the Irish Provisional Government.
15. Europa : Encyclopedia of Europe.
16. A Political Handbook of the World. By Malcolm W. Davis and Walter H. Mallory.
17. Representative Government in Europe. By Guizot.
18. The Working Constitution of the United kingdom. By Courtney.
19. Men and Manners in Parliamentary. By Sir Henry Lucy.
20. Peeps at Parliament. By Sir Henry Lucy.
21. The Book of Parliament. By Mcdonagh.
22. Parliament, its Romance, its Comedy, its Pathos. By Mcdonagh.
23. English Political Institutions. By Marriot.
24. The House of Lords. By T. A. Spalding.
25. The House of Commons. By Sir Richard Temple.
26. The English Constitution. By A. I. Stephen.
27. English Government and Constitution. By John Earl Russell.
28. The Evolution of Parliament. By A. F. Pollard.
29. The Rise of Constitutional Government in England. By C. Ransome.
30. Governance of England. By S. Low.

31. Government and Politics of France. By E. M Sait.
32. The Government of France. By Joseph Barthelemy.
33. Governance of France. By Raymond Poincare.
34. The Makers of Modern Italy. By Marriot.
35. Autobiography. By Mussolini.
36. The Making of the Facisti State.
37. Four years of Facism. By Cr. Ferrero.
38. The Awakening of Italy. By Luigivillari.
39. Facism. By Odon Por ?
40. The Rise of German Republic. By H. G. Peniels.
41. The New Germany. By Young.
42. Germany of Today. By Charles Tower.
43. Government in Switzerland. By Vincent.
44. Government and Politics of Switzerland. By Brooks.
45. Russian Political Institutions. By M. Kovalevskv.
46. The Soul of Russian Revolution. By Olgin.
47. Poineers of Russian Revolution. By A. S. Rappoport.
48. Russian Revolution. By Mavor.
49. The Eclipse of Russia. By E. J. Dillon.
50. Bolshevism at Work. By W. T. Goode.
51. The History of Russian Revolution. (Official)
52. Prelude to Bolshevism. By Kerensky.
53. Soviets at Work. By Lenin.
54. Russian Revolution. By Lenin.
55. A. B. C. of Communism. By Bukharin.
56. Communism. By H. Laski.
57. How the Soviets Work. By Brailsford.
58. Soviet Year Book, 1926.
59. Ten Days that Shook the World.
60. Our Revolution. By Trotsky.
61. Report of the Sixteenth Party Congress.
62. The State and Revolution. By Lenin.
63. The Austrian Revolution. By Otto Baner.
64. The Statesmen year Book, 1921—1930
65. The Irish Free State. By Denis Gwynn.
66. My Fight for Irish Freedom. By Dan Brean.

इंगलैंड की सरकार

१—राज-व्यवस्था

यूरोप के देशों में इंगलैंड से हमारा सब से अधिक संबंध रहा है। आजकल तो हमारी सरकार अँगरेज़ी है ही, भविष्य में भी हमारे देश की राज-व्यवस्था पर बहुत कुछ अँगरेज़ी छाप रहेगी। इस राजनैतिक नाते से, और इस कारण कि यूरोप के और देशों की राज-व्यवस्थाओं पर भी इंगलैंड की राज-व्यवस्था की बहुत कुछ छाप पड़ी है, यूरोप की और सरकारों का हाल जानने के पहले इंगलैंड की राज-व्यवस्था का अध्ययन करना ही हमारे लिए ठीक होगा।

इंगलैंड की राज-व्यवस्था बड़ी विचित्र और मनोरंजक है। दूसरे यूरोपीय देशों अथवा अमेरिका की तरह इस देश की राज-व्यवस्था किसी काग़ज़ पर लिखी हुई नहीं है। ऐतिहासिक और राजनैतिक विकास के साथ-साथ इंगलैंड की राज-व्यवस्था का भी धीरे-धीरे विकास हुआ है। यहाँ की राज-व्यवस्था केवल किसी लोमहर्षण क्रांति का तीव्र फल, किसी संधि का अचानक परिणाम अथवा केवल किसी वैध-आंदोलन-द्वारा प्राप्त क़ानून का नतीजा नहीं है। धीरे-धीरे बड़ के पेड़ की तरह बढ़ कर युगों में इंगलैंड की राज-व्यवस्था ने आजकल का विशालकाय स्वरूप प्राप्त कर पाया है। इस वृहत् बड़ की जटाएँ इंगलैंड के राजनैतिक-जीवन में फैल कर ऐसी घुस गई हैं कि किसी भी राजनैतिक हलचल में यह वृक्ष टूटता दिखाई नहीं देता है। बड़े-बड़े बवंडरों में भी हिल-डुल और झुक कर ही काम बना लेता है।

उन देशों की राज-व्यवस्था की व्याख्या और मीमांसा सरल होती है, जिन की राज-व्यवस्था किसी लिखित दस्तावेज़ के अनुसार चलती है। अमेरिका की सरकार का कोई काम उस देश की राज-व्यवस्था के अनुकूल है या नहीं यह जान लेना बहुत ही सरल है, क्योंकि वहाँ सरकार के हर काम की परीक्षा वहाँ की लिखित राज-व्यवस्था की कसौटी पर अदालत में की जा सकती है। मगर इंगलैंड की सरकार का कौन-सा काम ग़ैर-क़ानूनी है यह केवल एक राय की बात है, क़ानून की बात नहीं; और यह राय बदलती रहती है।

बृटिश राज-व्यवस्था की बुनियाद तो क़ानून ही है; परंतु अधिकतर उस का आधार रिवाजों पर है। यह कोई बड़ी अनोखी बात नहीं है। मनुष्य-समाज ही कितनी क़ानूनी और ऐतिहासिक कल्पनाओं पर निर्धारित है। मूल मतलब मिट जाने पर भी पुरानी संस्थाएँ और पद क़ायम रह जाते हैं और उन का वास्तविक काम कोई दूसरा ही करता है। हाथी के दिखाने के दाँतों की तरह इन संस्थाओं और पदों का स्थान हो जाता है और वास्तविक कार्य करनेवाले अदृश्य रहते हैं। चारों तरफ़ संसार में ऐसी ही प्रगति दिखाई देती है। आधुनिक राज व्यवस्थाओं में इस बात का बहुत प्रयत्न किया जाता है कि सारी बातें लिखित क़ानूनों के ही अंतर्गत कर ली जावें और कोई भी बात केवल रिवाज के नियम पर निर्धारित न रहे। परंतु इस प्रयत्न में कभी पूरी सफलता प्राप्त नहीं होती। इंगलैंड की राज-व्यवस्था का भी काफ़ी भाग अब लिखित क़ानूनों में समाविष्ट हो चुका है। परंतु इस देश में आजतक कभी इस बात का प्रयत्न नहीं किया गया है कि सारी की सारी राज-व्यवस्था लिपि-बद्ध हो जावे। इस का कारण आलस्य नहीं है। अँगरेज़ों को अपनी राज-व्यवस्था के अनूठे ढंग पर गर्व है। राजनीति का एक प्रख्यात अँगरेज़ विद्वान् बड़े गर्व से लिखता है, "दो सौ वर्ष से अधिक बीत चुके फिर भी हमारे देश में कोई राजनैतिक क्रांति नहीं हुई है। हमें न तो नए सिरे से अपनी राज-व्यवस्था की रचना करने की आवश्यकता हुई है और न हमें अपने विश्वासों की नींव ही टटोलनी पड़ी है। हमें अपनी जाति की अतर्क-बुद्धि पर घमंड है। हम ने जान-बूझ कर नियमबद्धता स्वीकार नहीं की है। हम आवश्यकतानुसार काम चलाना जानते हैं। हमें अपनी ऐसी ही कामचलाऊ राज-व्यवस्था पसंद है जो हर आवश्यकता और हर अवसर के उपयुक्त होती है, यद्यपि वह कुछ क़ानून, कुछ इतिहास, कुछ नीति, कुछ रिवाज और कुछ उन विभिन्न प्रभावों का एक संमिश्रण है, जो हर वर्ष या यों कहिए कि हर प्रहर सामाजिक जीवन को गढ़ते और बदलते रहते हैं।"

इंगलैंड की सरकार का वर्णन लिखना कठिन हो जाता है। जिस प्रकार किसी जीवित मनुष्य की दस वर्ष बाद की तसवीर में हाथ, पैर, मुख और शरीर वही रहने पर भी आकृति, भाव और ऊँचाई-मोटाई में परिवर्तन हो जाने के कारण बहुत कुछ फ़र्क़ हो जाता है, उसी प्रकार दस वर्ष बाद भी बृटिश राज-व्यवस्था ऊपर से जैसी की तैसी बनी रहने पर भी भीतर से बहुत कुछ बदल जा सकती है। ऊपर से देखने से इंगलैंड की राज-व्यवस्था में बड़ी आश्चर्य-जनक स्थिरता दीखती है। राजा, पार्लमेंट, मंत्रि-मंडल, निर्वाचक-समूह, न्याय-विभाग इत्यादि बृटिश राज-व्यवस्था के विभिन्न अंग सदा जैसे के तैसे बने

रहते हैं अथवा यों कहिए कि जैसे के तैसे बने लगते हैं या दिखाई देते हैं। परंतु वास्तव में ज़माने के अनुसार उन में इतना परिवर्तन हो जाता है कि नित नई मीमांसा की आवश्यकता रहती है।

इंगलैंड की राजनीति की हमेशा से यह समस्या रही है कि कैसे राज्य-व्यवस्था के पुर्ज़ों को बिना बदले या तोड़े-फोड़े ज़माने के अनुसार ध्येय और सिद्धांतों की पूर्ति की जाय। दूसरे देशों में राज-व्यवस्थाएँ बैठ कर गढ़ी गई हैं। इंगलैंड में उसे पौदे की तरह उगने दिया गया है। अतएव इंगलैंड की राज-व्यवस्था के अंग स्वभावतः वातावरण के अनुकूल बन गए हैं। इंगलैंड की राज-व्यवस्था मशीन की तरह नहीं बनी है, शरीर की तरह बढ़ कर तैयार हुई है।

अँगरेज़ अपनी सरकार के ऊपरी रूप-रंग में परिवर्तन करना पसंद नहीं करते हैं। सदियाँ बीत जाती हैं और इंगलैंड की सरकार के बाह्यरूप में ज़रा भी अंतर नहीं होता है। आंतरिक, आवश्यक और वास्तविक रूप-रंग में बहुत कुछ फेर-फार होते रहते हैं। मगर इस फेर-फार का राज-व्यवस्था के किसी क़ानून अथवा पार्लीमेंट की किसी तिथि में कहीं ज़िक्र तक नहीं होता है। न जनता ही को इस फेर-फार का कुछ पता होता है। अगर किसी भूकंप से इंगलैंड की सभ्यता यकायक चकनाचूर हो कर मिट्टी में मिल जावे और हज़ारों वर्ष बाद इंगलैंड के खँडहरों से कोई विद्वान् वहाँ की राज-व्यवस्था का ठीक-ठीक ज्ञान प्राप्त करना चाहे, तो उस के लिए असंभव होगा। उसे सोलहवीं और बीसवीं शताब्दी के इंगलैंड की राज-व्यवस्था में कोई फ़र्क़ नहीं मालूम होगा।

अँगरेज़ों को जितना पुरातन पर प्रेम है, उतना शायद पश्चिम की और किसी भी जाति को नहीं है। आधुनिक समस्याओं को हल करते समय भी वे पुरातन प्रथाओं का विचार रखते हैं। एक अँगरेज़ विद्वान् ने तो यहाँ तक लिख दिया है कि, "हमारे देश की राज-व्यवस्था हमारे रस्मोरिवाज का ही एक अंग है।"

अगर किसी पढ़े-लिखे अँगरेज़ से पूछा जाय कि इंगलैंड की राज-व्यवस्था का ज्ञान कहाँ से हो सकता है, तो वह बेचारा अधिक से अधिक यह कह सकेगा कि मैग्नाकार्टा, पिटीशन ऑव् राइट्स और बिल ऑव् राइट्स इंगलैंड की राज-व्यवस्था की जड़ हैं। मगर इन तीनों काग़ज़ों को पढ़ कर बड़ी निराशा होगी। मैग्नाकार्टा में सरकारी इमदाद, बाँध और नदियों तथा माप और तौल का ज़िक्र मिलेगा। पिटीशन ऑव् राइट्स में इस बात का ज़िक्र होगा कि बिना पार्लीमेंट की सलाह के राजा को प्रजा से कर वसूल नहीं करना चाहिए। बिल ऑव् राइट्स में जनता को हथियार रखने की इजाज़त इत्यादि का ज़िक्र मिलेगा। बस। उन्नीसवीं शताब्दी के रिफ़ार्म्स ऐक्टस् और पार्लीमेंट की आजतक की सारी चर्चा पढ़ने पर भी इंगलैंड की राजनैतिक संस्थाओं का सच्चा ज्ञान नहीं होता। पार्लीमेंट के नियम, क़ानून अथवा प्रस्ताव में कहीं इंगलैंड में प्रजा-सत्तात्मक राज्य स्थापित होने का बाक़ायदा ज़िक्र नहीं है। क़ानून के अनुसार तो इंगलैंड में प्रजा-सत्तात्मक राज्य ही नहीं है, राजशाही है। मंत्रि-मंडल जैसी प्रधान-संस्था के क़ायम होने तक का कहीं किसी क़ानून में ज़िक्र नहीं है। जिस ऐक्ट के अनुसार वर्तमान स्वरूप में विक्टोरिया को इंगलैंड की

सरकार मिली थी, उस में भी 'जवाबदार मंत्री' इत्यादि शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है। केवल एक कोने पर दिए हुए एक छोटे से नोट में इस बात का इशारा है कि इस ऐक्ट से इंगलैंड की राज-व्यवस्था में कितना भारी परिवर्तन हुआ था। और भी बहुत-सी असंख्य बातों का, जैसे कि निर्वाचन-समूह का पार्लीमेंट पर प्रभाव, जन-मत का संगठन, प्रधान मंत्री की सत्ता, कार्यकारिणी और व्यवस्थापक सभा का समाज के विभिन्न अंगों से संबंध, सार्वजनिक सभाओं और राजनैतिक संस्थाओं का सरकार के कामों में भाग इत्यादि किसी चीज़ का पार्लीमेंट के क़ानूनों में समावेश नहीं है। यही नहीं भाषण-स्वातंत्र और जनता का एकत्र हो कर सभा इत्यादि करने के जन्मसिद्ध अधिकारों का भी क़ानूनों में ज़िक्र नहीं है। प्रोफ़ेसर डाइसी लिखते हैं, "भाषण-स्वातंत्र का इंगलैंड में सिर्फ़ यह मतलब है कि बारह दूकानदार मिल कर यह पंच फ़ैसला कर दें कि अमुक बात कहना उचित है, अमुक नहीं।" इसी प्रकार जन-साधारण का मिल कर सभा करने का अधिकार केवल अदालतों के मतानुसार जनता के व्यक्तिगत अधिकारों में आ जाता है, कहीं किसी क़ानून में उस का ज़िक्र नहीं है। इंगलैंड की सरकार का काम अधिकतर आम समझ पर चलता है। जो बातें इंगलैंड के राजनैतिक जीवन में मिलती हैं वे वहाँ के क़ानूनों और किताबों में नहीं हैं, और जो बातें वहाँ के क़ानूनों और सिद्धांतों के अनुसार होनी चाहिए वह कहीं देखने को नहीं मिलती हैं। इंगलैंड की राज-व्यवस्था के मुख्य अंग राज-छत्र, मंत्रि-मंडल और पार्लीमेंट हैं।

२—राजछत्र

इंगलैंड का राज्य सिद्धांतानुसार निरा निरंकुश, देखने में परिमित निरंकुश और वास्तविक गुण में प्रजासत्तात्मक है। इंगलैंड की राज-व्यवस्था को अच्छी तरह समझने के लिए इंगलैंड के राजा और राजछत्र का भेद समझ लेना बहुत ज़रूरी है। यद्यपि क़ानूनों में इस भेद पर ज़ोर नहीं दिया जाता है।

इंगलैंड का राजछत्र एक बड़ी कामचलाऊ चीज़ है। उस को लगभग ब्रह्म के समान सर्वज्ञ, सर्वव्यापी और सर्वशक्तिमान माना जाता है; परंतु इंगलैंड के जिस राजा की सत्ता का इतना वर्णन क़ानूनों, अदालतों, दस्तावेज़ों और सरकारी ऐलानों में आता है वास्तव में न उस को इतने अधिकार हैं और न उस की इतनी सत्ता है। इंगलैंड में पुराने विचारों के अनुसार किसी परमात्मा के प्रतिनिधि राजा का राज्य नहीं है। वहाँ प्रजासत्तात्मक राज्य है और राज्य का सिरमौर नाममात्र के लिए राजा माना जाता है। जो अधिकार और सत्ता राजा की कही जाती है वह उस कहावती राजछत्र की है जिस को राजा न पुकार कर राष्ट्र अथवा 'प्रजा की इच्छा' या और किसी इसी प्रकार के उपयुक्त नाम से पुकार सकते हैं। इंगलैंड का इतिहास पढ़ने से पता लगता है कि पुराने ज़माने में राजा के जो व्यक्तिगत अधिकार थे वे धीरे-धीरे सदियों में राजा के व्यक्तिगत अधिकार न रह कर राजछत्र अथवा राष्ट्र के अधिकार हो गए हैं। इन अधिकारों का प्रयोग आजकल का राजा नहीं करता बल्कि

राष्ट्र की प्रतिनिधि पार्लीमेंट की एक समिति करती है। क़ानूनों के अनुसार राष्ट्र की सारी कार्यकारिणी सत्ता राजा में है। जल और थल-सेना के सारे अधिकारियों को नियुक्त करने, सेनाओं का संचालन करने, संधि और विग्रह करने, शासन चलाने के लिए पदाधिकारियों को नियुक्त करने, शासन और दंडनीति पर देख-रेख रखने, अपराधियों को क्षमा प्रदान करने, पार्लीमेंट से स्वीकृत हुए धन को ख़र्च करने इत्यादि सारे कार्य-संचालन का पूर्ण अधिकार केवल राजछत्र को है। इंगलैंड के साधारण मनुष्यों को यह सुन कर अवश्य आश्चर्य होगा कि उन का राजा, सेना को बर्ख़ास्त कर सकता है; सेनापति से ले कर सिपाही तक सारे अधिकारियों को निकाल सकता है; जहाज़ों को बेंच और राजसंपत्ति का नीलाम कर सकता है; इंगलैंड के प्रत्येक स्त्री और पुरुष को लार्ड बना सकता है और अपराधियों को क्षमा कर के सारी जेलें ख़ाली कर सकता है; परंतु सच बात यह है कि इंगलैंड का राजा वास्तव में ऐसा कुछ भी नहीं कर सकता है। यह सारे अधिकार केवल उस के दिखाने के दाँत हैं। सब कुछ करने-धरने और इन अधिकारों को प्रयोग करने का अधिकार मंत्रि-मंडल को होता है। एक बार सन् १८७१ ईसवी में प्रधान मंत्री ग्लैड्स्टन ने हाउस ऑव् कामन्स में इस आशय का एक मसविदा पेश किया था कि सेना के पदों को बेंचा न जाय। इस मसविदे को हाउस ऑव् लार्ड्स् के मंज़ूर न करने पर रानी के हुक्म से मसविदा क़ानून बनाया गया था और सेना के पदों की बिक्री बंद हो गई थी। यह सब कुछ हुआ तो राजछत्र के नाम पर था; मगर सच यह है कि रानी विक्टोरिया का इस में कुछ भी हाथ नहीं था और मंत्रि-मंडल ने राजछत्र के नाम से हुक्म निकाल कर इस मसविदे को क़ानून बना दिया था। इसी प्रकार १९०३ ई० में मंत्रि-मंडल ने अपनी मर्ज़ी से तीन आदमियों की एक कमेटी के द्वारा सेना-संगठन की जाँच करा के युद्ध-दफ़्तर की बिलकुल पुनर्घटना कर डाली थी, कमांडर-इन-चीफ़ के पद तक को ख़त्म कर दिया था और पार्लीमेंट की राय तक नहीं ली थी। यह भी राजछत्र के ही नाम पर किया गया था जिस से कि पार्लीमेंट मंत्रि-मंडल के इस निश्चय में कुछ दख़ल न दे सकी; मगर राजा बेचारे का वास्तव में इस रद्दोबदल में कुछ भी हाथ नहीं था। प्रधान मंत्री ने राजछत्र के नाम पर सब कुछ किया था।

इंगलैंड का राजा वैध राजा है। दो सौ वर्ष तक इंगलैंड में इसी बात पर झगड़ा चलता रहा था कि राजा को क्या-क्या करने का अधिकार है और क्या-क्या नहीं। अंत में रिवाजी सिद्धांत के अनुसार यह हल निकाला गया कि राजा की 'करने धरने की सारी सत्ता' पार्लीमेंट की एक जवाबदार समिति के हाथ में आ गई है। राजा के पास सिर्फ़ शान-शौकत और प्रभाव रह गया है। राष्ट्र के शासन-संचालन अथवा राष्ट्र की नीति निश्चय करने की उस को सत्ता नहीं है। इंगलैंड में राजनैतिक कहावत हो गई है कि 'राजा से बुरा नहीं हो सकता।' इस का केवल इतना ही अर्थ है कि राष्ट्र का कोई काम बिगड़े तो उस की जवाबदारी किसी न किसी मंत्री पर रहती है और राजा का नाम ले कर कोई मंत्री या अधिकारी अपना पल्ला नहीं छुड़ा सकता है। हाँ, अगर इंगलैंड का राजा बाज़ार में जा कर किसी की जेब काटे अथवा किसी का ख़ून कर डाले तो उस की ज़िम्मेदारी अवश्य किसी मंत्री पर नहीं होगी। इंगलैंड का राज्य एक प्रकार का मंत्रियों का प्रजातंत्र राज्य है। राजनीति

के झगड़े-टंटों से दूर रहने के लिए राजा ने राजसत्ता दूसरों के हाथ में दे दी है। राजा की सत्ता चले जाने पर भी उस का प्रभाव क़ायम है।[1] एक मंत्रि-मंडल के इस्तीफ़ा देने और दूसरे के आने तक दोनों के आने-जाने के बीच के समय में सारे शासन का भार और सत्ता राजा के हाथ में रहती है। पार्लीमेंट में बहुसंख्यक दल के किस नेता को प्रधान मंत्री पद के लिए चुनना है, यह भी एक हद तक राजा का ही अधिकार होता है—यद्यपि इस संबंध में अपने अधिकार का प्रयोग करने के लिए राजा के सामने बहुत बड़ा क्षेत्र नहीं होता है।[2] राजा को पार्लीमेंट बर्खास्त करने और नया चुनाव करा के किसी विशेष प्रश्न पर प्रजा की राय लेने के लिए प्रधान मंत्री को मजबूर कर देने का अधिकार होता है। प्रधान मंत्री के पार्लीमेंट का नया चुनाव चाहने पर भी ख़ास हालतों में राजा को नया चुनाव कराने से इनकार कर देने का भी अधिकार होता है। अस्तु, शासन पर अपना प्रभाव डालने के लिए राजा के हाथ में काफ़ी शक्ति रहती है। परंतु राजा इस शक्ति का प्रयोग कभी-कभी और ख़ास मौक़ों पर और वह भी थोड़े समय के लिए ही कर सकता है। साधारण तौर पर राजा को सिर्फ़ तीन अधिकार होते हैं। एक तो मंत्रि-मंडल को सलाह देने का, दूसरा प्रोत्साहन देने का और तीसरा हिदायत करने का। मंत्रियों की समझ में जो आवे वह वे कर सकते हैं; परंतु हर आवश्यक निश्चय पर अमल करने से पहले उन्हें राजा की सलाह ले लेनी पड़ती है। राजा की राय वे मानें या न मानें; परतु उस की बातें उन्हें ध्यान से अवश्य सुननी पड़ती हैं। अस्तु, एक बुद्धिमान् राजा चाहे तो मंत्रि-मंडल के निश्चयों पर काफ़ी प्रभाव डाल सकता है; परंतु निस्संदेह आजकल मंत्रियों के काम पर राजा का बहुत असर नहीं होता है। रिवाज हो गया है कि राजा की सलाह मंत्रियों को आदर से इस कान से सुन कर उस कान से निकाल देनी चाहिए और राजा को बुरा नहीं मानना चाहिए। मंत्रि-मंडल की प्रथा की तरह वैध राजाशाही का भी इंगलैंड में ऐतिहासिक कठिनाइयों के कारण विकास हुआ है। उदार दल ने सदा लड़-लड़ कर राजछत्र की शक्ति कम करने की कोशिश की और अनुदार दल ने अक्सर राजा के अधिकारों को पुनः स्थापित करने की कोशिश की। और इस संघर्ष के फल-स्वरूप धीरे-धीरे इंगलैंड में आधुनिक वैध राजशाही की स्थापना हुई।

वैध राजशाही अपने ढंग की एक अजीब चीज़ है। यद्यपि अभी तक इंगलैंड में इस प्रबंध से अधिक अड़चनें नहीं पड़ी हैं और इस ढंग से काम मज़े में चलता आया है; परंतु फिर भी यह कहना उचित न होगा कि इस प्रकार की व्यवस्था सरल अथवा स्वाभाविक है।

---

[1] कहा जाता है कि सन् १९३२ ई० की राष्ट्रीय सरकार बनाने के निश्चय में बहुत कुछ राजा पंचम जार्ज का भी हाथ था।

[2] सन् १९३२ में जब एक दल के प्रधान मंत्री मेक्डानल्ड ने अपने दल की सरकार क़ायम न रख कर राजा से पार्लीमेंट भंग कर के नए चुनाव का फ़रमान निकालने की प्रार्थना की थी, तब राजा ने उसी दल के किसी दूसरे नेता को मंत्रि-मंडल बनाने का बुलावा न दे कर पार्लीमेंट भंग कर दी थी—यद्यपि राजा चाहता तो ऐसा कर सकता था।

सच तो यह है कि यह प्रबंध बड़ा जटिल, अस्वाभाविक और ऐसा गोरखधंधा है कि साधारण आदमी की समझ में आसानी से नहीं आता। दुनिया में राजाओं का राज इतने दिनों तक रहा है कि राजाओं की निरंकुश राजाशाही साधारण मनुष्यों के लिए एक प्राकृतिक-सी बात हो गई है। परंतु वैध राजाशाही साधारण प्रजा की समझ में जल्दी से नहीं आती। अगर इंगलैंड में राजा के नाम से आज यह एलान निकले कि औरतों को गर्दन खुली नहीं रखनी चाहिए तो राजव्यवस्था के विद्वान या तो इसे गप्प समझेंगे या समझेंगे कि इंगलैंड की राज्य-व्यवस्था में अवश्य क्रांति हो गई है। परंतु बहुत से साधारण मनुष्यों को यह एलान बिलकुल जायज़ और साधारण लगेगा, क्योंकि प्रजा के बड़े भाग के लिए राजा का वचन ही अब तक क़ानून है। भविष्य में इंगलैंड में राजा की क्या स्थिति होगी यह भावी राजाओं के चाल-चलन और राजनैतिक नेताओं के व्यवहार पर निर्भर है। आजकल राजा को राजनैतिक मामलों में हस्तक्षेप करने का अधिकार न होने पर भी वह राष्ट्र के अन्य बहुत से कामों में सहायता पहुँचाता और पहुँचा सकता है। साहित्य, कला, विज्ञान और बहुत से अन्य सार्वजनिक उपयोगी कामों को अपने प्रोत्साहन से राजा बहुत लाभ पहुँचा सकता है। राजनैतिक दलबंदी से दूर रहने से राजा सब को पिता के समान प्रिय रहता है। अस्तु, वह देश के रचनात्मक कार्य में हाथ बटा कर राष्ट्र का बहुत कुछ भला कर सकता है। राजनैतिक दलों के बहुत से कार्यों से इस प्रकार के सर्व-हितकारी रचनात्मक कार्य, जिन में राजा सर्वप्रिय रह कर हाथ डाल सकता है, देश को कहीं अधिक लाभदायक होते हैं। समुद्रों के आर पार फैले हुए बृटिश उपनिवेशों और चक्रवर्ती बृटिश साम्राज्य को भी इंगलैंड का राजछत्र एक सूत्र में बाँधे रखने में बहुत सहायक हो सकता है। केनेडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रिका और न्यूज़ीलैंड में बसे हुए अभिमानी गोरे लोग बृटिश मंत्रि-मंडल के अधीन रहना पसंद नहीं करते हैं; परंतु इंगलैंड के राज-छत्र को अपना राज-छत्र मानते हैं और उस छत्र की छाया में रहना स्वीकार करते हैं। दूसरे देशों से अच्छा संबंध रखने और इंगलैंड के व्यापार इत्यादि को बढ़ाने में भी राज-छत्र काम आता है। इंगलैंड की महारानी के सन् १८४३ ई० और १८४५ ई० में फ्रांस जाने से इंगलैंड और फ्रांस का वैर मिट गया था, और दोनों देश मित्र बन गए थे। एडवर्ड सप्तम के गद्दी पर बैठने के समय दुनिया भर इंगलैंड को, दक्षिण अफ्रिका में अत्याचार करने के कारण, बुरी नज़र से देखती थी। राजा ने यूरोप के देशों की यात्रा की और उस के वहाँ जाने से सारी हवा ही बदल गई थी। फ्रांस, इटली, पुर्तगाल और जरमनी सब फिर से इंगलैंड के मित्र बन गए थे। इसी प्रकार जब सन् १९३१ ई० में इंगलैंड का व्यापार घटने लगा था तो पंचम जार्ज के युवराज ने दक्षिण अमेरिका के देशों की यात्रा कर के उन देशों में बृटिश माल का प्रचार किया था और बृटिश व्यापार को बढ़ाया था। दूसरे देशों से संधि और व्यापार केवल परराष्ट्र-सचिव अथवा व्यापारसचिव के प्रयत्नों से ही नहीं होते हैं। एक देश की जनता के दूसरे देश पर स्नेह होने से यह कार्य अधिक सरलता से हो जाते हैं और राजा घूम-फिर कर अपने व्यवहार से इस स्नेह-वर्धन के कार्य में अच्छी तरह सहायक हो सकता है।

३—मंत्रिमंडल

जो काम राजा को करने का केवल नाम-मात्र को अधिकार है उसे करने का वास्तविक अधिकार मंत्रि-मंडल को है। इंगलैंड की सरकार की राजव्यवस्था का केंद्र मंत्रि-मंडल है। क़ानून के अनुसार तो मंत्रि-मंडल सिर्फ़ प्रिवी कौंसिल की एक समिति है और उस के सदस्य केवल बादशाह सलामत के नौकर हैं—जिन्हें बादशाह ने विभिन्न सरकारी विभागों की बागडोर सौंप दी है और जिन से ज़रूरत पड़ने पर बादशाह सलामत राजकार्य में सलाह लेते हैं; परंतु राज-व्यवस्था के रिवाज के अनुसार मंत्रि-मंडल ही उत्तरदायी कार्य-कारिणी है और उसी पर राष्ट्र के सारे कार्य-संचालन का भार है। मगर इस महान-शक्ति का प्रयोग मंत्रि-मंडल को राष्ट्र की प्रतिनिधि व्यवस्थापक सभा की देख-रेख में करना होता है और उसी को अपने हर काम का जवाब देना होता है। ख़ास-ख़ास आपत्ति के मौक़ों को छोड़ कर —जैसे कि १९१४ ई० का युद्धकाल अथवा १९३१ ई० का आर्थिक संकट—आम तौर पर मंत्रि-मंडल पार्लामेंट की समिति नहीं होती, बल्कि पार्लामेंट में जो सब से ज़बरदस्त राजनैतिक दल होता है उसी की समिति होती है। आपत्तिकाल में सब राजनैतिक दल अक्सर अपना भेद-भाव भूलकर, सब दलों के प्रतिनिधि ले कर मंत्रि-मंडल बना लेते हैं।

बहुत से अँगरेज़ अपनी राज-व्यवस्था के लिए अपनी जाति की कर्तव्य-बुद्धि की प्रायः सराहना करते हैं और अपने बड़े बूढ़ों की प्रशंसा के गीत गाते हैं, कि उन्हों ने ऐसी सुंदर राज-व्यवस्था का बीज बोया। परंतु मंत्रि-मंडल संस्था का इतिहास अध्ययन करने से मालूम होता है कि जो रूप इस संस्था का आजकल है उस की किसी अँगरेज़ ने कभी कल्पना भी नहीं की थी। यही नहीं बल्कि, मंत्रि-मंडल के इस रूप के विकास के मार्ग में अँगरेज़ों के बड़े-बूढ़ों ने काफ़ी रोड़े अटकाए थे। क्रमशः घटनाओं के चक्र से इंगलैंड का मंत्रि-मंडल ऐसी प्रभावशाली, शक्तिमान और केंद्रस्थ संस्था बन गई है। उन के बड़े-बूढ़ों ने इस संस्था के इस स्वरूप का कभी स्वप्न भी नहीं देखा था। जिस प्रकार बिना किसी इरादे के अँगरेज़ों का क्रमशः समुद्रों के पार एक चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित हो गया, उसी प्रकार उन की विचित्र राज-व्यवस्था भी धीरे-धीरे घटनाओं के चक्र से बनी है। कोई कितना ही बुद्धिमान क्यों न हो, सोच विचार कर इस प्रकार की राज-व्यवस्था की रचना करना सर्वथा असंभव है। सच तो यह है कि सोचा कुछ गया था और हो कुछ गया। अठारहवीं सदी की पार्लामेंट ने तो इस बात की भी बड़ी कोशिश की थी कि मंत्रियों का व्यवस्थापक-सभा में कोई स्थान ही न रहे। मंत्रि-मंडल की सरकार का नाश करने के उद्देश्य से ही बहुत दिनों तक इस सिद्धांत की लकीर भी पीटी गई थी कि सरकार की व्यवस्थापिका और कार्यकारिणी सत्ताएँ अलग होनी चाहिएँ। ऐक्ट् ऑव् सेटिलमेन्ट की मूल धाराओं में एक धारा के अनुसार बादशाह का कोई नौकर हाउस ऑव् कामन्स् का सदस्य नहीं हो सकता और एक दूसरी धारा के अनुसार मंत्रि-मंडल की कोई गुप्त बैठक प्रिवी कौंसिल से अलग नहीं हो सकती। अठारहवीं शताब्दी में प्रधान मंत्री के पद के

विरुद्ध भी काफ़ी मत था और कहा जाता था कि इंगलैंड की शासन-व्यवस्था को प्रधान मंत्री की आवश्यकता नहीं है। इसी प्रकार इस बात पर भी हमेशा बड़ा ज़ोर दिया जाता रहा है कि सिर्फ़ हाउस ऑव् कामन्स् को सब कुछ स्याह-सफ़ेद करने का हक़ है। मगर वास्तव में दिन ब दिन हाउस ऑव् कामन्स् की शक्ति कम होती जाती है और मंत्रि-मंडल की शक्ति बढ़ती जाती है। मंत्रि-मंडल के सदस्य हाउस ऑव् कामन्स् के सदस्य ही नहीं होते हैं बल्कि मंत्रि-मंडल की बैठकें सदा ही गुप्त और प्रिवी कौंसिल से अलग होती हैं। इंगलैंड का मख्यात प्रधान मंत्री ग्लैड्स्टन हमेशा इस बात पर ज़ोर दिया करता था कि सिर्फ़ हाउस ऑव् कामन्स् ही को सब कुछ अधिकार है; मगर उसी का, मंत्रि-मंडल को इतनी शक्तिशाली संस्था बनाने में भी, सब से अधिक हाथ था। मंत्रि-मंडल इंगलैंड की व्यवस्थापक-सभा की ही समिति नहीं होती, बल्कि वास्तव में पार्लीमेंट में सब से ज़बरदस्त दल के द्वारा चुनी हुई समिति भी नहीं होती है। बहुसंख्यक दल का नेता दल में से अपने साथी मंत्रियों को अपनी इच्छानुसार चुनता है।

इंगलैंड का मंत्रि-मंडल एक दुधारी तलवार की तरह है, जिस की एक धार मुथरी होती जा रही है और दूसरी तेज़। ऐतिहासिक और क़ानूनी दृष्टि से—परंतु केवल कहने के लिए—मंत्रि-मंडल प्रिवी कौंसिल की एक समिति और बादशाह की चाकर है; और रिवाज से—मगर वास्तव—में वह राष्ट्र की प्रजा की प्रतिनिधि होती है। अस्तु, इंगलैंड का मंत्रि-मंडल राजा का चाकर और प्रजा का प्रतिनिधि दोनों ही है। प्रारंभ-काल में इंगलैंड के राजा प्रजा का शासन राव, उमरावों, सरदारों और ज़मींदारों की सलाह से किया करते थे। बाद में वह दूसरे विद्वान् अथवा चतुर मनुष्यों से भी सलाह लेने लगे और धीरे-धीरे ऐसे सलाहकारों की संख्या बढ़ती गई। फिर बहुत दिनों तक बादशाह और पार्लीमेंट का झगड़ा चला क्योंकि राजाओं को यह बात असह्य हो उठी कि उनके चाकर हाउस ऑव् कामन्स् के चुनिंदे हों। हाउस ऑव् कामन्स् के बहुत से दक़ियानूस सदस्यों तक को यह बात अनुचित लगती थी कि सरकार का काम बादशाह की मर्ज़ी पर निर्भर न रह कर प्रजा के प्रतिनिधियों के बहुमत पर निर्भर रहे। इसी लिए शुरू में कभी-कभी ऐसा भी होता था कि बादशाह का विश्वासपात्र मंत्री प्रजा के प्रतिनिधियों का विश्वास पात्र न होने पर भी हाउस ऑव् कामन्स् में अल्पमत से ही सरकार का काम चलाता था। अठारहवीं सदी तक इंगलैंड के लोग मानते थे कि सरकार का शासन चलाना राजा का काम है, प्रजा के प्रतिनिधियों का नहीं। जिस मंत्री पर राजा का विश्वास होता था उस का विरोध करना बहुत से प्रजा के प्रतिनिधि पसंद नहीं करते थे। पार्लीमेंट का काम, राजा के मंत्रियों से मिल कर राजकार्य अच्छी तरह चलाने के लिए केवल चर्चा करना, समझा जाता था। सरकारी शासन चलाना राजा का ही काम माना जाता था। हाँ, लोग इतना अवश्य चाहते थे कि राजा को सलाह देनेवाले मंत्रियों के नाम सब को मालूम होने चाहिए और वे ऐसे जनप्रसिद्ध लोग होने चाहिए जिन पर जनता की श्रद्धा हो; राजा को अनजाने मनुष्यों से राजकार्य में सलाह नहीं लेनी चाहिए। अठारहवीं सदी तक जनमत के अनुसार इंगलैंड में मंत्रि-मंडल का यही अर्थ

था; परंतु उन्नीसवीं सदी में स्थिति बदल गई थी क्योंकि सन् १८३४ ई० में राजा चतुर्थ विलियम के सर राबर्ट पील को प्रधान मंत्री नियुक्त करने पर हाउस ऑव् कामन्स् ने उस का विरोध किया था और पील का सरकार का काम चलाना असंभव हो गया था। फिर भी सन् १९०० ई० तक हाउस ऑव् कामन्स् ने कभी मंत्रि-मंडल को अपनाया नहीं था। 'केबिनेट' अर्थात् मंत्रि-मंडल शब्द का कहीं सरकारी काग़ज़ या चर्चा में ज़िक्र तक आ जाने पर चारों तरफ़ से हाउस ऑव् कामन्स् में उस का विरोध होता था। सन् १९०० ई० में पहली बार हाउस ऑव् कामन्स् के काग़ज़ों में 'केबिनेट' शब्द का प्रयोग मिलता है और इस के बाद इस संस्था का इंगलैंड की राज-व्यवस्था में बाक़ायदा स्थान मान लिया जाता है। किसी दूसरे देश की राज-व्यवस्था के मुख्य अंग का जन्म इस प्रकार नहीं हुआ होगा।

मंत्रि-मंडल के सदस्यों को राजा के प्रति स्वामिभक्त रहने, अपने अंतःकरण के अनुसार उस को सच्ची सलाह देने और राजा से जिन बातों की चर्चा हो उन को सदा पेट में छिपा के रखने की शपथ अवश्य लेनी पड़ती है; परंतु यह शपथ वे मंत्री की हैसियत से नहीं प्रिवी कौंसिल के सदस्य की हैसियत से लेते हैं। मंत्रि-मंडल अभी तक बृटेन में क़ानूनी दृष्टि से प्रिवी कौंसिल की एक कमेटी है और चूँकि प्रिवी कौंसिल के हर एक सदस्य को इस प्रकार की शपथ लेनी पड़ती है, इस लिए मंत्रि-मंडल के सदस्य शपथ लेते हैं। प्रिवी कौंसिल इंगलैंड की एक मृतप्राय सी संस्था है। उस की एक कमेटी बृटिश साम्राज्य के सर्वोच्च न्यायालय का काम अवश्य करती है। परंतु बाक़ी बृटिश साम्राज्य भर के दो-ढाई सौ प्रिवी कौंसिल के सदस्यों से न तो किसी राज्यकार्य में सलाह ली जाती है और न उन्हें कोई राज्य का गहन भेद ही पेट में छिपाए रखने की आवश्यकता पड़ती है। प्रिवी कौंसिल का, दिखावटी कार्य के अतिरिक्त, बस एक नाम रह गया है। जिस को सरकार लार्ड और नाइट के मध्य का ख़िताब देना चाहती है उस को कौंसिल का सदस्य बना दिया जाता है जिस से उसे अपने नाम के आगे 'राइट आनरेबल' शब्द लिखने का अधिकार हो जाता है। हमारे देश के नरम दल के एक प्रसिद्ध नेता श्रीयुत श्रीनिवास शास्त्री भी इस प्रिवी कौंसिल के सदस्य हैं और वे राइट आनरेबल श्रीनिवास शास्त्री कहलाते हैं परंतु उन से न तो बृटिश साम्राज्य के संचालन में इंगलैंड के राजा कोई सलाह लेते हैं और न उन्हें किसी बड़े भेद को छिपाए रखने का ही मौक़ा आता है। फिर भी अन्य प्रिवी कौंसिल के सदस्यों की तरह शपथ उन्हों ने भी ली है।

इंगलैंड की राज-व्यवस्था में क़ानून के अनुसार मंत्रियों का उच्च स्थान केवल प्रिवी कौंसिल के सदस्यों की हैसियत से है। अन्यथा उन का स्थान केवल अन्य सरकारी नौकरों की तरह है। कई सरकार के नौकरों को तो मंत्रियों से भी अधिक अधिकार होते हैं। उदाहरणार्थ कन्ट्रोलर जनरल इंगलैंड का सिर्फ़ एक सरकारी नौकर होता है परंतु उसे अधिकार होता है कि मंत्रि-मंडल अगर किसी ग़ैर-क़ानूनी मामले पर सरकारी ख़ज़ाने का रुपया ख़र्च करना चाहे तो वह उन को एक पाई भी न लेने दे। मगर इतना अधिकार रखते हुए भी कन्ट्रोलर जनरल राजा का एक नौकर ही है और मंत्री राजा का सलाहकार है।

मंत्रि-मंडल और मंत्रि-समुदाय या मंत्रि-मंडली में बड़ा भेद है। मंत्रि-समुदाय में वे सारे सरकारी अधिकारी आ जाते हैं जिन को पार्लीमेंट में बैठने का अधिकार होता है। मंत्रि-मंडल की संख्या निश्चित नहीं होती मगर उस में आमतौर पर निम्नलिखित मंत्री होते हैं:—

१. प्रधान मंत्री
२. लार्ड चांसलर
३. लार्ड प्रेसीडेंट ऑव् दि कौंसिल
४. लार्ड प्रिवीसील
५. चांसलर ऑव् दि एक्सचेकर (अर्थ-सचिव)
६. होम सेक्रेटरी (गृह-सचिव)
७. सेक्रेटरी फ़ॉर फ़ॉरिन अफ़ेयर्स (पर-राष्ट्र-सचिव)
८. सेक्रेटरी फ़ॉर कॉलोनीज़ (उपनिवेश-सचिव)
९. सेक्रेटरी फ़ॉर इंडिया (भारत-सचिव)
१०. सेक्रेटरी फ़ॉर वार (युद्ध-सचिव)
११. फर्स्ट लार्ड ऑव् ऐडमिरेल्टी (जलसेना-सचिव)
१२. सेक्रेटरी फ़ॉर ऐयर (वायु-सचिव)

इन में ज़रूरत के अनुसार पांच छः ज़रूरी विभागों के मंत्री और भी जोड़ लिए जाते हैं जैसे कि प्रेसीडेंट ऑव् बोर्ड ऑव् ट्रेड (व्यापार-सचिव) प्रेसीडेंट ऑव् लोकल गवर्नमेंट बोर्ड (स्थानिक शासन-सचिव), चांसलर ऑव् दि डची आव् लैंकास्टर और चीफ़ सेक्रेटरी फ़ॉर आयरलैंड। मंत्रि-मंडल में प्रायः इस नियम के अनुसार मंत्री मिलाए जाते हैं कि हर एक ऐसे विषय के लिए, जिस पर कॉमन्स में ज़ोर दिया जाता हो, मंत्रि-मंडल का एक सदस्य हाउस ऑव् कामन्स के सामने ज़िम्मेदार और हाउस को रास्ता दिखाने वाला होना चाहिए। मंत्रि-मंडल में प्रायः बीस-पच्चीस मंत्री होते हैं और उन के सिवाय उतने ही या कभी-कभी उन से दुगने तक अधिकारी मंत्रि-समुदाय या मंत्रि-मंडली में होते हैं।

मंत्रि-मंडल हाउस ऑव् कामन्स् को सरकार के हर काम के लिए जवाबदार होता है। जिस दिन हाउस ऑव् कामन्स का मंत्रि-मंडल पर से विश्वास उठ जाता है, उसी दिन मंत्रि-मंडल को इस्तीफ़ा दे देना होता है। मंत्रि-मंडल की सारे कामों में जवाबदारी सम्मिलित[1] होती है अर्थात् किसी एक मंत्री के काम का सारा यश और अपयश सारे मंत्रि-मंडल के सिर होता है। कोई एक मंत्री कितनी ही चतुरता से अपने विभाग का संचालन करे परंतु यदि उस का साथी कोई दूसरा मंत्री अपने विभाग में गड़बड़ करता है तो चतुर मंत्री को भी बुद्धू मंत्री के साथ इस्तीफ़ा दे कर चला जाना होता है। इस का कारण शायद यह है कि

---

[1] सन् १९३२ ई० की मेकडानेल्ड की राष्ट्रीय सरकार के ज़माने में इंगलैंड के इतिहास में पहली बार व्यापारी चुंगी करों के प्रश्न पर मंत्रि-मंडल के सदस्यों ने अपनी-अपनी राय अलग-अलग पार्लीमेंट में ज़ाहिर की थी और अलग-अलग अपने मत दिए थे। अर्थ-सचिव मिस्टर नेविल चेंबरलेन के अनुदार दल की संख्या बहुत होने से उस का मसविदा स्वीकार हुआ था और सरकार की हार हो जाने का मौक़ा नहीं आया था।

सारे शासन-कार्य की मुख्य ज़िम्मेदारी प्रधान मंत्री पर होती है। वही अपने साथ के मंत्रियों को चुनता है और इस लिए उन के सब भले-बुरे कामों का जवाबदार भी वही होता है। सारे मंत्री प्रधान मंत्री के मातहत होते हैं और इस लिए किसी मंत्री से कोई काम बिगड़ने पर ज़िम्मेदारी प्रधान मंत्री की ही समझी जाती है और उसे अपने सारे मंत्रियों के साथ इस्तीफ़ा दे देना पड़ता है।

अब मंत्रि-मंडल आम तौर पर हाउस ऑव् कामन्स् के एक दल की समिति होती है। इस समिति की कारवाई गुप्त होती है। दलबंदी और गुप्त कार्य इंगलैंड की मंत्रि-मंडल पद्धति के मूल लक्षण हैं। मंत्रि-मंडल पद्धति के इन मूल लक्षणों में परिवर्तन हो जाने पर इंगलैंड की राज-व्यवस्था में बड़ा अंतर हो जायगा। आश्चर्य की बात है कि जिस इंगलैंड में हर काम की इतनी चर्चा अख़बारों में होती है और जो देश राजनैतिक प्रश्नों पर खुली चर्चा करना प्रजासत्तात्मक राज्य का लक्षण मानता है उसी देश की मुख्य कार्य-कारिणी संस्था सदा परदे में काम करती है। मंत्रि-मंडल गुप्त संस्था होने पर भी व्यक्तिगत संस्था नहीं है। अन्य संस्थाओं की कार्यकारिणी समितियों से इस में यह बड़े महत्व की भिन्नता है। अन्य संस्थाओं की कार्यकारिणी समितियों की भी कभी-कभी गुप्त बैठकें होती है। परंतु सिर्फ़ कभी-कभी ज़रूरत पड़ने पर ही गुप्त होती हैं आमतौर पर नहीं। मंत्रि-मंडल की बैठकें हमेशा गुप्त होती हैं। दुनिया की अन्य कार्यकारिणी समितियों के कार्य-संचालन के नियम होते हैं; उन की कारवाई और प्रस्ताव लिख लिए जाते हैं; उन के मंत्री और प्रधान होते हैं; बृटिश सरकार की कार्यकारिणी अर्थात् बृटिश मंत्रि-मंडल के कार्य-संचालन के न कोई निश्चित नियम होते हैं; न उस की कारवाई और प्रस्तावों का कहीं लेखा ही रहता है और न उस का कोई मंत्री होता है। उस की बैठकों का कोई निश्चित स्थान या ठिकाना तक नहीं होता है। बृटिश मंत्रि-मंडल का दुनिया की दूसरी संस्थाओं की तरह कोई आफ़िस, क्लर्क, काग़ज़, धन या मुहर कुछ भी नहीं होता है। सिवाय 'फ़र्स्ट लार्ड ऑव् दि ट्रेज़री' के द्वारा न तो मंत्रि-मंडल के पास कोई ख़बर या काग़ज़ भेजा जा सकता है और न मंत्रि-मंडल किसी के पास कोई संदेशा भेज सकता है। किसी भी कंपनी या क्लब या अन्य किसी सार्वजनिक संस्था की कार्यकारिणी के इस प्रकार काम चलाने पर उस को दुनिया में बिलकुल एक ग़ैर-ज़िम्मेवार संस्था समझा जायगा और कोई उस पर विश्वास नहीं करेगा। मगर बृटिश साम्राज्य जैसी महान संस्था की कार्यकारिणी, मंत्रि-मंडल, का काम इस अजीबो-ग़रीब ढंग से चलता है। जब प्रधान मंत्री को मंत्रि-मंडल की बैठक करनी होती है तब मंत्रियों के पास इस प्रकार का एक छपा हुआ काग़ज़ का टुकड़ा पहुँचता है। "—स्थान पर,—समय पर, बादशाह के चाकर मिलेंगे।" इस काग़ज़ के पुर्ज़े पर किसी के हस्ताक्षर नहीं होते हैं। परंतु वह 'फ़र्स्ट लार्ड आव् दि ट्रेज़री' अर्थात् प्रधान मंत्री के पास से आता है और उस पर समय और स्थान की ख़ाना-पूरी प्रधान मंत्री की होती है। मंत्रि-मंडल की बैठकों में भाग लेनेवाले भी निश्चित नहीं होते हैं। कभी राजनैतिक दल के नेताओं के साथ किसी क्लब में मंत्रि-मंडल की बैठक होती है; कभी किसी सरकारी दफ़्तर में शासन-विभाग-पतियों के साथ होती है। मंत्रि-मंडल का अध्यक्ष प्रधान मंत्री होता है, और उस को अन्य संस्थाओं या

समितियों के अध्यक्षों के साधारण अधिकारों से कहीं अधिक अधिकार होते हैं। जिस विषय पर प्रधान मंत्री चाहता है चर्चा चलाता है और जब वह चाहता है तब चर्चा बंद कर देता है। प्रधान मंत्री ग्लैड्सटन तो मंत्रि-मंडल की बैठकों में मंत्रियों के बैठने की जगहें तक मुक़र्रर कर देता था। मंत्रि-मंडल में चर्चा किसी नियमित ज़ाब्ते के अनुसार नहीं चलती है; साधारण बातचीत की तरह होती है। मंत्रि-मंडल कोई लिखित कार्य-क्रम या और कोई कार्रवाई का काग़ज़-पत्र नहीं रखता है। न तो मंत्रि-मंडल में होनेवाली चर्चा का कोई लेखा रक्खा जाता है और न किसी मंत्री को मंत्रि-मंडल की किसी बात का भविष्य की याददाश्त के लिए नोट कर लेने का हक़ होता है। परंतु कहा जाता है कि ग्लैड्स्टन, पील और कई अन्य प्रधान मंत्री मंत्रि मंडल में चर्चा चलाने के लिए अक्सर याददाश्त लिख लाया करते थे। मंत्रि-मंडल की प्रत्येक बैठक के कार्य की रिपोर्ट लिख कर राजा के पास भेज देना प्रधान मंत्री का कर्तव्य होता है। इस एक काग़ज़ के सिवाय और कहीं मंत्रि-मंडल के काम की कोई रिपोर्ट नहीं रहती है। कभी कभी प्रधान मंत्री किसी खास विषय पर मंत्रि-मंडल के सामने अपना लिखित बयान भी पेश करते हैं। दूसरे मंत्री भी कभी-कभी किसी विशेष प्रश्न पर लिखित बयान पेश कर सकते हैं। मंत्रि-मंडल की बैठकों में मंत्री कुछ नहीं लिखते हैं; परंतु अपनी याद के लिए बाहर आ कर अपनी डाइरियों में काफ़ी लिख लिया करते हैं। कभी-कभी मंत्रियों के आपस में झगड़े हो जाने पर, राजा की अनुमति से मंत्रि-मंडल की गुप्त कार्रवाई की झलक बाहर भी आ जाती है। मगर ऐसा बहुत ही कम होता है। साधारणतया मंत्रि-मंडल की सारी कार्रवाई गुप्त रहती है, और अख़बारों के संवाददाता सिर पटक-पटक कर थक जाने पर भी भेद नहीं पाते हैं।

अँगरेज़ों के मंत्रि-मंडल के कार्य-संचालन का ढंग अनूठा है। दुनिया की किसी दूसरी सरकार का मंत्रि-मंडल इस विचित्र ढंग से काम नहीं चलाता है। अमेरिका का मंत्रि-मंडल अमेरिका के प्रेसीडेंट की सलाहकार समिति होती है और प्रेसीडेंट की अध्यक्षता में हमेशा उस की कार्रवाई होती है। फ़्रान्स के प्रेसीडेंट और अन्य देशों के राजाओं को मंत्रि-मंडल की बैठकों में आकर कार्य में भाग लेने का अधिकार होता है। इंगलैंड में राजा मंत्रि-मंडल की बैठकों में नहीं जाता है। फ़्रांस में मंत्रि-मंडल की कार्रवाई की रिपोर्ट का सार मंत्रि-मंडल की तरफ़ से समाचार-पत्रों तक में छपने तक के लिए भेज दिया जाता है। बृटिश मंत्रि-मंडल सिर्फ़ एक युद्ध-घोषणा पर हस्ताक्षर करने अथवा किसी ऐसे ही दूसरे अत्यंत गहन विषय पर कोई काग़ज़ तैयार करने के अतिरिक्त आम तौर पर कोई लिखा-पढ़ी नहीं करता है। इंगलैंड की राज-व्यवस्था का कोई ऐसा नियम नहीं है कि इंगलैंड का राजा जो सारे शासन का कर्ता-धर्ता माना जाता है, मंत्रि-मंडल की बैठकों में न बैठे। विलियम तीसरा और रानी ऐन हमेशा मंत्रि-मंडल में अध्यक्ष बनकर बैठते थे। परंतु जर्मनी के शाहज़ादा जॉर्ज प्रथम के इंगलैंड का राजा बनने पर राजा को मंत्रि-मंडल के कार्य में भाग लेने में बड़ी अड़चन होने लगी; क्योंकि जॉर्ज अँगरेज़ी बिलकुल नहीं समझता था। तब से राजा के मंत्रि-मंडल में जाने की प्रथा ही उठा दी गई। अगर इंगलैंड के राजा मंत्रि-मंडल की कार्रवाई में भाग लेते रहते तो मंत्रि-मंडल और आधुनिक बृटिश

सरकार का यह स्वरूप न होता। न तो मंत्रि-मंडल में दलबंदी के विचार से कोई कार्रवाई हो पाती; न मंत्रि-मंडल गुप्त संस्था बन पाती और न कार्यकारिणी और व्यवस्थापक-सभा का इतना घनिष्ट संबंध हो पाता। इंगलैंड की राज-व्यवस्था का आधुनिक रूप-रंग आज कुछ दूसरा ही होता।

इंगलैंड की यह विचित्र, बलवती मंत्रि-मंडल संस्था दुनिया की अन्य प्रजा-सत्तात्मक व्यवस्थापकी ढंग की सरकारों के लिए कई कारणों से आदर्श स्वरूप बन गई है। एक तो इस ढंग से सारी सत्ता प्रजा के प्रतिनिधियों के हाथ में रहती है, जिस से हर बात का आख़िरी फ़ैसला प्रजा के हाथ में रहता है, और प्रजा-सत्तात्मक सिद्धांत की पूर्ति होती है। दूसरे इस ढंग की सरकार से राष्ट्र के शासन की बागडोर ऐसे लोगों के हाथ में रहती है जिन का मत प्रजा के प्रतिनिधियों के बहुमत से मिलता है। तीसरे इस ढंग से कार्य-कारिणी को बड़ी सत्ता और स्वतंत्रता रहती है, जिस से देश का शासन अच्छा चलता है और शासन पर हमेशा प्रजा के उन प्रतिनिधियों की देख-रेख रहती है जो स्वयं प्रजा को जवाबदार होते हैं। चौथे इस ढंग से हर सार्वजनिक कार्य पर खूब विचार और चर्चा होती है। पाँचवें मंत्रियों को हमेशा अपने हर काम के लिए प्रजा की एक ऐसी कचहरी के सामने जवाब देने के लिए तैयार रहना पड़ता है जो काम बिगड़ते ही उन को फ़ौरन् बर्खास्त कर सकती है। छठे इस ढंग से एक सच्ची जन-सत्ता उत्पन्न होती है जिस का प्रत्येक सरकारी महकमें में तूती बोलता है और जिस का कार्यकारिणी और व्यवस्थापक सत्ताओ पर एक-सा अधिकार रहता है। सातवें इस ढंग से प्रजा के प्रतिनिधियों की इच्छानुसार राज-व्यवस्था में सब प्रकार के सुधार अथवा परिवर्तन आसानी से किए जा सकते हैं।

मंत्रि-मंडल प्रणाली अथवा व्यवस्थापकी पद्धति की सरकार का यह विशेष लक्षण है कि मंत्री व्यवस्थापक सभा के सदस्य होते हैं और मंत्रि-मंडल के प्रत्येक काम की प्रजा के प्रतिनिधि देख-रेख रखते हैं, जिस से सरकार के बिगड़ते हुए कामों को भी प्रजा के प्रतिनिधि अपनी आलोचना से सुधार और रोक सकते हैं। मंत्रि-मंडल पर प्रजा के प्रतिनिधियों का जब तक विश्वास रहता है तब तक कार्यकारिणी की अखंड सत्ता रहती है। इंगलैंड में प्रधान मंत्री पार्लामेंट के बहुमत के बल पर जो काम कर सकता है वह अमेरिका में प्रेसीडेंट भी नहीं कर सकता है। मंत्रियों के पार्लामेंट के सदस्य होने का रिवाज बन गया है। कोई ऐसा क़ानून नहीं है कि मंत्रियों को पार्लामेंट का सदस्य होना ही चाहिए। परंतु यदि इंगलैंड के मंत्री पार्लामेंट के सदस्य न रहें और उन पर प्रजा के प्रतिनिधियों की देख-रेख न रहे, तो अवश्य ही कुछ दिनों में वे 'राष्ट्र के चाकर' न रह कर केवल 'राजा के चाकर' हो जायँगे। प्रजा के किसी भी योग्य प्रतिनिधि को पार्लामेंट में अपनी योग्यता का परिचय दे कर राष्ट्र की सर्वोच्च संस्था मंत्रि-मंडल के सदस्य तक बन जाने का मौक़ा रहता है, जिस से इंगलैंड में हर योग्य और महत्ताकांक्षी नागरिक को देश-सेवा का लालच रहता है। इंगलैंड में अमेरिका की तरह देश के सर्वश्रेष्ठ लोगों को अपनी योग्यता का परिचय देने के लिये राजनीति से मुख मोड़ कर दूसरे क्षेत्रों में नहीं जाना पड़ता है।

आधुनिक बृटिश राज-व्यवस्था के अनुसार मंत्री पार्लामेंट को जवाबदार माने जाते हैं

और पार्लीमेंट के द्वारा राष्ट्र के। मंत्रि-मंडल केवल क़ानून बनाने और नीति निश्चय करने में ही नहीं लगा रहता है, उस के रोज़मर्रा के शासन की देख-रेख भी रखनी होती है। मंत्रियों की योग्यता और ईमानदारी पर तथा प्रजा के प्रतिनिधियों की उन से काम ले लेने की योग्यता पर इंगलैंड का सुशासन निर्भर रहता है। मंत्रि-मंडल-पद्धति की सरकार में मंत्रियों के काम बिगाड़ते ही प्रजा उन के कान खींच सकती है। मंत्रि-मंडल में पार्लीमेंट में ख्याति प्राप्त कर लेने वाले राजनैतिक नेता होते हैं, अनुभवी शासक नहीं। कुछ मंत्री अत्यंत तेजस्वी और चतुर होते तो हैं; कुछ केवल अच्छी योग्यता के चरित्रवान् मनुष्य। आम तौर पर वे किसी कार्य में दक्ष अथवा विशेषज्ञ शायद ही कभी होते हैं। सेना-विभाग का मंत्री किसी वकील या व्यापारी के बना दिया जाता है, जिस के सेना अथवा युद्ध-कला का कोई ख़ास ज्ञान नहीं होता। शिक्षा विभाग पर कभी-कभी कोई ऐसे ज़मींदार या महाजन महाशय आ विराजते हैं जिन्हें शब्दों का उच्चारण तक ठीक-ठीक करना नहीं आता। मंत्रि-मंडल के सदस्यों से सिर्फ़ कार्य-कुशल मनुष्य की बुद्धि से शासन चलाने की आशा रक्खी जाती है। प्रजा की प्रतिनिधि सभा पार्लीमेंट के सामने शासन के लिए जवाबदार मंत्री होते हैं और पार्लीमेंट देश की प्रजा के देश के शासन के लिए जवाबदार होती है। सारे शासन-विभागों का काम लगभग सारा ही शासन विभाग के अधिकारी चलाते हैं। मगर किसी विभाग के छोटे से छोटे अधिकारी की ग़लती के लिए पार्लीमेंट के सामने जवाब मंत्रियों के देना होता है। इस जवाबदारी के सिद्धांत के आजकल की राजनैतिक भाषा में 'मंत्रित्व की जवाबदारी' कहते हैं। इस पद्धति का लाभ यह है कि कोई काम बिगड़ने पर जिस मंत्री की जवाबदारी होती है उस के पकड़ कर सज़ा दी जा सकती है। मगर सज़ा इंगलैंड में इतनी ही होती है कि पार्लीमेंट काम बिगाड़नेवाले मंत्री के बर्खास्त कर सकती है। यूरोप के दूसरे देशों की तरह इंगलैंड में मंत्रियों पर शासन के कामों के लिए मुक़दमा नहीं चलाया जा सकता है। मगर अमेरिका की व्यवस्थापक-सभा तो किसी मंत्री के उस की अवधि से पहिले निकाल तक नहीं सकती है।

अब मंत्रियों की शासन की जवाबदारी इंगलैंड में मंत्रि-मंडल की सम्मिलित जवाबदारी होती है। अर्थात् शासन के हर काम के लिए सारा मंत्रि-मंडल जवाबदार समझा जाता है। मंत्रि-मंडल का एक दिल और एक दिमाग़ माना जाता है और वे मिल कर एक आदमी की तरह राजा और पार्लीमेंट दोनों का सामना करते हैं। अठारहवीं सदी तक इस सिद्धांत पर हमेशा अमल नहीं होता था। मंत्री अक्सर शासन-कार्य में सहयोग से काम नहीं करते थे। परंतु बाद में इस सिद्धांत पर सख़्ती से अमल होने लगा। सन् १८८५ ई० में जॉर्ज चतुर्थ ने अमेरिका के उपनिवेशों के संबंध में मंत्रियों की अलग-अलग राय लेनी चाही थी, परंतु मंत्रि-मंडल ने अपने सदस्यों की अलग-अलग राय भेजने से इन्कार कर दिया था। सन् १८५१ ई० में पर-राष्ट्र-सचिव लॉर्ड पामर्स्टन के मंत्रि-मंडल की राय के विरुद्ध फ़्रांस के विषय में अपनी राय ज़ाहिर करने पर उसे मंत्रि-मंडल से इस्तीफ़ा दे देना पड़ा था। सन् १९२५ के मंत्रि-मंडल के भारत-सचिव लॉर्ड बर्कनहेड के अख़बारों में लेख लिख कर अपना मत अलग दर्शाने का भी प्रधान मंत्री बाल्डविन ने विरोध किया

था और लॉर्ड बर्कनहेड को क़लम रख देनी पड़ी थी। कभी-कभी किसी मंत्री की व्यक्तिगत नीति और कार्य में अविश्वास का प्रस्ताव भी पार्लीमेंट में पेश होता है और ऐसे मौक़ों पर सिर्फ़ उस एक मंत्री से भी इस्तीफ़ा लिया जा सकता है।[१] परंतु साधारण तौर पर अगर कोई मंत्री अपनी मर्यादा न लाँघे और मंत्रि-मंडल की राय से मिल कर काम चलाता रहे तो सारे मंत्रि-मंडल की ढाल उस के कामों के बचाव के लिए तैयार रहती है और सारा मंत्रि-दल पार्लीमेंट में उस की सहायता करता है। प्रत्येक विभाग का मंत्री अपने विभाग में मंत्रि-मंडल के प्रतिनिधि की हैसियत से काम करता है और सारा मंत्रि मंडल उस से उस के काम के विषय में पूछ-ताछ कर सकता है। अस्तु, जब कभी किसी विभाग में कोई ऐसी विवादग्रस्त बात उठती है जिस में कठिनाई खड़ी होने की संभावना होती है तो उस विभाग का मंत्री उस विषय में सारे मंत्रि-मंडल की सलाह ले लेता है। फिर जो कुछ भी निश्चय होता है वह मंत्रि-मंडल का सम्मिलित निश्चय होता है। मगर इंगलैंड की राज व्यवस्था बड़ी लचीली है। इस 'मंत्रि-मंडल की सम्मिलित जवाबदारी' की पुरानी प्रथा को भी, जैसा हम बता चुके हैं, सन् १९३२ ई० की राष्ट्रीय सरकार ने उठा कर, ज़रूरत पड़ने पर, ताक़ पर रख दिया था। राष्ट्रीय मंत्रि-मंडल क़ायम रखने का मंशा पूरा करने के लिए व्यापारी चुंगी करों के प्रश्न पर मंत्रि-मंडल के सदस्यों को पार्लीमेंट में अपने अलग अलग विचार प्रगट करने और अलग-अलग मत देने की इजाज़त दे दी गई थी। यह सब होते हुए भी मंत्रि-मंडल के सारे सदस्यों को सभी बातों का पता नहीं रहता है। आम तौर पर मंत्रि-मंडल के अंदर तीन-चार मंत्रियों का एक दूसरा भीतरी दायरा रहता है, जिस से प्रधान-मंत्री प्रायः हर प्रश्न पर सलाह लेता है। कहा जाता है कि मज़दूर दल के प्रधान-मंत्री मेकडानेल्ड ने जब राष्ट्रीय सरकार बनाने का निश्चय किया था तब एक दो साथियों को छोड़ कर उस ने मंत्रि-मंडल के दूसरे सदस्यों से कोई सलाह नहीं की थी। पार्लीमेंट भंग करने का समाचार आ कर उस ने अचानक मंत्रियों को सुना दिया था। इंगलैंड में प्रधान-मंत्री की सचमुच बड़ी सत्ता होती है। मंत्रि-मंडल के दूसरे सारे सदस्य उसके मातहत होते हैं।

४—व्यवस्थापक-सभा—हाउस ऑव् कामन्स्

इंगलैंड की व्यवस्थापक-सभा को पार्लीमेंट कहते हैं। पार्लीमेंट आजकल की दुनिया भर की सारी व्यवस्थापक-सभाओं में सब से पुरानी, सब से बड़ी, और सब से शक्तिशाली धारा-सभा है। जैसा उस के बारे में कहा जाता है सचमुच वह व्यवस्थापक-सभाओं की मा है। तेरहवीं सदी के लगभग पार्लीमेंट का जन्म हुआ था; चौदहवीं सदी में वह पूरी तरह पर दो सभाओं में विभाजित हुई; सत्रहवीं सदी में उस ने राष्ट्र की लगाम राजा के हाथों से ली और उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में उस पर प्रजासत्ता का अच्छी तरह से रंग चढ़ा। धीरे-धीरे पार्लीमेंट ने अपनी सत्ता बढ़ा कर सरकार के हर विभाग पर अपनी हुकूमत जमा ली, और अब हर प्रकार से उस की सत्ता अपार और अखंड मानी

---

१ सन् १९३५ ई० में एबीसीनिया युद्ध के संबंध में परराष्ट्र-सचिव सर सेमुअल होर की नीति का विरोध होने पर उस से प्रधान-मंत्री ने इस्तीफ़ा ले लिया था।

जाती है। राजनीति का प्रसिद्ध विद्वान लार्ड ब्राइस लिखता है कि "बृटिश पार्लीमेंट हर क़ानून को बना और बिगाड़ सकती है, सरकार के रूप और राजकुल के उत्तराधिकारियों को बदल सकती है, न्याय-शासन के अमल में हस्तक्षेप कर सकती है और नागरिकों के पवित्र और पुराने अधिकारों को नष्ट कर सकती है। पार्लीमेंट और प्रजा में क़ानून कोई भेद नहीं मानता है, क्योंकि प्रजा की सारी अपार सत्ता और अधिकार पार्लीमेंट को होता है, मानो प्रजा ही पार्लीमेंट है। क़ानूनी सिद्धांतों के अनुसार पार्लीमेंट पुरानी जन-सभा की उत्तराधिकारी होने के कारण बृटेन की प्रजा ही है। अमलन और क़ानूनन, दोनों तरह से, पार्लीमेंट ही अब प्रजा और राष्ट्र की सारी सत्ता की एकमात्र और समुचित भंडार है; और इस लिए क़ानून में उस को ग़ैर-जवाब-दार और सर्वशक्तिमान माना जाता है।" व्यवस्थापक, क़ानूनी, शासन और धार्मिक, सब प्रकार के प्रश्नों और प्रबंधों का विचार और फ़ैसला करने का अखंड अधिकार पार्लीमेंट को होता है। अस्तु, इंगलैंड की सरकार को अच्छी तरह समझाने के लिए पार्लीमेंट के रूप-रंग और काम-काज को अच्छी तरह समझने की ज़रूरत है। पार्लीमेंट की दोनों सभाओं—हाउस ऑव् कामन्स और हाउस ऑव् लार्ड्स—में हाउस ऑव् कामन्स प्रजा के प्रतिनिधियों की सभा होने से प्रजा की सत्ता का केंद्र हो गई है। यहाँ तक कि इसी एक हाउस ऑव् कॉमन्स की सभा को आम भाषा में पार्लीमेंट कहा जाता है।

हाउस ऑव् कामन्स में आजकल क़रीब ७०७ सदस्य होते हैं, जिन को पाँच साल के लिए चुना जाता है। पादरियों, सरकारी नौकरों, दिवालियों, पागलों, सरकारी ठेकेदारों, सख़्त अपराधों के अपराधियों, और लार्ड्स को छोड़ कर हर एक मताधिकारी नागरिक हाउस ऑव् कामन्स का सदस्य चुना जा सकता है। इक्कीस वर्ष के ऊपर के, किसी एक निर्वाचन क्षेत्र में छः महीने तक बस चुकने वाले मर्दों को मत देने का अधिकार होता है। लड़ाई के बाद सेना से निकाले हुए सैनिकों के लिए छः महीने से घटा कर यह समय एक महीना कर दिया गया था। इस प्रकार एक जगह मताधिकार रखने वालों का दस पौंड की हैसियत का व्यापारी दफ़्तर दूसरे किसी निर्वाचन क्षेत्र में होने पर उस क्षेत्र में भी उन्हें एक दूसरा मत देने का अधिकार होता है। उसी प्रकार विश्वविद्यालयों में पढ़ कर उपाधि प्राप्त करने वालों को भी विश्वविद्यालयों के ख़ास निर्वाचन-क्षेत्रों में एक दूसरा मत देने का अधिकार होता है। इक्कीस वर्ष की उन स्त्रियों को भी जिन को पाँच पौंड किराए के मकान या ज़मीन का मालिक होने से ख़ुद या जिन के ख़ाविंदों को स्थानिक चुनावों में मत देने का अधिकार होता है, पार्लीमेंट के चुनाव में मत डालने का हक़ होता है। हाउस ऑव् कामन्स के सदस्यों को ४०० पौंड का वेतन या भत्ता दिया जाता है। उन को कामन्स सभा में जो चाहें सो कहने का हक़ होता है, और सभा के अंदर प्रगट किए गए विचारों के लिए उन पर बाहर मुक़दमा नहीं चलाया जा सकता है। हाउस ऑव् कामन्स की सभा की बैठकों के ज़माने में और बैठकों के चालीस दिन आगे और पीछे तक सदस्यों को आम तौर पर किसी अपराध के लिए गिरफ़ार नहीं किया जा सकता है। हाउस ऑव् कॉमन्स की बैठकें टेम्स नदी के किनारे, वेस्ट मिनिस्टर के पुराने पार्लीमेंट-भवन में ही अभी तक होती हैं। इस सभा-

भवन में हाउस ऑव् कामन्स के सारे सदस्यों के बैठने के लिए स्थान तक नहीं है; परंतु अपनी पुरानी चीज़ों के पुजारी अँगरेज़ों ने अभी तक इस स्थान को बढ़ाने या बदलने का प्रयत्न नहीं किया है। सभा स्थल में बैठने के लिए काफ़ी स्थान न होने के कारण भी अक्सर हाउस ऑव् कामन्स के अध्यक्ष को सभा में सुव्यवस्था क़ायम रखने के लिए नियम बनाने पड़े हैं। उदाहरणार्थ जिन सदस्यों को किसी दिन की बैठक में ख़ास तौर पर बोलने की इच्छा होती थी वे शुरू में ही सभा में आ जाते थे और अपना टोप अपने बैठने के स्थान पर रख कर बाहर चले जाते थे। टोप रख देने से वह जगह उन की हो जाती थी और बाद में आने वाले सदस्य उस जगह पर नहीं बैठ सकते थे। आयरलैंड के प्रतिनिधि अपनी सारी जगहों पर कब्ज़ा रखने के लिए एक सदस्य के साथ अपने सारे टोप भेजने लगे और वह एक सदस्य उन सब के टोपों को बहुत सी जगहों पर रख कर उन के लिए स्थान रख लेता था। अस्तु; सभा के अध्यक्ष को यह नियम बनाना पड़ा था कि कोई सदस्य अपने इस्तेमाली टोप के सिवाय दूसरा टोप सभास्थल में नहीं रख सकता है। सभा की बैठकें दर्शकों के लिए खुली होती हैं; मगर पहले यह नियम था कि किसी एक सदस्य के उठ कर अध्यक्ष से यह कहते ही कि, 'मुझे अजनबी दीखते हैं,' अध्यक्ष को सभा से दर्शकों को हटा देना पड़ता था। एक बार स्वयं प्रिंस ऑव् वेल्स हाउस ऑव् कामन्स में माननीय दर्शक की तरह बैठे हुए थे। आयरलैंड के एक शरीर सदस्य ने उठ कर अध्यक्ष से कह दिया कि, 'मुझे अजनबी दीखते हैं'। अध्यक्ष को मजबूर हो कर प्रिंस ऑव् वेल्स को सभा से हटा देना पड़ा। परंतु बाद में फ़ौरन ही इस नियम को बदल दिया गया। हाउस ऑव् कामन्स संसार की एक बड़ी प्रख्यात और प्रतिभाशाली संस्था है। हाउस ऑव् कामन्स बृटिश जाति के जीवन का प्राण और उस की राजनीति का केंद्र है। राजा और मंत्रि-मंडल की तरफ़ दुनिया की आँखें इतनी नहीं रहतीं जितनी कि हाउस ऑव् कामन्स की तरफ़। उस की चर्चाओं की ख़बरें समुद्रों के पार जाती हैं और अँगरेज़ी न जानने वाले लोग भी उन्हें अपने देशी अख़बारों में पढ़ते हैं। हाउस ऑव् कामन्स में जो मनुष्य प्रसिद्ध होता है उसे संसार जान जाता है। बृटिश जाति का इतिहास ही हाउस ऑव् कामन्स का अमीर उमरावों और राजा से लड़-लड़ कर स्वतंत्रता और अधिकार प्राप्त करने का इतिहास है। महारानी विक्टोरिया के काल के लेखकों का कहना था कि हाउस ऑव् कामन्स की सभा को सब कुछ करने का अधिकार है, और यही सभा इंगलैंड पर सब प्रकार से सीधा राज्य करती है। विक्टोरिया के समय में शायद ऐसा था; परंतु अब ऐसा कहना ठीक न होगा क्योंकि बहुत सी बातें अब हाउस ऑव् कामन्स के हाथ में न रह कर मंत्रि-मंडल के हाथ में चली गई हैं।

हाउस ऑव् कामन्स की सभा का मुख्य काम क़ानून बनाना है। अन्य कामों की अपेक्षा यह काम ही हाउस ऑव् कामन्स का लोगों की नज़र के सामने अधिक रहता है। परंतु जिस प्रकार क़ानून के अनुसार इंगलैंड का राजा, पार्लीमेंट की सलाह और मर्ज़ी से, क़ानूनों का बनानेवाला समझा जाता है, उसी प्रकार केवल क़ानूनी बुनियाद पर ही यह कहा जा सकता है कि पार्लीमेंट या हाउस ऑव् कामन्स क़ानून बनाता है। वास्तव में अब क़ानून बनाता है मंत्रि-मंडल। हाउस ऑव् कामन्स की बहु-संख्या केवल मंत्रि-मंडल के मसविदों

की हाँ में हाँ मिलाती है और अल्प-संख्या उन का विरोध करती है। हर क़ानून और हर मसला हाउस ऑव् कामन्स में बहु-संख्या की सहायता और अल्प-संख्या के विरोध से तय होता है। मंत्रि-मंडल बहुसंख्यक दल का होता है इस लिए हाउस ऑव् कामन्स की बहु-संख्या हमेशा उस का साथ देती है। जिन दिन कामन्स में बहु-संख्या मंत्रि-मंडल का विरोध करती है उसी दिन मंत्रि-मंडल के हाथ से सारे अधिकार छीन लिए जाते हैं और दूध की मक्खी की तरह उसे निकाल कर फेंक दिया जाता है। फिर भी क़ानून बनाने में न इंगलैंड के राजा अथवा पार्लीमेंट की दूसरी सभा हाउस ऑव् लॉर्ड्स का भाग रहता है और न हाउस ऑव् कॉमन्स के साधारण सदस्यों का ही। जिस प्रकार हाउस ऑव् कॉमन्स में अल्प-संख्या तीव्र आलोचना अथवा घोर विरोध करने के अतिरिक्त मंत्रि-मंडल की ओर से पार्लीमेंट में पेश किए मसविदों का और कुछ बना-बिगाड़ नहीं सकती उसी प्रकार मंत्रि-मंडल दल के सदस्य भी उन मसविदों में फेरफार नहीं कर सकते हैं। हाउस ऑव् कॉमन्स के अध्यक्ष के दाहिनी ओर बैठनेवाले पंद्रह-बीस मंत्रियों को छोड़ कर अन्य पार्लीमेंट के सदस्यों का क़ानून बनाने में उतना ही हाथ होता है जितना पार्लीमेंट के बाहर रहनेवालों का। पार्लीमेंट के साधारण सदस्यों को केवल आलोचना करने, उग्र करने और सरकार का किसी खास चीज़ की तरफ़ ध्यान खींचने का मौक़ा रहता है; परंतु यह बातें कोई भी बाहर का आदमी अखबारों में लेख लिख कर अथवा व्याख्यान दे कर भी कर सकता है। पार्लीमेंट में क़ानून बनाने की ताक़त मंत्रि-मंडल के उन सदस्यों के हाथ में रहती है जो मंत्रि-मंडल के भीतरी दायरे में होते हैं। हाउस ऑव् कॉमन्स में मंत्रि-मंडल के विरोधी दल के नेता की बात बहुत ध्यान से सुनी जाती है, क्योंकि उस के पीछे देश के लाखों मनुष्य होते हैं। मगर वह भी किसी सरकारी मसविदे में परिवर्तन नहीं करा सकता है। मंत्रिगण उस की बातें ध्यान से अवश्य सुनते हैं और अगर उस की कोई छोटी-मोटी बात या सुधार उन की पसंद आ जाता है तो उसे मान भी लेते हैं। परंतु जिस मंत्री के विभाग से मसविदे का संबंध होता है यदि वह विरोधी दल के नेता की बात मानने को तैयार न हो और विरोधी दल का नेता अपने सुधार को मंजूर कराने के लिए हठ पकड़े तो दलबंदी का सवाल खड़ा हो जाता है। मंत्रि-दल के सारे सदस्यों को मत्रियों की तरफ़ से दल के लिए मत देने का सख्त आदेश हो जाता है। उस मसविदे की हार जीत मंत्रि-मंडल के जीवन-मरण का प्रश्न बन जाती है क्योंकि मंत्रि-मंडल के किसी ज़रूरी प्रस्ताव की कामन्स में हार हो जाने पर मंत्रि-मंडल के इस्तीफ़ा दे देने की इंगलैंड में प्रथा हो गई है। अस्तु मंत्रि-दल की बहु-संख्या मसविदे के पक्ष में मजबूर हो कर मत देती है और अल्प-संख्या उस के विरोध में। मंत्रि-पक्ष की बहु-संख्या होने के कारण स्वभावतः मंत्रि-पक्ष की जीत होती है और विरोधी दल की हार होती है। विरोधी दल का नेता इस प्रकार अपने सुधार पर ज़ोर दे कर सिर्फ़ जनता का ध्यान खींच सकता है; मसविदे में परिवर्तन नहीं करा सकता है। कैसी विचित्र बात है कि इंगलैंड के प्रायः सारे क़ानून व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों की एक काफ़ी संख्या की इच्छा के हमेशा विरुद्ध बनाए जाते हैं ! व्यवस्थापक सभा के क़रीब आधे सदस्यों का प्रायः क़ानून बनाने में कुछ हाथ नहीं होता है। हाँ, व्यवस्थापक-सभा के सभी सदस्यों को आलोचना और चर्चा का अधिकार होता

है; परंतु व्यवस्थापक-पद्धति की सरकार में व्यवस्थापक-सभा में होने वाले व्याख्यानों का किसी प्रश्न के निश्चय पर असर नहीं पड़ता है क्यों कि हर प्रश्न पर मत दलबंदी के हिसाब से दिए जाते हैं। अफ़लातून की अक़्लमंदी से भरी वक्तृताएँ और शंकराचार्य की चर्चा भी आजकल के दलबंदी के अखाड़े हाउस ऑव् कॉमन्स में सदस्यों के मतों को टस से मस नहीं कर सकती हैं। पार्लीमेंट के सदस्यों का चुनाव ही मंत्रियों के पक्ष अथवा विपक्ष में मत देने के लिए किया जाता है। जो सदस्य जिस क्षेत्र से चुन कर आता है वह उस क्षेत्र के निर्वाचक-समूह का प्रतिनिधि माना जाता है और उस क्षेत्र में रहनेवाले उस सदस्य के दल के कार्यकर्ता उस पर हमेशा नज़र रखते हैं। अगर वह ज़रा भी डावाँडोल होता और पार्लीमेंट में दल के साथ मत देने में आनाकानी करता दिखाई देता है, तो फ़ौरन ही वह कार्यकर्ता उस की खबर लेते हैं और अगले चुनाव में उस को न चुनने की धमकी देते हैं। बर्क ज़रूर अपने मतदारों की राय के विरुद्ध भी पार्लीमेंट में मत दिया करता था। परंतु ऐसे सदस्य बिरले ही होते हैं। आजकल के पार्लीमेंट के सदस्य अच्छी तरह समझते हैं कि दल के नेताओं के विरुद्ध गए तो दूसरे चुनाव के बाद पार्लीमेंट में बैठ भी न सकेंगे। कभी कभी दल में फूट पड़ जाने पर किसी मंत्रि मंडल की हार भी हो जाती है, अथवा ऐसे अवसर पर मंत्रि-मंडल स्वयं ही इस्तीफ़ा दे देता है। उदाहरणार्थ ग्लैडस्टन सरकार सन् १८८५ ई० में और रोज़बरी सरकार सन् १८६५ ई० में अपने दल के सदस्यों में मतभेद हो जाने से खत्म हो गई थीं। सन् १८८६ ई के उदार दल के मंत्रि-मंडल ने आपस में फूट पड़ जाने पर स्वयं इस्तीफ़ा दे दिया था। परंतु अपवादों को छोड़ कर आम तौर पर हमेशा मंत्रि-मंडल की पार्लीमेंट में बहु-संख्या रहती है, और मंत्रि-मंडल ही बृटेन में क़ानून बनाने का काम करता है।

मंत्रि-मंडल का ही क़ानून बनाने का काम करना इंगलैंड की राजनैतिक प्रणाली की एक खास चीज़ है। मंत्रि-मंडल क़ानूनों के मसविदे तैयार कर के व्यवस्थापक सभा के सामने बहस के लिए पेश करता है। व्यवस्थापक-सभा में उन पर व्यक्तिगत सदस्यों के विचारों के अनुसार बहस नहीं होती है। सारे मसविदे मंत्रियों की तरफ़ से पेश होते हैं और उन पर दूसरे राजनैतिक दलों के विचारों की दृष्टि से पार्लीमेंट में बहस होती है। मंत्रियों का कोई मसविदा पार्लीमेंट में मंजूर न होने पर मंत्रि मंडल को इस्तीफ़ा दे देना पड़ता है और निर्वाचक समूह के उस भाग को धक्का पहुँचता है जिस के नेता मंत्री होते हैं। सिर्फ़ मंत्रि-मंडल के ही क़ानून बनाने का काम करने की प्रथा से क़ानून धीरे-धीरे और देर में भले ही बने परंतु एक बड़ा फ़ायदा होता है। मंत्रि-मंडल पर ही क़ानूनों पर अमल करने की ज़िम्मेदारी होने के कारण ऐसे क़ानून नहीं बनते हैं जिन पर अमल में कठिनाइयाँ पड़ें या जिन पर अमली दृष्टि से काफ़ी विचार न हुआ हो। दूसरे यूरोपीय देशों में ऐसा नहीं होता है। अमेरिका में तो क़ानून बनाने की संस्था और क़ानूनों पर अमल करनेवाली संस्थाओं को बिलकुल एक-दूसरे से अलग रक्खा गया है। यूरोप के दूसरे देशों में मंत्रियों और व्यवस्थापक-सभा के साधारण सदस्यों में इतनी होड़ रहती है कि बहुत-सी बार मंत्रि-मंडल की ओर से आए हुए मसविदे व्यवस्थापक-सभा में स्वीकृत नहीं होते हैं और साधारण

सदस्यों की ओर से आए हुए मसविदे मंजूर हो जाते हैं। इन योरोपीय देशों में न तो मसविदे पेश करने का अधिकार सिर्फ़ मंत्रि-मंडल ही को रहता है और न सब मसविदों पर मत ही सिर्फ़ दलों के विचार से दिए जाते हैं। परिणाम यह होता है कि क़ानूनों को अमल में लाने की ज़िम्मेदारी क़ानून बनानेवालों पर न रहने से बहुत से ऐसे क़ानून बन जाते हैं जिन पर अमल में काफ़ी कठिनाइयाँ होती हैं।

बिना उचित नेतृत्व के इस सभा का वही हाल होता है जो बिना सेनापति के किसी सेना का होता है। यही हाल सत्रहवीं सदी के अंत और अठारहवीं सदी के प्रारंभ काल में हाउस ऑव् कामन्स का था। न सरकारी कर्मचारी ही हाउस ऑव् कामन्स को रास्ता दिखाते थे और न प्रतिनिधियों के चुने हुए मंत्री ही होते थे। हाउस आव् कामन्स सट्टे का बाज़ार सा था। जिस के जो दिल में आता था करता था, और राजनैतिक सत्ता का दुरुपयोग होता था। आख़िरकार इस बीमारी का इलाज मंत्रि-मंडल की सरकार में मिला, जिस पद्धति को उन्नीसवीं सदी में सर्वथा मान लिया गया। अब यह बात प्रायः सर्वमान्य होगई है कि हाउस ऑव् कामन्स की सभा का काम शासन करना नहीं है। उस का काम केवल शासन की बागडोर ऐसे कुछ लोगों के हाथ में थमा देना है जो शासन को अच्छी तरह चला सकें और फिर उन लोगों के कामों पर देख-रेख रखना है। पार्लमेंट के साधारण सदस्यों का क़ानूनी मसविदे पेश करने का अधिकार नाममात्र के लिए रह गया है। कोई भी सदस्य कोई मसविदा पार्लमेंट में पेश कर सकता है। परंतु मंत्रि-मंडल की सहायता न होने पर उस के मसविदे का पास होना असंभव होता है। कभी भाग्य से किसी साधारण सदस्य की तरफ़ से पेश होनेवाला मसविदा मंज़ूर हो कर क़ानून भी बन जाय तो भी जब तक मंत्रि मंडल न चाहे उस पर अमल नहीं हो सकता है। हाउस ऑव् कामन्स में सदस्यों को वेतन देने के प्रस्ताव बहुत दिनों तक पास होते रहे परंतु जब तक इन विचारों को मंत्रि मंडल ने नहीं अपनाया तब तक उन पर कोई अमल नहीं हो सका। सन् १९०२ ई० में स्त्री के मर जाने पर साली से विवाह करने को जायज़ ठहराने के लिए एक मसविदा पेश हुआ था, और पार्लमेंट में लगभग दुगने मत से वह पास भी हो गया था। मगर मंत्रियों ने इस क़ानून पर अमल करने के लिए सहूलियतें नहीं दीं और बहुत दिनों तक यह मसविदा मृतप्राय ही रहा। हाउस ऑव् कामन्स के अधिकारों के संबंध में कहा जाता है। कि "हाउस ऑव् कामन्स आदमी को औरत और औरत को आदमी बनाने के सिवाय बृटेन में और सब कुछ कर सकता है।" यह कहना भी सत्य है क्योंकि निस्सन्देह कामन्स को संपूर्ण सत्ता होती है। मगर कामन्स अपनी इस सत्ता का प्रयोग सिर्फ़ मंत्रि-मंडल की सलाह और उस के नेतृत्व में ही कर सकता है, क्योंकि अब क़ानून बनाने तक की वास्तविक ताक़त हाउस ऑव् कामन्स के हाथों से निकल कर कार्यकारिणी के हाथों में चली गई है।

हाउस ऑव् कामन्स की सभा के नियमों के अनुसार मंगलवार और बुधवार की सभा को छोड़ कर हमेशा पार्लमेंट में सरकारी काम पहले लिया जाता है। मंगलवार और बुधवार के दिन साधारण सदस्यों के प्रस्तावों की सूचनाएँ पहले ली जाती हैं, और शुक्रवार

के दिन उन के मसविदों पर विचार होता है। ईस्टर के बाद से मंगलवार की शामें भी सरकार ले लेती है, और ह्विटसनटाइड के त्योहार के बाद से सिर्फ़ ह्विटसन के बाद के तीसरे और चौथे शुक्रवार को छोड़ कर और सारे दिन सरकार अपने काम के लिए लेने लगती है। अस्तु पार्लीमेंट के साधारण सदस्यों को अपनी रचनात्मक राजनीतिज्ञता दिखाने का काफ़ी समय तक नहीं मिलता है। जो दिन साधारण सदस्यों के लिए निश्चित होते हैं, उन पर भी उन के लिए बड़ी बंदिशें रहती हैं। रोज़ रात के बारह बजते ही पार्लीमेंट की बैठक अपने आप ख़त्म हो जाती है। हर शुक्रवार को सभा शाम के साढ़े पाँच बजे ख़त्म हो जाती है। साधारण सदस्य की तरफ़ से आई हुई कितनी ही ज़रूरी सूचना या मसविदे पर चर्चा चल रही हो, रात के बारह बजते ही कोई भी मंत्री प्रस्ताव ला कर पार्लीमेंट की बैठक एकदम बंद करा सकता है। परंतु सरकार को वक़्त की ज़रूरत होने पर इन नियमों का पालन नहीं किया जाता है। बारह बजे का नियम इस लिए बनाया गया था कि थोड़े से ज़िद्दी सदस्य लंबी-लंबी वक्तृताएँ झाड़-झाड़ कर पार्लीमेंट को रात भर बिठाकर तंग न कर सकें। परंतु इस से साधारण सदस्यों का अधिकार और भी कम हो गया है। किसी भी साधारण सदस्य के मसविदे के थोड़े से विरोधी रात के बारह बजे तक बोल कर मसविदे का गला घोंट डाल सकते हैं और वह बेचारा सदस्य उन्हें नहीं रोक सकता। अपने प्रस्ताव की तरफ़ सिर्फ़ ध्यान खींचने के अतिरिक्त और पार्लीमेंट का साधारण सदस्य अब कुछ नहीं कर सकता है। ईस्टर के बाद तो इतना करना भी मुश्किल हो जाता है और ह्विटसनटाइड के बाद तो बिलकुल कुछ नहीं किया जा सकता है। सरकार अपनी बहु-संख्या की सहायता से पार्लीमेंट में यहाँ तक तय कर लेती है कि अमुक तारीख़ तक अमुक काम ख़त्म हो जायगा। साधारण सदस्यों को आलोचना करने के अतिरिक्त और किसी काम का मौक़ा नहीं मिल पाता। पार्लीमेंट में बहु-संख्या दल के साधारण सदस्य तो मसविदों को देखने और समझने की कोशिश तक नहीं करते हैं। अपने दल के नेताओं को सारे मामलों में पूरी स्वतंत्रता दे कर वे संतोष कर लेते हैं। जिन बातों के लिए मत देने का नेताओं की ओर से उन्हें आदेश मिलता है, उन के लिए पार्लीमेंट में वे अपना मत दे देते हैं।

सच तो यह है कि हाउस ऑव् कामन्स को अब व्यवस्थापक-सभा कहना उचित नहीं है, क्योंकि हाउस ऑव् कामन्स अब क़ानून बनाने का काम नहीं करता है। वहाँ मंत्रि-मंडल के बनाए हुए क़ानूनों पर सिर्फ़ चर्चा होती है। अस्तु, राजनैतिक विषयों पर राय ज़ाहिर करने का अख़बारों और व्याख्यानों की तरह हाउस ऑव् कामन्स को भी एक ज़रिया कहा जा सकता है। बहुत सी बातें जो कभी-कभी हाउस ऑव् कामन्स में बहुत कुछ शोर मचाने से भी नहीं हो पाती हैं, अख़बारों में थोड़ा सा आंदोलन करने से हो जाती हैं। हाउस आव् कामन्स के इंगलैंड की राज-व्यवस्था में से किसी प्रकार अकस्मात् निकल जाने पर अब वहाँ की सरकार के काम-काज में कुछ फ़र्क़ नहीं पड़ेगा।

जिस प्रकार क़ानून बनाने की सत्ता अब हाउस ऑव् कामन्स के हाथ में नहीं है, उसी प्रकार उस को कार्यकारिणी सत्ता भी नहीं है। हाउस ऑव् कामन्स का मंत्रि-मंडल पर दबाव रहने के बजाय अब उल्टा मंत्रि-मंडल का हाउस पर दबाव रहता है। कहने के

लिए तो मंत्रियों को अपने प्रत्येक काम के बारे में राष्ट्र के प्रतिनिधियों को संतुष्ट करना पड़ता है; और अगर प्रतिनिधि उन के काम से संतुष्ट नहीं होते हैं तो मंत्रियों को इस्तीफ़ा दे देना होता है; परंतु वास्तव में आजकल का मंत्रि-मंडल कुछ भी करे पार्लीमेंट उसे निकालती नहीं है। अपने आप ही मंत्रि-मंडल किसी नीति के कारण भले ही इस्तीफ़ा दे दे। मंत्रि-मंडल को किसी काम के लिए पार्लीमेंट में दोषी ठहराना असंभव होता है, क्योंकि मंत्रियों के समर्थकों की ही पार्लीमेंट में बहुसंख्या रहती है। हाँ, एक चीज़ का डर अवश्य मंत्रियों को रहता है; वह है बृटेन का जन-मत। परंतु जन-मत का भय मंत्रियों को हाउस आव् कामन्स न हो तो भी रहेगा। अस्तु, पार्लीमेंट की दाब की बजाय मंत्रि-मंडल पर अब निर्वाचक-समूह की दाब रहती है। मगर निर्वाचक-समूह को अपना मत प्रगट करने का मौक़ा केवल चुनाव के समय मिलता है। उस समय भी वह सिर्फ़ सरकारी नीति की उन्हीं एक-दो विशेष बातों पर अपना मत प्रगट कर सकता है जिन पर मंत्रि-मंडल की तरफ़ से ज़ोर डाला जाता है। फिर भी राष्ट्र का निर्वाचक-समूह मंत्रियों की नीति के बारे में अपना मत बदल सकता है। परंतु दलबंदी की ज़ंजीरों में जकड़े हुए हाउस ऑव् कॉमन्स को मंत्रि-मंडल की सदा हाँ में हाँ ही मिलानी पड़ती है।

साल भर में छः महीने पार्लीमेंट बंद रहती है। इस छः महीने में मंत्रि-मंडल के कामों की किसी को कोई ख़बर नहीं होती है। केवल अख़बारों से उन के कामों की थोड़ी-बहुत ख़बर मिलती रहती है। पार्लीमेंट की बैठकें होने पर भी साधारण सदस्यों को मंत्रि-मंडल के कामों पर देख रेख रखने का अधिक अवसर नहीं रहता है। एक तो वैसे ही साधारण सदस्यों को मंत्रियों की कार्रवाई का हर पहलू समझना मुश्किल होता है। तिस पर लंदन में इस समय मौसम अच्छा होने के कारण दावत-तवाज़ह की भरमार रहती है और बहुत-से सदस्यों को पार्लीमेंट की रूखी चर्चाओं से स्वभावतः उन में अधिक मज़ा आता है। वे चारों तरफ़ आनंदोत्सवों में भाग लेते फिरते हैं और उन के लिए पार्लीमेंट की बैठकों में जम कर बैठना अथवा विभिन्न विषयों पर सरकारी रिपोर्टें पढ़ना असंभव हो जाता है। दल-प्रबन्धकों[1] के पास उन के पते रहते हैं और ज़रूरत पड़ने पर उन्हें टेलीफ़ोन से मत डालने के लिए बुला लिया जाता है। परंतु कभी-कभी वोट देने भी वे नहीं आते हैं। साधारण तौर पर सदस्यों को पार्लीमेंट में बैठा रखने का एक ही रास्ता मालूम होता है कि उन्हें अंदर बैठा कर बाहर से ज़रूरत रहने तक ताला बंद कर दिया जाय। सदस्यों के आराम के लिए और उन की हाजिरी बढ़ाने के लिए ही यह नियम बनाए गए थे कि बजाय लगातार बैठकों के[2] पार्लीमेंट की चार दिन ढाई बजे दिन से साढ़े-सात बजे शाम तक

[1] 'पार्टी-ह्विप्स'।

[2] पहले पार्लीमेंट की लगातार दिनभर और रात में देर तक बैठकें हुआ करती थीं। बहुत से सदस्य जेबों और टोपों में नारंगियाँ और बिस्कुट भर लाया करते थे और पार्लीमेंट में बैठे बैठे और कभी-कभी बोलते-बोलते भी नारंगियाँ खाते जाते थे। बहुत से सदस्य अपनी जगहों पर लेट भी जाते थे। एक बार तो एक सदस्य महाशय पार्लीमेंट के गुसलख़ाने में टब में पड़े हुए स्नान का मज़ा लूट रहे थे, कि इतने में वोट देने की घंटी बज

बैठकें हों और फिर खाना और आराम के लिए छुट्टी से बाद, रात के नौ बजे से रात के बारह बजे तक। लेकिन इन नियमों के बन जाने पर भी अधिक लाभ नहीं हुआ है। साधारण सदस्य कितने ही मेहनती बन जायँ और कितनी ही होशियारी से काम करें तो भी उन के लिए पार्लीमेंट का काम सँभाल लेना कठिन है। पार्लीमेंट में काम इतना अधिक रहता है और समय इतना कम रहता है कि साधारण सदस्यों पर अगर लगाम न रक्खी जाय और मंत्रियों के भरोसे पर अधिकतर काम न छोड़ दिया जाय तो पार्लीमेंट का काम पूरा करना नामुमकिन हो जाय।

सब से बड़ी हाउस ऑव् कॉमन्स की सत्ता 'थैली की सत्ता' मानी जाती है। अर्थात् कॉमन्स को सरकारी बजट घटाने, बढ़ाने, स्वीकार करने, न करने का पूरा अधिकार होता है। इस सत्ता के बल पर राजा को खर्च के लिए रुपया न देने की धमकियाँ दे कर हाउस ऑव् कॉमन्स ने राजछत्र तक का बल घटा दिया था। परंतु आजकल जिस प्रकार क़ानून बनाने और शासन करने में हाउस ऑव् कॉमन्स का हाथ नहीं रहता है, उसी प्रकार राष्ट्रीय बजट के बनाने में भी उस का हाथ नहीं रहता है। विभिन्न विभागों के विशेषज्ञों और अधिकारियों की सलाह से मंत्रि-मंडल जो आय-व्यय-पत्रक तैयार कर के पार्लीमेंट के सामने पेश करता है, उस की माँगें सब सदस्यों को स्वीकार करनी पड़ती हैं। अगर कोई खास माँग सदस्यों को स्वीकार न हो, तो उन्हें सारे मंत्रि-मंडल को निकाल देने के लिए तैयार रहना चाहिए। मंत्रि-मंडल दल के बहुत से सदस्यों को खास माँगें पसंद न होने पर भी वे अपने दल के नेताओं के विरुद्ध मत दे कर अपने दल की पार्लीमेंट में हार और विपक्ष की जीत कराना पसंद नहीं करते हैं। इस लिए वे चाहे जितना गुड़गुड़ाएँ और बुड़बुड़ाएँ मत आखिरकार अपने नेताओं के पक्ष में ही देते हैं। आय-व्यय की बारीकियों को भी अधिकतर सदस्य समझते नहीं हैं, इस लिए भी बजट पर अधिक चर्चा करना उन के लिए असंभव होता है। उदाहरणार्थ सेना-विभाग की माँगों को पार्लीमेंट के थोड़े से सेना विशेषज्ञों और पेन्शन-याफ़्ता कर्नलों और कैप्टनों के और कोई सदस्य नहीं समझ पाता है। अस्तु, जब इस विभाग की माँगों पर बहस चलती है, तो इन थोड़े से सेना-विभाग की बारीकियों को समझने वाले खास आदमियों को छोड़ कर दूसरे सदस्य बाहर जा कर सिगरेट पीने और गप्पें लगाने लगते हैं और पार्लीमेंट में सिर्फ़ थोड़े से लोग बैठे रह जाते हैं। मत देने के लिए घंटी बजने पर वे सब बाहर से आ कर अपने दलों के हुक्म के अनुसार मत दे जाते हैं। पार्लीमेंट के अंदर चर्चा कर के मंत्रि-मंडल के प्रस्तावों में फेरफार कराना हर तरह से असंभव होता है। कोई भी प्रख्यात विशेषज्ञ विद्वान् अख़बारों में एक खुली चिट्ठी लिख कर अथवा समाचार पत्रों में आंदोलन उठा कर अधिक सरलता से मंत्रि-मंडल के कामों पर असर डाल सकता है।

प्रस्तावों द्वारा सरकार के शासन की त्रुटियाँ बताना भी साधारण सदस्यों को नामुमकिन होता है, क्योंकि उन के साधारण प्रस्तावों पर बहस होना और उन का सरकार

गई। सदस्य महाशय टब में से उछल कर केवल एक तौलिया लपेट कर और शेष पहनकर यार लोगों के क़हक़हों की परवाह न कर के वोट दे आए।

के विरुद्ध पास होना पार्लीमेंट में असंभव होता है। परंतु कॉमन्स की प्रति दिन की बैठकों में सरकार से सदस्यों के सरकारी कामों के विषय में प्रश्नोत्तर खत्म हो जाने के बाद और पार्लीमेंट का दूसरा काम शुरू होने से पहले किसी भी सदस्य को, किसी आवश्यक विषय पर चर्चा करने के लिए, सभा का साधारण कार्य स्थगित कर देने का प्रस्ताव रखने का अधिकार होता है। सरकारी कामों की आलोचना करने के लिए सदस्य इस अधिकार का प्रयोग कर सकते हैं; परंतु कार्य स्थगित करने के प्रस्ताव के पक्ष में चालीस से अधिक सदस्यों के खड़े हो कर अपनी इच्छा प्रगट करने पर ही उस प्रस्ताव पर चर्चा चल सकती है। अगर कार्य स्थगित करने का प्रस्ताव किसी पुरानी चर्चा को पुनर्जीवित करने के लिए या किसी ऐसे विषय पर चर्चा करने के लिए होता है, जिस विषय पर भविष्य में चर्चा करने के लिए कोई प्रस्ताव आ चुका होता है, तो वह प्रस्ताव हाउस ऑव् कॉमन्स के नियमों के अनुसार नहीं लिया जा सकता है और हाउस ऑव् कामन्स का अध्यक्ष उस को लेने से इन्कार कर देता है। सरकारी पक्ष के लोग, सोच-सोच कर, पहले ही से सारे संभावित विषयों पर, प्रस्ताव भेज रखते हैं जिस से कि सरकार के विरोधियों को सरकार के विरुद्ध कार्य स्थगित करने के प्रस्तावों के लाने का कभी मौक़ा ही न मिल सके। अस्तु, सरकार के विरुद्ध आवाज़ उठानेवाले सदस्य के सारे मार्ग पटे पड़े रहते हैं। हाँ, एक रास्ता है और उस का सदस्य उपयोग भी ख़ूब करते हैं। प्रति दिन पार्लीमेंट की बैठक शुरू होते ही मंत्रियों से सवाल जवाब करने की पुरानी प्रथा चली आती है। सदस्यों को जो कुछ प्रश्न मंत्रियों से किसी विषय पर पूछना होता है, उस विषय पर वे प्रश्न लिख कर मंत्रियों के पास पहले से भेज देते हैं। जिन प्रश्नों का उत्तर उन्हें मंत्रियों से ज़बानी लेना होता है, उन प्रश्नों पर वे एक खास निशान लगा देते हैं। सभा शुरू होते ही इन प्रश्नों के छपे हुए उत्तर सदस्यों की मेज़ों पर रख दिए जाते हैं। ज़बानी उत्तर चाहनेवालों को ज़बानी उत्तर दे दिए जाते हैं। ज़रूरी विषयों पर सदस्यों को यकायक प्रश्न पूछने का भी अधिकार होता है। परंतु मंत्रियों को किसी प्रश्न का 'प्रजा के हित में' उत्तर न देने या साफ़ उत्तर न देने या बिल्कुल चुप रहने का भी अधिकार होता है। फिर भी सरकार को इन प्रश्नों का बहुत भय रहता है; क्योंकि कोई भी सदस्य सरकारी भेदों का पता लगाकर मौक़े बे मौक़े उचित अनुचित प्रश्न पूछ कर सरकार की पोल खोल सकता है। सभा के अध्यक्ष को प्रश्न स्वीकार करने न करने का अधिकार भी होता है। उस की राय में जो प्रश्न बहुत लंबा, व्यंगमय, बुरी भाषा में, मंत्रियों अथवा किसी सदस्य के चरित्र पर आक्षेप करनेवाला या केवल मंत्रियों की राय जानने के लिए होता है, उस को पूछने की वह इजाज़त नहीं देता है। सदस्य सरकार से प्रश्न पूछने की सत्ता का आम तौर पर ख़ूब प्रयोग करते हैं।

हाउस ऑव् कॉमन्स राष्ट्र के नेतृत्व का अखाड़ा होता है और देश भर की आँखें उस की तरफ़ रहती हैं। पार्लीमेंट में जो लोग नाम पैदा करते हैं, उन्हें देश के लोग अपना नेता मानते हैं। सात सौ देश भर के चुने हुए चतुर और अनुभवी प्रतिनिधियों में नाम पा लेना वास्तविक योग्यता का काम होता है। वर्षों में जा कर कहीं पार्लीमेंट में किसी का सिक्का जम पाता है। परंतु योग्य नेताओं के हाथ में राष्ट्र की बागडोर रहने से देश का कल्याण

होता है। पहले जिस मंत्रि-मंडल पर राजा का विश्वास नहीं रहता था, उस को इस्तीफ़ा दे देना पड़ता था। बाद में मंत्रि-मंडल को हाउस ऑव् कॉमन्स का विश्वास-पात्र रहने की चिंता रहती थी। अब मंत्रि-मंडल को निर्वाचकों का ध्यान रखना पड़ता है। अतः हाउस ऑव् कॉमन्स की करतूतों का निर्वाचकों पर क्या असर होगा, इस की मंत्रियों को बड़ी फ़िक्र रहती है; और इसी लिए बहुत बार ज़रूरी बातों पर पार्लीमेंट में इतना ध्यान नहीं दिया जाता है, जितना उन बातों पर जिन का असर चुनाव में राजनैतिक दलों पर पड़ता है। प्रधान मंत्री को हमेशा ऐसे मौक़े की फ़िराक़ रहती है, जिस पर चुनाव कराने से उस के दल की जीत और विपक्षियों की हार होने की संभावना हो। जब उसे कोई ऐसी बात समय पर मिल जाती है, जिस पर चुनाव में ज़ोर देने पर देश के निर्वाचक-समूह की उस के दल के पक्ष में मत देने की संभावना होती है, तभी वह अपने मंत्रि-मंडल का इस्तीफ़ा राजा के सामने पेश कर के नया चुनाव करवा लेता है। मंत्रि-मंडल-पद्धति की सरकार में सरकार की प्रजा तक हमेशा सीधी पहुँच रहती है। जब जिस बात पर चाहे, सरकार प्रजा का मत मालूम कर सकती है। अमेरिका में ऐसा नहीं हो सकता है। वहाँ जब तक अवधि पूरी न हो जाय तब तक प्रेसीडेंट, मंत्रि-मंडल या व्यवस्थापक सभा का चुनाव नहीं हो सकता है। इंगलैंड का प्रधान मंत्री जिस समय प्रजा के दिल से उतर जाय, उसी समय निकाला जा सकता है। अमेरिका का प्रधान अपनी अवधि पूरी होने से पहिले हर्गिज़ नहीं निकाला जा सकता। कहा जा सकता है कि इंगलैंड के प्रधान मंत्री को अपने दल के हित से जब चाहे तब चुनाव करा के देश भर को तंग करने और इस सत्ता का दुरुपयोग करने का मौक़ा रहता है। परंतु प्रधान मंत्री के लिए केवल दलबंदी के विचार से अपनी सत्ता का दुरुपयोग करना बृटिश प्रजा के सामने कठिन है। दूसरे ऐसी अवस्था में राजा को यह भी अधिकार होता है कि वह नया चुनाव न करा के दूसरे दल के नेताओं को मंत्रि-मंडल बनाने के लिए न्योता दे। परंतु इस अधिकार का राजा प्रयोग करेगा या नहीं, यह कहना बड़ा कठिन है, क्योंकि ऐसे अवसर नहीं आते हैं।[1] प्रधान मंत्री के हाथ में यह सत्ता अपने दल में सुव्यवस्था रखने के लिए अंकुश के समान होती है। जब मंत्रि मंडल दल के लोग मंत्रियों के कामों में अड़चनें डालने लगते हैं अथवा दल की व्यवस्था बिगाड़ने लगते हैं, तब प्रधान मंत्री उन को पार्लीमेंट भंग कर देने और नया चुनाव कराने की धमकी दे सकता है, जिस से सदस्य दब कर ठीक बर्ताव करने लगते हैं, क्योंकि पार्लीमेंट का सदस्य बनने में काफ़ी मेहनत और रुपए का ख़र्च होता है। हाउस ऑव् कॉमन्स का बृटिश राजनीति में इतने महत्व का स्थान है और उस की इतनी सत्ता मानी गई है कि जैसा हम पहले कह चुके हैं, पार्लीमेंट की इस एक सभा ही को आम भाषा में पार्लीमेंट कहा जाता है।

---

१ सन् १९३१ ई० में राष्ट्रीय सरकार बनाने के लिए मेकडानेल्ड के राजा से नया चुनाव कराने की प्रार्थना करने पर ऐसा अवसर आया था। राजा ने दूसरे दल के नेताओं को मंत्रि-मंडल रचने का न्योता दे कर अपने अधिकार का प्रयोग नहीं किया था और प्रधान मंत्री की प्रार्थना मंज़ूर कर के पार्लीमेंट भंग कर दी थी।

५—व्यवस्थापक-सभा—हाउस ऑव् लार्ड्स्

पार्लीमेंट की दूसरी सभा हाउस ऑव् लार्ड्स एक मिश्रित संस्था है। कम से कम छः श्रेणी के मनुष्यों को हाउस ऑव् लार्ड्स में बैठने का अधिकार होता है। एक तो शाही खानदान के शाहज़ादे लार्ड्स के सदस्य होते हैं और उन का दर्जा पीयर्स के ऊपर होता है। परंतु वे कभी हाउस ऑव् लार्ड्स में बैठने के लिए जाते नहीं हैं और हाउस ऑव् लार्ड्स की कारंवाई में उन का कोई हिस्सा नहीं होता है। दूसरी श्रेणी उन लोगों की होती है जिन की हाउस ऑव् लार्ड्स में मौरूसी जगहें होती हैं। यह लोग पीयर्स कहलाते हैं और इन के तीन भाग होते हैं। एक भाग इंगलैंड के पीयर्स का दूसरा भाग ग्रेट ब्रिटेन के पीयर्स का और तीसरा भाग यूनाइटेड किंगडम के पीयर्स का। पीयर्स बनाने का अधिकार राजा को माना गया है। परंतु वास्तव में मंत्रि-मंडल और ख़ास कर प्रधान मंत्री के इशारे पर साहित्य, क़ानून, कला, विज्ञान, राजनीति और व्यापार में ख्याति प्राप्त करनेवाले लोगों को मान देने के लिए अथवा हाउस ऑव् लार्ड्स का राजनैतिक रंग बदलने के लिए, पीयर्स बनाए जाते हैं। सन् १८८४ ई० में साहित्य में नाम पैदा करने के लिए कवि टेनीसन को पीयर बनाया गया था। इसी प्रकार लार्ड लिटन कला, लार्ड केलविन और लिस्टर विज्ञान, लार्ड गोशेन व्यापार, जेनरल रोबर्ट्स, वुल्ज़ले और किचनर युद्ध-कला में प्रवीणता दिखाने के लिए पीयर्स बनाए गए थे। लार्ड मेकाले और लिटन को कुछ राजनैतिक कारणों से पीयर बनाया गया था। हमारे देश के अत्यंत सफल और प्रसिद्ध वकील लार्ड सत्येंद्रप्रसन्न सिनहा को, भारतवासियों को ख़ुश करने और शायद यह विश्वास दिलाने के लिए कि महारानी विक्टोरिया के एलान के अनुसार बृटिश सरकार गोरे-काले का भेद नहीं मानती है, रायपुर का पीयर बनाया गया था; जिस से लार्ड सिनहा को हाउस ऑव् लार्ड्स में बैठने का हक़ हो गया था। राजा अर्थात् बृटिश मंत्रि-मंडल को असंख्य पीयर्स बनाने का अधिकार है और प्रधान मंत्री इस अधिकार का काफ़ी प्रयोग करता है। थोड़े से अपवादों को छोड़ कर पीयर्स की हाउस ऑव् लार्ड्स में मौरूसी जगहें होती हैं। बाप के मर जाने पर वारिस बेटा २१ वर्ष की उम्र होते ही हाउस ऑव् लार्ड्स में बैठने का अधिकारी हो जाता है। पीयर्स की पाँच उप-श्रेणियाँ होती हैं—ड्यूक, मार्कुइस, अर्ल, वाइकाउंट और बैरन। इन के आपस में छोटे-बड़े दर्जे हैं जिन का राजनैतिक बातों से अधिक संबंध नहीं है। जिस पीयर का दिवाला पिट जाता है या जिस को किसी सख़्त अपराध के लिए जेल में डाल दिया जाता है, उस को फिर हाउस ऑव् लार्ड्स में बैठने का अधिकार नहीं रहता है। पीयर का रुतबा और हाउस ऑव् लार्ड्स में मौरूसी जगह हो जाने पर किसी को उस से पीछा छुड़ा लेने का अधिकार नहीं होता। कई बार मौरूसी पीयर बनने वालों में से कुछ ने इस बात का प्रयत्न भी किया कि वे हाउस ऑव् लॉर्ड्स में न बैठ कर हाउस ऑव् कामन्स के सदस्य बनें; परंतु उन के सब प्रयत्न असफल रहे क्योंकि क़ानून के अनुसार उन्हें हाउस ऑव् लॉर्ड्स में ही बैठना चाहिए। स्त्रियों को हाउस ऑव् लार्ड्स का सदस्य होने का अधिकार देने का कई बार

प्रयत्न किया गया, परंतु अभी तक उस में सफलता नहीं हुई है।

हाउस ऑव् लार्ड्स के तीसरी श्रेणी में पीयर्स के स्कॉटलैंड के प्रतिनिधि पीयर्स होते हैं। प्रत्येक नई पार्लामेंट में बैठने के लिए स्कॉटलैंड के सारे पीयर्स मिल कर अपने सोलह प्रतिनिधि चुन लेते हैं जिन को उस पार्लामेंट की ज़िंदगी तक हाउस ऑव् लार्ड्स में बैठने का अधिकार रहता है। चौथी श्रेणी में इसी तरह आयरलैंड के पीयर्सों के चुने हुए २८ प्रतिनिधि होते थे; जिन को अपने जीवन-पर्यंत हाउस ऑव् लार्ड्स में बैठने का अधिकार होता था। आयरलैंड के जो पीयर्स हाउस ऑव् लार्ड्स के लिए चुने नहीं जाते थे, उन को आयरलैंड के अतिरिक्त ग्रेट ब्रिटेन के और किसी भी भाग से हाउस ऑव् कॉमन्स में चुने जाने का अधिकार होता था। परंतु जब से आयरलैंड की सरकार अलग हो गई है तब से स्थिति बदल गई है। लॉर्ड्स की पाँचवीं श्रेणी में वे क़ानूनी पंडित होते हैं जिन को ख़ास तौर पर न्यायाधीश का कार्य करने के लिए हाउस ऑव् लार्ड्स का सदस्य बनाया जाता है। हाउस ऑव् लार्ड्स का एक काम बृटिश साम्राज्य भर की अदालतों की अपीलें सुनना भी होता है और इस लिए यह आवश्यक होता है कि लार्ड्स के सदस्यों में क़ानूनों के विशेषज्ञ भी कुछ रहें। इन क़ानूनी सदस्यों की जगहें हाउस ऑव् लार्ड्स में मौरूसी नहीं होतीं। ज़िंदगी भर तक ही लार्ड्स का सदस्य रहने का उन्हें अधिकार होता है। लॉर्ड चांसलर की अध्यक्षता में इन सदस्यों की कचहरी बृटिश साम्राज्य की सब से बड़ी अपील की अदालत मानी जाती है। भारतवर्ष से हाई कोर्ट के फ़ैसलों के बाद अपीलें इसी अदालत के सामने जाती हैं। अदालत का कार्य चलाने के लिए सिर्फ़ तीन क़ानूनी सदस्यों की संख्या काफ़ी होती है। वैसे तो हाउस ऑव् लार्ड्स के सारे सदस्यों को, ख़ास कर क़ानून में दख़ल रखनेवालों को, इस अदालत के काम में भाग लेने का अधिकार होता है; परंतु आम तौर पर सिर्फ़ क़ानूनी सदस्य ही न्याय का काम करते हैं, अन्य सदस्य उस में दख़ल नहीं देते।

छठी श्रेणी हाउस ऑव् लार्ड्स में पादरियों की है। किसी ज़माने में हाउस ऑव् लार्ड्स में इन्हीं लोगों की संख्या सब से अधिक होती थी। परंतु अब क़ानून के अनुसार धार्मिक संस्थाओं के सिर्फ़ २६ प्रतिनिधि हाउस ऑव् लार्ड्स में बैठ सकते हैं। कैंटरबरी और यॉर्क के आर्चबिशपों और लंडन, डरहेम और विंचेस्टर के बिशपों को क़ानूनन लार्ड्स में बैठने का अधिकार प्राप्त है। शेष २१ धार्मिक प्रतिनिधि उन के सिवा समय के अनुसार प्रधान मंत्री की इच्छा से चुने जाते हैं। हाउस ऑव् लार्ड्स में आजकल ६७५ के लगभग सदस्यों का औसत रहता है। सातवें हेनरी के समय में लॉर्ड्स में सिर्फ़ ८० सदस्य थे; उन में भी अधिकतर पादरी ही थे। परंतु पिछले डेढ़ सौ वर्ष में यह संख्या ८० से बढ़ कर ६७५ के क़रीब हो गई है। केवल सन् १८३० ई० और १८९८ ई० के बीच के समय में ही ३६४ नए लार्ड्स बना डाले गए। चालीस वर्ष के अपने शासन में उदार दल ने २२२ नए लार्ड्स बनाए और अनुदार दल ने २७ वर्ष में १४२। आजकल के लॉर्ड्स में से क़रीब आधे से अधिक पिछले ६० वर्षों में इस पद को प्राप्त हुए हैं। इतने बड़े हाउस ऑव् लार्ड्स का कोरम सिर्फ़ तीन होता है। मगर लार्ड्स में ३० सदस्य मौजूद न होने पर किसी बात का निश्चय नहीं किया जाता है। आम तौर पर लार्ड्स की सलाह में

चार बैठकें होती हैं; परंतु अधिक काम न रहने से बहुत शीघ्र ही; प्रायः एक घंटे में; खत्म हो जाती हैं। हाउस ऑव् लार्ड्स का अध्यक्ष लार्ड चांसलर होता है जिस को प्रधान मंत्री की सिफ़ारिश पर राजा नियुक्त करता है। परतु लार्ड चांसलर हाउस ऑव् कामन्स के प्रमुख 'स्पीकर' की तरह हाउस ऑव् लार्ड्स की कार्रवाई को बहुत नियमित नहीं करता। बोलने वाला सदस्य उस को संबोधन न कर के 'माई लार्ड्स' कर के सब सदस्यों को संबोधित करता है और अगर दो या अधिक सदस्य एक साथ बोलने के लिए खड़े हो जाते हैं तो हाउस ऑव् लार्ड्स की सभा ही इस बात का फ़ैसला करती है कि कौन पहले बोले।

सौ वर्ष से हाउस ऑव् लार्ड्स को सुधारने या सर्वनाश कर डालने के लिए आंदोलन चल रहा है। परंतु थोड़े से मज़दूर दल के लोगों को छोड़ कर और कोई हाउस ऑव् लार्ड्स का सर्वनाश कर डालने के लिए तैयार नहीं है। लार्ड्स के विरोधियों का कहना है कि लार्ड्स के सदस्य अधिकतर दक़ियानूसी विचारों के मौरूसी ज़मींदार और महाजन होते हैं, जो प्रगतिशील विचारों और परिवर्तनों से डरते हैं, और इस लिए देश की उन्नति के मार्ग में सदा आड़े आते हैं। लॉर्ड का बेटा, बुद्धू हो या बुद्धिमान, केवल मौरूसी हक़ से हाउस ऑव् लार्ड्स का सदस्य बन कर राष्ट्र का भाग्य बनाने बिगाड़ने का अधिकारी हो जाता है। अधिकतर सदस्य हाउस ऑव् लार्ड्स के काम में शौक़ तक नहीं दिखाते हैं। सभाओं में बहुत कम आते हैं और आते भी हैं, तो गहन विषयों तक का जल्दी-जल्दी निश्चय कर के चले जाते हैं। लोग लार्ड्स का विरोध इस लिए भी करते हैं कि लार्ड्स की सभा प्रजा के हितों की प्रतिनिधि नहीं है। मगर १६ वीं सदी के सुधारों से पहले हाउस ऑव् कामन्स में भी लार्ड्स की तरह ज़मींदारों और अमीरों की ही अधिक संख्या होती थी। सन् १८६७ और १८८४ ई० के सुधारों के बाद सर्व-साधारण को मताधिकार मिल जाने से हाउस ऑव् कामन्स प्रजा का प्रतिनिधि बना और मंत्रि-मंडल-पद्धति की सरकार के विकास के बाद से शासन पर प्रजा का अंकुश हुआ। मगर हाउस ऑव् लार्ड्स लगभग जैसा का तैसा ही रहा है। सन् १८३२ ई० से हाउस ऑव् लार्ड्स को सुधारने का प्रश्न ज़ोरों से उठा और सन् १६०६ ई० तक हाउस ऑव् कामन्स और लार्ड्स में सुधार के कई प्रयत्न किए गए। मगर लार्ड्स में सुधार के सब प्रयत्न निष्फल रहे। सन् १८८६ ई० तक हाउस ऑव् लार्ड्स में उदार और अनुदार, दोनों दलों के सदस्य काफ़ी संख्या में होते थे। अनुदार दल के सदस्यों की संख्या अधिक होती थी; परंतु उदार दल के सदस्यों की संख्या भी उन से कुछ ही कम रहती थी। ज़ोर मार कर अकसर उदार दलवाले बहुत सी अपनी बातें लार्ड्स में पास करा ले जाते थे। परंतु सन् १८८६ ई० में ग्लैड्स्टन के पहले आयरिश होमरूल बिल पर उदार दल में फूट पड़ जाने से उदार दल कमज़ोर हो गया। जोज़ेफ़ चेंबरलेन के नेतृत्व में उदार दल के बहुत से लोगों ने 'लिबरल यूनियनिस्ट' नाम का एक नया दल बना लिया, जो बाद में धीरे-धीरे अनुदार दल में जा मिला। इस घटना के बाद से हाउस ऑव् लार्ड्स में अनुदार दल का ज़ोर हो गया और तब से आज तक लार्ड्स में उसी दल का तूती बोलता है। उदार-दल के हाउस ऑव् लार्ड्स में बहुत थोड़े सदस्य रह गए। सन् १६०५ ई० में हाउस

ऑव् लार्ड्स के ६०० सदस्यों में सिर्फ़ ४५ सदस्य उदार दल के थे और सन् १६१० में ६१८ सदस्यों में सिर्फ़ ७५ सदस्य उदार दल के थे। आश्चर्य की बात तो यह है कि सन् १८३० ई० से १६१० ई० तक उदार दल ने अपने दो सौ नए पीयर्स बनाए। मगर देखने में आया है कि हाउस ऑव् लार्ड्स की काजल की कोठरी में जो सदस्य जाता है वह कुछ दिनों में, वह नहीं तो उस का बेटा, दक़ियानूस विचारों का हो कर अनुदार दल में मिल जाता है। अस्तु, हमेशा ही हाउस ऑव् लार्ड्स अनुदार दल का सहायक और दूसरे प्रगतिशील दलों का विरोधी रहता है।

सन् १६०६ ई० में हाउस ऑव् लॉर्ड्स और कॉमन्स में ज़ोर का झगड़ा ठन गया था। सन् १४०७ ई० से यह बात आम तौर पर मान ली गई थी कि रुपए-पैसे के संबंध रखनेवाले सारे मसविदे हाउस ऑव् कॉमन्स में पेश होने चाहिए और कॉमन्स में मंज़ूर हो जाने पर लार्ड्स को उन्हें स्वीकार कर लेना चाहिए। परंतु लार्ड्स ने बाक़ायदा इस सिद्धांत को कभी स्वीकार नहीं किया था। अंत में कॉमन्स ने हाउस ऑव् लार्ड्स के आर्थिक मसविदों को और अपने आर्थिक मसविदों पर लार्ड्स के सुधारों को नामंज़ूर कर के अपने रुपए-पैसे संबंधी अधिकार लार्ड्स से स्वीकार करा लिए। उदाहरणार्थ सन् १८६० ई० में कॉमन्स् ने काग़ज़ पर से कर उठाने का एक मसविदा पास किया और लार्ड्स ने इस मसविदे को अस्वीकार किया। इस पर कॉमन्स ने देश में इतना शोर मचाया कि दूसरे वर्ष ही काग़ज़ का कर उठा लिया गया। हमेशा से राष्ट्रीय आय-व्यय पर प्रजा के प्रतिनिधियों की सभा हाउस ऑव् कॉमन्स का अधिकार रखना बृटिश प्रजा को पसंद रहा है; क्योंकि 'थैली की सत्ता' हाथ में रख कर ही प्रतिनिधि-सभा सरकार पर अपनी हुकूमत क़ायम रखती है। सन् १६०८ ई० में उदार दल के अर्थ-सचिव लायड जॉर्ज के बजट को हाउस ऑव् लॉर्ड्स ने स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। इस पर देश भर में बड़ा तहलका मच गया और हाउस ऑव् लार्ड्स और हाउस ऑव् कॉमन्स का द्वंद्व-युद्ध छिड़ गया। अंत में हाउस ऑव् कॉमन्स में एक प्रस्ताव पास हुआ कि "हाउस ऑव् कॉमन्स के मंज़ूर किए हुए सालाना आय-व्यय-पत्रक को हाउस ऑव् लार्ड्स ने स्वीकार न कर के देश की राज-व्यवस्था को भंग किया है और हाउस ऑव् कॉमन्स के अधिकारों को कुचला है।" साथ ही उदार दल के मंत्रि-मंडल ने यह भी निश्चय किया कि, "इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर प्रजा की राय लेने की ज़रूरत है।" अस्तु, पार्लीमेंट भंग कर के सन् १६१० ई० में नया चुनाव किया गया जिस में फिर से उदार दल के लोग ही अधिक संख्या में चुन कर आए। नई पार्लीमेंट खुलने पर राज-छत्र की ओर से होनेवाली वक्तृता[१] में कहा गया कि "शीघ्र ही हाउस ऑव् लॉर्ड्स और हाउस ऑव् कॉमन्स के परस्पर संबंध की ऐसी साफ़-साफ़ व्याख्या कर दी जायगी कि जिस से हाउस ऑव् कॉमन्स का राष्ट्रीय आय-व्यय पर पूर्ण अधिकार और क़ानून बनाने में भी हाउस ऑव् लॉर्ड्स से अधिक अधिकार स्पष्ट हो जायगा।"

---

[१] नई पार्लीमेंट खुलने पर राजा मंत्रि-मंडल की तरफ़ से तैयार की हुई एक वक्तृता पढ़ता है जिसमें मंत्रि-मंडल की भावी नीति का बयान रहता है।

उदार दल का बजट फिर से पार्लमेंट में पेश हुआ और लार्ड्स ने डर कर उस को जैसा का तैसा मंज़ूर कर लिया। परंतु इस बजट के पास होने से पहले ही प्रधान मंत्री ने हाउस ऑव् कॉमन्स में कई प्रस्ताव पास करा लिए थे, जिन की बुनियाद पर सन् १६११ ई० का 'पार्लमेंट-बिल' बना कर बड़े झगड़े-टंटों और धमकियों के बाद यह बिल हाउस ऑव् कामन्स में मंज़ूर हुआ। परंतु हाउस ऑव् लार्ड्स में 'पार्लमेंट-बिल' पेश होते ही उस में बहुत से सुधार पेश किए गए। मिस्टर ऐस्क्विथ के उदार मंत्रि-मंडल ने लार्ड्स को एक भी सुधार स्वीकृत करने से साफ़ इन्कार कर दिया। अस्तु, पार्लमेंट भंग कर के प्रजा की राय जानने के लिए फिर से सन् १६११ में नया चुनाव किया गया। परंतु इस चुनाव के बाद भी उदार दल के सदस्यों की ही बहुसंख्या हाउस ऑव् कामन्स् में चुन कर आई और जनमत को अपने पक्ष में पा कर उदार दल का अनुदार हाउस ऑव लार्ड्स की सत्ता को हमेशा के लिए घटा देने का निश्चय और भी दृढ़ हो गया। अतएव हाउस ऑव् लार्ड्स में 'पार्लमेंट बिल' का फिर से विरोध उठने पर उदार दल की सरकार की तरफ़ के लार्ड्स को धमकी दी गई कि सरकार पार्लमेंट बिल में तिल भर भी परिवर्तन स्वीकार नहीं करेगी और लार्ड्स के ज़्यादा चूँ-चाँ करने पर सरकार नए पीयर्स बना कर हाउस ऑव् लार्ड्स में अपने समर्थकों को भर देगी और पार्लमेंट बिल को जैसा का तैसा ही अपनी इच्छानुसार पास करावेगी। अगर लार्ड्स ने हठ की होती और सरकार को अपनी धमकी सच्ची करने के लिए मजबूर होना पड़ा होता तो प्रधान-मंत्री को पार्लमेंट बिल लार्ड्स में मंज़ूर कराने के लिए चार सौ नए पीयर्स बनाने पड़े होते। परंतु इस भयानक धमकी से लार्ड्स के पाँव उखड़ गए और उन्हों ने पार्लमेंट बिल को हाउस ऑव् लार्ड्स में हाउस ऑव् कामन्स की मर्ज़ी के मुताबिक़ जैसा का तैसा पास हो जाने दिया। आखिरकार प्रजा-सत्ता को विजय मिली। इस 'पार्लमेंट बिल' के अनुसार आर्थिक मसविदे हाउस ऑव् कामन्स में पास हो जाने के बाद हाउस ऑव् लार्ड्स में नामंज़ूर होने पर भी कुछ दिन के बाद राजा के हस्ताक्षरों से ही क़ानून बन सकते हैं। कौन-सा मसविदा आर्थिक मसविदा है, इस का निश्चय हाउस ऑव् कामन्स के अध्यक्ष की राय पर छोड़ा गया है, जिस की राय इस मामले में आख़िरी होती है। इसी बिल के अनुसार पार्लमेंट की ज़िंदगी पाँच वर्ष से अधिक बढ़ाने के प्रस्ताव के अतिरिक्त दूसरा कोई भी साधारण मसविदा हाउस ऑव् कामन्स की तीन लगातार बैठकों में पास हो जाने पर और प्रत्येक बार बैठकें ख़त्म होने से एक महीना पहले हाउस ऑव् लॉर्ड्स के पास भेजा जाने पर यदि वहाँ तीनों बार भी वह स्वीकार न किया जाय तो भी सिर्फ़ हाउस ऑव् कॉमन्स की इच्छानुसार राजा के हस्ताक्षरों से ही क़ानून बन सकता है— बशर्ते कि उस मसविदे के हाउस ऑव् कॉमन्स में पहली बार पेश होने और आख़िरी बार पेश होने के बीच में दो वर्ष का अरसा बीत चुका हो और उस की शक्ल में कोई तबदीली न की गई हो। इस ऐक्ट के अनुसार पार्लमेंट की ज़िंदगी सात वर्ष से घटा कर पाँच वर्ष कर दी गई थी। इस ऐक्ट ने सदियों से मानी जानेवाली हाउस ऑव् लॉर्ड्स और हाउस ऑव् कॉमन्स् की बराबर की हैसियत को मिटा कर हाउस ऑव् कॉमन्स

की प्रधानता और प्राबल्य का सिक्का जमाया; क़ानून बनाने में लार्ड्स का आज भी काफ़ी हाथ रहता है। हाउस ऑव् कॉमन्स में पास हो जानेवाले मसविदों को हाउस ऑव् लार्ड्स बिलकुल अस्वीकार करने का अधिकार न रखने पर भी दो वर्ष तक उन को लटकाए रखने का अधिकार तो अभी तक रखता ही है। अस्तु, कोई क्रांतिकारी मसविदा हाउस ऑव् कॉमन्स बिना हाउस ऑव् लार्ड्स की मर्ज़ी के जल्दी से पास नहीं कर सकता है। ग़ैर-ज़रूरी मसविदों को दो वर्ष तक लटका कर हाउस ऑव् लॉर्ड्स आसानी से ख़त्म कर सकता है। परंतु जो मसविदे इतने ज़रूरी होते हैं कि दो वर्ष तक लटके रहने पर भी प्रजा की आँखों में चढ़े रहते हैं और सब प्रकार की समालोचनाओं की कसौटी पर चढ़ कर भी चमकते हुए निकल आते हैं उन को रोक लेना अब ज़रूर हाउस ऑव् लार्ड्स की सामर्थ्य में नहीं रहा है। 'प्लूरल वोटिंग बिल' इत्यादि कई आवश्यक मसविदे दो वर्ष तक लटके रहने के बाद भी पार्लीमेंट मे पास हुए हैं। क़ानून बनाने में यह प्रधानता और प्राबल्य हाउस ऑव् कॉमन्स को प्राप्त हो जाने के बाद से लगभग क़ानून बनाने की संपूर्ण सत्ता हाउस ऑव् कामन्स के हाथ में आ गई है। हाउस ऑव् लार्ड्स अब अधिक से अधिक क़ानून बनाने में जल्दबाज़ी रोक सकता है, क़ानून बनाना नहीं रोक सकता है। अभी तक कोई ऐसा नियम नहीं है कि साधारण मसविदे हाउस ऑव् लार्ड्स में पहिले पेश न होकर कॉमन्स में पहले पेश हों। मशूर रिवाज के अनुसार सारे मसविदे कॉमन्स में ही शुरू होते हैं। पार्लीमेंट ऐक्ट पास हो जाने के बाद भी हाउस ऑव् लार्ड्स के सुधार की चर्चा अब तक चलती है। बहुत से लोगों का कहना है कि हाउस ऑव् लार्ड्स में मौरूसी पीयर्स के बैठने का अधिकार नहीं होना चाहिए—कुछ पीयर्स प्रजा के द्वारा चुन कर आना चाहिए, कुछ कामन्स के सदस्यों द्वारा चुने जाने चाहिए और कुछ देश भर के विभिन्न हितों के प्रतिनिधि होने चाहिए जिन को विज्ञान, कला, साहित्य और व्यापारी सभा-समाजों से चुन कर आना चाहिए। इस पर कुछ राजनीतिज्ञों का कहना है कि यदि हाउस ऑव् लार्ड्स भी हाउस ऑव् कामन्स की तरह देश के हितों का प्रतिनिधि बन गया तो वह हाउस ऑव् कामन्स से कम हैसियत का रहना क्यों पसंद करेगा? हमारी समझ में यह डर फ़िज़ूल है, क्योंकि प्रथम तो हाउस ऑव् कामन्स कोई ऐसा क़ानून ही पास होने नहीं देगा जिस से उस की ताक़त कम हो जाय। दूसरे जब तक जवाबदार मंत्रि-मंडल पद्धति की सरकार इंगलैंड में क़ायम रहेगी, तब तक व्यवस्थापक सभा की प्रतिनिधि सभा ही सर्व-शक्तिमान रहेगी। एक प्रख्यात अंगरेज़ लेखक लिखता है कि "जब तक हाउस ऑव् कामन्स के पीछे देश का निर्वाचक-समूह रहेगा, तबतक लार्ड्स उस की लगाम नहीं थाम सकते। सुधारों को रोकना तो दूर रहा, अगर निर्वाचक-समूह क्रांति करने पर तुल जाय और उस का साथ देने के लिए मंत्रि-मंडल तैयार हो जाय, तो हाउस ऑव् लार्ड्स इंगलैंड में क्रांति होना तक नहीं रोक सकता है।"

६—स्थानिक शासन और न्याय-शासन

बृटेन के स्थानिक शासन में भी अब वह पुरानी अव्यवस्था और पेचीदापन नहीं रहा है। शासन-क्षेत्रों की विभिन्नता कम हो गई है। अधिकारियों की संख्या भी कम कर दी गई है और उन के एक-दूसरे से संबंध साफ़ और सीधे हो गए हैं। केंद्रीय अधिकारियों का हाथ भी स्थानिक शासन की रहबरी के लिए मज़बूत कर दिया गया है। सारे देश को शासन-प्रबंध के लिए 'काउंटीज़' और 'काउंटी बोरोज़' में बाँट दिया गया है। काउंटीज़ को देहाती ज़िलों, शहरी ज़िलों और बोरोज़ में बाँटा गया है और इन भागों को और भी छोटे भागों—'पैरिशों'—में विभाजित किया गया है। ग़रीबों की मदद के लिए बनाए गए 'ग़रीब क़ानूनों' का शासन चलाने के लिए इन पैरिशों की अलग संघें बना ली जाती हैं। राजधानी लंदन शहर का शासन एक ख़ास ढंग पर चलता है।

यूरोप के दूसरे देशों की अपेक्षा बृटेन में हमेशा से केंद्रीय सरकार ने स्थानिक शासन में कम हस्तक्षेप किया है। जैसा आगे चल कर हम फ्रांस के स्थानिक शासन में केंद्रीय सरकार के अधिकारी प्रीफ़ेक्ट को स्थानिक शासन का कर्ता-धर्ता अधिकारी पाएँगे वैसा इंगलैंड के स्थानिक शासन में हमें कोई केंद्रीय सरकार का अधिकारी नहीं मिलता है। स्थानिक शासन केंद्रीय सरकार के संगठन का निरा एक अंग न बन जाने पर भी पिछले साठ-सत्तर वर्षों से ग़रीबों की मदद, शिक्षा, आर्थिक प्रबंध, स्वास्थ्य इत्यादि स्थानिक शासन के विभिन्न विभागों पर केंद्रीय सरकार का काफ़ी नियंत्रण रहने लगा है। केंद्रीय सरकार के पाँच विभागों का थोड़ा बहुत इन विषयों में स्थानिक शासन में नियंत्रण रहता है। केंद्रीय सरकार का गृह-विभाग स्थानिक पुलिस और कारख़ानों की देख-रेख करता है। 'शिक्षा बोर्ड'-विभाग सारे सार्वजनिक धन से चलनेवाले शिक्षालयों की देख-रेख और संचालन करता है। केंद्रीय सरकार का तीसरा 'कृषि बोर्ड'-विभाग स्थानिक बाज़ारों और मवेशियों की बीमारी के क़ानूनों और नियमों का पालन कराता है। चौथा 'व्यापार बोर्ड'-विभाग पानी, गैस, बिजली और चुंगियों के दूसरे व्यापारी कामों की जाँच और सँभाल करता है। पाँचवाँ 'स्वास्थ्य सचिव' का विभाग आजकल ख़ास तौर पर स्थानिक स्वास्थ्य और आम तौर पर सारे स्थानिक शासन के मामलों की देख-भाल रखता है। केंद्रीय सरकार के यह विभाग अपने हुक्मों और नियमों के द्वारा स्थानिक संस्थाओं के कामों को स्वीकार और अस्वीकार कर के तथा उन को अपनी होशियार सलाह दे कर स्थानिक शासन में अपना नियंत्रण रखते हैं। पार्लीमेंट को भी क़ानून बना कर स्थानिक अधिकारियों पर नियंत्रण रखने का अधिकार होता ही है।

स्थानिक शासन का काम-काज काउंटी में काउंटी कौंसिल चलाती है। बृटेन में छोटी-बड़ी कुल मिला कर क़रीब ६२ काउंटियाँ हैं जिन में छोटी से छोटी रटलैंड काउंटी की आबादी क़रीब १९७०९ होगी और बड़ी से बड़ी लंकाशायर काउंटी की १८२७४३६ आबादी है। काउंटी कौंसिल में प्रजा के तीन साल के लिए चुने हुए सदस्य और इन चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा छः साल के लिए चुने हुए ऐल्डरमैन

होते हैं। ऐल्डरमैनों की सदस्यों से एक तिहाई संख्या होती है और हर तीसरे साल उन के आधे भाग का चुनाव होता है। काउंटी कौंसिल के इन दोनों प्रकार के सदस्यों को एक ही से अधिकार और सत्ता होती है। कौंसिल के चुनावों में दलबंदी का ख्याल न रक्खा जा कर प्रायः सभी दलों के सदस्य ले लिए जाते हैं। आम तौर पर काउंटी कौंसिल के सदस्यों की संख्या ७५ होती है। कौंसिलों की बैठकें आम तौर पर साल में चार बार से अधिक नहीं होती हैं। अधिकतर शासन का काम-काज कौंसिल की स्थायी समितियाँ और अधिकारी चलाते हैं। काउंटी कौंसिल को स्थानिक शासन के लिए कर उगाने, करों की आमदनी खर्च करने और क़र्ज़ लेने का अधिकार होता है। काउंटी कौंसिल काउंटी की सार्वजनिक मिलकियत, इमारतों, पुलों, पागलखानों, रिफ़ॉर्मेटरियों और उद्योगी स्कूलों की सँभाल और प्रबंध रखने, छोटे अधिकारियों को नियुक्त करने, कुछ व्यापारी लाइसेंस देने, सड़कों और रास्तों को ठीक रखने, जलाशयों को स्वच्छ रखने, और मवेशियों, मछलियों, चिड़ियों और कीड़ों से संबंध रखनेवाले तमाम नियमों का पालन कराने का काम करती है। प्राथमिक स्कूलों को स्थापन करने तथा उच्च शिक्षा की योजना करनेवालों को सहायता देने का काम करने के अतिरिक्त काउंटी कौंसिल की एक समिति 'जस्टिस ऑव् दि पीस' के प्रतिनिधियों से मिल कर स्थानिक पुलिस का प्रबंध भी करती है। कौंसिल काउंटी का शासन चलाने के लिए उपनियम बनाती है और देहात के छोटे अधिकारियों की देख-रेख भी रखती है।

काउंटी के अंदर के दूसरे शासन-क्षेत्रों, देहाती ज़िलों, देहाती पैरिशों, शहरी ज़िलों और म्यूनिसिपल बौरोज की भी, इसी प्रकार शासन चलाने के लिए, कौंसिलें होती हैं। ज़िलों की कौंसिल को तीन साल के लिए आबादी के अनुसार प्रजा चुनती है और हर साल कौंसिल के एक तिहाई सदस्यों का चुनाव होता है। तीन सौ से अधिक आबादी के पैरिशों में पाँच से पंद्रह तक सदस्यों की तीन साल के लिए इसी प्रकार कौंसिलें चुनी जाती हैं। स्त्रियों को भी इन कौंसिलों में चुने जाने का अधिकार होता है। पैरिश की एक सालाना जन-सभा में पैरिश की कौंसिल के सदस्यों का चुनाव होता है। जिन तीन सौ से कम आबादी के पैरिशों में कौंसिल नहीं होती है, वहाँ जन-सभा साल में दो बार मिल कर स्थानिक शासन-समस्याओं पर विचार करती है और स्थानिक शासन का काम चलाने के लिए अधिकारियों को नियुक्त करती है।

शहरी ज़िलों के स्थानिक शासन का संगठन और प्रबंध बिल्कुल देहाती ज़िलों की तरह होता है। उन की भी वैसी ही तीन साल के लिए चुनी हुई कौंसिलें होती हैं, जिन की स्थायी समितियाँ शासन का सारा काम-काज चलाती हैं। शहरी ज़िले इन क्षेत्रों को इस लिए कहा जाता है कि वे बौरो बनने के क़रीब पहुँच चुके होते हैं। चुंगियों की इकाई बौरो होती है और स्थानिक शासन के विस्तृत अधिकारों का प्रयोग करने के लिए उन को राजछत्र की तरफ़ से एक 'अधिकार पत्र'[1] दिया जाता है। म्यूनिसिपल बौरो और काउंटी

[1] चार्टर

बौरो के संगठन और काम-काज के ढंग में कोई अंतर नहीं होता है। दोनों चुंगियों का काम करती हैं। सिर्फ़ पचास हज़ार से ऊपर की आबादी की बौरो को, जिस काउंटी में वह बौरो होती है, उस के दखल से निकाल कर काउंटी बौरो बना दिया जाता है। साधारण म्यूनिसिपल बौरो काउंटी के दखल और राजनैतिक अधिकार-क्षेत्र का भाग होती है। बौरोज़ की भी ज़िलों की तरह, नौ से लेकर सौ सदस्यों तक की, तीन साल के सदस्यों और उन के एक तिहाई छः साल के ऐल्डरमैनों की, सारे मर्द-स्त्री नागरिकों के द्वारा चुनी हुई, कौंसिलें होती हैं। ऐल्डरमैनों का आम तौर पर सदस्यों से स्थानिक शासन-नीति पर अधिक असर रहता है। कौंसिल के अध्यक्ष को मेयर कहते हैं, जिस को एक साल के लिए चुना जाता है और जिस को सभा का अध्यक्ष बन कर काम चलाने के अतिरिक्त कोई और खास कार्यकारिणी सत्ता नहीं प्राप्त होती है। इन कौंसिलों को भी ज़िलों की कौंसिलों की तरह ही सत्ता होती है। ज़िलों की कौंसिलों की हिंदुस्तान के ज़िला बोर्डों और बौरो कौंसिलों की शहरों और कस्बों की चुंगियों से समता की जा सकती है।

लंदन का शासन बंबई और कलकत्ते के कोरपरेशनों की तरह एक खास 'लंदन सरकार क़ानून'[1] के अनुसार चलता है। बिल्कुल क़ानूनी दृष्टि से तो लंदन सिर्फ़ थेम्स के बाएँ किनारे पर एक वर्ग मील का लंबा शहर है। वही सारे व्यापार का केंद्र है। उस की सारी आबादी सिर्फ़ पचास हज़ार है और लार्ड मेयर, ऐल्डरमैनों की एक कचहरी और प्रतिनिधियों की सभा मिल कर उस का शासन चलाती है। मगर इस शहर के चारों तरफ़ फैली हुई २८ बौरोज़ हैं, जिन सब को मिला कर लंदन की काउंटी कौंसिल बनती है। इस कौंसिल में आबादी के अनुसार क़रीब ११८ सदस्य, उन्नीस ऐल्डरमैन और एक चुना हुआ अध्यक्ष होता है। राजधानी की इन शासन-संस्थाओं को बड़े अधिकार हैं। 'राजधानी जल-बोर्ड' का अधिकार-क्षेत्र बहुत दूर तक देश के भीतरी भागों में फैला हुआ है। 'राजधानी पुलिस बोर्ड' का अधिकार-क्षेत्र चैरिंग क्रास स्थान से ले कर पंद्रह मील के भीतर के आस-पास के सारे पैरिशों तक में अर्थात् क़रीब सात सौ वर्ग-मील तक होता है।

ब्रिटेन भर में न्याय-शासन का एक ही तरीक़ा नहीं है। स्कॉटलैंड, इंगलैंड, वेल्स और आयरलैंड के न्याय-शासन के ढंगों में भेद है। फ़्रांस, इटली और जर्मनी इत्यादि राष्ट्रों की तरह ब्रिटेन में 'शासकी अदालतें' अलग नहीं होती हैं। शासन-संबंधी अधिकारियों के आपस के झगड़ों और अधिकारियों और नागरिकों के झगड़ों का फ़ैसला भी साधारण अदालतें ही करती हैं। पहले अलग-अलग दीवानी की अदालतें, फ़ौजदारी की अदालतें, इन्साफ़ की अदालतें, आम क़ानून की अदालतें, वसीयत की अदालतें, तलाक़ की अदालतें, धार्मिक अदालतें इत्यादि इतनी विभिन्न अदालतें होती थीं कि कौन-सा झगड़ा किस अदालत के सामने जाय इसका निश्चय करना मुश्किल हो जाता था। उन के काम-काज का ढंग भी इतना मुख़्तलिफ़ होता था कि वकीलों तक को उन भूल-भुलैयों में से निकलना कठिन होता था। अस्तु, सन् १८७३ ई० से १८७६ ई० तक कई क़ानून

---

[1] 'लंदन गवर्नमेंट ऐक्ट'।

पास कर के न्यायशासन में सुधार किया गया था। छोटी अदालतों को छोड़ कर और सारी विभिन्न अदालतों को एक 'सर्वोपरि न्यायालय'[१] के अधीन कर दिया गया था और हाउस ऑव् लॉर्ड्स में न्यायाधीशों को न्याय का काम करने के लिए रक्खा गया था। सारे न्यायाधीशों को राजा के नाम पर 'लार्ड हाई चांसलर' या उस की नामज़दगी पर राजा नियुक्त करता है। न्यायाधीशों को बिना क़सूर निकाला नहीं जा सकता है। लार्ड हाई चांसलर को नाम के लिए राजा के नाम में न्यायाधीशों को हटा देने की सत्ता होती है। मगर अमल में पार्लमेंट की दोनों सभाओं की सम्मिलित प्रार्थनाओं पर ही किसी न्यायाधीश को निकाला जाता है। केवल धारा-सभा को ही न्यायाधीशों को हटाने की सत्ता होने से न्याय-शासन कार्य-कारिणी के दबाव से बचा रहता है, और इस के परिणाम-स्वरूप ब्रिटेन के न्यायालय बड़ी निष्पक्षता और आज़ादी से काम करते हैं।

फ़ौजदारी के मुक़दमे लगभग उसी प्रकार चलाए जाते हैं, जैसे हमारे देश में। मगर बहुत-सा न्याय-शासन का वह काम जो हिंदुस्तान में मजिस्ट्रेट करते हैं, ब्रिटेन में 'जस्टिस ऑव् दि पीस' नाम के अधिकारी करते हैं। इन न्यायाधीशों को हमारे देश के ऑनरेरी मैजिस्ट्रेटों की तरह कोई वेतन नहीं मिलता है और उन के जोड़ का एक तरह उन को अधिकारी कहा जा सकता है। मगर 'जस्टिस ऑव् दि पीस' को हमारे ऑनरेरी मजिस्ट्रेट से कहीं अधिक अर्थात् हमारे यहाँ के मजिस्ट्रेटों के-से अधिकार होते हैं। सारे फ़ौजदारी के मुक़दमे पहले उन की अदालत में जाते हैं और उन का काम शिकायती गवाही सुन कर सिर्फ़ यह तय करना होता है कि मुलज़िम के खिलाफ़ ज़ाहिरा कोई मुक़दमा है या नहीं। उन की समझ में मुक़दमा ज़ाहिर होने पर वह मुलज़िम को मुक़दमे के लिए चालान कर देते हैं और ज़ाहिर मुक़दमा न लगने पर छोड़ देते हैं। इस प्रकार के चालान किए हुए छोटे अपराधों, नाबालिग़ों और पहले अपराधों के मुक़दमे दो 'जस्टिस ऑव् दि पीस' की 'छोटी सेशंस' अदालत में तै किए जाते हैं, जहाँ जुर्माने या थोड़ी सी जेल की सज़ा की जा सकती है। छोटे सेशंस के फ़ैसलों के खिलाफ़ अपराधी काउंटी के सारे 'जस्टिस ऑव् दि पीस' की तिमाही बैठनेवाली 'तिमाही सेशंस' की अदालत में अपील कर सकते हैं। बड़े अपराधों के मुक़दमे सीधे 'तिमाही सेशंस' की अदालत या हाईकोर्ट के एक जज की 'ऐसाइज़' अदालत के सामने जाते हैं। दोनों अदालतों में 'शेरिफ़' की चुनी हुई बारह सद्गृहस्थों की एक 'जूरी' न्यायाधीशों के साथ बैठ कर अभियोग का फ़ैसला करती है। हमारे देश की सेशंस अदालतों और इन अदालतों में एक बड़ा महत्व का अंतर है। हमारे यहाँ की सेशंस अदालतों में सिर्फ़ 'असेसर' बैठते हैं, जिन की राय मानने, न मानने का जज को अधिकार होता है। परंतु ब्रिटेन की अदालतों में फ़ैसला न्यायाधीश के हाथों में न हो कर जूरी के हाथ में होता है। जूरी के अपराधी को निर्दोष क़रार दे देने पर अपराधी फ़ौरन मुक्त कर दिया जाता है और उस पर फिर उसी अपराध के लिए मुक़दमा नहीं चलाया जा सकता है। जूरी में मत-

[१] 'सुप्रीम कोर्ट ऑव् जुडीकेचर'।

भेद हो जाने पर दूसरी जूरी के सामने फिर से मुक़दमे पर विचार होता है। जूरी के फ़ैसले के खिलाफ़ अपराधी तीन जजों की 'अपील की अदालत' के सामने अपील कर सकता है। उस के आगे भी सार्वजनिक हित का कोई क़ानूनी प्रश्न तय करने के लिए, सरकारी ऐटार्नी-जेनरल की राय से, अपराधी 'अपील की अदालत' के फ़ैसले के खिलाफ़ भी हाउस ऑव् लार्ड्स के आगे अपील कर सकता है। इसी प्रकार दीवानी के मुक़दमे झगड़े की रक़म के अनुसार मुख़्तलिफ़ अदालतों के सामने जाते हैं।

७—राजनैतिक दल

कहा जाता है कि इंगलैंड की राज-व्यवस्था संसार भर में सब से अधिक प्रजा-सत्तात्मक है। यह ठीक हो सकता है। परंतु मंत्रि-मंडल के सदस्य अर्थात् वे लोग जिन के हाथ में देश के शासन की बागडोर रहती है, अभी तक अक्सर अमीर ही घरों के होते आए हैं। आज तक के सारे मंत्रि-मंडलों को देखा जाय, तो पता लगेगा कि उन के मंत्रियों में अधिकतर ज़मींदार, व्यापारी, महाजन और धनवान् वकील और बैरिस्टर थे। मज़दूर-दल के आने से कुछ फ़र्क़ ज़रूर पड़ा है, मगर बहुत नहीं। पार्लीमेंट के सदस्यों में भी पैसेवाले लोगों की ही अधिक संख्या रहती थी। मज़दूर दल के कारण बहुत से साधारण कोटि के लोगों को भी मज़दूर-संघों की वोटों और धन के बल पर पार्लीमेंट में घुसने का अब अवसर मिलने लगा है। वर्ना उदार और अनुदार दल के ज़माने में तो पैसेवालों के लिए ही पार्लीमेंट की कुर्सी होती थी; परंतु साधारण मनुष्यों को आजकल की राजनीति के सारे प्रश्नों का समझना असंभव होता है। दिन-ब-दिन सरकार के अधिकारों और कामों का दायरा बढ़ता जाता है। डाक, तार, टेलीफ़ोन, शिक्षा, रेल, दवादारू, जहाज़, व्यापार कौन-सा ऐसा सार्वजनिक काम है, जिस में आज कल सरकारी हाथ नहीं रहता? सरकार के सारे कामों को अच्छी तरह समझने के लिए साधारण नागरिक के पास समय नहीं होता है। उस बेचारे को सुबह से शाम तक अपना और अपने बाल-बच्चों का पेट भरने के लिए एड़ी से चोटी तक का पसीना एक करने में लगा रहना पड़ता है। अस्तु, राजनीति इंगलैंड में उन खाते-पीते लोगों का पेशा हो गया है, जिन्हें अपनी रोटी कमाने की चिंता नहीं होती है और जो उस के लिए काफ़ी समय दे सकते हैं।

हाउस ऑव् कॉमन्स के सदस्यों को वेतन मिलना शुरू होने के बाद से ज़रूर कम हैसियत के लोगों को भी राजनीति की तरफ़ आने का उत्साह होने लगा है। जब छोटी-छोटी स्थानीय पंचायतों द्वारा शासन चलता था, तब साधारण लोगों को शासन की बातें समझने और शासन में भाग लेने का मौक़ा रहता था। अब राजनीति के प्रश्नों को एक विशेष कोटि के लोग ही समझते हैं और साधारण मनुष्य तो विभिन्न राजनैतिक दलों की नीति भी अच्छी तरह नहीं समझ पाते। वे चुनावों में या तो इस नेता के लिए मत दे आते हैं, या उस नेता के लिए। प्रायः यह देखने में आया है कि जिस नेता का मंत्रि-मंडल काफ़ी शासन कर चुकता है, दूसरे चुनाव में लोग उस को मत न

दे कर दूसरे दल के नेता के लिए वोट देते हैं। शायद वे यह सोचते हैं कि हर नेता को मौका देना चाहिए, अथवा संसार की रीति के अनुसार वर्तमान से असंतुष्ट हो कर वे परिवर्तन चाहते हैं।

इंगलैंड में सरकार एक दल की होती है। दूसरा दल कितना ही बड़ा क्यों न हो आम तौर पर उस का उस में साझा नहीं रहता। इंगलैंड की राजनीति दलबंदी का नमूना है। बहुत दिनों तक इंगलैंड में दो ही राजनैतिक दल थे—एक कन्सरवेटिव दल और दूसरा लिबरल दल। अपनी भाषा में कन्सरवेटिव दल को अनुदार दल अथवा दक़ियानूसी दल, और लिबरल दल को उदार दल कह सकते हैं। इन दोनों दलों की जड़ मनुष्य स्वभाव की दो प्रकृतियों को कह सकते हैं। अनुदार दल में वे लोग सम्मिलित होते थे, जिन्हें पुरानी बातों पर अधिक विश्वास होता था और जो हर मामले में बहुत ही सँभल-सँभल कर कदम बढ़ाने के पक्षपाती होते थे। उदार दल में वे लोग जाते थे जो संकुचित विचारों के विरोधी और थोड़े बहुत आदर्शवादी होते थे। राजनैतिक और आर्थिक सिद्धांतों के भेदों से अधिक मनुष्य-स्वभाव का यह प्रकृति-भेद ही इन दलों का मूल कारण था। राजनैतिक-क्षेत्र में लोगों का इस प्रकार दो दलो में बँट जाना इंगलैंड के लिए बड़ा हितकर हुआ क्योंकि इन दोनों दलों के संगठित युद्ध और लगातार राजनैतिक संघर्ष से ही इगलैंड में राजनैतिक जाग्रति पैदा हुई। जब अनुदार दल की जीत होती थी और शासन की बागडोर उस के हाथ में आती थी, तब उदार दल के रोज़ाना विरोध और आलोचना का उस पर अंकुश रहता था, जिस से शासन-कार्य में अनुदार दल सचेत रहता था। उसी प्रकार जब उदार दल ने शासन-भार सँभाला तो अनुदार दल का उस पर अंकुश रहा। इस प्रकार इन दोनों दलों की आपस की होड़ से सरकार का काम अच्छा चलता था, क्योंकि जिस दल के हाथ में शासन की लगाम होती थी, उसे इस बात का हमेशा भय लगा रहता था कि उस से कोई काम बिगड़ा तो उस की दूसरे चुनाव में हार हो जायगी और विपक्षी दल जीत कर अधिकार की गद्दी पर बैठ जायगा। परंतु इस दलबंदी की स्पर्द्धा और संघर्ष का तभी तक अच्छा लाभ होता है, जब तक देश में केवल दो ही राजनैतिक दल रहें। इंगलैंड के सौभाग्य से बहुत दिनों तक वहाँ के राजनैतिक क्षेत्र में दो ही दल रहे जिस से वहाँ की राज-व्यवस्था सुसंगठित और सुचारु रूप से चलती रही। तीसरे मजदूर दल के खड़े होने पर इस प्रबंध में गड़बड़ होने की संभावना हुई थी। परंतु जैसा मजदूर दल बढ़ा वैसा ही उदार दल घटा।

सन् १९२२ ई० के चुनाव के बाद पार्लीमेंट में तीनों दलों के सदस्य इतनी संख्या में चुन कर आए कि सन् १९२३ ई० में उदार दल के हाथ में मज़दूर दल अथवा अनुदार दल को आसन पर बैठाने की कुंजी आ गई। परंतु इंगलैंड के जाग्रत जनमत के सामने इस कुंजी का दुरुपयोग करने की उदार दल की हिम्मत नहीं हुई। जब तक सिर्फ़ दो ही दल थे, तब तक जिस दल की पार्लीमेंट में बहु-संख्या होती थी, उस दल के नेता को राजा मंत्रि-मंडल बनाने के लिए न्योता देता था। परंतु सन् १९२३ ई० में जब तीन दल के प्रतिनिधि पार्लीमेंट में इस संख्या में चुन कर आए कि किसी भी दल को सिर्फ़ अपनी संख्या के बूते पर मंत्रि-

मंडल बना कर शासन चलाना असंभव था तब यह कठिनाई खड़ी हुई कि किस दल को शासन का भार सौंपा जाय। परंतु अँगरेज़ों की क्रियात्मक बुद्धि सराहनीय है। मज़दूर-दल के प्रतिनिधि पार्लीमेंट में उदार दल से अधिक थे इस लिए अनुदार दल के इस्तीफ़ा रख देने पर मज़दूर दल को शासन का भार सौंपा गया और उदार दल ने मज़दूर दल के मार्ग में व्यर्थ के रोड़े अटकाने या फ़्रांस इत्यादि यूरोप के दूसरे देशों की तरह मंत्रि-मंडल में कुछ अपने भी मंत्री घुसेड़ने का प्रयत्न नहीं किया। मंत्रि-मंडल में सारे सदस्य एक मज़दूर दल के ही रहे और शासन भी उसी प्रकार चलाया गया था जिस प्रकार दो दलों के ज़माने में चलाया जाता था। दूसरे चुनाव में उदार दल के सिर्फ़ ४२ सदस्य ही पार्लीमेंट में रह गए और इस के बाद से उदार दल एक छोटा और कमज़ोर दल हो गया है। अस्तु, यह भय कि इंगलैंड की राज-व्यवस्था केवल उसी समय तक अच्छी तरह चलेगी, जब तक कि इंगलैंड में केवल दो राजनैतिक दल रहेंगे और दो से अधिक राजनैतिक दल हो जाने पर इंगलैंड की राजनीति का रंग-रूप बदल जायगा, अभी तक पूरा नहीं हुआ है। तीन दल हो जाने पर भी इंगलैंड की राज-व्यवस्था का रंग-रूप नहीं बदला है। कुछ तो इस का श्रेय अँगरेज़ों की क्रियात्मक बुद्धि को है, परंतु मुख्य कारण यह है कि इंगलैंड में तीन दल बन जाने पर भी दो ही दलों के सदस्यों की पार्लीमेंट में संख्या अधिक रही है। तीसरा उदार दल दिन-दिन क्षीण हो रहा है।

इंगलैंड के राजनैतिक दलों के हेड क्वार्टर्स लंदन में रहते हैं और उन की शाखाएँ प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र में होती हैं। साल में एक बार उन के वार्षिक सम्मेलन होते हैं जिन में सब शाखाओं से प्रतिनिधि आ कर भाग लेते हैं। इन सम्मेलनों में दलों की विभिन्न राजनैतिक प्रश्नों पर नीति का और उस को पूरा करने के लिए प्रोग्राम का निश्चय होता है। राजनैतिक दलों के इन निश्चित प्रोग्रामों के लिए ही चुनावों पर प्रजा के मत माँगे जाते हैं। परंतु इंगलैंड के लोग सिद्धांतों पर रीझनेवाले आदर्शवादी स्वभाव के नहीं होते हैं। सिद्धांती प्रोग्रामों की अधिक परवाह न कर के इंगलैंड में साधारण लोग नेताओं के पीछे चलते हैं और चुनाव के समय इसी बात का अधिक ध्यान रखते हैं कि किस नेता को प्रधान मंत्री या किन नेताओं को मंत्री बनाना उचित होगा। अस्तु, जिन नेताओं को उन्हें मंत्रि-मंडल की गद्दी पर बैठाना होता है, उन के दल के पक्ष में वे मत डालते हैं। चुनावों पर सिद्धांतों और राजनैतिक दलों के कार्य-क्रमों से अधिक मतदारों के दिमाग़ में यही बात अधिक रहती है कि बाल्डविन के लिए वोट देना चाहिए या मेकडानेल्ड के मंत्रि-मंडल के लिए। उदाहरणार्थ सन् १९२९ ई० की पार्लीमेंट में मज़दूर दल के सदस्यों की सब से अधिक संख्या होने से मज़दूर दल की सरकार थी। परंतु सन् १९३१ ई० में मज़दूर दल के प्रधान मंत्री रेम्से मेकडानेल्ड ने देश को आनेवाले आर्थिक संकट से बचाने के विचार से एक दल की सरकार ख़त्म कर के एक सर्वदल राष्ट्रीय सरकार बनाने का निश्चय किया। मज़दूर दल के दो और मंत्रियों को छोड़ कर और सभी मंत्री इस निश्चय के विरुद्ध थे। फिर भी प्रधान मंत्री मेकडानेल्ड अपने निश्चय पर दृढ़ रहा और उस ने राजा से प्रार्थना की

कि पार्लीमेंट भंग कर के नया चुनाव कराया जाय। राजा ने उस की प्रार्थना मंजूर कर के पार्लीमेंट भंग कर दी और नए चुनाव का हुक्म निकाला। इस पर मज़दूर-दल ने मेकडानेल्ड को मज़दूर-दल के नेतृत्व से हटा दिया और उस के दूसरे दोनों साथियों सहित उस को मज़दूर दल तक से निकाल दिया। परंतु चुनाव में मज़दूर दल की ऐसी भयंकर हार और मेकडानेल्ड की ऐसी जीत हुई कि जिस मज़दूर दल के पार्लीमेंट में सब से अधिक प्रतिनिधि थे उसी के पचास से अधिक प्रतिनिधि नहीं चुने गए और मेकडानेल्ड के समर्थक अन्य दलों के सारे प्रतिनिधियों से लगभग तीन सौ से अधिक संख्या में चुन कर आए। मज़दूरदल के एक दो मंत्रियों को छोड़ कर अन्य उन सब मंत्रियों का चुनाव तक न हो सका, जो मेकडानेल्ड के मंत्रि-मंडल के सदस्य थे और जिन्होंने उस का विरोध किया था। इस घटना से साफ़ पता चलता है कि इंगलैंड की जनता अभी तक इतनी सिद्धांतों और राजनैतिक दलों के कार्य-क्रमों की परवाह नहीं करती है जितनी व्यक्तिगत नेताओं और क्रियात्मक बातों की। समाजवादी सिद्धातों को माननेवाले मज़दूर दल की इतनी उन्नति हो जाने और सर्व-साधारण को मताधिकार मिल जाने पर भी इंगलैंड में पुस्तकों और व्याख्यान-मंचों को छोड़ कर कहीं आर्थिक हित-संघर्ष के सिद्धांतों पर अभी तक चुनाव इत्यादि में अमल होता नहीं दिखाई देता है।

लड़ाई के बाद से खास कर तीन बातों की बुनियाद पर बृटेन में दलबंदी का रूप-रंग बदला है। एक तो मतदारों का और उस के परिणामस्वरूप सारे राजनैतिक दलों का इस बात पर एक मत होने लगा है कि बृटेन को जहाँ तक बने वहाँ तक, शांति क़ायम रखने के प्रयत्नों को छोड़ कर, यूरोप के दूसरे झगड़ों और झमेलों से दूर रहना चाहिए। दूसरे बेकारी की बाढ़ और समाजशाही की तरफ़ लोगों का रुझान बढ़ने से मज़दूर दल की संख्या और शक्ति बहुत बढ़ गई है। तीसरे किसी भी सरकार का मतदारों की बहुत बड़ी संख्या ने समर्थन नहीं किया है। लायड जॉर्ज और बोनर ला की उदार दल और अनुदार दल की सम्मिलित सरकार को साढ़े नब्बे लाख मतों में से पाँच लाख मत सन् १९१८ ई० के चुनाव में मिले थे जिस के बल पर कॉमन्स की ७०७ जगहों में से ४८५ उन को मिली थीं। नवंबर सन् १९२२ ई० के चुनाव में अनुदारदल को १३०३ लाख मतों में से सिर्फ़ ५०३ लाख मत मिले थे और कॉमन्स में ६१५ जगहों में से ३४४ जगहे मिली थीं। सन् १९२४ ई० के चुनाव में बाल्डविन की अनुदार सरकार को १६०१ लाख मतों में से ७०८ लाख मत मिले थे और ६१५ जगहों में से ४१५ जगहें मिली थीं। सन् १९२४ ई० की कुछ महीनों तक क़ायम रहनेवाली मज़दूर दल की सरकार के, कामन्स में ६१५ सदस्यों में सिर्फ़ १९१ सदस्य थे जिन को पिछले चुनाव में क़रीब ४३५ लाख मत मिले थे।

सन् १९१८ ई० में अस्थायी संधि के चकाचौंध में 'संधि की सफलता के लिए सब की सहायता की ज़रूरत है' की आवाज़ उठा कर लायड जॉर्ज ने अपनी सरकार के पक्ष में बहुत से मत कर लिए थे। मगर सरकार के सदस्यों की संख्या पार्लीमेंट में बहुत अधिक होने का बुरा परिणाम यह हुआ कि पार्लीमेंट ने सरकार की टीका-टिप्पणी करनी बिल्कुल ही बंद कर दी थी और पार्लीमेंट लायड जॉर्ज की उँगली पर नाचती थी। यह

सरकार देश को लड़ाई के बाद के व्यापार के उतार मे न बचा सकी। मज़दूरों की आर्थिक उन्नति हो जाने, सारे मर्दों को मताधिकार मिल जाने और बेकारी बढ़ जाने के कारण मज़दूर दल की चुनौती से बचने के लिए इस सरकार को स्वास्थ्य-रक्षा, शिक्षा, मकान बनाने में सहायता, बेकारी से रक्षा, असंगठित उद्योगों में मज़दूरी का दर नियमित करने, और रेलवे और खेती-बारी पर सरकारी प्रबंध चलाने इत्यादि के बहुत-से मज़दूर दल के कार्य-क्रम से मिलते-जुलते काम करने पड़े। फिर भी इसी सरकार के ज़माने में रेलवे के मज़दूरों की एक लंबी हड़ताल हुई और मज़दूरों में बहुत असंतोष बढ़ा। लायड जॉर्ज को संधि और मुआवज़े के प्रश्नों को दूसरे राष्ट्रों से तय करने से ही फ़ुरसत नहीं रहती थी कि घर की समस्याओं की तरफ़ अधिक ध्यान दे। मुश्किल से हफ़्ते में एक बार वह पार्लीमेंट में आता था। इधर अनुदार दल को भी उस की बढ़ती हुई ताक़त देख कर डर होने लगा था। इस लिए, लायड जॉर्ज के पर-राष्ट्रनीति में भयंकर लक्षण दिखाने ही अनुदार दल उस से अलग हो गया और लायड जॉर्ज को इस्तीफ़ा दे देना पड़ा इस के बाद सन् १९२२ ई० के चुनाव के बाद बोनर ला की अध्यक्षता में अनुदार दल की सरकार बनी जिस के पार्लीमेंट में ३४४ सदस्य थे। इस सरकार के ख़िलाफ़ मज़दूर दल के १४० सदस्य और उदार दल के ११६ सदस्य थे। सन् १९२३ में बोनर ला के हट जाने पर बॉल्डविन प्रधान मंत्री हुआ और इस मौक़े पर इंगलैंड की राज-व्यवस्था की एक अत्यंत महत्वपूर्ण समस्या हल की गई। बोनर ला के बाद अनुदार दल का नेता बनने का लॉर्ड कर्ज़न को हक़ था; मगर कर्ज़न हाउस ऑव् लॉर्ड्स का सदस्य था, इस लिए उस को नेता न मान कर बॉल्डविन को, जो हाउस ऑव् कामन्स का सदस्य था, प्रधान मंत्री बनाया गया। अस्तु, यह बात निश्चय हुई कि इंगलंड का प्रधान मंत्री कामन्स का ही सदस्य होना चाहिए, लार्ड्स का नहीं। बॉल्डविन ने प्रधान मंत्री बन कर मज़दूर दल के बढ़ते हुए ज़ोर को कम करने के लिए डिसरायली की नीति पर अमल करने और बेकारी कम करने के लिए करों के द्वारा राष्ट्रीय व्यापार की रक्षा और उन्नति करने का निश्चय किया। मगर बोनर ला पिछले चुनाव में व्यापारी चुंगी न जारी करने का मतदारों को वचन दे चुका था, इस लिए नीति बदलने के पहले पार्लीमेंट का नया चुनाव करा लेने की ज़रूरत थी। बॉल्डविन ने पार्लीमेंट को भंग कर के नया चुनाव कराया, जिस में अनुदार दल के ८० सदस्य कम हो गए और किसी भी दल के सदस्यों की पार्लीमेंट में साफ़ बहुसंख्या न हुई। अस्तु, उदार दल की सहायता से धनी-मानी इंगलैंड के इतिहास में पहली बार इस चुनाव के बाद मैकडॉनेल्ड की अध्यक्षता में मज़दूर दल की सरकार बनी। अपनी थोड़े से महीनों की ज़िंदगी में मज़दूर सरकार कुछ न कर सकी और दस महीने बाद ही प्रधान मंत्री मैकडॉनेल्ड ने पार्लीमेंट भंग करा दी। इस सरकार के ज़माने में भी इंगलैंड की राज-व्यवस्था का एक दूसरा अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्न तय हुआ। राजा ने मज़दूर दल की सरकार के कंधे डाल देने पर, किसी दूसरे दल की सरकार बनाने का प्रयत्न नहीं किया, और अल्प-संख्यक दल के प्रधान मंत्री की पार्लीमेंट भंग करने की प्रार्थना

मंज़ूर की, क्योंकि अपनी सत्ता का प्रयोग कर के राजा का राजनैतिक चर्चा में पड़ना उचित नहीं समझा गया।

नए चुनाव में मशहूर ज़िनोवीफ़[1] खत का बोल्शेविक हौआ खड़ा कर के अनुदार दल ने मजदूर दल की पार्लामेंट में शक्ति कम कर दी। इस चुनाव में अनुदार दल के ४१५ सदस्य चुन कर आए, और मज़दूर दल के १५२ तथा उदार दल के सिर्फ़ ४० सदस्य। दो सौ की बहुसंख्या रखनेवाली अनुदार दल की सरकार बनी जो पार्लामेंट में पूरे पाँच साल तक क़ायम रह सकती थी। मगर इस सरकार ने बेकारी की समस्या सुलझाने का प्रयत्न नहीं किया और परराष्ट्र-नीति में भी इतनी पिलपिल दिखाई कि लार्ड सिसिल उकता कर जेनेवा से इस्तीफ़ा दे कर चला आया। कोयले की समस्या सुलझाने में तो इतनी बेवक़ूफ़ी दिखाई कि इंगलैंड के इतिहास में अद्वितीय मज़दूरों की आम हड़ताल हुई, जिस में कहा जाता है पार्लामेंट की सत्ता को बड़ा धक्का पहुँचा। अस्तु, सन् १९२९ के दूसरे चुनाव में अनुदार दल की हार हुई और मज़दूर दल के सब से अधिक सदस्य चुन कर आए। मगर किसी भी दल की साफ़ बहुसंख्या फिर भी नहीं थी। मज़दूर दल के २८८ सदस्य थे, अनुदार दल के २६० सदस्य, उदार दल के ६९ सदस्य और ८ सदस्य स्वतंत्र थे। मैकडॉनल्ड की अध्यक्षता में मज़दूर दल की सरकार बनी जिस ने घर पर बेकारी की समस्या और यूरोप में शांति क़ायम रखने की समस्या को सुलझाने का प्रयत्न शुरू किया। इंगलैंड के इतिहास में पहली बार इस सरकार के मंत्रि-मंडल की सदस्य मिस मार्गरेट बौंडफ़ील्ड नाम की एक महिला मज़दूर विभाग की मंत्री बनाई गई थीं। इसी सरकार के ज़माने में भारतवर्ष में दूसरा असहयोग आंदोलन चला, जिस को पहले दबाने का प्रयत्न कर के पीछे से सरकार ने गांधीजी से अस्थायी 'इरविन-गांधी' समझौता किया था, जिस के परिणाम-स्वरूप गांधीजी गोलमेज़-सम्मेलन में कांग्रेस के प्रतिनिधि बन कर गए थे। मगर गोलमेज़ सम्मेलन चल ही रहा था कि इस सरकार ने अथवा यों कहिए कि प्रधान मंत्री मैकडॉनल्ड ने अपने दो मित्रों की सलाह से आर्थिक संकट का सामना करने के लिए, पार्लामेंट को भंग करा कर, एक सर्वदल 'राष्ट्रीय-सरकार' बनाने के लिए नया चुनाव कराया इस चुनाव में इंगलैंड के दलों की काया-पलट हो गई। जैसा पहले कहा जा चुका है, मज़दूर दल के तीन प्रमुख नेताओं मैकडॉनल्ड, स्नोडन और थौमस को मज़दूर-दल से निकाल दिया गया, मज़दूर दल की भयंकर हार हुई। दो चार को छोड़ कर मज़दूर-दल के वे सारे नेता, जो पिछले मंत्रि-मंडल के सदस्य थे, इस चुनाव में नहीं चुने जा सके और पार्लामेंट में मज़दूर-दल के २८८ सदस्य से घट कर सिर्फ़ ४६ सदस्य रह गए। उदार दल के भी सिर्फ़ ७२ सदस्य ही चुन कर आए। बाक़ी सब अनुदार दल के सदस्य चुने गए। इस चुनाव में अनुदार दल और उदार दल के नेताओं तथा मज़दूर दल के निकाले हुए तीनों नेताओं की तरफ़

[1] अनुदार दल के अख़बारों ने चुनाव से कुछ पहले बोल्शेविक रूसी नेता ज़िनोवीफ़ का मंत्रि-मंडल के सदस्यों को भेजा हुआ एक पत्र छाप कर मज़दूर दल पर बोल्शेविकों से षड्यंत्र करने का इल्ज़ाम लगाया था।

से प्रजा से दलबंदी का ख़याल न कर के चुनाव में राष्ट्रीय रक्षा की दृष्टि से मत देने की प्रार्थना की गई और कहा गया कि इस चुनाव का परिणाम किसी खास दल की जीत नहीं समझी जायगी। अस्तु, इस चुनाव के परिणाम से बृटेन के राजनैतिक दलों का भविष्य बताना कठिन है। मुमकिन है इस चुनाव में बहुत बड़ी बहु-संख्या प्राप्त कर के पार्लामेंट में निरंकुश बन जानेवाले अनुदार दल की सन् १९२४ ई० के चुनाव की तरह दूसरे चुनाव में फिर हार हो जाय और मज़दूर दल की संख्या बढ़ जाय। यह भी मुमकिन है कि मज़दूर दल के नेताओं के आपस के झगड़े के कारण मज़दूर दल बहुत दिनों तक ताकत में न आ सके। मगर दो बातें तो निश्चय ही दीखती हैं। एक तो मज़दूर दल दूसरे चुनाव के बाद पार्लामेंट में किसी हालत में इतना कमज़ोर न रहेगा जैसा अब है। दूसरे उदार दल फिर कभी न उभरेगा। अस्तु, इंगलैंड की राजनीति के मैदान में राजनैतिक द्वंद्व-युद्ध के लिए दो ही बड़े दल रहेंगे और अनुदार दल और मज़दूर दल के संघर्ष और स्पर्द्धा से बृटेन की राजनीति हमेशा की तरह परिमार्जित और उन्नत होती रहेगी।[1] मैकडानेल्ड की राष्ट्रीय सरकार के बनने के बाद इस सरकार ने एक ऐसा काम किया, जो इंगलैंड की राज-व्यवस्था के इतिहास और राजनैतिक विकास में बिल्कुल नया था। हमेशा से मंत्रि मंडल की—जैसा कि हम पहले कह चुके हैं—पार्लामेंट के प्रति सम्मिलित जवाबदारी मानी जाती थी और वे एकमत से पार्लामेंट का मुक़ाबला करते थे। पार्लामेंट के अंदर किसी प्रश्न पर कभी मंत्रि-मंडल के सदस्य एक-दूसरे के विरुद्ध विचार प्रगट करते या मत नहीं देते थे। परंतु इस राष्ट्रीय मंत्रि मंडल के सदस्यों ने व्यापारी चुंगी-करों के प्रश्न पर पार्लामेंट में एक दूसरे के विरुद्ध व्याख्यान और मत दिए, जिस से मंत्रियों की सम्मिलित जवाबदारी की पुरानी प्रथा में पहली बार रंग में भंग पड़ा। मज़दूर दल की तरफ़ से पार्लामेंट में कहा भी गया कि सरकार का यह काम बृटिश राज-व्यवस्था के विरुद्ध है। परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि इस घटना से मंत्रियों की सम्मिलित जवाबदारी का सिद्धांत इंगलैंड में ख़त्म हो गया क्योंकि यह सरकार राष्ट्रीय संकट काल में—अस्थायी प्रबंध की तरह सभी मतों के मंत्रियों की—जान बूझ कर बनाई गई थी, और 'आपत्तिकाले मर्यादा नास्ति' के सिद्धांत पर हमेशा से ही इंगलैंड की राज व्यवस्था गढ़ती आई है। यहाँ तक तो हुई इंगलैंड के राजनैतिक दलों के काम और उस काम के सरकार की नीति और चाल पर असर की बात। अब हम उन के कुछ इतिहास और लक्षित कार्य-क्रम का परिचय देते हैं।

[1] इस पुस्तक के प्रेस से निकलते समय तक दूसरा चुनाव भी हो चुका है, जिस के बाद फिर दूसरी राष्ट्रीय सरकार बनाई गई है। परंतु इस चुनाव में अनुदार दल की संख्या बढ़ गई है और प्रधान मंत्री मैकडानेल्ड के स्थान में अनुदार दल का नेता बाल्डविन है। मज़दूर दल के नेताओं के विश्वासघात के कारण इस दल की सरकार शीघ्र बनने के कोई लक्षण नहीं दीखते हैं। परंतु उदार दल की शक्ति आखिरी चुनाव में और भी कम हो गई है। अस्तु, इंगलैंड के राजनैतिक क्षेत्र में अनुदार और मज़दूर दो ही दलों का द्वंद्व-युद्ध होता रहेगा।

अनुदार दल पुराने 'टोरी दल' का उत्तराधिकारी है, जिस को डिसराइली ने अपनी बुद्धि के प्रभाव से बदल कर आधुनिक बनाया था। आजकल के अनुदार दल का जन्मदाता वास्तव में डिसराइली ही था। उस ने इस दल का ध्येय "इंगलैंड की पुरानी संस्थाओं को सुरक्षित रखना, साम्राज्य को क़ायम रखना और प्रजा की दशा सँभालना" बताया था, और अभी तक अनुदार दल का मुख्य ध्येय-मंत्र यही चला आता है। आयरलैंड को होमरूल देने के प्रश्न पर उदार दल में फूट पड़ जाने पर ड्यूक ऑव् डेवौनशायर और जोज़ेफ़ चेंबरलेन के ग्लैडस्टन के विरुद्ध हो कर अपने साथियों को ले कर अनुदार दल के साम्राज्यवादी कार्य-क्रम में शरीक हो जाने पर अनुदार दल की नीति में और भी परिवर्तन हुआ था, और डिसराइली की नीति और उदार दल से टूट कर आनेवाले लोगों की नीति के मेल से, जो बाद में नई नीति बनी थी, वही आज कल के अनुदार दल की नीति है। इस नीति के पूरा करने के लिए लीग ऑव् नेशन्स का समर्थन करना और अंतर्राष्ट्रीय झगड़ों का शांतिमय निपटारा करना, बृटिश साम्राज्य के विभिन्न भागों की आर्थिक उन्नति करना और उन का एक दूसरे से आर्थिक नाता घनिष्ट कर के साम्राज्य के आर्थिक जीवन का एकीकरण करना, जिस से बृटिश साम्राज्य का टूटना असंभव हो जावे, बृटेन में व्यापारी चुंगी-करों को बुद्धिमानी से लगा कर व्यापार की उन्नति करना, कृषि की सहायता कर के बृटेन के लिए खाद्य-पदार्थ बृटेन में ही पैदा करना, सरकारी खर्च में कमी कर के सरकारी करों को कम करना, प्रजा के रहने के घरों की दशा सुधारना, बुढ़ापे में ६५ वर्ष के बाद बूढ़ों को बुढ़ापे की पेंशन सरकारी खज़ाने से देना और अनाथ विधवाओं और अनाथ बच्चों की आर्थिक सहायता करना, शिक्षा की उन्नति और कृषि की आम उन्नति करना, इस दल ने अपना लक्षित कार्य-क्रम बनाया है। इस दल की खास संस्थाओं में अनुदार और यूनियन संस्थाओं का राष्ट्रीय संघ 'प्रिमरोज़ लीग', 'जूनियर इंपीरियल लीग', 'स्कॉटिश यूनियनिस्ट ऐसोसिएशन', 'कन्ज़रवेटिव क्लबों का संघ' और 'अनुदार नौजवान संघ' हैं। इस दल के पक्षपाती बहुत से समाचार पत्र हैं जिन में खास 'डेली मेल' और 'मॉर्निंग पोस्ट' हैं।

उदारदल के विचारों की जड़ें बहुत पुरानी हैं। सत्रहवीं सदी के आम क़ानूनों और राजछत्र के झगड़ों, प्यूरिटन और पुराने धार्मिक लोगों के झगड़ों, फ़्रांस की क्रांति के फैलाए हुए विचारों, मांचेस्टर गुट्ट के आर्थिक विचारों इत्यादि सब से मिल कर उदार दल की पुरानी नीति का जन्म हुआ था। मगर ऐतिहासिक दृष्टि से उदार दल की शुरूआत बीसवीं सदी के प्रारंभ काल में हुई थी। सन् १६०५ ई० में पहली उदार सरकार बनी और तब से यूरोपीय युद्ध शुरू होने तक बराबर उदार दल की सरकारें ही बृटेन में रहीं। उदार दल को प्रख्यात करनेवाले नेताओं में ग्लैडस्टन, ऐस्क्विथ और लायड जॉर्ज के नाम खास तौर पर लिए जा सकते हैं। उदार दल का मुख्य उद्देश "समाज का ऐसा संगठन करना है, जिस में हर एक व्यक्ति को काम की स्वतंत्रता और उन्नति का मौक़ा हो और कोई एक दूसरे के मार्ग में न आ सके।" यह दल अनुदार दल की आजकल की संस्थाओं के सिर्फ़ सुधारों के कार्य-क्रम का और मज़दूर दल के समाज-शाही स्थापित

करने के उद्देशों का विरोधी है। अपनी नीति को पूरा करने के लिए यह दल लीग ऑव् नेशन्स का समर्थन और अंतर्राष्ट्रीय झगड़ों का शांतिमय निपटारा, सोवियट रूस से व्यापारी संबंध, ब्रिटिश साम्राज्य के विभिन्न भागों को भीतरी स्वाधीनता दे कर उन की सलाह और सहानुभूति से साम्राज्य क़ायम रखना, साम्राज्य के मार्गों की उन्नति कर के साम्राज्य का संबंध घनिष्ट करना, स्वतंत्र व्यापार की नीति क़ायम रखना, प्रत्यक्ष-कर लगाना, खानों पर सरकारी अधिकार करना, कृषि और जंगलात की उन्नति करना, बेकारी के खिलाफ़ सामाजिक बीमा और सरकार की तरफ से सार्वजनिक निर्माण-कार्य शुरू कर के बेकारी कम करना, व्यापारी इजारों के खिलाफ़ क़ानून बनाना, मज़दूरों की दशा सुधारना, अनुपात-निर्वाचन और शिक्षा-उन्नति करने का कार्य-क्रम ज़रूरी समझता है। पिछले चुनाव में इस दल के तीन भाग हो गए थे। लायड जॉर्ज का अनुयायी और राष्ट्रीय-सरकार नीति का विरोधी एक भाग था, जिस के सिर्फ़ चार सदस्य चुने गए थे। हरबर्ट सेमुअल लायड जॉर्ज की बीमारी के कारण दल का नेता हो गया था और उस के हाथ में दल की सारी सत्ता आ गई थी। वह स्वतंत्र व्यापार-नीति पर समझौता कर के राष्ट्रीय सरकार का पक्षपाती था और उस के अनुयायियों में से ३३ चुन कर पार्लमेंट में आए थे। तीसरा भाग जॉन साइमन के अनुयायियों का था, जो अपने को 'राष्ट्रीय उदार' कहते थे और राष्ट्रीय सरकार के हर तरह से समर्थक थे। जॉन साइमन के अनुयायियों में से ३५ पार्लमेंट के लिए चुने गए थे। इन तीनों भागों ने चुनाव में अपना अलग-अलग प्रबंध किया था और अनुदार दल से मिल कर मज़दूर दल को हर जगह हराने का प्रयत्न किया था। इस दल की मुख्य संस्थाओं में एक नेशनल लिबरल फेडरेशन है, जिस में देश भर की सारी उदार शाखाएँ सम्मिलित हैं। दूसरा एक 'लिबरल ऐसोसिएशन' है, और एक 'लिबरल पब्लीकेशन डिपार्टमेंट', एक 'विमेन्स् लिबरल फेडरेशन', एक 'लिबरल कौंसिल', एक 'लिबरल नौजवान संघ', एक 'लिबरल एंड रेडीकल कैंडीडेट्स ऐसोसिएशन', एक 'समर स्कूल्स कमेटी' और देश भर में सात मशहूर क्लब हैं। इस दल के विचारों का सब से मशहूर समाचार-पत्र 'मांचेस्टर गार्डियन' है।

'मज़दूर दल' का जन्म सन् १६०० में हुआ था। सन् १८६६ ई० में ट्रेड यूनियन कांग्रेस' ने एक प्रस्ताव पास कर के सारी मज़दूर संस्थाओं को मिल कर एक राजनैतिक मज़दूर दल बनाने का बुलावा दिया था, और इस बुलावे के फल-स्वरूप मज़दूर संघों, समाजवादी संस्थाओं, स्थानिक उद्योग-समितियों और सहकारी संस्थाओं के मेल से मज़दूर दल कायम हुआ था। इस के बाद 'मज़दूर-प्रतिनिधि-समिति' कायम कर के पार्लमेंट में मज़दूर-पक्षी सदस्यों का एक ऐसा अलग समूह क़ायम करने का निश्चय किया गया था, जो 'मज़दूर-हितैषी क़ानून बनाने में हर एक दल से मिल कर काम करने और मज़दूरों के विरोधियों से दूर रहने' का हमेशा प्रयत्न करे। पहले ही वर्ष में चालीस मज़दूर संघ, जिन के क़रीब साढ़े तीन लाख मज़दूर सदस्य थे; क़रीब छः स्थानिक उद्योग समितियाँ जिन के एक लाख सदस्य थे, और तीन समाजवादी संस्थाएँ

जिन के तेईस हज़ार सदस्य थे, इस दल में शरीक हो गईं। मगर पार्लमेंट के लिए खड़े होनेवाले १५ उम्मीदवारों में से पहले वर्ष में सिर्फ दो ही को सफलता मिली। दूसरे चुनाव में दो से बढ़ कर इस दल के पार्लमेंट में २१६ सदस्य हो गए और फिर हर चुनाव में इस दल की शक्ति बढ़ती गई। सन् १६१८ ई० में मज़दूर दल की पुनर्घटना की गई, जिस के अनुसार मज़दूर दल में सम्मिलित संस्थाओं के सदस्यों के अलावा मज़दूर दल के द्वार दल के उद्देश्यों को माननेवाले हर एक आदमी के लिए खोल दिए गए। इस निश्चय के बाद मज़दूर दल थोड़ी सी संस्थाओं की एक संघ न रह कर पूरे तरीक़े पर एक राजनैतिक दल बन गया और कुछ ही समय में देश भर में मज़दूर दल की शाखाएँ फैल गईं। मज़दूर दल अपना मुख्य उद्देश्य मज़दूर पेशा लोगों को उन की मज़दूरी का पूरा फल प्राप्त कराना और जहाँ तक हो सके वहाँ तक पैदावार का उचित बाँट करने के लिए पैदावार के ज़रियों पर समाज का क़ब्ज़ा और सार्वजनिक शासन और नियंत्रण क़ायम करना मानता है। इसी नीति को पूरा करने के लिए यह दल आम प्रजा की राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक उन्नति खास कर मज़दूर-पेशा लोगों की उन्नति करने, दूसरे देशों की मज़दूर संस्थाओं से सहकार करने, अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों को शांतिमय उपायों से सुलझाने और अंतर्राष्ट्रीय क़ानून बनाने के लिए, सारे राष्ट्रों का एक संघ बनाने के कार्य-क्रम का भी समर्थक है। इस दल की मुख्य संस्थाओं में 'राष्ट्रीय मज़दूर दल', 'स्वतंत्र मज़दूर दल', 'लेबर रिसर्च डिपार्टमेंट', 'फ़ेबियन सोसायटी', 'सोशल डिमॉक्रेटिक फेडरेशन', 'सोसायटी आव् लेबर कैंडीडेट्स' और एक 'नेशनल लेबर क्लब' है। इस दल का मुख्य दैनिक पत्र 'डेली हेराल्ड' है।

आयरलैंड और अल्स्टर की सरकारें—

१—आयरलैंड की सरकार

राज-व्यवस्था

बारहवीं सदी में जब से अँग्रेजों ने आयरलैंड पर विजय प्राप्त की तब से आयरलैंड बराबर अँग्रेजों को तंग करता चला आता था। हमेशा अँगरेज राजनीतिज्ञों के सामने आयरलैंड की समस्या मुँह बाए खड़ी रहती थी। सन् १८५० ई० तक आयरलैंड की समस्या के धार्मिक, आर्थिक और राजनैतिक तीनों पहलू थे। आयरलैंड के उत्तर और उत्तर-पूर्व के पाँच ज़िलों में अर्थात् अल्स्टर प्रांत में बसने वाले इंगलैंड और स्कॉटलैंड से आए हुए लोग प्रोटेस्टेंट सम्प्रदाय के थे और शेष ¾ देश के लोग रोमन केथौलिक पंथ के थे। फिर भी इंगलैंड का प्रोटेस्टेंट चर्च आयरलैंड का संयुक्त-राष्ट्रीय-चर्च माना जाता था। आयरलैंड के लोगों को इंगलैंड के इस प्रबंध के प्रति धार्मिक विरोध था। दूसरे लूट-खसोट और ज़ब्तियाँ कर के आयरलैंड की सारी ज़मीन के मालिक अँग्रेज ज़मींदार बन बैठे थे और आयरलैंड निवासी केवल ग़रीब किसान बन गए थे। तीसरे आयरलैंड को जो कुछ थोड़ी-बहुत शासन-सत्ता १८ वीं सदी में थी वह भी उस से छीन ली गई थी और उस पर अन्य उपनिवेशों की भाँति लंदन से निरंकुश शासन होता था। बाद में सन् १८६९ ई० में इंगलैंड और आयरलैंड का चर्च अलग कर दिया गया, जिस से इंगलैंड और आयरलैंड का धार्मिक झगड़ा खत्म हो गया। सन् १८७० ई० से ज़मीन के संबंध में भी क़ानून बनना शुरू हुए और १९१४ ई० तक लगभग जमींदारी का प्रश्न भी हल हो गया; परंतु राजनैतिक प्रश्न बहुत दिनों तक हल नहीं हुआ।

सन् १८०० ई० तक आयरलैंड की पार्लीमेंट इंगलैंड से अलग थी। सन् १८०० ई० में आयरलैंड की पार्लीमेंट और बृटिश पार्लीमेंट में एक क़ानून पास हुआ जिस के अनुसार आयरलैंड की पार्लीमेंट को तोड़ कर आयरलैंड को बृटेन से मिला दिया गया। आयरलैंड की पार्लीमेंट में अधिकतर अँगरेज़ सदस्य थे। तिस पर भी रिश्वतें दे कर यह क़ानून पास कराया गया था। आयरलैंड-वासियों की मर्ज़ी से यह क़ानून पास नहीं हुआ था। अस्तु, आयरलैंड-वासियों ने प्रारंभ ही से इस प्रबंध के विरुद्ध आवाज़ उठाई। ऐमेट नाम के नौजवान एक बड़े होनहार बैरिस्टर ने तो इंगलैंड के विरुद्ध सन् १८०३ ई० में डबलिन में खुल्लमखुल्ला विद्रोह ही खड़ा कर दिया। परंतु उस को पकड़ कर फाँसी दे दी गई और विद्रोह कुचल दिया गया। बाद में भी इसी प्रकार की बहुत-सी दुर्घटनाएँ होती रहीं। आखिरकार सन् १८३४ ई० में डेनीयल ओकोनेल के नेतृत्व में आयरलैंड में एक राजनैतिक दल बना, जिस का उद्देश "शांतिमय उपायों से आयरलैंड में स्वराज्य क़ायम करना था।" इस आंदोलन को १८४३ ई० में सरकार की तरफ़ से दबा दिया। अस्तु, फिर क्रांतिकारियों की तरफ़ से सरकारी अफ़सरों पर हमले शुरू कर दिए गए। सन् १८५८ ई० में 'फ़ीनियन ब्रदरहुड' नाम की एक संस्था क़ायम हुई, जिस का उद्देश्य, आयरलैंड में हिंसात्मक उपायों से पूर्ण प्रजातंत्र स्थापित करना था। इस संस्था की स्थापना अमेरिका में बसे हुए आयरलैंड प्रवासियों ने की थी और इस की तरफ़ से बाद में बहुत से सरकारी अफ़सरों के ख़ून किए गए। सरकार की ओर से भी ख़ूब दमन हुआ। तीस वर्ष तक दोनों तरफ़ की मार-काट जारी रही और इंगलैंड और आयरलैंड का बैर-भाव बढ़ता ही रहा।

डेनीयल ओकोनेल इत्यादि बहुत से आयरलैंड के नेताओं को 'फ़ीनियन ब्रदरहुड' की हिंसात्मक नीति पसंद नहीं थी। वे शांतिमय उपायों से इंगलैंड का हृदय पलटने के पक्षपाती थे। अस्तु, सन् १८७० ई० में डबलिन में आइज़क बट की अध्यक्षता में एक सम्मेलन कर के फिर से, "शांतिमय उपायों से आयरलैंड के लिए संस्थानिक स्वराज्य प्राप्त करने के लिए" एक 'होमरूल लीग' बनाई गई। सन् १८७४ ई० में इस लीग की तरफ़ से बृटिश पार्लीमेंट में आयरलैंड के सात प्रतिनिधि चुन कर आए। आयरलैंड का मोतीलाल नेहरू प्रख्यात चार्ल्स स्टीवार्ट पारनेल इस दल का इंगलैंड की पार्लीमेंट में नेता था। उस ने अपने दल को सुसंगठित कर के इस होशियारी से पार्लीमेंट की नाक में दम करना शुरू किया कि जिन आयरलैंड की माँगों को सुन कर बृटिश पार्लीमेंट के सदस्य अवहेलना से मुँह सिकोड़ा करते थे, वही माँगें उन की पार्लीमेंट के लिए बाद में एक समस्या बन गईं। उदार दल को आयरलैंड की इस पार्टी की सहायता के बिना पार्लीमेंट में अपने प्राण बचाने मुश्किल हो गए। लाचार हो कर ग्लैड्स्टन ने सन् १८८६ ई० में आयरलैंड को संस्थानिक-स्वराज्य दिलाने के लिए पार्लीमेंट में एक बिल पेश किया जो पास नहीं हुआ। सन् १८९३ ई० में ग्लैड्स्टन ने प्रधान-मंत्री बनने पर वैसा ही मसविदा फिर पेश किया और फिर हाउस ऑव् लॉर्ड्स के विरोध के कारण वह मसविदा पास न हो सका। बाद में 'पार्लीमेंट बिल' पास हो जाने पर हाउस ऑव् लॉर्ड्स के पंजे

घिस जाने पर फिर सन् १६१२ ई० में उदार-दल की तरफ़ से आयरलैंड को स्वराज्य देने के लिए एक मसविदा पेश किया गया, और हाउस ऑव् लॉर्ड्स के विरोध करने पर भी वह पार्लमेंट में सन् १६१४ ई० में पास हो गया। अल्स्टर प्रांत के छः ज़िलों ने शेष आयरलैंड से मिलना स्वीकार नहीं किया, इस लिए उस प्रांत की एक अलग पार्लमेंट बनाने का प्रबंध किया गया। मगर इसी बीच में यूरोपीय महासमर छिड़ गया और सारे काम छोड़ कर बृटिश सरकार को एकदम युद्ध में जुट जाना पड़ा। आयरलैंड को स्वराज्य देने का क़ानून पास हो जाने पर भी उस पर अमल न हो सका; मगर बृटिश सरकार की तरफ़ से यह वादा कर दिया गया कि युद्ध खत्म होते ही क़ानून पर अमल किया जायगा।

आयरलैंड के नरम-दल के नेता मिस्टर रेडमंड इत्यादि इस वादे से संतुष्ट हो कर बृटिश सरकार को युद्ध में विजय प्राप्त कराने के लिए सहायता करने लगे। उत्तर से ले कर दक्षिण तक सारे देश में युद्ध के लिए सैनिकों की भर्ती शुरू हो गई। ऐसा मालूम होता था कि सारा आयरलैंड संतुष्ट हो गया है। एक वर्ष तक देश भर में बिल्कुल शांति रही। परंतु भीतर ही भीतर असंतोष की आग भड़क रही थी। साल का अंत आते-आते ऐसी कठिनाइयाँ खड़ी होने लगीं जिन का सरकार ने स्वप्न भी नहीं देखा था। चारों तरफ़ से "फ़ौरन् आयरलैंड में स्वराज्य" स्थापित करने के लिए माँगें उठने लगी। सैनिकों की भर्ती भी कम हो गई और आयरलैंड के पश्चिमी किनारे से जर्मनी के जहाज़ों को ज़रूरत का सामान मिलने लगा। पूर्ण स्वतंत्रता के पक्षपातियों की आयरलैंड में संख्या बढ़ने लगी। 'सीनफीन' संस्था जो आयरलैंड के लिए पूर्ण स्वाधीनता की पक्षपाती और अँगरेज़ों को आयरलैंड से बिल्कुल निकाल देने की हामी थी, ज़ोर पकड़ने लगी। सन् १६०५ ई० से आर्थर ग्रिफ़िथ के नेतृत्व में यह संस्था काम कर रही थी। परंतु आज तक उस को अधिक सफलता नहीं मिली थी। सन् १६१२ तक सीनफ़ीन लोगों को आयरलैंड में ग़ैरज़िम्मेदार और बकवासी समझा जाता था। मगर अल्स्टर प्रांत के आयरलैंड की स्वाधीनता का विरोध करने और इंगलैंड के यूनियनिस्ट दल के अल्स्टर प्रांत की इस आंदोलन में सहायता करने के बाद से आयरलैंड में 'सीनफ़ीन' दल का ज़ोर बढ़ने लगा था और १६१४ ई० तक सीनफ़ीन दल का ज़ोर काफ़ी बढ़ गया। लड़ाई शुरू हो जाने के बाद एक वर्ष तक इस दल के नेता अँगरेज़ों से ऊपर से मिले रहे और भीतर-भीतर आयरलैंड में पूर्ण स्वाधीनता स्थापित करने के आंदोलन की तैयारी करते रहे। उन का विचार था कि जर्मनी से मिल कर अँगरेज़ों को आयरलैंड से निकाला जा सकेगा। आख़िरकार सन् १६१६ ई० में ईस्टर के बाद के सोमवार के दिन इस दल की ओर से डबलिन में खुला विद्रोह खड़ा कर दिया गया और सीनफ़ीन दल ने आयरलैंड को प्रजातंत्र एलान कर के डी वेलेरा को उस का प्रमुख चुन लिया। यह विद्रोह फ़ौरन् ही दबा दिया गया। फिर भी इस घटना से संसार की दृष्टि आयरलैंड की तरफ़ ज़रूर खिंची। इस के बाद आयरलैंड के लोगों और बृटिश सरकार में एक प्रकार का युद्ध ही छिड़ गया। सरकार की तरफ़ से 'मारशल ला' जारी कर दिया गया और क्रांतिकारियों की तरफ़ से इधर-उधर अक्सर बंब और गोलियाँ बरस उठतीं।

बहुत-से आयरिश नौजवान फाँसियों पर लटक गए, और बहुत-से सरकारी अफ़सरों की जानें चली गईं; आयरलैंड में 'सीनफ़ीन' शब्द प्रख्यात और प्यारा होने लगा था। सीनफ़ीन दल का नेता डी वेलेरा देश का अधिनायक बन गया और लोग उस की ओर आशा की दृष्टि से देखने लगे। सन् १९१८ ई० के बृटिश पार्लीमेंट के चुनाव में आयरलैंड की ओर से १०५ सदस्यों में से ७३ सीनफ़ीन चुने गए। यह सदस्य बृटिश पार्लीमेंट में बैठने नहीं गए, उन्हों ने डबलिन में अपनी एक अलग सभा बना कर प्रजातंत्र आयरलैंड की एक शासन-व्यवस्था तैयार कर ली, जिस राज-व्यवस्था के अनुसार आयरलैंड में सारी सत्ता एक व्यवस्थापक-सभा, प्रजातंत्र के प्रमुख, और एक मंत्रि-मंडल में रक्खी गई थी।

मगर इंगलैंड ने इस राज-व्यवस्था को स्वीकार नहीं किया। आयरलैंड के प्रजातंत्र वादियों ने प्रेसीडेंट विल्सन, फ्रांस, इटली और संधि-सम्मेलन सभी के द्वार खटखटा कर आयरलैंड को एक स्वाधीन और स्वतंत्र प्रजातंत्र राष्ट्र मंज़ूर कराने का बहुत प्रयत्न किया। मगर कहीं से उन को कोई सहायता नहीं मिली। सन् १९१९ ई० में डी वेलेरा अँगरेज़ों की जेल से निकल कर अमेरिका भाग गया। वहां जा कर उसने आयरलैंड की स्वाधीनता के लिए आंदोलन शुरू किया। इधर आयरलैंड में मारकाट जारी रही। सीनफ़ीनों की क़ायम की हुई सरकार को बृटिश सरकार काम नहीं करने देती थी, और सीनफ़ीन मारकाट कर के बृटिश सरकार का शासन बंद करने का प्रयत्न करते थे। रोज़ गली सड़कों पर ख़ून होते थे। आख़िरकार लॉयड जॉर्ज ने सन १९२० में समझौते की बात चलाई और सन् १९२२ में बृटिश सरकार और आयरलैंड के नेताओं में एक संधि हुई जिस के अनुसार आयरलैंड को बृटिश साम्राज्य में इंगलैंड के बराबरी का भागीदार माना गया। बृटिश साम्राज्य में आयरलैंड ही एक ऐसा भाग है जिस ने अपनी राज-व्यवस्था को अपने आप गढ़ा है। इस राज-व्यवस्था में बाद में सन् १९२८ में बहुत-से परिवर्तन किए गए। आयरलैंड की इस राज व्यवस्था के अनुसार सारी राजनैतिक सत्ता आयरलैंड की प्रजा के अधीन मानी गई है। प्रत्येक व्यक्ति को व्यक्तिगत, धार्मिक विचारों और मिलने-जुलने की पूरी आज़ादी मानी गई है। किसी को बिना कारण जेल में बंद नहीं रक्खा जा सकता है, और हर एक को प्राथमिक शिक्षा मुफ़्त पाने का अधिकार है। क़ानून बनाने की सत्ता बृटिश राज-छत्र और व्यवस्थापक-सभा की दो सभाओं—सिनेट और प्रतिनिधि-सभा—में रक्खी गई है। आयरलैंड बृटिश साम्राज्य के भीतर केनेडा की ही हैसियत का एक भाग है। परंतु एक तरह से केनेडा और आयरलैंड की राज-व्यवस्था में बड़ा फ़र्क़ भी है। एक तो बृटिश सरकार और आयरलैंड के नेताओं में जो समझौता हुआ था, उस को 'संधि' कहा गया है, जो सिर्फ़ दो बराबर के राष्ट्रों में होती है। दूसरे आयरलैंड में साम्राज्य के दूसरे भागों की तरह गवर्नर जनरल[१] भी है और साथ ही वहाँ की कार्य-कारिणी के मुख्य अधिकारी को जिस को साम्राज्य के दूसरे डोमीनियम स्टेटस प्राप्त देशों के प्रधान-मंत्री की सत्ता होती है, प्रेसीडेंट अर्थात् प्रधान या प्रमुख कहते हैं, जो आम तौर पर प्रजातंत्र राष्ट्रों के राष्ट्रपति को कहा जाता है। इन शब्दों को शायद आयरलैंड के प्रजातंत्रवादी-दल को बहलाने के लिए रहने

[१] प्रजातंत्र दल की सरकार बनने ही पर इस पद का अंत कर दिया गया है।

दिया गया होगा[1]। मगर इन से आयरलैंड की बृटिश साम्राज्य में एक खास हैसियत हो गई है, जिस से नई समस्याएँ खड़ी हो गई हैं।

२—व्यवस्थापक-सभा

आयरलैंड की प्रतिनिधि-सभा को डेल आइरीन कहते हैं। उस में १५२ सदस्य होते हैं, जिन को चार साल के लिए २१ वर्ष के ऊपर के सब स्त्री-पुरुष नागरिक अनुपात निर्वाचन की पद्धति के अनुसार चुनते हैं। हर मतदार को उम्मीदवार बनने का भी हक होता है। व्यवस्थापक-सभा की दूसरी सभा सिनेट में ६० सदस्य होते हैं, जिन के एक तिहाई भाग को हर तीसरे साल देश की खास सेवा करने या खास योग्यता होने की बुनियाद पर डेल और सिनेट के सदस्य मिल कर गुप्त मतों से, नौ साल के लिए चुनते हैं। उन की उम्र कम से कम तीस साल होने की क़ैद रक्खी गई है। व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों को वेतन दिया जाता है। एक सदस्य दोनों सभाओं का सदस्य नहीं हो सकता है। डेल में मंजूर हुए साधारण क़ानूनी मसविदों को सिनेट को संशोधित करने या २७० दिन तक रोक रखने या प्रजा के हवाले के लिए भिजवाने का अधिकार होता था। बाद में राज-व्यवस्था में संशोधन कर के सिनेट से मसविदों को हवाले के लिए भिजवाने का अधिकार ले लिया गया। अब डेल से आए हुए मसविदों को केवल १८ मास तक सिनेट रोक रख सकती है। यह समय पूरा हो जाने के बाद डेल में फिर वही मसविदा पास होने पर एक निश्चित समय में अगर सिनेट उसे मंजूर नहीं करती है, तो वह मसविदा व्यवस्थापक-सभा से मंजूर माना जाता है और क़ानून बन जाता है। आय-व्यय-सबंधी मसविदे पेश करने का सिर्फ़ कार्य-कारिणी को अधिकार होता है और उन को मंज़ूर-नामंज़ूर करने का अधिकार सिर्फ़ डेल को होता है। मगर उन को सिनेट के पास सिनेट की सिफारिशें जानने के लिए भेजा जाता है और वहाँ से इक्कीस दिन के भीतर ही वे अवश्य लौट कर डेल के पास आ जाते हैं, जिस के बाद डेल को उन पर पूरा अधिकार होता है। व्यवस्थापक सभा से मंजूर हुए क़ानूनों के लिए 'राज-छत्र' की मंज़ूरी की आवश्यकता होती है। राज छत्र को क़ानूनों को मंज़ूर या नामंज़ूर करने या एक साल तक रोक रखने का अधिकार होता है।[2]

३—कार्यकारिणी

पाँच या छः या सात मंत्रियों के एक मंत्रि-मंडल को मंत्रि-मंडल के प्रधान की सिफ़ारिश पर गवर्नर जनरल कार्यकारिणी का काम चलाने के लिए नियुक्त करता है। मंत्रि-मंडल के सारे सदस्यों को डेल का सदस्य होने और उन में प्रधान, उपप्रधान और अर्थ-सचिव अवश्य होने की राज-व्यवस्था में शर्त रक्खी गई है। मंत्रि मंडल सिर्फ़ डेल को जवाबदार माना गया है, सिनेट को नहीं। कार्यकारिणी के प्रधान को डेल चुनती है और प्रधान एक उपप्रधान को नियुक्त करता है। दूसरे मंत्रियों

[1] परंतु गवर्नर जनरल के पद का अंत हो जाने से राष्ट्रपति शब्द अब बहुत कुछ सार्थक हो गया है।

[2] इस अधिकार को भी प्रजातंत्रवादी सरकार अब स्वीकार नहीं करती।

को प्रधान डेल की सलाह से नियुक्त करता है। मंत्रि-मंडल की डेल को सम्मिलित जवाबदारी होती है और डेल का विश्वास उस में न रहने पर सारा मंत्रि-मंडल एक साथ इस्तीफ़ा दे देता है। मगर इस्तीफ़ा दे देने के बाद भी नया मंत्रि-मंडल न बन जाने तक पुराना ही काम चलाता है। मंत्रि-मंडल के सदस्यों को व्यवस्थापक सभा की दोनों सभाओं में बोलने का अधिकार होता है।

४—स्थानिक-शासन और न्याय-शासन

आयरलैंड का स्थानिक शासन और न्यायशासन इंगलैंड से मिलता-जुलता है।

५—राजनैतिक दल

आयरलैंड और बृटिश सरकार में सन् १९२१ में जो समझौता हुआ उस के अनुसार आयरलैंड का उत्तरी भाग अल्स्टर आयरलैंड से अलग हो गया। यह बात आयरलैंड को एक 'स्वतंत्र प्रजातंत्र राष्ट्र' बनाने का स्वप्न देखनेवाले प्रजातंत्रवादियों को पसंद नहीं आई। उन्हों ने हथियार उठा कर सरकार का विरोध शुरू किया, जो एक साल के भीतर ही दबा दिया गया। पुराने सीनफ़ीन दल के एक भाग ने कौसग्रेव के नेतृत्व में नई राज-व्यवस्था को मंज़ूर कर के उस पर अमल शुरू किया और दूसरे भाग ने डी वेलेरा के नेतृत्व में आयरलैंड को 'स्वाधीन प्रजातंत्र राष्ट्र' बनाने का आंदोलन जारी रक्खा। सन् १९२३ ई० में नई राज-व्यवस्था के अनुसार पहला चुनाव हुआ जिस में डी वेलेरा के दल ने भी भाग लिया और १५३ में से ५१ सदस्य इस दल के चुने गए। मगर डी वेलेरा के प्रजातंत्रवादी सदस्यों ने इंगलैंड के राजछत्र के प्रति स्वामिभक्ति की शपथ ले कर डेल में बैठना स्वीकार नहीं किया और इस लिए वे डेल की कार्रवाई से दूर रहे। सन् १९२५ ई० में अल्स्टर और आयरलैंड के एकीकरण के प्रश्न पर एक कमीशन विचार करनेवाला था। परंतु इस कमीशन ने यह प्रश्न जैसा का तैसा छोड़ दिया, जिस से कौसग्रेव की सरकार काफ़ी बदनाम हो गई। मगर प्रजातंत्र-वादियों के डेल से बाहर रहने के कारण कौसग्रेव के दल की सरकार क़ायम रही। बाद में सन् १९२७ ई० के दूसरे चुनाव के बाद हिंसात्मक प्रजातंत्र-वादियों में से किसी ने कौसग्रेव दल के उपप्रधान को मार डाला, जिस से कौसग्रेव ने हिंसावादियों को बिल्कुल दबा दिया। सरकारी सत्ता का मान बढ़ाने के लिए कौसग्रेव ने चुनाव के लिए खड़े होने के लिए स्वामिभक्ति की शपथ, एक क़ानून द्वारा अनिवार्य बना कर डी वेलेरा के अहिंसात्मक प्रजातंत्र-वादियों को भी—स्वामि-भक्ति की शपथ लेने के लिए मजबूर कर दिया। डी वेलेरा के दल को मजबूर हो कर शपथ लेनी पड़ी। मगर उन्हों ने साफ़ एलान कर दिया कि सिर्फ़ क़ानूनी शर्त पूरी करने के लिए वे शपथ लेते हैं और इस लिए शपथ लेने के बाद भी वे राजछत्र के प्रति स्वामिभक्ति के लिए अपने आप को पाबंद नहीं समझेंगे।

आयरलैंड को प्रजातंत्र बनाने के अतिरिक्त डी वेलेरा का 'फ़ायना फ़ेल' नाम का प्रजातंत्र-वादी दल आयरलैंड को फ़ौरन् बृटेन की आर्थिक गुलामी से मुक्त करने में विश्वास रखता है। आयरलैंड के किसानों को ज़मींदारों से—जो अधिकतर अँगरेज़ थे—ज़मीन ख़रीदने

में सहायता करने के लिए आयरलैंड की तरफ़ से इंगलैंड से क़र्ज़ा लिया गया था, और इस क़र्ज़े को अदा करने के लिए आयरलैंड के खज़ाने से लगभग तीस लाख पौंड सालाना की किश्त दी जाती। फ़ायना फ़ेल दल इस किश्त को नाजायज़ मानता था और जैसे ही इस दल की सरकार बनी, यह किश्त बंद कर दी गई, जिस पर इंगलैंड में बड़ा शोर मचा। कौसग्रेव का दल बृटिश बाज़ार में बेचने के लिए देश में मक्खन और गायें इत्यादि बढ़ाने के लिए किसानों को सहायता देने के पक्ष में है। फ़ायना फेल दल आयरलैंड में खाद्य पदार्थ और अनाज पैदा कराने की नीति में विश्वास रखता है। सन् १६३२ ई० के चुनाव में फ़ायना फेल दल के ताक़त में आ जाने पर डी वेलेरा ने अपनी नीति पर अमल शुरु कर दिया है, और वह धीरे-धीरे आयरलैंड को संपूर्ण स्वाधीनता की तरफ़ ले जा रहा है।

डी वेलेरा के प्रजातंत्रवादी 'फ़ायना फेल दल' और कौसग्रेव के 'आयरिश लीग दल' के अतिरिक्त आयरलैंड के छोटे छोटे दलों में एक 'मज़दूर दल', एक 'किसान दल', एक 'स्वतन्त्र दल', एक हिंसावादी प्रजातंत्रवादियों का 'सीनफ़ीन दल' और एक 'राष्ट्रीय-संघ दल' भी है।

२—अल्स्टर की सरकार

१—राज-व्यवस्था

उत्तरी आयरलैंड के छः ज़िले, जो 'अल्स्टर' के नाम से प्रख्यात हैं, 'ग्रेट-ब्रूटेन और उत्तरी आयरलैंड के संयुक्तराज्य' का भाग हैं। बृटिश राजछत्र का प्रतिनिधि एक लार्ड लेफ़्टीनेन्ट नाम का अधिकारी राजा की ओर से अल्स्टर की व्यवस्थापक-सभा के मंज़ूर किए हुए क़ानूनों को मंज़ूर या नामंज़ूर करता है। एक साल तक किसी भी मसविदे को वह रोक रख सकता है, जो यह समय पूरा होने के बाद क़ानून हो जाता है। यही अधिकारी व्यवस्थापक-सभा की बैठकें बुलाता और बंद करता है। तेरह सदस्य अल्स्टर की ओर से बृटिश पार्लीमेंट में चुन कर जाते हैं।

२—व्यवस्थापक-सभा

अल्स्टर की व्यवस्थापक सभा की दो सभाएँ होती हैं—एक सिनेट और दूसरी हाउस ऑव् कामन्स। कामन्स प्रजा के ५२ प्रतिनिधियों की सभा होती है। उस के सदस्यों का उन्हीं चुनाव क्षेत्रों से अनुपात-निर्वाचन के अनुसार चुनाव होता है, जिन से बृटिश पार्लीमेंट के लिए सदस्यों का होता है। सिनेट में २६ सदस्य होते हैं। चौबीस को अल्स्टर की कामन्स सभा चुनती है; बेलफ़ास्ट और लंडनडेरी के दो मेयर अपने पद की बुनियाद पर सिनेट में बैठते हैं। आय-व्यय के मसविदे कामन्स में शुरू होते हैं और सिनेट उन में परिवर्तन नहीं कर सकती है। कामन्स के किसी मसविदे को सिनेट के दो बार नामंज़ूर कर देने पर दोनों सभाओं की एक सम्मिलित बैठक में उस मसविदे पर विचार कर के फ़ैसला कर लिया जाता है। कामन्स के सदस्यों को खर्च के लिए २०० पौंड सालाना दिया जाता है।

३—कार्यकारिणी

कार्यकारिणी सत्ता लॉर्ड लेफ़्टीनेंट और व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार एक मंत्रि-मंडल में होती है। सेना, परराष्ट्र विषय, मिलकियत ज़ब्त करने के, धार्मिक समता क़ायम रखने के, और कुछ आर्थिक अधिकार बृटिश पार्लीमेंट के अधिकार में रक्खे गए हैं। अल्स्टर की आर्थिक स्वतंत्रता भी सीमित है। बृटिश पार्लीमेंट अल्स्टर के ६० फ़ी सदी कर एकत्र करती है।

फ्रांस की सरकार

१—राज-व्यवस्था

इंगलैंड के बाद यूरोप के देशों में फ्रांस से हमारा सब से अधिक संबंध रहा है। जिस प्रकार क्लाइव की इंगलैंड की सरकार ने पीठ ठोंकी, अगर उसी प्रकार डुपले की फ्रांस की सरकार ने सहायता की होती, तो शायद आज भारतवर्ष में बृटिश साम्राज्य के स्थान में फ्रेंच साम्राज्य होता और थोड़े से इधर-उधर छोटे-मोटे शहर ही फ्रांस के अधिकार में न रह गए होते। परंतु फ्रांसीसी साम्राज्य फैलाने की कला में इतने निपुण नहीं हैं जितने अँगरेज़। भारतवर्ष में फ्रेंच साम्राज्य होने पर भी हमारे देश की राजनैतिक संस्थाओं के विकास में अधिक भेद नहीं पड़ता, क्योंकि फ्रांस की सरकार का संगठन भी लगभग उन्हीं सिद्धांतों पर किया गया है। दोनों के रूप-रंग और चलन में बहुत समानता है। फ्रांस की भयंकर राज्यक्रांति ने भी सिर्फ़ यूरोप ही नहीं, संसार भर का हृदय हिला दिया था। उस ने काली की तरह मुर्दों के ढेर पर खड़े हो कर मानव-जाति को एक ऐसे नए संसार की तरफ़ आने को हुंकारा था, जिस में 'स्वाधीनता, समानता और भ्रातृ भाव' हो। इंगलैंड के प्रख्यात राजनीतिज्ञ डिसराइली का तो यहाँ तक कहना था कि 'इतिहास में केवल दो ही घटनाएँ हुई हैं; एक ट्राय का घेरा और एक दूसरी फ्रांस की राज्यक्रांति।' डिसराइली का वाक्य अतिशयोक्ति मान लेने पर भी यह तो निश्चय ही है कि फ्रांस की राज्य-क्रांति ने विचारों का एक नया प्रवाह बहा कर यूरोप की आधुनिक सरकारों का रूप-रंग बदल डाला। अस्तु, इस प्रकार से इंगलैंड के बाद फ्रांस की राज व्यवस्था का ही अध्ययन करना हमारे लिए उचित होगा।

फ़्रांस की राज्य क्रांति ने आठ सौ वर्ष से चलती आनेवाली राज-व्यवस्था फ़्रांस में उलट डाली। यह राज-व्यवस्था निरंकुश राजाशाही थी। राजाशाही के सिद्धांत के अनुसार राजा के सिर पर स्वयं ईश्वर मुकुट रखता था और कोई नहीं। अस्तु, प्रजा के लिए क़ानून बनाना और प्रजा पर शासन करना राजा ही का अधिकार होता था और किसी का नहीं। देश भर पर एक केंद्रित नौकरशाही का चक्र चलता था और पेरिस के दरबार में बैठनेवाले राजा के छः मंत्रियों और लगभग चालीस सलाहकारों के सिवाय जनता की आवाज़ का राज-व्यवस्था में कहीं कोई स्थान नहीं था। स्थानिक-स्वशासन का भी प्रजा को अधिकार सिर्फ़ नाम के लिए था।

जिस काल में इंगलैंड में पार्लामेंट का विकास हुआ, उसी समय में फ़्रांस में 'एस्टेट्स-जेनरल' नाम की संस्था का विकास हुआ था। इस संस्था के तीन भाग थे—एक सरदार और अमीरों की सभा, दूसरी पादरियों की सभा और तीसरी मध्यम श्रेणी के लोगों की सभा। पहली दोनों सभाओं के विचार प्रायः हर विषय पर मिलते थे और वे दोनों मिल कर हमेशा मध्यम श्रेणी की सभा की आवाज़ दबा देती थीं। इंगलैंड की पार्लामेंट की तरह एस्टेट्स-जेनरल का फ़्रांस की राजनीति में स्थान नहीं था। कुछ समय के बाद तो राजा ने एस्टेट्स-जेनरल को बुलाना भी बंद कर दिया था, और सिर्फ़ जब प्रजा से धन वसूल करने की आवश्यकता होती थी, तब एस्टेट्स-जेनरल को बुला कर उस की सहायता से कर वसूल किया जाता था। एस्टेट्स-जेनरल के सदस्यों को राजा के सामने प्रार्थना करने के अतिरिक्त अन्य कोई शासन अथवा आय-व्यय इत्यादि में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं था। जिस प्रकार हमारे देश के कुछ रजवाड़ों में आजकल नाम की व्यवस्थापक सभाएँ हैं, जो सिर्फ़ दिखावे के लिए बुलाई जाती हैं, उसी तरह फ़्रांस में सन् १७८९ ई० में एस्टेट्स-जेनरल नाम की संस्था थी। फ़्रांस के कुछ प्रांतों में भी 'स्थानिक एस्टेट्स' सभाएँ थीं। परंतु वे भी राष्ट्रीय एस्टेट्स की बाँदी के अतिरिक्त और कुछ नहीं थीं। अमीर, उमरावों, सरकार के पुछलग्गुओं और पिट्ठुओं की पाँचों घी में रहती थीं। साधारण आदमी की बात पूछनेवाला कोई नहीं था। किसी भी आदमी को बिना क़सूर बताए पकड़ कर जेल में बंद किया जा सकता था। पादरियों और सरदारों से नाम मात्र का कर लिया जाता था और बड़े-बड़े पदों पर नियुक्त होने तथा किसानों से काम लेने की उन्हें ठेकेदारी-सी दे दी गई थी।

इस अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ उठी, और जिस तूफ़ान की धूल फ़्रांस के आकाश में बहुत दिनों से उठती हुई दिखाई दे रही थी, उस ने सन् १७८९ ई० में ज़ोर से आ कर फ़्रांस के अभागे राजा लुई और उस की राज-व्यवस्था को उलट-पुलट कर फेंक दिया और सारे पुराने विचारों और विश्वासों की जड़ हिला डाली। २६ अगस्त सन् १७८९ ई० को फ़्रांस के प्रतिनिधियों ने एकत्र हो कर 'मनुष्य और नागरिक के अधिकारों का एक एलान किया' जिस के पहले भाग में निम्न-लिखित सिद्धांतों का समावेश था—

१—मनुष्य स्वतंत्र पैदा होते हैं, और वे अधिकारों में स्वतंत्र और समान हैं।

२—सारी राजनैतिक संस्थाओं का केवल एक ही उद्देश होता है कि वे मनुष्य के

प्राकृतिक और अछिन्न अधिकारों की, जैसे व्यक्तिगत स्वतंत्रता, जान-माल की रक्षा, अन्याय का विरोध करने के अधिकारों की रक्षा करें।

३—प्रभुता प्रजा अथवा राष्ट्र की है और राष्ट्र की अनुमति के बिना किसी संस्था या किसी व्यक्ति को कोई अधिकार प्राप्त नहीं है।

४—स्वतंत्रता का अर्थ यह है कि जिस काम से किसी दूसरे को नुक़सान न पहुँचे उस के करने का सब को अधिकार है।

५—क़ानून प्रजा की इच्छा व्यक्त करता है और हर एक आदमी को स्वयं अथवा अपने प्रतिनिधि द्वारा क़ानून बनाने में भाग लेने का अधिकार है।

६—क़ानून सब के लिए एक है।

अधिकारों के इस एलान में विशेषकर इन बातों पर भी ज़ोर दिया गया था कि ग़ैर-क़ानूनी तरीक़े से किसी को गिरफ़्तार या क़ैद नहीं किया जायगा, सब को धार्मिक विश्वास, भाषण, लिखने और बोलने की स्वतंत्रता रहेगी, स्वयं अथवा प्रतिनिधियों द्वारा प्रत्येक मनुष्य को कर के संबंध में मत देने का अधिकार होगा, ग़ैर-क़ानूनी तरीक़े से किसी का माल या जायदाद ज़ब्त नहीं की जायगी और अगर सरकार को किसी चीज़ की ज़रूरत होगी, तो उस का मुआवज़ा दिया जायगा।

अभी तक यूरोपीय देशों में राज-व्यवस्था लिखित नहीं होती थी; सिर्फ़ रिवाजों पर ही निर्भर रहती थी। परंतु फ़्रांस की क्रांति के बाद फ़्रांस की जो राज-व्यवस्था बनी उस को लेखनी-बद्ध किया गया। फ़्रांस के नेताओं को अलिखित रिवाजी राज-व्यवस्था से लिखित राज-व्यवस्था पसंद आने के कई कारणों में से एक ख़ास कारण यह था कि लिखित राज-व्यवस्था का सर्व-साधारण को आसानी से ज्ञान कराया जा सकता है। फ़्रांस इस ओर क़दम बढ़ा कर इस विषय में यूरोप का अगुआ बना और बाद में जरमनी, इटली, स्पेन आदि अन्य यूरोपीय देशों में भी यही विश्वास बढ़ता गया कि स्वाधीनता की रक्षा के लिए लिखित राज-व्यवस्था अनिवार्य है। प्रजातंत्र सरकार स्थापित कर के फ़्रांस की राज-क्रांति ने यूरोपीय देशों को दूसरा यह सबक़ भी पढ़ाया कि प्रजातंत्र ढंग की सरकार न सिर्फ़ फ़्रांस के ही लिए उपयुक्त है बल्कि फ़्रांस की तरह यूरोप के अन्य पुरातन और माननीय राष्ट्रों में भी स्थापित हो सकती है। वरना अभी तक यूरोप के बहुत से विचारकों का यही विचार चला आता था कि प्रजातंत्र-राज्य केवल छोटे क्षेत्र के राज्यों में स्थापित हो सकता है। क्रांति के बाद नई राज-व्यवस्था का निर्माण करने के लिए फ़्रांस की प्रजा के जो प्रतिनिधि एकत्र हुए उन में अधिक संख्या राजाशाही को क़ायम रखने के पक्षपातियों ही की थी, और सन् १७९१ तक इस प्रतिनिधि-सम्मेलन ने जो राज-व्यवस्था रच कर तैयार की थी, उस में राजाशाही क़ायम रक्खी गई थी। परंतु घटनाओं के चक्र से, राजा की कमज़ोरी और उस के संकल्प-विकल्पों और आख़िरकार उस के देश छोड़ कर भाग जाने से, रानी के प्रजा-मत का विरोध करने और राजा के पिट्ठुओं के लगातार षड्यंत्रों से, उकता कर फ़्रांस में सब का मन राजाशाही की तरफ़ से हट गया, अस्तु २१ सितंबर सन् १७९२ ई० को प्रजा के प्रतिनिधियों ने मिल कर राजतंत्र को दफ़न किया और अखंड प्रजातंत्र-

राज्य की फ्रांस में स्थापना की। फ्रांस के बाद फिर इधर-उधर के दूसरे यूरोपीय देशों में भी प्रजातंत्र की हवा फैली और चारों ओर कई छोटे-बड़े प्रजातंत्र राज्य खड़े हो गए। इन प्रजातंत्र राज्यों और फ्रांस के प्रजातंत्र राज्य को पीछे नेपोलियन की महत्वाकांक्षाओं के सामने अवश्य झुक जाना पड़ा; फिर भी इस समय से यूरोप के लोगों का प्रजातंत्र में विश्वास हो चला और प्रजातंत्र सरकार यूरोप के राजनैतिक जीवन का एक अंग बन गई।

पुरानी राजनैतिक संस्थाओं को तोड़-फोड़ कर क्रांति के बाद लगभग सौ वर्ष तक, फ्रांस में तरह-तरह की तबदीलियाँ और तजुरबे होते रहे। ८४ वर्ष के अरसे में सात विभिन्न राज-व्यवस्थाओं पर अमल करने की कोशिश की गई। परंतु कुछ वर्ष से अधिक उन में से कोई भी राज-व्यवस्था न टिक सकी। फिर भी इन तजुरबों से राष्ट्र को बहुत कुछ राजनैतिक अनुभव अवश्य हुआ। क्रांति के ज़माने में ही तीन राज-व्यवस्थाएँ बनाई गई थीं। एक ३ सितंबर सन् १७९१ ई० को नेशनल एसेंबली ने बना कर तैयार की थी। जिस को अगस्त १० के उपद्रव में भस्मीभूत कर दिया गया। दूसरी १५ फ़रवरी सन् १७९३ ई० की राज-व्यवस्था को कन्वेंशन ने तैयार किया था। परंतु उस पर भी कभी अमल नहीं हुआ। तीसरी २२ अगस्त सन् १७९५ ई० की दूसरी, कन्वेंशन द्वारा तैयार की हुई राज-व्यवस्था पर २३ सितंबर सन् १७९५ ई० से ९ नवंबर सन् १७९९ ई० के अचानक परिवर्तन तक ही सिर्फ़ अमल हुआ। पहली राज-व्यवस्था में सीमित राजाशाही, मंत्री जिन पर कुशासन के लिए मुक़दमा चलाया जा सके और एक सभा की और तीन दिन की मज़दूरी का कर देनेवाले २५ वर्ष की आयु के ऊपर के मनुष्यों द्वारा चुने हुए ७४५ सदस्यों की एक व्यवस्थापक-सभा की योजना की गई थी। सन् १७९३ ई० की दूसरी राज-व्यवस्था में एक ऐसे प्रजातंत्र की व्यवस्था की गई थी जिस में एक सभा की एक धारासभा होती, इस धारासभा का सारे नागरिक हर वर्ष चुनाव करते, २४ सदस्यों की इस धारासभा द्वारा चुनी हुई एक कार्यकारिणी होती, और जो क़ानून बनाए जाते उन का अंतिम फ़ैसला सारे देश के नागरिक अपनी-अपनी जगह पर सभाओं में एकत्र हो कर करते। इस राज-व्यवस्था को फ्रांस के लोगों ने स्वीकार भी कर लिया था, परंतु इस पर भी कभी अमल नहीं हुआ। सन् १७९५ ई० की राज-व्यवस्था में भी जिस को भी फ्रांस के लोगों ने स्वीकार कर लिया था, प्रजातंत्र की ही व्यवस्था की गई थी। इस के अनुसार धारासभा की दो सभाएँ की गई थीं एक 'पाँच सौ की सभा'[१] और दूसरी 'बड़ों की सभा'[२]। निचली सभा को क़ानूनों के मसविदे पेश करने का अधिकार था; ऊपरी सभा सिर्फ़ उन्हें मंज़ूर या नामंज़ूर कर सकती थी, उन में सुधार नहीं कर सकती थी। दोनों के सदस्यों को जनता तीन वर्ष के लिए चुनती और एक तिहाई सदस्यों का चुनाव हर वर्ष होता। कार्यकारिणी पाँच सदस्यों की एक डाइरेक्टरी में रक्खी गई थी, जिन का पाँच वर्ष के लिए चुनाव होता और जिस का एक सदस्य हर वर्ष बदल जाता था। 'पाँच सौ की सभा' दस नाम चुन कर भेजती। जिन में से पाँच को डाइरेक्टरी के लिए 'बड़ों की सभा' चुन लेती। हमेशा से फ्रांस के सुधारक दो सभा की धारासभा का विरोध करते आते थे। परंतु इस व्यवस्था में पहली बार दो सभा की

---

[१] 'कार्उंसिल आव् फ़ाइव हंड्रेड।' [२] 'कार्उंसिल आव् एल्डर्स।'

धारासभा की व्यवस्था की गई थी। बाद को सन् १७६६ ई० की राज-व्यवस्था, नेपोलियन बोनापार्ट ने फ्रांस की बागडोर अपने हाथ में लेने के बाद, सियेज़ नाम के एक विद्वान् और दो कमीशनों की सहायता से बनाई। इस के अनुसार वह स्वयं फ्रांस का भाग्य-विधाता बन बैठा और १८१४ ई० तक लगभग इसी के अनुसार उस ने फ्रांस का शासन चलाया। इस राज-व्यवस्था ने एक नए स्वरूप में निरंकुश शासन को फिर से फ्रांस में स्थापित कर दिया था। दो सभाओं की धारासभा के सीधे-सादे प्रबंध को तोड़ कर इस राज-व्यवस्था के अनुसार धारासभा का कार्य चार संस्थाओं के सुपुर्द किया गया था। सौ सदस्यों की एक 'ट्रिब्युनेट' नाम की सभा बनाई गई थी जिस का चुनाव पाँच वर्ष के लिए होता था और जिस का काम सिर्फ़ क़ानूनी मसविदों पर प्रारंभिक विचार करना था। दूसरी एक 'कोर लेजिसलाटिफ़' नाम की सभा थी जिस में पाँच वर्ष के लिए चुने हुए तीन सौ सदस्य होते थे, और जिस का काम ट्रिब्युनेट के भेजे हुए मसविदों को स्वीकार अथवा अस्वीकार करना था। तीसरी सभा एक अस्सी आजन्म सदस्यों की 'सिनेट' थी जो सिर्फ़ इस बात का फ़ैसला करती थी कि मंज़ूर होनेवाले क़ानून राज-व्यवस्था के अनुसार हैं या नहीं। चुनाव के झगड़ों का भी फ़ैसला यहीं सिनेट करती थी। चौथी सभा कौंसिल ऑव् स्टेट थी जिस का काम प्रथम कौंसल[1] की निगरानी में क़ानून बनाना और क़ानूनों की सिफ़ारिश करना था। कौंसिल ऑव् स्टेट को प्रथम-कौंसल नियुक्त करता था। सिनेट का चुनाव सिनेट ख़ुद करती थी। ट्रिब्युनेट और कोर लेजिस्लाटिफ़ का चुनाव उम्मीदवारों की एक सूची में से बड़े घुमाव-फिराव से होता था। राष्ट्र की कार्यकारिणी सत्ता तीन कौंसलों की एक समिति में रक्खी गई थी जिन का दस वर्ष के लिए चुनाव होना था और जो अखंड समय तक बार-बार चुने जा सकते थे। कार्यकारिणी सत्ता एक से अधिक के हाथ में रक्खी तो गई थी, परंतु यह नाममात्र ही के लिए था। राज-व्यवस्था ने प्रथम-कौंसल को ही सर्वशक्तिमान बनाया था और उस के दूसरे दोनों साथियों को उसे केवल सलाह देने का हक़ दिया था। सच तो यह है कि इस राजव्यवस्था ने नागरिक बोनापार्ट के हाथ में जिस को इस राज-व्यवस्था में प्रथम-कौंसल माना गया था, फ्रांस के शासन की सारी बागडोर दे दी थी। सन् १८०२ ई० में बोनापार्ट को ज़िंदगी भर के लिए कौंसल बना दिया गया और १८०४ ई० में कासलेट-सरकार साम्राज्य में परिणत हो गई। फिर नेपोलियन बोनापार्ट के राज्यच्युत होने के तीन सप्ताह बाद ३ मई सन् १८१४ ई० को फ्रांस की गद्दी से उतारा हुआ बूर्बन ख़ानदान का राजा लुई १८ वाँ पेरिस में प्रवेश कर के फ्रांस के सिंहासन पर जब आ बैठा तब एक नई राज-व्यवस्था का एलान किया गया, जिस को तीन राजा के प्रतिनिधियों, नौ सिनेट के सदस्यों और नौ कोर लेजिस्लाटिफ़ के सदस्यों के एक कमीशन ने तैयार किया था। सन् १८३० ई० के थोड़े से सुधारों के सिवाय यह राज-व्यवस्था जैसी की तैसी फ्रांस में सन् १८४८ ई० की क्रांति तक क़ायम रही। इस राज-व्यवस्था को इंगलैंड की राज-व्यवस्था के ढंग पर बनाने का प्रयत्न किया

[1] 'फ़र्स्ट-कौंसल' अर्थात् नेपोलियन बोनापार्ट।

गया था। एक मंत्रि-मंडल स्थापित किया गया था; परंतु फिर भी पूरी जवाबदार सरकार क़ायम नहीं की गई थी। राजा के आर्डीनेंस निकालने, पदों पर अधिकारियों के नियुक्त करने, युद्ध छेड़ने, संधि करने और सारे कानूनों का श्रीगणेश करने का अधिकार रक्खा गया था। हाँ, बिना धारासभा की मर्ज़ी के कोई कर अवश्य ही नहीं लगाया जा सकता था, न कोई क़ानून बनाया जा सकता था। मंत्रियों पर कुशासन के लिए मुक़दमा भी चलाया जा सकता था जिस से उन को शासन के लिए जवाबदार माना गया था। दो सभा की धारासभा बनाई गई थी। 'चेंबर ऑव् पीयर्स' की ऊपरी सभा के सदस्य राजा की तरफ़ से जीवन भर के लिए नियुक्त किए हुए अथवा मौरूसी होते थे। धारासभा की दूसरी निचली सभा 'चेंबर ऑव् डेपुटीज़' के सदस्य डिपार्टमेंटों में से पाँच वर्ष के लिए चुन कर आते थे, और उन का पाँचवाँ भाग हर साल चुना जाता था। धारासभा की साल में एक बार बैठकें ज़रूरी रक्खी गई थीं, और दोनों में से किसी भी सभा को किसी नए विषय पर क़ानून बनाने के लिए राजा से प्रार्थना करने का अधिकार था। तीस वर्ष के उपर के वे सब नागरिक जो साल भर में कम से कम तीन सौ फ़्रांक[1] का सरकार को कर देते थे, डिपार्टमेंटों के मुख्य नगरों में एकत्र हो कर डिपार्टमेंटों की ओर से निश्चित संख्या में डेपुटीज़ को चुन सकते थे। इस प्रबंध से उदार विचार के लोगों को फ़ायदा हुआ, क्योंकि उन की संख्या अधिकतर नगरों में थी। परंतु सन् १८२० ई० में अनुदार लोगों ने ज़ोर मार कर चेंबर के सदस्यों की संख्या २५८ से बढ़ा कर ४३० कर दी और डिपार्टमेंट[2] के बजाय ऐरोंडाइज़मेंट[3] से एक-एक डिपुटी चुने जाने का क़ायदा कर दिया। अस्तु, बाद में ऐरोंडाइज़मेंटों की तरफ़ से २५८ सदस्य चुने जाने लगे और शेष १७२ सदस्य डिपार्टमेंटों के मुख्य नगरों में से सब से अधिक कर देनेवालों द्वारा चुने जाते थे। इस प्रबंध से क़रीब बारह हज़ार धनिक लोगों को दो-दो मत देने का अधिकार मिल गया था। सन् १८२४ ई० में एक दूसरा क़ानून बनाया गया जिस के अनुसार सारे चेंबर का परिवर्तन हर सातवें वर्ष होने लगा। सन् १८३० के राजविद्रोह के बाद जब चार्ल्स दसवाँ गद्दी से उतार दिया गया और लुई फ़िलिप गद्दी पर बैठा तब फिर धारासभा के एक कमीशन ने राज-व्यवस्था पर विचार किया और उस में बहुत कुछ परिवर्तन किए गए। पुरानी राज-व्यवस्था की भूमिका में लिखा था कि राज-व्यवस्था राजा की ओर से प्रदान की गई। भूमिका का यह भाग निकाल दिया गया। राजा से क़ानूनों को रोक रखने का अधिकार ले लिया गया और धारासभा की दोनों सभाओं को क़ानूनों का प्रस्ताव करने का अधिकार दे दिया गया। मौरूसी पीयर्स का बनाना बंद कर दिया गया और 'चेंबर ऑव् पीयर्स' की बैठकें खुली होने लगीं। 'चेंबर ऑव् डेपुटीज़' का जीवन सात वर्ष के बजाय फिर पाँच वर्ष कर दिया

---

[1] फ़्रांस का सिक्का। [2] डिपार्टमेंट फ़्रांस का लगभग उसी प्रकार का भाग है, जैसे हमारी कमिश्नरी या प्रांत। [3] ऐरोंडाइज़मेंट डिपार्टमेंट से छोटा देश का भाग कहलाता है, जैसे हमारा ज़िला या कमिश्नरी।

गया और मतदारों की उम्र ३० वर्ष से घटा कर २५ वर्ष कर दी गई। बाद में १८३१ ई० के एक क़ानून के अनुसार मतदारों की कर-संबंधी शर्तें भी तीन सौ फ्रांक से घटा कर दो सौ फ्रांक और खास धंधों के लिए सौ फ्रांक कर दी गई। इस योजना से देश भर में मतदारों की संख्या दुगनी हो गई—फिर भी देश की सारी आबादी का डेढ़-सौवाँ भाग मत देने के अधिकार से वंचित रहा। इस राज-व्यवस्था से भी फ्रांस में जन-साधारण की सरकार नहीं बनी; हाँ, खाते-पीते लोगों की सरकार स्थापित हो गई थी। अस्तु सन् १८४८ ई० की दूसरी क्रांति में इस राज-व्यवस्था का भी अंत किया गया, और फिर कुछ दिन तक फ्रांस को वही सन् १७८९-९५ ई० तक की-सी मारकाट और अव्यवस्था देखनी पड़ी। फिर कई वर्ष तक प्रजातन्त्र का तजुरबा किया गया और फिर उस का अंत राजाशाही साम्राज्य और द्वितीय बोनापार्ट के शासन में हुआ। क्रांति के समय की अस्थाई सरकार ने प्रजातंत्र की घोषणा कर के जनता से देश की राज-व्यवस्था बनाने के लिए एक 'प्रतिनिधि-सम्मेलन' चुनने की प्रार्थना की थी।

देश भर के बालिग़ मर्दों को इन प्रतिनिधियों के चुनने का अधिकार मान लिया गया था। यह चुनाव फ्रांस के इतिहास में अद्वितीय था। 'व्यवस्थापक-सम्मेलन' में नौ सौ प्रतिनिधि देश भर से चुन कर आए थे, जिन में से आठ सौ नरम विचारों के प्रजातंत्रवादी थे; ४ नवंबर सन् १८४८ ई० तक इस सम्मेलन में नई राज-व्यवस्था बन कर स्वीकृत हो गई थी। इस राज-व्यवस्था ने फ्रांस में अखंड प्रजातंत्र स्थापित होने और जनता को पूर्ण प्रभुता होने की घोषणा की और सरकारी सभाओं के पृथक्करण को स्वाधीनता की कुंजी क़रार दिया। इस राज-व्यवस्था के अनुसार सात सौ पचास सदस्यों की एक सभा की एक व्यवस्थापक-सभा बनाई गई, जिस के सदस्यों को चुनने का अधिकार राष्ट्र के प्रत्येक २१ वर्ष से ऊपर के मनुष्य को दिया गया। कार्यकारिणी सत्ता प्रजातंत्र के एक प्रमुख में रक्खी गई, जिस का चुनाव चार साल के लिए फ्रांस और ऐलजीरिया के मतदारों की बहु-संख्या कर सकती थी। प्रमुख पद के उम्मीदवारों में से किसी को भी मतों की बहुसंख्या और कम से कम देश के बीस लाख मत न मिलने पर सब से अधिक मत पानेवाले पाँच उम्मीदवारों में से किसी एक को व्यवस्थापक-सभा चुन सकती थी। एक बार प्रमुख रह चुकने के बाद फ़ौरन् दूसरे काल के लिए कोई उम्मीदवार नहीं खड़ा हो सकता था। प्रमुख को क़ानूनों का प्रस्ताव करने, संधि की बात चलाने और व्यवस्थापक-सभा की राय से संधि मंज़ूर करने, मंत्रियों और अन्य पदाधिकारियों को रखने और निकालने और सेना को भंग कर देने तक के अधिकार दिए गए थे। मगर मंत्रियों के अधिकारों और कर्तव्यों का अच्छी तरह खुलासा नहीं किया गया था। दिसंबर सन् १८४८ ई० में नेपोलियन बोनापार्ट का भतीजा लुई नेपोलियन इस राज-व्यवस्था के अनुसार फ्रांस के प्रजातंत्र का प्रमुख चुना गया और मई सन् १८४९ ई० में नई व्यवस्थापक-सभा का चुनाव हुआ, जिस में दो तिहाई राजाशाही के पक्षपाती सदस्य चुन कर आए। दुर्भाग्य से प्रजातंत्र का प्रमुख और नई व्यवस्थापक-सभा दोनों ही प्रजातंत्र के पक्षपाती नहीं थे। अस्तु, मई सन् १८५० ई० में एक क़ानून पास किया गया, जिस के अनुसार मतदारों को छः मास के स्थान में तीन वर्ष तक एक स्थान पर रहने

पर ही मत देने का अधिकार मिल सकता था। इस क़ानून के कारण मतदारों की संख्या घट कर लगभग एक तिहाई रह गई। दूसरी दिसंबर सन् १८५१ ई० को बड़ी चालाकी के साथ व्यवस्थापक-सभा बर्ख़ास्त कर के जनता से कहा गया कि सन् १८४६ ई० के क़ानून के अनुसार प्रजा को सार्वजनिक सभाओं में एकत्र हो कर प्रमुख को राज-व्यवस्था की पुनर्घटना करने का अधिकार दे देना चाहिए। प्रमुख को यह अधिकार दे दिया गया और प्रजातंत्र-शासन को फिर एक बार फ़्रांस में दफ़न कर दिया गया। लुई नेपोलियन ने एक वर्ष तक चुप रह कर दूसरे वर्ष ७ नवंबर सन् १८५२ ई० को प्रजातंत्र के स्थान में फ़्रांस में साम्राज्य स्थापित हो जाने की घोषणा कर दी। दूसरी दिसंबर को लुई नेपोलियन फ़्रांस का महाराजाधिराज घोषित कर दिया गया और सन् १८७० ई० तक फ़्रांस में लुई नेपोलियन का शासन रहा।

सिडेन में फ़्रांस की सेनाओं की हार हो जाने और लुई नेपोलियन के प्रशन लोगों के हाथों में गिरफ़्तार हो जाने पर यह साम्राज्य भी बालू की भीत की तरह गिर पड़ा। फ़्रांस में फिर किसी के हाथों में सत्ता नहीं रही। अस्तु, एसेंबली के कुछ गरम प्रतिनिधियों ने एक होटल में बैठ कर ४ सितंबर सन् १८७० ई० को फ़्रांस में प्रजातंत्र स्थापित हो जाने की घोषणा निकाल दी और पाँच महीने तक, जब तक प्रशिया से युद्ध चलता रहा तब तक, जेनरल ट्रोचू की अध्यक्षता में एक अस्थाई सरकार काम चलाती रही। बाद में युद्ध को जारी रखने अथवा सुलह करने का विचार करने के लिए ८ फ़रवरी सन् १८७१ ई० के दिन राष्ट्र के ७५८ प्रतिनिधियों की, १८४६ ई० के प्रजातंत्र के क़ायदों के अनुसार चुन कर, एक सभा बुलाई गई। प्रतिनिधियों की इस सभा के बैठने तक राजा, सिनेट, कोर लेजिस्लाटिफ़, मंत्रि-मंडल इत्यादि राज-व्यवस्था की किसी पुरानी संस्था का कोई अधिकार नहीं रहा था। प्रतिनिधियों का चुनाव हो जाने के बाद अस्थायी सरकार भी ख़त्म हो चुकी थी। इस एक प्रतिनिधियों की सभा के सिवाय राष्ट्र की प्रभुता की प्रतिनिधि और कोई संस्था फ़्रांस में नहीं थी। अस्तु यह सभा ही फ़्रांस की व्यवस्थापक बन गई और क़रीब पाँच वर्ष तक इसी सभा ने सारा शासन का काम चलाया। सर्व-सम्मति से महाशय थीयर्स को १७ फ़रवरी को राष्ट्र का काम चलाने के लिए राष्ट्रपति चुन लिया गया और उस को अपने मंत्री चुनने और उन की सहायता से शासन-कार्य चलाने का अधिकार भी दिया गया। राष्ट्रपति के हाथ से सत्ता ले लेने का अधिकार प्रतिनिधि-सभा के हाथ में रक्खा गया। प्रशिया से सुलह हो जाने के बाद थीयर्स को फ़्रांसीसी प्रजातंत्र के प्रमुख का ख़िताब दे दिया गया। मंत्रि-मंडल को भी जवाबदार बनाने का प्रयत्न किया गया। परंतु नई राज-व्यवस्था में प्रजातंत्र का प्रमुख ही प्रजा के प्रतिनिधियों के प्रति शासन के लिए जवाबदार माना जाने से मंत्रि-मंडल पूरी तरह से जवाबदार न हो सका। इस प्रतिनिधियों की सभा में भी राजाशाही के पक्षपातियों की ही अधिक संख्या थी। थीयर्स स्वयं शुरू में राजाशाही के पक्ष में था। परंतु बाद में उस ने देखा कि राजाशाही जनता को प्रिय नहीं है इस लिए वह भी प्रजातंत्र के पक्ष में हो गया। इस पर राजाशाही के पक्षपाती उन के विरुद्ध हो गए और उन्हों ने उसे इस्तीफ़ा देने पर बाध्य कर दिया। थीयर्स से इस्तीफ़ा रखा कर राजाशाही के पक्षपातियों ने मारशल मैकमोहन को सात वर्ष के लिए प्रजातंत्र का प्रमुख चुना। राजतंत्रवादी समझते

थे कि सात वर्ष के भीतर वे अपने आपस के झगड़ों को मिटा कर राजाशाही की फ्रांस में पुनः स्थापना कर सकेंगे। परंतु उन की आशा पूरी न हुई और सात वर्ष की मार्शल मेकमोहन की मियाद सदा के लिए फ्रांसीसी के प्रजातंत्र के प्रमुख की मियाद बन गई। ३० जनवरी सन् १८७५ ई० को वालन नाम के एक प्रतिनिधि ने प्रतिनिधियों की सभा में प्रमुख पद के संबंध में कुछ ऐसे प्रस्ताव रक्खे, जिन के पास हो जाने से प्रमुख का पद सदा के लिए प्रजातंत्र के प्रमुख का पद बन गया था, और इस विचित्र ढंग से आखिरकार फ्रांस में प्रजातंत्र की सदा के लिए स्थापना हो गई। सन् १८७६ ई० में नई सिनेट और नए 'चेंबर ऑव् डिपुटीज़' का चुनाव किया गया, और राष्ट्र की नई व्यवस्थापक-सभा चुन कर आ जाने के बाद अस्थायी 'प्रतिनिधियों की सभा' भंग हो गई। इस नई राज-व्यवस्था पर प्रजा की राय नहीं ली गई; परंतु वर्षों की खींचातानी से थकी हुई फ्रांस की प्रजा ने बड़े उत्साह से इस नई व्यवस्था का स्वागत किया।

इतनी कठिनाइयों, झंझटों, झगड़ों, इंतज़ारों, तजुरबों और आनाकानी के बाद जाकर कहीं फ्रांस में प्रजातंत्र राज-व्यवस्था की स्थापना हुई। जिन लोगों के हाथों प्रजातंत्र की स्थापना हुई, वह स्वयं प्रजातंत्रवादी नहीं थे। अस्तु, फ्रांस की राज-व्यवस्था दूसरी राज-व्यवस्थाओं से भिन्न है। फ्रांस की राज-व्यवस्था लिखित ज़रूर है; परंतु उस के तीन अलग-अलग भाग हैं। इन तीनों भागों में वे सारी बातें जो एक लिखित राज-व्यवस्था में आ जानी चाहिए, नहीं आ गई हैं। न तो कहीं प्रजा के अधिकारों का ज़िक्र है, न चेंबर ऑव् डेपुटीज़ और मंत्रियों का चुनाव किस ढंग से किया जायगा इस का ही ज़िक्र है। सिनेट का चुनाव, न्याय, बजट किसी का विस्तार से ज़िक्र नहीं किया गया है। फ्रांस की पिछली राज-व्यवस्था काफ़ी तूल-तवील थी। परंतु सन् १८७५ ई० की यह राज-व्यवस्था बहुत छोटी और सिर्फ़ शासन-संगठन की मुख्य बातों का ज़िक्र करती है। अधिकतर बातों को रिवाज और साधारण कानूनों के लिए छोड़ दिया गया है। एक तरह से बड़े अमली ढंग की व्यवस्था है। सन् १७९२—९५ ई० के 'कन्वेंशन' और सन् १८४८ ई० के 'व्यवस्थापक-सम्मेलन' की तरह आख़िरी 'प्रतिनिधियों की सभा' में अधिक सिद्धांतों पर चर्चा नहीं की गई थी। संगठित शासन और राज-व्यवस्था के लिए भूखे फ्रांस के लिए अनुभव और ज़रूरत के अनुसार यह राज-व्यवस्था तैयार कर ली गई थी। राजाशाही-संघ के पक्षपातियों ने अपना मनोरथ सफल न होते देख, देश में अव्यवस्था रहने से फिर से नेपोलियन-वंश का राज्य स्थापित हो जाने के डर से, निराश हो कर, अनमने, प्रजातंत्र के लिए लाचार हो कर अपना मत दे दिया था। प्रजा-तंत्रवादियों ने भी अपना मुख्य ध्येय प्रजातंत्र पाने के लिए, रूखे सिद्धांतों पर ज़ोर न दे कर, तरह-तरह के समझौते स्वीकार कर लिए थे। अस्तु, इन समझौतों के कारण फ्रांस की सन् १८७५ ई० की राज-व्यवस्था किसी एक सिद्धांत पर बनी हुई नहीं है। परंतु आज कल जो राज-व्यवस्था फ्रांस में प्रचलित है वह सिर्फ़ सन् १८७५ ई० की यह तीन भाग की राज-व्यवस्था ही नहीं है; उस में बहुत-से और क़ानूनों और रिवाजों का समावेश भी हो गया है।

इन दूसरे क़ानूनों को साधारण ढंग पर फ्रांस की धारासभा में नामंज़ूर किया

जा सकता है। परंतु इन क़ानूनों ने सन् १८७५ ई० की राज-व्यवस्था की बहुत-सी कमियों को पूरा कर दिया है और वे भी उतने ही आवश्यक हैं, जितनी लिखित राज-व्यवस्था की धाराएँ। फ्रांस की राज-व्यवस्था में सुधार या परिवर्तन करने का तरीक़ा बहुत सरल रक्खा गया है। प्रजातंत्र का प्रमुख, उस के नाम पर दूसरे मंत्री, अथवा व्यवस्थापक-सभा की दोनों शाखाओं में से कोई राज-व्यवस्था में परिवर्तन या सुधार करने की चर्चा उठा सकते हैं। चर्चा उठने के बाद अगर व्यवस्थापक सभा की दोनों सभाएँ अलग-अलग इस नतीजे पर पहुँचें कि राज-व्यवस्था में सुधार अथवा परिवर्तन की ज़रूरत है, तो फिर दोनों सभाओं के सभासद एक सम्मिलित राष्ट्रीय सम्मेलन[1] में विचार करने के लिए वारसेल्ज़ के महल में मिलते हैं। इस सम्मेलन को फ्रांस की राज-व्यवस्था में सब कुछ फेर-फार करने का अधिकार है।

राष्ट्रीय सम्मेलन में व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं के सदस्य 'सिनेट' और 'चेंबर ऑव् डेपुटीज़' के सदस्यों की हैसियत से नहीं आते हैं। वे बिल्कुल एक नई हैसियत से—राष्ट्रीय सम्मेलन के सदस्यों की हैसियत से—मिलते हैं। राज-व्यवस्था में परिवर्तन करने के लिए ऐसी आसानी रखने के कारण भी इस राज-व्यवस्था के स्वीकृत होने में प्रतिनिधि सभा में आसानी हुई थी, क्योंकि राज-तंत्रवादी दलों को यह आशा रही कि वे जब चाहेंगे तब राज-व्यवस्था को बदल सकेंगे। अमेरिका में राज-व्यवस्था में सुधार या परिवर्तन के प्रस्ताव कांग्रेस अथवा एक विशेष कन्वेंशन में पास हो जाने के बाद फिर सारी स्टेस् की तीन चौथाई धारासभाओं अथवा विशेष कन्वेंशनों में मंज़ूर होने पर क़ानून बनते हैं। बेलजियम में हर परिवर्तन और सुधार का प्रस्ताव धारासभा की दोनों सभाओं में हर सूरत में अलग-अलग स्वीकृत होने की क़ैद है। इंगलैंड में पार्लीमेंट को अन्य क़ानूनों की तरह राज-व्यवस्था में परिवर्तन करने का अधिकार होने पर भी हर ऐसे मौक़ों पर प्रायः नया चुनाव करा के प्रजा की राय ले ली जाती है। अस्तु, फ्रांस की राज-व्यवस्था में फेर-फार करने का तरीक़ा इन सब देशों से सरल है, क्योंकि फ्रांस में धारासभा के सदस्य ही राज-व्यवस्था को भी बदल सकते हैं।

२—प्रजातंत्र का प्रमुख

फ्रांस की सरकार की कार्यकारिणी सत्ता का सर्वोच्च प्रतिनिधि फ्रांस के प्रजातंत्र का प्रमुख है। उस को चुनने के लिए सिनेट और चेंबर ऑव् डेपुटीज़[2] के सदस्य नेशनल एसेंबली की बैठक में वारसेल्ज़ के प्रख्यात राज-भवन में, जिस को लुई १४ वें ने बनवाया था, मिलते हैं। इस राज-भवन में सन् १८७३ ई० से सन् १८७६ ई० तक सिनेट और चेंबर ऑव् डेपुटीज़ की सभाओं की बैठकें हुआ करती थीं। परंतु बाद में व्यवस्थापक सभा की बैठकें पेरिस में होने लगीं। तब से यह राज-भवन सिर्फ़ 'नेशनल एसेंबली' की बैठकों के काम आता है। जब सिनेट और चेंबर के सदस्य राज-व्यवस्था में परिवर्तन

[1] 'नेशनल एसेंबली'
[2] सिनेट और चेंबर ऑव् डेपुटीज़ फ्रांस की धारासभा के दो भाग हैं।

करने अथवा प्रजातंत्र के प्रमुख का चुनाव करने के लिए एक सम्मिलित सभा में बैठते हैं। एक महान अर्ध-गोलाकार दीवान में, जिस के चारों ओर स्थंभों की पंक्तियाँ हैं, सदस्यों के बैठने के लिए कुर्सियाँ पड़ी होती हैं। अर्ध-गोलाकार दीवान के व्यास के बीचो-बीच बोलने वालों के लिए एक चबूतरा बना होता है और ऊपर चारों ओर दर्शकों के बैठने के लिए गौखें होती हैं। प्रमुख का चुनाव करने के लिए जब नेशनल ऐसेंबली की बैठक होती है तब सदस्य कोई और चर्चा न कर के सिर्फ़ प्रमुख के लिए मत देते हैं। एक बर्तन बीच के चबूतरे पर रख दिया जाता है। एक चोबदार जो चाँदी की ज़ंजीरें डाले होता है, सदस्यों का नाम ले-ले कर पुकारता है और वे एक पंक्ति में जा कर पारी-पारी से निर्वाचन-पत्र पर अपना मत लिख कर उस बर्तन में डाल आते हैं। नेशनल एसेंबली के अध्यक्ष के आसन पर सिनेट का अध्यक्ष बैठता है, जिस के दाएँ-बाएँ शांति और सुव्यवस्था की दो सुंदर मूर्तियाँ बनी हैं। मत लेने में काफ़ी समय लग जाता है क्योंकि क़रीब नौ सौ मत पड़ते हैं। जब मत पड़ चुकते हैं तब पत्ती खींच कर सदस्यों में से कुछ आदमी मतों को गिनने और जाँचने के लिए चुन लिए जाते हैं। अगर किसी भी उम्मीदवार को आधे से एक अधिक मत नहीं मिलते हैं, तो फिर से चुनाव के लिए मत पड़ते हैं; और जब तक किसी एक उम्मीदवार को आधे से एक अधिक मतों की बहु संख्या नहीं मिलती है, तब तक बराबर बार-बार चुनाव किया जाता है। चुनाव हो जाने पर एसेंबली का अध्यक्ष प्रजातंत्र के प्रमुख का नाम एलान कर देता है और प्रजातंत्र की जय बोल कर सभा विसर्जित हो जाती है। नया प्रमुख अपने मंत्रियों के साथ पैरिस में जाकर शासन की बागडोर अपने हाथ में ले लेता है।

प्रमुख का चुनाव सात वर्ष के लिए होता है। परंतु सात वर्ष ख़त्म होने पर वह फिर प्रमुख पद के लिए खड़ा हो सकता है, और फिर से उस का चुनाव हो सकता है। क़ानून के अनुसार तो वह ज़िंदगी भर तक बार-बार चुना जा सकता है, परंतु ऐसा किया नहीं जाता क्योंकि एक ही आदमी के हाथ में सारी ताक़त सौंप देना प्रजासत्तात्मक राज्य के लिए अच्छा नहीं होता। सात वर्ष ख़त्म होने से एक महीना पहले प्रजातंत्र के प्रमुख को नया प्रमुख चुनने के लिए एसेंबली को बुलावा देना चाहिए। अगर प्रमुख किसी कारण से इस काम के लिए एसेंबली को समय पर बुलावा न भेज सके तो सिनेट के अध्यक्ष को पंद्रह दिन पहले बुलावा भेजना चाहिए। अगर कोई प्रमुख यकायक मर जाय या इस्तीफ़ा दे दे तो व्यवस्थापक सभा का दोनों शाखाओं के सदस्यों को फ़ौरन् स्वयं मिलने का अधिकार होता है। प्रमुख के मर जाने पर दो-तीन दिन तक राष्ट्र बिना प्रमुख के भी रह सकता है। परंतु ऐसे समय में सारी सत्ता मंत्रि-मंडल के हाथ में आ जाती है।

सन् १८७१ से १८७५ ई० तक प्रजातंत्र के प्रमुख को शासन के लिए व्यवस्थापक सभा के प्रति जवाबदार माना गया था। परंतु यह प्रबंध ठीक तरह चला नहीं, इस लिए सन् १८७५ ई० से सिर्फ़ विद्रोह के काल में तो प्रमुख को शासन के लिए जवाबदार रक्खा गया है बाक़ी शासन की सारी ज़िम्मेदारी मंत्रि-मंडल के सुपुर्द कर दी गई है। अब इंगलैंड की तरह फ्रांस का मंत्रि-मंडल भी सारे शासन-कार्य के लिए फ्रांस की व्यवस्थापक-

सभों को सम्मिलित रूप से जवाबदार माना जाता है। परंतु व्यक्तिगत कामों के लिए मंत्री व्यक्तिगत रूप में भी ज़िम्मेदार समझे जाते हैं। प्रमुख का कोई एलान अथवा हुक्म, जिस मंत्री के विभाग से उस का संबंध हो, बिना उस मंत्री के हस्ताक्षर के जायज़ नहीं होता है। शासन के किसी कार्य के लिए अकेले प्रमुख की ज़िम्मेदारी नहीं मानी जाती है। जिस प्रकार राजा के नाम पर इंगलैंड में मंत्रि-मंडल हुक्म निकालता है, उसी प्रकार फ्रांस में प्रमुख के नाम पर मंत्री हुक्म निकालते हैं। प्रमुख का कर्तव्य क़ानूनों पर अमल करवाना रक्खा गया है। कोई क़ानून सिर्फ़ धारासभा में पास हो कर ही अमल में नहीं आ जाता है; सरकार की कार्यकारिणी की तरफ़ से उस का अमल के लिए एलान किया जाता है, जिस का अर्थ यह है कि, आवश्यकता पड़ने पर, मंत्रियों से ज़बरदस्ती भी क़ानून पर अमल करवाया जा सकता है। धारासभा में पास हो जाने के बाद किसी क़ानून को रोक लेना प्रमुख के अधिकार की बात नहीं है, चाहे वह क़ानून उस को रुचिकर हो अथवा न हो। व्यवस्थापक-सभा में क़ानून पास हो जाने के बाद व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं के अध्यक्ष उन्हें प्रमुख के पास भेज देते हैं और पहुँचने के साधारण तौर पर एक महीने के भीतर और आवश्यकता होने पर तीन दिन के भीतर ही प्रमुख उन का एलान कर देने के लिए बाध्य होता है। हाँ, प्रमुख को इतना अधिकार ज़रूर है कि अगर वह समझे कि किसी क़ानून के बनाने में जल्दबाज़ी की गई है तो वह उस पर फिर से विचार करने के लिए सभाओं के पास भेज दे। परंतु यदि सभाएँ हठ करें और फिर उसी क़ानून को जैसा का तैसा पास करें तो प्रमुख को सिवाय उस क़ानून का एलान करने और उस पर अमल करवाने के और कोई चारा नहीं होता। परंतु इस अधिकार का आज तक कभी किसी प्रमुख ने उपयोग नहीं किया है। प्रमुख को व्यवस्थापक-सभा से मंजूर किसी प्रस्ताव को भी नामंज़ूर करने का अधिकार नहीं होता। न अपने किसी हुक्म या एलान में वह किसी क़ानून की किसी तरह शक्ल ही बदल सकता है। हाँ, जो बातें क़ानून में साफ़ न हों उन्हें वह स्पष्ट ज़रूर कर सकता है।

महत्व के सारे राष्ट्रीय जलसों पर अध्यक्षता का स्थान सदा प्रजातंत्र का प्रमुख लेता है, और सभी सरकारी समारंभों पर फ्रांस और प्रजातंत्र का मूर्तिमंत प्रमुख ही होता है। प्रमुख को २४००० फ्रांक सालाना वेतन और २४००० फ्रांक सालाना सफ़र इत्यादि के लिए भत्ता मिलता है। रहने के लिए उस को दो आलीशान मकान दिए जाते हैं। मगर इन आलीशान मकानों में तकियों के सहारे बैठ कर वह मज़े से समय नहीं गँवाता। सुबह से शाम तक उस का सारा समय सरकारी काम में ही जाता है। राज-व्यवस्था के अनुसार प्रमुख को ही सारे पदाधिकारियों को नियुक्त करने का अधिकार है। परंतु वह यह काम मंत्रियों की सहायता और राय से करता है और किसी को किसी पद के लिए केवल अपनी इच्छानुसार नहीं चुन सकता। उम्र और योग्यता के नियमों के अंदर ही उसे रहना पड़ता है। बहुत से छोटे-छोटे पदों के अधिकारियों को मंत्री, प्रीफ़ेक्ट्स और अन्य विभाग-पति उस के नाम से नियुक्त करते हैं। सिर्फ़ ख़ास-ख़ास अधिकारियों को प्रमुख ख़ुद नियुक्त करता है। प्रमुख को अपराधियों पर दया कर के उन की सज़ा कम करने अथवा उन्हें बिलकुल छोड़ देने का भी अधिकार होता है। मगर इस अधिकार का प्रयोग भी वह एक कमीशन की

सिफ़ारिश और 'कीपर आॅव् दि सील्स्' नाम के अधिकारी की ज़िम्मेदारी पर सिर्फ़ उसी हालत में करता है जब कि किसी ख़ास कारण से अथवा अपराधी के पश्चात्ताप करने से इस दया से कुछ लाभ होने की संभावना होती है। सेना पर भी प्रमुख का अधिकार माना जाता है और मंत्रियों की जवाबदारी पर वह फ्रांस के अमनो-आमान का ज़िम्मेदार समझा जाता है।

जिस तरह व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं को क़ानूनी मसविदे पेश करने का अधिकार होता है उसी तरह प्रमुख को भी मसविदे पेश करने का अधिकार होता है। मगर धारासभा के सामने विचार के लिए कोई मसविदा तभी आ सकता है, जब कि उस पर प्रमुख के साथ किसी मंत्री के भी हस्ताक्षर हों। जब धारासभा के सामने कोई मसविदा आता है, तब उसी मंत्री को उस मसविदे का पक्ष लेना पड़ता है, जिस के उस पर हस्ताक्षर होते हैं क्योंकि प्रमुख धारासभा में बैठ कर किसी चर्चा में भाग नहीं ले सकता है। मंत्रि-मंडल की राय से धारासभा की बैठकें बुलाने और बंद करने का कर्तव्य भी प्रमुख का ही होता है। परंतु इस संबंध में भी उसे अधिक अधिकार नहीं है। अगर वह धारासभा की बैठक न बुलावे तो क़ानून के अनुसार धारासभा जनवरी के दूसरे मंगलवार को अपने आप ही मिल सकती है। धारासभा की दोनों शाखाओं की बैठकें एक साथ ही खुलनी और बंद होनी चाहिए और साल में कम से कम पाँच महीने तक अवश्य होनी चाहिए। प्रजातंत्र के प्रमुख को धारासभा की सभाओं को स्थगित कर देने का अधिकार है। परंतु एक महीने से अधिक अथवा एक बैठक को दो बार से अधिक वह स्थगित नहीं कर सकता है। पाँच महीने की साधारण बैठक हो चुकने पर धारासभा की फिर से बैठक बुलाने का भी अधिकार प्रमुख को है, और अगर व्यवस्थापक-सभा की सभाओं की बहुसंख्या दूसरी बैठक चाहती हो तो दूसरी बैठक बुलाना उस का फ़र्ज़ हो जाता है। धारासभा की विशेष बैठकें जिन्हें प्रमुख जब उचित समझे बंद कर सकता है, फ्रांस में उतनी ही आम हो गई हैं जितनी साधारण बैठकें। वे हर साल हुआ करती हैं और प्रायः उन में आय-व्यय पर चर्चा होती है। प्रमुख को एक अधिकार बड़े महत्व का है। सिनेट की सम्मति से वह 'चेंबर आॅव् डेपुटीज़' को उस की मीयाद पूरी होने से पहिले ही भंग कर के नया चुनाव करा सकता है। यह अधिकार इंगलैंड के राजा के पार्लीमेंट भंग करने के अधिकार की तरह का नहीं है; इस को सरकारी सत्ताओं के पृथक्करण की स्वाभाविक शर्त समझ कर रक्खा गया है। प्रजा के प्रतिनिधि चुनाव पर जो वायदे प्रजा से कर के आते हैं उन को भूल कर यदि वे अंड-बंड बातें करने लग जाँय तो फ्रांस में कार्यकारिणी को अधिकार दिया गया है कि वह चेंबर आॅव् डेपुटीज़ को भंग कर के प्रतिनिधियों को, फिर चुनाव में जा कर, प्रजा की राय लेने के लिए मजबूर कर दे। कार्यकारिणी के हाथ में यह सत्ता रखने से प्रतिनिधि-सभा के सदस्यों पर प्रजा का एक प्रकार से अंकुश बना रहता है, जिस से प्रजा के प्रतिनिधि अपनी सत्ता का दुरुपयोग नहीं कर सकते हैं। सन् १८७७ ई० में एक बार प्रमुख के इस अधिकार का दुर्भाग्य से दुरुपयोग अवश्य हुआ था, परंतु इसी लिए इस उपयोगी अधिकार को बुरा नहीं कहा जा सकता।

अंतर्राष्ट्रीय संबंध में फ़्रांस के प्रजातंत्र का प्रमुख बड़ा काम आता है। दूसरे राष्ट्र अपने एलची और राजदूतों को उस के पास भेजते हैं, और उन के लिए वहीं फ़्रांस का स्थायी प्रतिनिधि है। प्रमुख ही परराष्ट्र-सचिव द्वारा और परराष्ट्र-सचिव की जवाबदारी पर दूसरे राष्ट्रों से संधि की बात-चीत चलाना और पूरी करता है। देश के हित में वह समझे तो संधियों को गुप्त भी रख सकता है और उचित समय पर व्यवस्थापक-सभा को उन का हाल बता सकता है। बिना किसी रोक-टोक के यह अधिकार प्रजातंत्र के प्रमुख को दे दिया जाता तो यह बड़ा खतरनाक था। अस्तु, राज-व्यवस्था के अनुसार ऐसी संधियों को, जिन के कारण राष्ट्रीय संपत्ति पर असर पड़े अथवा विदेशों में बसनेवाले फ़्रांसीसियों के व्यक्तिगत और मिलकियत संबंधी अधिकारों पर असर पड़े और शांति और व्यापार से संबंध रखनेवाली संधियों को तब तक मंज़ूर नहीं समझा जाता है, जब तक उन पर व्यवस्थापक-सभा का मत न ले लिया जाय। अधिकतर संधियाँ इस कक्षा में आ जाती हैं; अस्तु थोड़े ही से अंतर्राष्ट्रीय मामले ऐसे रह जाते हैं, जिन्हें व्यवस्थापक-सभा की राय लेने के पहले प्रमुख स्वीकार कर सकता है। अंतर्राष्ट्रीय सैनिक और मैत्री संबंधी संधियों को प्रमुख स्वीकार कर सकता है, बशर्ते कि उन से फ़्रांस के आय-व्यय पर असर न पड़े। परंतु किसी संधि के अनुसार देश का कोई भाग दिया, बदला या बढ़ाया नहीं जा सकता; ऐसा करने के लिए एक नया क़ानून बनाने की ज़रूरत होती है। बिना व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं की राय लिए प्रजातंत्र का प्रमुख युद्ध की घोषणा नहीं कर सकता है। हाँ, आवश्यकतानुसार वह युद्ध की तैयारी और बचाव का प्रबंध पहले से कर सकता है। अगर लुई नेपोलियन की तरह अब कोई प्रमुख राष्ट्र की राज-व्यवस्था और क़ानूनों के विरुद्ध षड्यंत्र रचने का यत्न करे तो 'चेंबर ऑव् डेपुटीज़' उस पर सिनेट के सामने मुक़दमा चला सकता है और अपराधी ठहरने पर सिनेट को प्रमुख को बर्खास्त करने और साधारण क़ानूनों के अनुसार दंड तक देने का अधिकार रक्खा गया है।

३—मंत्रि-मंडल

पुराने ज़माने में फ़्रांस के राजाओं के महल का प्रबंध ठीक रखने के लिए कुछ पदाधिकारी रहते थे जिन से राजा राज-कार्य में भी सहायता ले लिया करता था। भंडार का प्रबंध रखने के लिए भंडारी होता था, घुड़साल का दरोग़ा 'मारशल' कहलाता था, खजानची धन-संपत्ति की सँभाल रखता था, साक़ी या बोतलबर्दार शराब की बोतलें ठीक रखता था। राज-महल का संरक्षक[१] न्याय का काम भी करता था। महल का दरोग़ा[२] गृह-प्रबंध ठीक रखता था। बाद में धीरे-धीरे इन अधिकारियों के अधिकार और कर्तव्य बदल गए। भंडारी सिर्फ़ रोटी-दाल की चिंता ही न रख कर युद्ध और न्याय की बातों में भी दखल देने लगा और वह इतनी कठिनाइयाँ खड़ी करने लगा कि राजा को इस पद ही को खत्म कर देना पड़ा। मारशल के स्थान में कांस्टेबल[३] नाम का अधिकारी आया, और अंत में

[१] 'काउंट ऑव् दि पैलेस।' [२] 'मेयर ऑव् दि पैलेस।' [३] 'काउंट ऑव् दि स्टेबुल्स।'

वह भी केवल घोड़ों की देख-भाल न रख कर युद्ध में सेनाओं का संचालन तक करने लगा। चांसलर, जिस का काम सिर्फ़ फ़्रांस की शाही मुहरें रखना होता था धीरे-धीरे न्याय और कार्यकारणी विभागों के सिर पर जा चढ़ा और इतना बलवान पदाधिकारी बन गया कि राजा के सारे फ़रमानों[1] तक को बाद में वही लिखने लगा। अस्तु, निरंकुश राजाओं को इन शक्तिशाली पदाधिकारियों का बाद में भय रहने लगा, और उन्हों ने उन के पर कतरने शुरू किए। कांस्टेबल का पद ख़त्म कर दिया गया। चांसलर की शक्ति कम करने के लिए उस की दुम में थोड़े से और अधिकारी बाँध दिए गए, जिन को पहले "राजा के हुक्मों के मंत्री[2]," के नाम से पुकारा जाता था। बाद में वे "राष्ट्र के मंत्री[3]" कहलाने लगे। यह "राष्ट्र के मंत्री" राजकार्य के लिए राजा को जवाबदार होते थे, और लुई १३ वें और लुई १४ वें के समय तक उन की इतनी ताक़त बढ़ गई थी कि अमीर-उमरा उन से जलने लगे थे। लुई १४ वें की मृत्यु के बाद मंत्रियों की शक्ति कम करने की अमीरों की ओर से बहुत कोशिश की गई; मगर मंत्री राज-कार्य में इतने चतुर बन गए थे कि उन की शक्ति कम नहीं की जा सकी। अस्तु, वह पदाधिकारी जैसे के तैसे क़ायम रहे।

सन् १७६१ ई० की क्रांति के बाद प्रजा के हाथ में सत्ता आ जाने पर, २५ मई के क़ानून के अनुसार इन्हीं मंत्रियों को राजा के स्थान में राष्ट्र के प्रतिनिधियों के प्रति जवाबदार बना दिया गया। आधुनिक ढंग के मंत्रियों की यह पहली झलक थी। मंत्रियों को धारासभा[3] के बाहर से चुनने और उन्हें बर्ख़ास्त करने का अधिकार राजा को दिया गया था। परंतु क्रांति और कनवेंशन के ज़माने में मंत्रियों की कोई हस्ती नहीं थी। 'प्रजारक्षा-समिति'[4] के नियुक्त किए हुए कमीशन सरकार का सारा काम चलाते थे। डाइरेक्टरी के ज़माने में मंत्रियों के विभागों की पुनर्घटना की गई, परंतु उन की नियुक्ति डाइरेक्टरी करती थी और उन की न कोई कौंसिल थी और न वह एसेंबली के प्रति जवाबदार थे। आजकल के प्रमुख की तरह 'कौंसल' व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार नहीं माने जाते थे। मगर कौंसल की तरफ़ से निकलनेवाले हुक्मों और क़ानूनों पर किसी न किसी मंत्री को हस्ताक्षर करने पड़ते थे और मंत्रियों को कुछ ख़ास बातों में व्यवस्थापक-सभा के प्रति जवाबदार माना गया था। इस समय की व्यवस्थापक-सभा में प्रजा के चुने हुए प्रतिनिधि नहीं होते थे, इस लिए प्रजा का कोई अंकुश सरकार पर कहीं नहीं था। नेपोलियन बोनापार्ट ने जान बूझ कर राज-व्यवस्था को सूक्ष्म और अस्पष्ट रक्खा था, जिस से सारी ताक़त उस के हाथ में आ गई थी, और मंत्रियों की हस्ती हेड-क्लर्कों से अधिक कुछ नहीं थी। बाद में साम्राज्य की स्थापना हो जाने पर तो मंत्री पद ही नहीं रहे। उन की जगहों पर बड़े-बड़े नामधारी साम्राज्य का 'महामहोमंत्री' 'महामहोकोषाध्यक्ष' 'महाजलनायक' इत्यादि पदाधिकारी नियुक्त किए गए। इन बड़े-बड़े नामधारियों में कुछ बड़े योग्य पुरुष भी थे।

---

[1] राजा के फ़रमान या आर्डीनेंस ही उस समय फ़्रांस में क़ानून समझे जाते थे। [2] 'सेक्रेटरीज़ ऑफ़ दि कमांडमेंट्स ऑफ़ दि किंग'। [3] 'सेक्रेटरीज़ ऑफ़ स्टेट'। [4] 'कमिटी ऑफ़ पब्लिक सेफ़्टी'।

परंतु उन को अपने आक़ा के हुक्म बजा लाने के सिवाय और कोई अधिकार नहीं था। बाद में राजाशाही की पुनः स्थापना होने पर मंत्रियों की जवाबदारी फिर से क़ायम की गई। मगर इस योजना के मंत्रियों को भी प्रजा के प्रति पूरी तरह से जवाबदार नहीं कह सकते, क्योंकि जिस व्यवस्थापक सभा के प्रति उन्हें जवाबदार माना गया था, उस का चुनाव करने का अधिकार सर्वसाधारण को नहीं था। दूसरे साम्राज्य के समय में तो व्यवस्थापकी-पद्धति का ही गला घोंट दिया गया था, और जब दूसरा साम्राज्य बिल्कुल आख़िरी साँसे ले रहा था, तब उस को फिर से जीवित करने की व्यर्थ चेष्टा की गई थी। आख़िरकार सन १८७५ ई० की प्रजातंत्र राज-व्यवस्था में मंत्रियों की प्रजा को जवाबदारी के सिद्धांत को पूरी तरह से मान कर क़ायम किया गया और तब से फ्रांस का प्रत्येक मंत्री अपने शासन-विभाग के कामों के लिए व्यवस्थापक-सभा को व्यक्तिगत रूप से जवाबदार और शासन की आम नीति के लिए सारे मंत्री सम्मिलित रूप से उत्तरदायी होते हैं।

प्रजातंत्र के प्रमुख का काम मंत्रियों का चुनाव करना भी होता है। मगर वास्तव में वह मंत्रि-मंडल के सिर्फ़ प्रधान का चुनाव करता है और शेष मंत्रियों को प्रधान-मंत्री स्वयं चुनता है। जब कोई मंत्रि-मंडल इस्तीफ़ा देता है, तब प्रजातंत्र का प्रमुख, जिन राजनैतिक नेताओं से उचित समझता है, बुला कर नए मंत्रि-मंडल के बनाने के संबंध में सलाह लेता है। ख़ास तौर पर वह धारासभा की दोनों सभाओं के अध्यक्षों की सलाह से किसी ऐसे नेता को जिस को वह समझता है कि वह ऐसा एक नया मंत्रि-मंडल बना सकेगा जो धारासभा को क़बूल होगा, मंत्रि-मंडल बनाने के लिए बुलावा भेजता है। सिनेट या चेंबर के किसी सदस्य अथवा बाहर के किसी मनुष्य को भी वह इस प्रकार का बुलावा दे सकता है। प्रमुख से बातचीत करने के बाद यदि वह नेता मंत्रि-मंडल का प्रधान बनना स्वीकार कर लेता है, तो फिर अन्य मंत्रियों का चुनाव उसी की मर्ज़ी पर छोड़ दिया जाता है। फिर प्रधान मंत्री के अपने मंत्रि-मंडल का चुनाव कर लेने के बाद प्रजातंत्र का प्रमुख अपने और इस्तीफ़ा दे कर जानेवाले प्रधान मंत्री के हस्ताक्षरों से नए प्रधान मंत्री को नियुक्त करता है; और अपने तथा नए प्रधान मंत्री के हस्ताक्षरों से नए मंत्रि-मंडल के मंत्रियों को नियुक्त करता है। आरंभ में मंत्रि-मंडल में छः से कम और आठ से अधिक सदस्य नहीं होते थे। परंतु सन् १८४८ ई० की राज-व्यवस्था में मंत्रियों की संख्या निश्चित करने का अधिकार व्यवस्थापक-सभा को दे दिया गया और सन् १८७५ ई० की राज-व्यवस्था में मंत्रियों की संख्या का कोई ज़िक्र तक नहीं किया गया। अस्तु, आवश्यकतानुसार मंत्री घटा-बढ़ा लिए जाते हैं।

प्रधान मंत्री जिस विभागको उपयुक्त समझता है स्वयं अपने हाथ में रखता है। अगर प्रधान मंत्री न्याय-मंत्री का स्थान नहीं लेता है तो मंत्रि-मंडल का उपप्रधान न्याय-मंत्री के आसन पर बैठता है। प्रधान-मंत्री कार्यकारिणी का अध्यक्ष, मंत्रि-मंडल का प्रधान, और फ्रांस की 'मुहरों का भंडारी'[१] होता है। परराष्ट्र-सचिव फ्रांस के

[१] 'कीपर ऑव् दि सील्स।'

दूसरे राष्ट्रों से संबंध की देख-रेख रखता है, और फ्रांस के दूसरों देशों में रहनेवाले राजदूतों और एलचियों से काम लेता है। गृह-मंत्री[१] के मातहत सारे डीफेंक्टस् डिपार्टमेंटों का शासन', 'दंडशासन, अस्पताल, जेल, पागलखाने, पुलिस, खुफिया इत्यादि देश में अमनो-आमान और सुव्यवस्था रखनेवाले सारे देश के भीतरी शासन-विभाग रहते हैं। अर्थ-सचिव राष्ट्रीय आय-व्यय-पत्रक तैयार करता है और रजिस्ट्री, साधारण करों, व्यापारी चुंगी करों[२], और सरकारी उद्योग-धंधों की देख-रेख और प्रबंध का ज़िम्मेदार होता है। पेंशनयाफ्ता अधिकारियों को भी वही पेंशनें बाँटता है। राष्ट्र के आय-व्यय का सारा उत्तरदायित्व अर्थ-सचिव पर होता है, अस्तु, व्यक्तिगत हितों के आक्रमणों से राष्ट्रीय हितों की रक्षा करना उस का मुख्य काम होता है। युद्ध-सचिव का काम देश की रक्षा और बचाव का प्रबंध ठीक रखना होता है। अस्तु, वह सारी सेनाओं को रोज़ क़वायद करा कर मुस्तैद रखता है; काफी हथियार, धन, रसद, भूसा-घास, तोपें, गोला-बारूद तैयार रखता है और देश की शत्रुओं से रक्षा करने के लिए ज़रूरी क़िलों और स्थानों को सब तरह से ठीक-ठाक रखता है। जलसेना-सचिव उसी प्रकार जलसेना को तैयार रखता है। शिक्षा-सचिव के हाथ में शिक्षा-विभाग की सारी शाखाएँ रहती हैं। वह इनाम इत्यादि बाँट कर सब प्रकार से देश में ज्ञानवृद्धि के प्रयत्न करता है। सार्वजनिक-कार्य-मंत्री राष्ट्रीय जल-थल भागों की देख-रेख करता है और उन को बनवाता और मरम्मत कराता है। रेल, सड़कें, नहरें, डाक और तार भी उसी के विभाग में रहते हैं। पहले व्यापार और खेती भी इसी विभाग में शामिल थे। मगर अब व्यापार और खेती दोनों के दो दूसरे सचिव होते हैं। व्यापार-सचिव व्यापारिक शिक्षा और देश के व्यापार की वृद्धि के प्रयत्न करता है। उसी प्रकार का कृषि-सचिव भी खेती-बारी की शिक्षा, फ़सलों की वृद्धि, उत्तम पशुओं की उत्पत्ति, जंगलों की देख-रेख करता है और देश के जिस-जिस भाग में लकड़ी की कमी होती है वहाँ जंगल लगवाता है। उपनिवेश-मंत्री का अधिकार दुनिया भर में फैले हुए फ्रांसीसी उपनिवेशों पर रहता है। श्रम-सचिव के अधिकार में कुछ गृहमंत्री और कुछ व्यापार-मंत्री के विभागों का हिस्सा आ जाता है। वह समाज को दरिद्रता और दुखों से दूर रखने तथा श्रमजीवियों की उन्नति के प्रयत्न में रहता है। हर सप्ताह कई बार मंत्री आपस में राजकार्य-संबंधी परामर्श करने के लिए मिलते हैं। एक सप्ताह में कम से कम मंत्रियों की दो बैठकें प्रजातंत्र के प्रमुख की अध्यक्षता में, और एक बैठक प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में ज़रूर होती हैं। जब मंत्री प्रमुख की अध्यक्षता में बैठते हैं तब उन की बैठक को 'मंत्रियों की कौंसिल' कहते हैं और जब वे प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में बैठते हैं तब उन की बैठक 'केबिनेट' अर्थात् मंत्रि-मंडल कहलाती है। मंत्रियों की कौंसिल में सारे अधिक ज़रूरी राष्ट्रीय नीति के प्रश्नों पर विचार होता है। 'मंत्रि-मंडल' की बैठकों में घरेलू राजनीति की प्रति-दिन की समस्याओं पर विचार किया जाता है। एक सप्ताह में कुल मिला कर नौ घंटे से अधिक मंत्रि-मंडल की बैठकें आम तौर पर नहीं होती हैं। इतना समय

---

[१] 'मिनिस्टर ऑफ् दि इंटीरियर'। इन का विवेचन आगे आवेगा। [२] 'कस्टम्स।'

फ्रांस जैसे बड़े देश की सारी समस्याओं पर विचार करने के लिए काफ़ी नहीं है। मंत्रियों का बहुत-सा समय व्यवस्थापक-सभा की चर्चाओं के विचार में ही चला जाता है। हर मंत्री को अपने विभाग से संबंध रखनेवाले जन-हितकारी विषयो पर व्यवस्थापक-सभा में मसविदे पेश करने की फ़िक्र रहती है और इन मसविदों को पहले मंत्रियों को अपने साथियों के सामने विचार के लिए रखना पड़ता है जिस से सारे मंत्रि-मंडल की उन्हें सहायता रहे। बहुत-सा ज़ाब्ते का काम भी मंत्रियो की कौंसिल को करना होता है, उदाहरणार्थ म्युनिसिपल कौंसिलों को चुनाव के लिए भंग करना अथवा 'स्टेट कौंसिल' के सदस्यों की नियुक्त करना इत्यादि। मंत्रि-मंडल के सामने किसी प्रश्न को विचार के लिए रखने या न रखने की सारी ज़िम्मेदारी उस मंत्री की होती है जिस के विभाग मे उस प्रश्न का संबंध होता है मगर मंत्रियों की व्यवस्थापक-सभा को सम्मिलित जवाबदारी होने के कारण सारे विभागों की ज़रूरी बातें आमतौर पर कौंसिल के सामने विचार के लिए रक्खी जाती हैं। कौंसिल और केबिनेट दोनों में से किसी की कार्रवाई का चिट्ठा नहीं रक्खा जाता है। प्रमुख या गृह-मंत्री कौंसिल की कार्रवाई का सार अख़बारों के प्रतिनिधियों को बतला देते हैं। मगर आवश्यक बातें नहीं बताई जाती हैं।

दिल से काम करनेवाले मंत्री के लिए हर रोज़ बड़ा काम रहता है। सबेरे उठते ही उसे एक ख़तों का पुलिंदा पढ़ने और जवाब देने के लिए मिलता है। जो ख़त उस के निजी पते पर नहीं होते हैं, वह तो विभाग के कर्मचारी खोल ही लेते हैं। मगर फ्रांस में व्यवस्थापक सभा के सदस्यों की मंत्रियों पर सिफ़ारिशी चिट्ठियाँ बरसाने की इतनी बुरी प्रथा पड़ गई है कि उस के मारे बेचारे मंत्रियो का नातका बंद रहता है। प्रातः काल ही जो चिट्ठियों का ढेर प्रत्येक मंत्री को मिलता है उस में अधिकतर ऐसी सिफ़ारिशी चिट्ठियाँ ही होती हैं। लगभग नौ बजे अपनी गाड़ी या मोटर में बैठ कर जिस का कोचवान या ड्राइवर तिरंगा फब्बा लगाए होता है—मंत्री कौंसिल या केबिनेट की बैठक में जाता है और दोपहर तक वहीं रहता है। जिस दिन बैठक नहीं होती है उस दिन वह अधिकारियों और व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों से मिलता है जिन की उस से मिलने के लिए क़तार लगी रहती है। दोपहर का भोजन कर के मंत्री को चेंबर अथवा सिनेट की सभा में जाना होता है। वहाँ से लौट कर जब वह अपने दफ़्तर में आता है तो उसे अपनी मेज़ पर तरह-तरह के काग़ज़ातों और फ़ाइलों के ढेर देखने के लिए रक्खे मिलते हैं जिन में उस के विभाग की तरफ़ से लिखे हुए पत्र और तैयार किए हुए ज़रूरी मसविदे होते हैं जो मंत्री आँख मूँद कर इन काग़ज़ों पर दस्तख़त नहीं करना चाहता है, उस के घंटों इन काग़ज़ों के देखने ही में चले जाते हैं। फिर जो अपने विभाग के मुख्य अधिकारियों से विभाग के रोज़ाना काम के विषय में भी बातचीत करनी होती है। ऐसी अवस्था में जो मंत्री मेहनती होने के साथ ही साथ कार्य-कुशल और शीघ्र निश्चयी नहीं होता है, वह या तो व्यवस्थापक-सभा में अपनी हँसी कराता है या अपने विभाग का खिलौना हो जाता है। जब कभी किसी सरकारी समारोह में कोई

मंत्री पेरिस अथवा किसी प्रांतीय नगर में जाता है, तो बड़े ठाठ-बाट से सेना उस का स्वागत करती है। गाजे-बाजे के साथ फ़ौज एक क़तार में खड़ी हो कर और सेना के अफ़सर तलवारें खींच कर उस को सलामी देते हैं। राष्ट्र का झंडा उसे सलामी देता है और एक केप्टन के नेतृत्व में साठ सैनिकों का 'गार्ड ऑव् आनर' उस की अगवानी के लिए जाता है और दो संतरी भी उस को घर पर पहरा लगाने के लिए दिए जाते हैं।

फ्रांस में मंत्रियों को व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं, सिनेट और चेंबर, की कार्रवाई में भाग लेने का अधिकार होता है। जो मंत्री चेंबर का सदस्य होता है वह सिनेट में जा कर बोल सकता है और जो सिनेट का सदस्य होता है, वह चेंबर में आ कर बोल सकता है। जो दोनों में से किसी का भी सदस्य नहीं होता है, वह भी दोनों में जा कर बोल सकता है। चर्चा की सारी बातों में हमेशा मंत्रियों को काम-काज के कारण भाग लेना असंभव होता है। अस्तु, प्रजातंत्र के प्रमुख के आदेश से चर्चा में भाग लेने के लिए सरकारी प्रतिनिधि नियुक्त कर दिए जाते हैं, जिन को सरकारी 'कमीसेरीज़' कहते हैं। मंत्री व्यवस्थापक-सभा को शासन के लिए जवाबदार होते हैं, इस लिए धारासभा में सदस्य उन से उन के शासन के संबंध में प्रश्न पूछ सकते हैं। मंत्री को किसी प्रश्न का उत्तर न देने या चुप रहने का अधिकार होता है। परंतु सभा का अध्यक्ष जो प्रश्न लिख कर पूछता है उस का उत्तर न देने का मंत्रियों को अधिकार नहीं होता है; अधिक से अधिक मंत्री उस प्रश्न पर कुछ समय के लिए चर्चा स्थगित करा सकता है। परंतु घरेलू शासन के विषय में जो प्रश्न पूछे जाते हैं उन को एक महीने से अधिक स्थगित नहीं कराया जा सकता है। जो सदस्य प्रश्न पूछता है, वह चर्चा शुरू करता है और दूसरे सदस्य अगर ज़रूरत होती है, तो उस में भाग ले कर चर्चा को बढ़ाते हैं। अंत में हर चर्चा के बाद जिस मंत्री से प्रश्न पूछा जाता है, उस की इच्छा के अनुसार व्यवस्थापक-सभा उस प्रश्न पर प्रस्ताव स्वीकार करती है। मंत्री की इच्छा के अनुसार धारासभा में प्रस्ताव स्वीकार न होने पर उस मंत्री को प्रजातंत्र के प्रमुख के सामने अपना इस्तीफ़ा रख देना पड़ता है। अगर प्रश्न मंत्रि-मंडल की सारी नीति के विषय में होता है, तो सारा मंत्रि-मंडल इस्तीफ़ा दे देता है। प्रजातंत्र के प्रमुख की तरह मंत्रियों पर भी, चेंबर की तरफ़ से सिनेट की अदालत के सामने मुक़दमा चलाया जा सकता है और उन को हर प्रकार की सज़ा दी जा सकती है। उन पर सिर्फ़ राष्ट्र के प्रति राजनैतिक अपराधों के लिए ही नहीं, बल्कि फ़ौजदारी के साधारण क़ानूनों के अनुसार भी मुक़दमा चलाया जा सकता है। अपने कामों से राष्ट्र को माली नुक़सान पहुँचाने के लिए उन पर दीवानी का मुक़दमा चलाने का अधिकार प्राप्त करने तक के लिए कई बार व्यवस्थापक-सभा में चर्चा उठ चुकी है। परंतु अभी तक राष्ट्र को आर्थिक नुक़सान पहुँचाने के लिए मंत्रियों पर दीवानी का मुक़दमा चलाने का अधिकार व्यवस्थापक-सभा को नहीं है।

४—व्यवस्थापक-सभा

१—नेशनल-एसेंबली

फ्रांस की व्यवस्थापक-सभा को 'नेशनल एसेंबली' अर्थात् राष्ट्रीय सभा कहते हैं। उस की दो सभाएँ होती हैं। एक को 'सिनेट' कहते हैं और दूसरी को 'चेंबर ऑव् डेपुटीज़' अर्थात् प्रतिनिधि-सभा। सन् १७८९ ई० से पहले फ्रांस में कानून बनाने और क़ानूनों का शासन करने, दोनों ही की सत्ता राजा के हाथ में थी। सन् १७८९ ई० के व्यवस्थापक-सम्मेलन के निश्चय के अनुसार क़ानून बनाने का अधिकार फ्रांस की धारा-सभा नेशनल एसेंबली को दे दिया गया था। मगर कानूनों को धारासभा से स्वीकृत होने के बाद अमल के लिए एलान करने का अधिकार राजा के ही हाथ में रक्खा गया था। सन् १७९२ ई० में राजा से यह अधिकार भी ले लिया गया था, और एसेंबली से स्वीकृत हो जाने के बाद ही क़ानून अमल में आने लगे थे। पाठकों को याद होगा कि कन्वेंशन को कानून बनाने के सारे अधिकार थे। कांसलेट के ज़माने में कानून पेश करने का अधिकार सिर्फ़ सरकार को था। उन पर केवल बहस करने का अधिकार ट्रिब्युनेट को था और उन पर मत कोर लेजिस्लातिफ़ में लिए जाते थे। प्रथम साम्राज्य के ज़माने में कानूनों पर बहस कोर लेजिस्लातिफ़ में होने लगी थी और ट्रिब्युनेट बंद कर दी गई थी। कानूनों को 'कौंसिल ऑव् स्टेट' की सहायता से महाराजा बनाता था। बाद में पुराने राज-घराने को फिर फ्रांस का राज मिलने पर राजा को क़ानून पेश करने, स्वीकार करने और अमल के लिए एलान करने के अधिकार दे दिए गए थे। 'चेंबर ऑव् डिपुटीज़' और 'चेंबर ऑव् पीयर्स'—उस समय की व्यवस्थापक-सभा की दोनों शाखाओं—को क़ानूनों पर सिर्फ़ बहस करने और मत देने का अधिकार था।

सन् १८३० ई० की क्रांति के बाद व्यवस्थापक-सभा के अधिकार बढ़ गए थे, और सन् १८४८ ई० की राज-व्यवस्था ने तो क़ानून-संबंधी सारे अधिकार सिर्फ़ प्रतिनिधियों की सभा को ही दिए थे। प्रजातंत्र के प्रमुख को किसी क़ानून पर धारासभा को पुनः विचार करने के लिए मजबूर करने का अधिकार अवश्य दिया गया था। दूसरे साम्राज्य के ज़माने में फिर 'कौंसिल आव् स्टेट' क़ानूनों के मसविदे बनाने लगी थी और 'प्रतिनिधि-सभा' को सिर्फ़ फिर उन पर बहस करने और उन को स्वीकार अथवा अस्वीकार करने का अधिकार रह गया था। प्रजा के प्रतिनिधि क़ानूनी मसविदों में कोई संशोधन नहीं कर सकते थे। सिनेट को क़ानून नामंज़ूर करने का और महाराजा को मंज़ूर करने का अधिकार दिया गया था। साम्राज्य के आखिरी दिनों में 'कोर लेजिस्लातिफ़' को क़ानूनों के प्रस्ताव और कानूनों में संशोधन करने का अधिकार दे दिया गया था। बाद में 'नेशनल एसेंबली' ही क़ानूनों को बनाने का सारा काम करने लगी और प्रजातंत्र के प्रमुख को केवल एसेंबली से फिर से किसी मसविदे पर विचार करवाने का केवल अधिकार रह गया। अंत में सन् १८७५ ई० की राज-व्यवस्था में क़ानून बनाने का अधिकार व्यवस्थापक-सभा

की दोनों सभाओं, 'सिनेट' और 'चेंबर ऑव् डेपुटीज़' में बाँट दिया गया। प्रजातंत्र के प्रमुख को इस राज-व्यवस्था के अनुसार भी सिर्फ़ यही अधिकार रहा कि जो क़ानून उस की समझ में उचित न हो, उस पर वह, कुछ शर्तें पूरी हो जाने पर, दोनों सभाओं से फिर से विचार करवा सकता है। व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं के सदस्यों की सम्मिलित बैठक में प्रजातंत्र के प्रमुख को चुनने और राज-व्यवस्था में फेर-फार करने का काम किया जाता है।

२—चेंबर ऑव् डेपुटीज़ या प्रतिनिधि-सभा

हर एक २१ वर्ष से ऊपर का आदमी 'चेंबर ऑव् डेपुटीज़' के सदस्यों के चुनाव में अपना मत डाल सकता है, और हर एक २५ वर्ष से ऊपर का मतदार सदस्य बनने के लिए उम्मीदवार हो सकता है। कुछ अधिकारी अपने अधिकार-क्षेत्रों से उम्मीदवार नहीं हो सकते हैं; क्योंकि अधिकारियों के अपने अधिकार-क्षेत्रों से चुनाव के लिए खड़े होने से मतदारों पर दबाव पड़ने और चुनाव में अन्याय होने का खतरा रहता है। जल और थल-सेना के सिपाही और अधिकारी भी उम्मीदवार नहीं हो सकते हैं; क्योंकि सेना को राजनीति के झगड़ों से अलग रक्खा जाता है। उन राजकुलों के लोग भी, जो फ्रांस पर राज कर चुके हैं, उम्मीदवार नहीं हो सकते हैं; क्योंकि संभव है कि वे धारासभा में घुस कर प्रजातंत्र के विरुद्ध षड्यंत्र रचने का और देश की राज-व्यवस्था को उलट-पलट करने का प्रयत्न करें। जिस स्थान से मतदार अपना मत देना चाहता है, वहाँ या तो उसे रहते होना चाहिए या वहाँ छः मास रह चुका हो। स्त्रियों को फ्रांस में इंगलैंड और अमेरिका की तरह मताधिकार नहीं है, और न वहाँ इस अधिकार की अधिक माँग ही है। अगर कोई मतदार कई निर्वाचन-क्षेत्रों में मत देने का अधिकार रखता हो, तो उस को उन में से एक क्षेत्र अपना मत देने के लिए चुन लेना होता है; क्योंकि फ्रांस में एक आदमी एक से अधिक मत किसी हालत में नहीं दे सकता है। जिस क्षेत्र में जिस का चेंबर के चुनाव के लिए मत रहता है, उसी में और सब चुनावों के लिए भी रहता है। एक क्षेत्र से चेंबर के लिए और दूसरे से चुंगी के लिए कोई नागरिक मत नहीं दे सकता। डेपुटीज़ डिपार्टमेंट[१] से चार वर्ष के लिए चुन कर आते हैं, और हर चार साल के बाद 'चेंबर ऑव् डेपुटीज़' का नया चुनाव होता है। हर डिपार्टमेंट से पचहत्तर हज़ार आबादी और उस के बड़े भाग के लिए चेंबर में से एक प्रतिनिधि चुन कर आता है। मगर हर एक डिपार्टमेंट से कम से कम तीन डेपुटी ज़रूर चुने जाते हैं। शुरू-शुरू में चेंबर में ५३३ डेपुटीज़ थे। सन् १९१९ ई० में फ्रांस की मर्दुमशुमारी के अनुसार चेंबर में ६२६ डेपुटीज़ थे और इसी के लगभग आमतौर पर संख्या रहती है। इन में फ्रांस के साम्राज्य के अन्य भागों के भी प्रतिनिधि शामिल रहते हैं—ऑल्जीयर्स के पाँच प्रतिनिधि, कोचिन चाइना, गुड्डेलूप, गायना, मार्टिनिक्यू, रियूनियन, सेनेगैल और भारतवर्ष के एक-एक प्रतिनिधि। हमारे देश में

[१] प्रांत की तरह एक भाग का नाम।

चंद्रनगर, पांडेचेरी इत्यादि जो छोटे-छोटे थोड़े से भाग अभी तक फ़्रांस के आधीन हैं, उन सब की तरफ़ से एक प्रतिनिधि फ़्रांस के चेंबर ऑव् डेपुटीज़ में बैठता है। चेंबर का चुनाव किसी क़ानून के अनुसार निश्चित तारीख या समय पर नहीं होता है। राज-व्यवस्था के अनुसार चेंबर की मियाद खत्म होने के साठ दिन यानी चेंबर भंग होने के दो मास के भीतर कोई तारीख प्रमुख को, चेंबर का नया चुनाव करने के लिए, अपना हुक्म निकाल कर निश्चित करनी चाहिए। इस हुक्म निकलने की तारीख और चुनाव की तारीख में कम से कम बीस दिन का अंतर होना चाहिए। चुनाव हो जाने के बाद दस दिन के भीतर चेंबर की पहली बैठक होनी चाहिए। चुनाव के क़ानून के अनुसार सन् १६१६ ई० तक सब से अधिक मत पाने से ही कोई उम्मीदवार डेपुटी नहीं चुना जा सकता था। उस को सफल होने के लिए जितनी संख्या मतदारों की उस के निर्वाचन-क्षेत्र में हो, उस का कम से कम एक चौथाई भाग और जितने मत चुनाव में उस के निर्वाचन-क्षेत्र में पड़ें, उन की बहु-संख्या पहले पर्चे[1] पर मिलनी आवश्यक होती थी। अगर पहली दफ़ा पर्चे पड़ने पर किसी उम्मीदवार को इतने मत नहीं मिलते थे, तो फिर दो हफ़्ते बाद दूसरी बार पर्चे पड़ते थे। इस दूसरे पर्चे पर फिर जिस को सिर्फ़ सब से अधिक मत मिलते थे, वही डेपुटी चुन लिया जाता था। इस क़ायदे से एक नुक़सान यह होता है कि बहुत-से यार लोग यौंही अपना ज़ोर दिखाने और उम्मीदवारों को तंग कर के अपना कुछ फ़ायदा बनाने के लिए चुनाव में खड़े हो जाते थे, और पहले पर्चे पर किसी उम्मीदवार को आवश्यक संख्या मतों की नहीं मिलने देते थे। पहले पर्चे पर नाकामयाब होने से उन का स्वयं तो कुछ बिगड़ता नहीं था; परंतु दूसरे चुनाव पर उन की पूँछ बढ़ जाती थी और इस प्रकार वे कुछ रियायतें पा जाते थे।

यूरोपीय युद्ध समाप्त होने के बाद सन् १६१६ ई० में चुनाव के क़ानून में परिवर्तन हो गया। जिन डिपार्टमेंटों से छः से अधिक डेपुटी चुन कर आते थे उन को इस प्रकार विभाजित किया गया कि वहां से छः से अधिक प्रतिनिधि चुन कर न आ सकें। अनुपात-निर्वाचन[2] और चुनाव में एक क्षेत्र से एक प्रतिनिधि चुनने के स्थान में 'सूची-पद्धति'[3] का प्रयोग प्रारंभ किया गया। सूची-पद्धति का मतलब यह है कि किसी क्षेत्र से एक-एक उम्मीदवार अलग-अलग चुनाव के लिए नहीं खड़ा होता है। एक क्षेत्र से जितने प्रतिनिधि चुने जाते हैं उतने उम्मीदवारों की एक सूची दाखिल कर दी जाती है और मतदार एक-एक आदमी के लिए मत न दे कर सूची के लिए मत देते हैं। जितने विचार और दलों के उम्मीदवार खड़े होते हैं, उतनी ही प्रायः सूचियाँ होती हैं। मतदारों को यह हक़ भी होता है कि वे किसी भी प्रस्तावित सूची के लिए मत न दे कर कई सूचियों में से नाम चुन कर अपने चुनाव के पर्चे पर एक नई सूची बना कर उस के लिए मत दे आवें। मगर इतने स्वतंत्र विचार के बिरले ही मतदार होते हैं। जिस प्रकार अन्य सारे प्रजा-सत्तात्मक राज्यों में दलों के हिसाब से मत पड़ते हैं, वैसे ही फ़्रांस में भी मत पड़ते हैं। अगर कोई आदमी अकेला ही खड़ा होता है तो उस के नामज़दगी के काग़ज़ को भी एक

[1] फ़र्स्ट बैलट। [2] प्रोपोर्शनल रिप्रेज़ेंटेशन। [3] लिस्ट सिस्टम।

नामवाली सूची मान लिया जाता है। क्षेत्र से जितने प्रतिनिधि चुने जाने वाले होते हैं उन से अधिक नाम किसी सूची में नहीं हो सकते ; कम नामों की सूचियाँ हो सकती हैं। यह सूचियाँ चुनाव से पाँच दिन पहले डिपार्टमेंट के सौ मतदारों के हस्ताक्षरों के साथ डिपार्टमेंट के सर्वोच्च अधिकारी प्रीफ़ेक्ट के पास क़ानून के अनुसार दाखिल हो जानी चाहिए। इन सूचियों की नक़लें चुनाव से दो दिन पहले चुनाव के स्थानों पर चिपका दी जाती हैं। मतदार चुनाव के दिन, निर्वाचन-पत्रों[1] पर छपी हुई इन सूचियों के लिए अथवा उन में से कुछ नाम काट कर और दूसरी सूचियों के कुछ नाम किसी सूची में जोड़ कर या अपनी तरफ़ से कुछ नए नाम किसी सूची में जोड़ कर अपनी इच्छानुसार जैसा चाहते हैं मत देते हैं।

गलत और खाली पर्चों को खारिज कर के, जिन उम्मीदवारों को चुनाव में पड़नेवाले मतों की बहु-संख्या मिलती है, उन को मतों की संख्या के हिसाब से आवश्यक संख्या तक चुन लिया जाता है। अगर आवश्यक संख्या में उम्मीदवारों को इतने मत नहीं मिलते हैं और कुछ जगह खाली रह जाती हैं, तो चुनाव में जितने मत पड़ते हैं उन की संख्या को, जितने प्रतिनिधि चुने जानेवाले होते हैं उन की संख्या से बाँट कर जो संख्या प्राप्त होती है, उस से हर एक सूची को मिलानेवाले मतों के औसत को बाँट कर विभिन्न सूचियों के लिए जो संख्या प्राप्त होती है, उतने-उतने प्रतिनिधि मतों की संख्या के हिसाब से उन सूचियों में से चुन लिए जाते हैं। विभिन्न सूचियों को जो मतों की संख्या मिलती है, उस को उस सूची में जितने नाम होते हैं उस से बाँट कर जो संख्या प्राप्त होती है उस को उस सूची का औसत माना जाता है। हर एक सूची में से मतों की संख्या के हिसाब से प्रतिनिधि चुने जाते हैं और अगर दो उम्मीदवारों को बराबर मत मिलते हैं तो उन में से जो अधिक उम्र का होता है वह चुन लिया जाता है। जिस उम्मीदवार को अपनी सूची के औसत के आधे से अधिक मत नहीं मिलते हैं उस का चुनाव नहीं किया जा सकता है। अगर चुनाव में उस क्षेत्र में जितने मतदार होते हैं, उन की आधी से अधिक संख्या मत नहीं देती है, या किसी सूची को इतनी संख्या में मत नहीं मिलते हैं, जो उस संख्या के बराबर हो, जो चुनाव में जितने मत पड़े हों उन को जितने प्रतिनिधि चुने जानेवाले हों उन की संख्या से बाँट कर प्राप्त होती है, तो दो हफ़्ते के बाद फिर नया चुनाव किया जाता है। अगर इस दूसरे चुनाव में भी किसी सूची को इतनी संख्या मतों की नहीं मिलती है तो फिर सब उम्मीदवारों में से जिन को सब से अधिक मत मिलते हैं उन को चुन लिया जाता है। सन् १९१९ के चुनाव के इस क़ानून के पहले के क़ानून के अनुसार दूसरे पर्चे पर जो दिक्क़तें होती थीं उन दिक़्क़तों से बचने के लिए यह तरीक़ा अख्तियार किया गया था। इसी ढंग के चुनाव को हमने अनुपात-निर्वाचन नाम दिया है।

अनुपात-निर्वाचन को अच्छी तरह समझने के लिए हम एक उदाहरण देते हैं। मान लीजिए कि एक डिपार्टमेंट से छः डेपुटी चुने जाते हैं और वहाँ चुनाव पर ६०,२४०

[1] बैलट पेपर्स।

पर्चे पड़ते हैं। अगर यह सब पर्चे एक ही सूची के उम्मीदवारों को मिलते तो उस सूची को इस से छः गुने अर्थात् ३६१४४० मत मिलते। मगर ऐसा होता नहीं है। बहुत-से पर्चे खराब हो जाते हैं और बाक़ी कई सूचियों में बँट जाते हैं। मान लीजिए कि यह मत चार सूचियों में इस प्रकार बँट जाते हैं:—

सूची (अ)

जयनंदन	३२,६५४
हरिदास	२६,८२७
ईश्वरसहाय	२६,६४०
थम्मन सिह	२५,२७४
व्यास	१८४०१
जयदेव	१२५२४
कुल	१४८३११
औसत	२४७१८

सूची (इ)

विश्वनाथ	१८१२५
नारायण स्वामी	१६२४७
जमनादास	१५८२२
कृष्ण मेनन	१२६५६
मूलराज	८४०४
लालभाई	४०३१
कुल	७५२८६
औसत	१२५४७

सूची (उ)

उमाशंकर	१५२४७
सूरजी भाई	१४६२६
कन्हैयालाल	१२१७२
लीलावती	८६२४
पन्नालाल	६०१८
गुलज़ारी	५१०१
कुल	६१७६१
औसत	१०२६८

सूची (ए)

गुलाब राय	५१६४
ऐमीली	४०२०
आबिद अली	३२६२
प्यारेलाल	११२३
दोस्त मुहम्मद	१११६
अलाउद्दीन	१०८२
कुल	१५८१२
औसत	२६३५

भाज्यफल ६०२४०÷६=१००४०

ऊपर की इन चारों सूचियों में सिर्फ़ जयनंदन को, चुनाव में जितने मत पड़े, उन की बहु-संख्या मिली। अतः छः प्रतिनिधियों में से सिर्फ़ जयनंदन चुना गया। बाक़ी पाँच जगहों के लिए चुनाव के भाज्यफल को सूचियों के औसत से बाँटने पर सूची 'अ' के भाग में दो और प्रतिनिधि और सूची 'इ' और सूची 'उ' के भाग में एक-एक प्रतिनिधि आते हैं। सूची 'ए' का औसत भाज्यफल से कम होने से उस के हिस्से में एक भी प्रतिनिधि नहीं आता है। सूची 'अ' में से मतों की संख्या के अनुसार दो प्रतिनिधि और चुनने से हरिदास और ईश्वरसहाय तथा सूची 'इ' और सूची 'उ' में से उसी प्रकार एक-एक प्रतिनिधि चुनने से विश्वनाथ और उमाशंकर चुन लिए जाते हैं। फिर भी एक जगह रह जाती है। क़ानून के अनुसार ऐसी हालत में यह जगह उस सूची को मिलती है, जिस का औसत सब से अधिक होता है। मगर उस सूची में यह जगह उसी उम्मीदवार को मिल सकती है जिस को कम से

कम उस सूची के औसत के आधे से अधिक मत मिले हों। अगर उस सूची से कोई ऐसा उम्मीदवार नहीं होता है तो उस से कम औसतवाली दूसरी सूची से इसी प्रकार के उम्मीदवार को चुन लिया जाता है। अस्तु, ऊपर की सूचियों में से छठा प्रतिनिधि थम्मन सिंह को चुना जाता है।

चेंबर ऑव् डेपुटीज़ का चार साल के लिए चुनाव होता है, मगर जैसा कहा जा चुका है प्रजातंत्र के प्रमुख को सिनेट की सम्मति से चेंबर ऑव् डेपुटीज़ को चार साल की मीयाद से पहले भी भंग कर देने का अधिकार होता है। परंतु आज तक एक बार सन् १८७७ ई० के बाद, कभी चेंबर अपनी मीयाद से पहले भंग नहीं हुआ है। इंगलैंड के हॉउस ऑव् कामन्स की तरह फ़्रांस के चेंबर ऑव् डेपुटीज़ का जब चुनाव न हो कर, अमेरिका की कांग्रेस की तरह, हमेशा समय पूरा होने पर ही प्रायः चुनाव होता है। चेंबर की चार साल की मीयाद अनुभव से सुभीते की समझ कर निश्चित की गई है। सन् १७६१ ई० की राज-व्यवस्था में धारासभा की मीयाद दो वर्ष रक्खी गई थी। सन् १७६५ और सन् १८४८ ई० की प्रजातंत्र राज-व्यवस्थाओं में तीन वर्ष और सन् १७६६ और १८१४ ई० में पाँच वर्ष की रक्खी गई थी। सन् १८५२ ई० में यह मीयाद छः वर्ष कर दी गई और सन् १८७५ ई० की राज-व्यवस्था में आख़िरकार चार वर्ष रक्खी गई जो अनुभव से काफ़ी सुभीते की मीयाद साबित हुई। इंगलैंड की तरह किसी डेपुटी को मंत्री बन जाने पर चेंबर से इस्तीफ़ा दे कर, फिर से चुनाव के लिए नहीं खड़ा होना पड़ता। सन् १६१६ ई० तक चुनाव के लिए खड़े होनेवाले उम्मीदवार को चुनाव की तारीख़ से पाँच दिन पहिले, अपने क्षेत्र के प्रीफ़ेक्ट के सामने किसी एक चुंगी के अध्यक्ष की गवाही से अपनी उम्मीदवारी के एलान का काग़ज़ दाखिल कर देने की ज़रूरत होती थी। मगर सन् १६१६ के बाद से चुंगी के अध्यक्ष के स्थान में सौ मतदारों के हस्ताक्षर होने की शर्त कर दी गई है।

३—सिनेट

सन् १८७५ ई० के व्यवस्थापक-सम्मेलन ने जब व्यवस्थापक-सभा की दो सभाएँ रखने का निश्चय कर लिया, तब यह समस्या सुलझाने की ज़रूरत हुई कि न तो दोनों सभाएँ एक रूप की हों और न फ़्रांस की प्रजासत्तात्मक राज-व्यवस्था में इंगलैंड के हॉउस ऑव लार्ड्स की तरह कुबेरशाही का दखल रहे। 'चेंबर ऑव् डेपुटीज़' की तरह व्यवस्थापक-सभा की ऊपरी सभा का चुनाव भी सर्वसाधारण के मतों से करने से सिनेट केवल चेंबर ऑव् डेपुटीज़ का दूसरा रूप बन जाती। जिस व्यवस्थापक-सभा का विकास इंगलैंड की तरह धीरे-धीरे न हुआ हो और जो प्रजासत्तात्मक सिद्धांतों पर नए सिरे से बनाई जा रही हो, उस में इंगलैंड की भाँति मौरूसी सदस्यों के रखने का विचार भी नहीं किया जा सकता था। प्रजातंत्र के प्रमुख को सिनेट के सदस्य बनाने का अधिकार देने में यह कठिनाई आती थी कि सिनेट के सदस्य चेंबर ऑव् डेपुटीज़् के सदस्यों के साथ नेशनल एसेंबली में बैठ कर प्रजातंत्र के प्रमुख को चुनते हैं। अगर प्रमुख के चुने हुए

सदस्यों को प्रमुख चुनने का अधिकार दे दिया जाय तो प्रजासत्तात्मक राज्य की शीघ्र ही इतिश्री हो जाय। अस्तु, सब बातों का विचार रख कर एक समझौते का रास्ता निकाला गया। सिनेट के सदस्यों की संख्या कुल ३०० रक्खी गई, जिन में से ७५ सदस्यों को ज़िंदगी भर के लिए व्यवस्थापक-सम्मेलन ने स्वयं चुन लिया, और उन की जगहें ख़ाली होने पर उन को बाद में भरने का अधिकार सिनेट को दे दिया। शेष २२५ सदस्यों को फ़्रांस के डिपार्टमेंटों और उपनिवेशों मे[1] चुनने का निश्चय किया गया। डिपार्टमेंटों में आबादी के हिसाब से सदस्यों की संख्या बाँट दी गई। सीन और नौर्ड के डिपार्टमेंटों को पाँच-पाँच, छः डिपार्टमेंटों को चार-चार, सत्ताइस को तीन-तीन, और बाक़ी को दो दो सदस्य दे दिए गए। हर एक डिपार्टमेंट अथवा उपनिवेश के मुख्य नगर में उस डिपार्टमेंट अथवा उपनिवेश के चेंबर और डेपुटीज़ के सदस्यों, डिपार्टमेंट की कौंसिल के सदस्यों, डिपार्टमेंट के अंदर की सारी ऐरोंडाइजमेंटों[2] की कौंसिलों के सदस्यों और डिपार्टमेंटों के अंदर की सब म्यूनिसिपैलिटियों के एक-एक प्रतिनिधियों की एक सभा मिल कर डिपार्टमेंट से चुने जानेवाले सिनेट के सदस्यों का चुनाव करती है। सिनेट के सदस्य नौ वर्ष के लिए चुने जाते हैं। मगर सिनेट के एक तिहाई सदस्य हर तीसरे साल चुने जाते हैं। बाद में सन् १८८४ ई० के एक संशोधन के अनुसार यह निश्चय हुआ कि नेशनल एसेंबली ने जिन ७५ सदस्यों को ज़िंदगी भर के लिए चुना था, वे जब तक ज़िंदा हैं, सिनेट के सदस्य रहेंगे। मगर उन की जगहें ख़ाली होने पर वे जगहें भी औरों की तरह आबादी के अनुसार डिपार्टमेंटों में बाँट दी जावेंगी और म्यूनिसिपैलिटियों की ओर से सिनेट के चुनाव के लिए एक-एक प्रतिनिधि ही नहीं; बल्कि म्यूनिसिपैलिटियों के सदस्यों की संख्या के अनुसार एक से चौबीस तक प्रतिनिधि आ सकते हैं। अस्तु, पेरिस की म्यूनिसिपैलिटी की ओर से सिनेट में अब तीस प्रतिनिधि आते हैं। फ़्रांस की 'सिनेट' का चुनाव सीधा निर्वाचक नहीं करते हैं, परोक्ष निर्वाचन से प्रजा के निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा किया जाता है। चालीस वर्ष से कम उम्र का कोई मनुष्य सिनेट का सदस्य नहीं हो सकता। चेंबर ऑव् डेपुटीज के पचीस वर्षवाले सदस्यों की जवानी और जोश में संजीदगी और विचारशीलता का समावेश करने के विचार से व्यवस्थापक-सभा की दूसरी सभा सिनेट के सदस्यों की ४० वर्ष उम्र रक्खी गई है। जो लोग चेंबर के सदस्य नहीं हो सकते हैं, वह सिनेट के भी सदस्य नहीं हो सकते हैं। अपने-अपने सदस्यों के चुनावों के झगड़ों का फ़ैसला सिनेट और चेंबर दोनों सभाएँ ख़ुद करती हैं। यह काम वास्तव में अदालती होने से इन सभाओं में उतनी निष्पक्षता से नहीं किया जाता है, जितना अदालतों में हो सकता है। चेंबर ऑव् डेपुटीज़ में बैठ चुकनेवाले बहुत-से लोग सिनेट में चुन कर आते हैं। फ़्रांस की सिनेट की गिनती दुनिया की बड़ी से बड़ी धारासभाओं में होती है।

---

[1] २१८ सदस्य डिपार्टमेंटों से और सात उपनिवेशों से।

[2] डिपार्टमेंट से छोटा देश का भाग।

४—काम-काज

सिनेट और चेंबर ऑव् डेपुटीज़ दोनों अपनी पहली बैठक में अपना काम-काज चलाने के लिए कर्मचारी, जिन को 'ब्युरो' कहते हैं, चुनते हैं। ब्युरो में अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, मंत्री, क्येस्टर्स इत्यादि सारे कर्मचारी आ जाते हैं।

दोनों सभाओं में लगभग चार-चार उपाध्यक्ष, छः से आठ तक मंत्री और तीन क्येस्टर्स होते हैं। इन का चुनाव सूची-पद्धति से सभा के सदस्यों में से किया जाता है, और वे बार-बार चुनाव के लिए खड़े हो सकते हैं। ब्युरो सभा का काम चलाने का ढंग निश्चय करता है और स्टेनोग्राफ़र्स, क्लर्क, पुस्तकाध्यक्ष और दरबान वग़ैरह सभा के नौकरों को नियुक्त करता है।

अध्यक्ष सभाओं के प्रतिनिधि और सभाओं के अधिकारों और इज़्ज़त के रखवाले समझे जाते हैं। उन का फ़र्ज़ होता है कि सभाओं में बोलने की पूरी स्वतंत्रता क़ायम रक्खें और जो नियम काम-काज चलाने के लिए सभा बनावे उन का सदस्यों से पालन करावें। प्रजातंत्र के प्रमुख के बाद राष्ट्र में सिनेट के अध्यक्ष का दूसरा दर्जा, चेंबर ऑव् डेपुटीज़ के अध्यक्ष का तीसरा दर्जा और प्रधान-मंत्री का चौथा दर्जा समझा जाता है। इंगलैंड के हाउस ऑव् कॉमन्स के स्पीकर की तरह फ़्रांस की व्यवस्थापक-सभा के अध्यक्ष का काम सिर्फ़ सभा का काम चलाना ही नहीं होता है। वह चाहे तो कुर्सी छोड़ कर चर्चा में भाग ले सकता है। उपाध्यक्षों में से कोई भी एक, अध्यक्ष की ग़ैरहाज़िरी में, अध्यक्ष का काम करता है। मंत्रियों में से चार मंत्री सभा की बैठक में हमेशा उपस्थित रहते हैं। उन का काम सभा के काग़ज़ात तैयार करना और मत गिनना होता है। क्येस्टर्स के हाथों में लेन-देन संबंधी सभा के रुपए-पैसे का सारा काम रहता है। उपाध्यक्षों और मंत्रियों को कोई वेतन या भत्ता नहीं मिलता है। क्येस्टर्स को सदस्यों से दुगना भत्ता मिलता है। इस प्रबंध के अतिरिक्त ब्युरो का एक दूसरा उपयोग भी होता है। व्यवस्थापक-सभा के नियमों के अनुसार सभाओं की पहली बैठकों में चेंबर को पत्ती डाल कर सत्तावन-सत्तावन सदस्यों के ग्यारह ब्युरों में और सिनेट को तैंतीस या चौंतीस-चौंतीस के नौ ब्युरों में बाँट दिया जाता है। बाद में हर महीने यह भाग होते रहते हैं। हर एक ब्युरो अपना एक प्रधान और एक मंत्री चुन लेता है और जब ज़रूरत होती है, तब प्रधान ब्युरो की बैठक करता है। नई व्यवस्थापक-सभा के बनने पर ब्युरो सदस्यों के चुनाव की जाँच करता है और फिर सभा उस के चुनाव को स्वीकार करती है। सभा के सामने आनेवाले मसविदों और दूसरे मसलों पर भी पहले ब्युरो विचार करता है। पहले तो सारे मसविदे सीधे ही ब्युरो के पास विचार के लिए आते थे। मगर ब्युरो के काफ़ी बड़े और सदा बदलते रहने के कारण काम में बड़ी दिक्क़त होती थी। इस लिए अब मसविदों पर अच्छी तरह विचार करने के लिए सारे ब्युरों से एक-एक आदमी चुन कर कमेटियाँ बना ली जाती हैं। यह कमेटियाँ अस्थायी होती हैं। जिस मसविदे पर विचार करने के लिए वे बनाई जाती हैं उन पर

विचार कर चुकने के बाद वे खत्म हो जाती हैं। बहुत से सरकारी मसविदे ब्युरो में आ कर इतने बदल जाते थे कि मंत्री उन्हें स्वीकार नहीं करते थे, और उन्हें इस्तीफ़ा दे देना होता था। इस दिक्कत को दूर करने के लिए विशेष प्रकार के मसविदों पर विचार करने के लिए ब्युरो के स्थान में अब चेंबर ऑव् डेपुटीज़ स्वयं स्थायी कमेटियाँ बना देता है। ज़रूरत पड़ने पर पहले की तरह अस्थायी कमेटियाँ भी बनाई जाती हैं। चुंगी, व्यापार, उद्योग, सार्वजनिक निर्माण-कार्य, सेना, जल-सेना, परराष्ट्र विषय, शिक्षा, खेती, सार्वजनिक स्वास्थ्य-संबंधी मसविदों पर विचार के लिए चेंबर ऑव् डेपुटीज़ की स्थायी समितियाँ रहती हैं।

सन् १८७५ ई० की राज-व्यवस्था के अनुसार व्यवस्थापक-सभा की बैठकें जनता के लिए खुली होनी चाहिएँ। व्यवस्थापक-सभा की कारवाई की खबर जनता को रहने से जनता व्यवस्थापक-सभा पर अपना मत प्रकट कर के दबाव रख सकती है। फ्रांस के प्रसिद्ध क्रांतिकारी नेता रोब्सपीयर ने इस बात पर बहुत ज़ोर दिया था कि व्यवस्थापक-सभा का कार्य अधिक से अधिक जन-समुदाय की आँखों के सामने होना चाहिए। सन् १७८९ ई० में जब एस्टेट्स-जनरल की सभा बैठी थी, तो उस के चारों ओर फ़ौज ने घेरा डाल रक्खा था और जनता को अंदर आने की इजाज़त नहीं थी। सभा ने राजनैतिक स्वतंत्रता के नाम पर इस प्रबंध का विरोध किया था, और राजा के पास इस बात की शिकायत भेजी थी। सन् १७९१ ई० की राज-व्यवस्था में क़ानून-सभा की बैठकें और चर्चा सार्वजनिक कर दी गई हैं। क्रांति के ज़माने में तो दर्शक भी आवाज़े लगा कर सभा की बैठकों में भाग लेते थे। इस से बड़े बखेड़े होने लगे और सभाओं के काम में अड़चनें पड़ने लगीं। अस्तु, दर्शकों की संख्या निश्चित कर दी गई। पहले और दूसरे साम्राज्य के ज़माने में दोनो सभाओं की बैठकें दर्शकों के लिए बंद रहती थीं। सन् १८५२ ई० की राज-व्यवस्था के अनुसार चेंबर ऑव् डेपुटीज़ के अध्यक्ष की लिखी हुई रिपोर्ट के सिवाय चेंबर की चर्चा कहीं प्रकाशित नहीं हो सकती थी। परंतु अब सर्व-साधारण को दोनो सभाओं में दर्शक की तरह जाने का अधिकार है। जब दर्शकों की गौखों में बैठने की जगह भर जाती है, तब और आदमियों को अंदर अवश्य नहीं घुसने दिया जाता है। अब अखबारों में भी व्यवस्थापक-सभा की चर्चाएँ बेरोक-टोक छपती हैं। मगर राज-व्यवस्था के अनुसार आजकल भी ज़रूरत पड़ने पर व्यवस्थापक-सभा की बैठकें गुप्त हो सकती हैं। परंतु इस अधिकार के उपयोग की इतनी कम ज़रूरत पड़ती है कि उस का लगभग उपयोग ही नहीं किया जाता है।

चेंबर ऑव् डेपुटीज़ की बैठकें बूर्बन राज-भवन में होती हैं, जो सीन नदी के बाएँ किनारे पर बना हुआ है। १८ वीं सदी में इस जगह पर बूर्बन की नवाबज़ादी ने एक होटल बनवाया था। परंतु सन् १७९० ई० में यह जगह फ्रांस की क्रांतिकारी सरकार के क़ब्ज़े में आई और फिर यहाँ पर पाँच सौ की कौंसिल के लिए एक बड़ा हॉल बनवा दिया गया जिस में बड़ी सुंदर कारीगरी की सजधज है और बीस संगमरमर के स्तंभ और 'स्वतंत्रता', 'शांति', 'बुद्धिमत्ता', 'न्याय' और 'वक्तृता' की मूर्तियाँ खड़ी हैं। इसी हॉल में आज कल चेंबर ऑव् डेपुटीज़ की सभा बैठती है। कभी सभा में सभा के काम-काज के विषय पर विचारपूर्वक चर्चा चलती है और विचारशीलता और शांति का राज्य रहता है।

कभी सभा वाक्-युद्ध का अखाड़ा बन जाती है और सभा-स्थल की गौखें तमाशबीनों—खास कर औरतों से ठसाठस भर जाती हैं। बहुत-से दर्शक यहाँ सिर्फ़ सरकस या नाटक की तरह तमाशा देखने की ग़रज़ से आते हैं। सभा के सदस्यों में बहुत-से सुंदर व्याख्यान-दाता होते हैं और जब वे बोलने के लिए खड़े होते हैं, तब सब बड़े ध्यान से उन्हें सुनते हैं परंतु जब बहुत देर तक चर्चा चलती है और लोग ऊबने लगते हैं, तो लोग शोरगुल भी मचाने लगते हैं।

सिनेट की सभा में ऐसा शोरगुल सुनने में नहीं आता है। वह लक्ज़मबूर के राजभवन में होती है। यह इमारत १७ वीं सदी में मेरी दे मेडीसिस के लिए बनाई गई थी। क्रांति के ज़माने में इस को जेलखाना बना दिया गया था, जिस में हिबर्ट, दांतों इत्यादि क्रांतिकारी नेता क़ैद रक्खे गए थे। डाइरेक्टरी और कासलेट के ज़माने में यहाँ पर सरकार का दफ़्तर था। पहले साम्राज्य ने यहाँ सिनेट की सभा बैठाई और फिर राजाशाही के ज़माने में हाउस ऑव् पीयर्स के उपयोग में यह स्थान आया। सन् १८५२ ई० में फिर यहाँ सिनेट बैठी और सन १८७६ ई० से बराबर यहीं सिनेट बैठती है। इस सभा-स्थल में फ्रांस के प्रख्यात राजनीतिज्ञों की मूर्तियाँ खड़ी हैं, और सुनहरी पच्चीकारी और लकड़ी का बड़ा सुंदर काम है। सदस्यों के बैठने के लिए सभास्थल में लाल मखमल की आराम-कुर्सियाँ लगा दी गई हैं। सिनेट की सभाएँ बड़ी शांत और गंभीर होती हैं।

दोनों सभाओं के हॉल अर्ध-चंद्राकार हैं, और उन में जितने सदस्य सभाओं में आते हैं, उतनी ही बैठने की जगहें बनी हैं। हॉल के बीच में एक ऊँची कुर्सी अध्यक्ष के बैठने के लिए होती है और उस के सामने एक मंच होता है, जिस को ट्रिब्यून कहते हैं। बोलनेवालों को इस मंच पर आ कर बोलना होता है। इस मंच के दोनों ओर व्याख्यानों और कार्रवाई की रिपोर्ट लिखनेवाले सरकारी स्टेनोग्राफ़र बैठते हैं, जिन की लिखी हुई रिपोर्टें अध्यक्ष के हस्ताक्षर होने के बाद रोज़ाना सरकारी 'जरनल' में छपती हैं। मंच के सामने की जगहों पर सरकार की मंत्रि-मंडली बैठती है और उन के पीछे सभा के दूसरे सदस्य इस प्रकार बैठाए जाते हैं कि सरकार-पक्ष के सदस्य अध्यक्ष के दाहिने और प्रजा-पक्ष के बाएँ तरफ़ रहते हैं। जिस सदस्य को बोलने की इच्छा होती है, वह मंत्रियों के पास रक्खी हुई सूचियों पर अपना नाम लिख देते हैं। किसी भी सदस्य के चर्चा स्थगित करने के प्रस्ताव पर तुरंत मत लिए जाते हैं। मत हाथ उठा कर, खड़े हो कर अथवा 'हाँ' के लिए सफ़ेद और 'ना' के लिए नीले पर्चों पर नाम लिख कर दिए जाते हैं।

जनता के हस्ताक्षेप, उत्पात और कोलाहल से दूर शांतिपूर्वक काम चलाने के लिए रोब्सपीयर के प्रचंड विरोध करने पर भी सन् १८७५ ई० में व्यवस्थापक-सभा और कार्य-कारिणी का स्थान पेरिस में न रख कर वारसेल्ज़ में रक्खा गया था। मगर कुछ वर्ष बाद पेरिस में शांति स्थापित हो जाने पर और दूरवर्ती वारसेल्ज़ में सरकार की राजधानी रखने की दिक्क़तों का विचार कर के पेरिस को ही राजधानी बना लिया गया। व्यवस्थापक-सभा की बैठकों का समय राज-व्यवस्था की शर्तों के अनुसार, व्यवस्थापक-सभा की स्वयं इच्छा अथवा प्रजातंत्र के प्रमुख के नाम पर काम करनेवाले मंत्रि-मंडल की इच्छानुसार या

प्रजातंत्र के प्रमुख की इच्छानुसार तय कर लिया जाता है। सन् १८७५ ई० की राज-व्यवस्था के अनुसार व्यवस्थापक-सभा की बैठक हर साल जनवरी के दूसरे मंगलवार को होनी चाहिए और पाँच महीने तक कम से कम चलनी चाहिए और दोनों शाखाओं—सिनेट और चेंबर—को साथ-साथ खुलना और बंद होना चाहिए। पाँच महीने तक बैठने का यह अर्थ नहीं है कि काम न भी हो, तो भी सभा पाँच महीने तक बैठे ही। इस धारा का अर्थ इतना ही है कि इन पाँच महीने बैठने का व्यवस्थापक-सभा को क़ानूनी हक़ है और प्रजातंत्र का प्रमुख अपने सभा स्थगित करने के अधिकार का इस समय में उपयोग नहीं कर सकता है। आम तौर पर फ्रांस की व्यवस्थापक-सभा, गर्मियों की छुट्टी और दो एक दूसरी छुट्टियाँ छोड़ कर साल भर तक बराबर बैठती है। व्यवस्थापक-सभा को अपनी बैठकें बिल्कुल बंद कर देने का अधिकार नहीं है; कुछ दिन छुट्टी लेने के लिए वह अपना मत प्रकट कर सकती है। दोनों सभाओं के सदस्यों की बहु-संख्या चाहे तो प्रजातंत्र के प्रमुख के पास अर्ज़ी भेज कर व्यवस्थापक-सभा की ख़ास बैठकें भी बुलवा सकती है। साधारण बैठकों की ख़बर पत्रों द्वारा सभाओं के अध्यक्ष सदस्यों के पास भेज देते हैं। ख़ास बैठकें प्रजातंत्र का प्रमुख बुलाता है, और वही सभाओं की बैठकों को बंद और स्थगित करता है। प्रमुख को एक बैठक को दो बार से अधिक और एक मास से अधिक स्थगित करने का अधिकार नहीं है। सभा स्थगित किसी निश्चित तारीख़ के लिए ही की जा सकती है। अनिश्चित समय और तारीख़ के लिए व्यवस्थापक-सभा को विसर्जित करने का अधिकार फ्रांस में किसी को नहीं है। सिनेट की सलाह से चेंबर ऑव् डेपुटीज को भंग करने का अधिकार भी प्रमुख को है। मगर आज तक एक बार के अतिरिक्त कभी इस अधिकार का उपयोग नहीं किया गया है।

फ्रांसीसी मत के अनुसार व्यवस्थापक-सभा में जो प्रतिनिधि चुन कर आते हैं, वे जिन क्षेत्रों से चुन कर आते हैं, सिर्फ़ उन क्षेत्रों के हितों के प्रतिनिधि नहीं होते हैं, देश भर के सम्मिलित हित के प्रतिनिधि होते हैं। इसी सिद्धांत पर ज़ोर देने के लिए ऐरोंडाइज़मेंट के छोटे-छोटे क्षेत्रों से सदस्य चुनने की प्रथा को सन १९१९ ई० में हटा कर डिपार्टमेंट के बड़े क्षेत्रों से बहुत-से सदस्यों को इकट्ठा चुनने की प्रथा क़ायम की गई थी, जिस से कि सदस्यों को तंग स्थानिक हितों का बहुत ख़्याल न रह कर सारे देश के हित का ही अधिक ख़्याल रहे। अमेरिका की तरह अपने सदस्यों की योग्यता-अयोग्यता का फ़ैसला करने का पूरा अधिकार दोनों सभाओं को दिया गया है। सभाएँ किसी बाक़ायदा चुने हुए सदस्य को सभा का सदस्य रखना उचित न समझें, तो वे उसे निकाल सकती हैं। जब कोई सदस्य दिवाला पिट जाने या और किसी वजह से सभा का सदस्य होने अथवा नागरिकता के अधिकारों को खो देता है, तब उस को निकालने या न निकालने या कब निकालने का सारा अधिकार उस सभा को होता है, जिस का वह सदस्य होता है। चेंबर ऑव् डेपुटीज़ के सदस्यों को वेतनवाले सरकारी पदों को स्वीकार कर लेने पर फ़ौरन् चेंबर से इस्तीफ़ा दे देना होता है। अगर उस पद पर रह कर भी वह क़ानूनों के अनुसार चेंबर का सदस्य रह सकता है, तो उसे फिर से चुनाव में खड़ा हो कर चेंबर में आना होता है। मंत्रियों और उप-मंत्रियों का इस प्रकार इस्तीफ़ा देने और इंगलैंड की तरह फिर से चुनाव में खड़ा होने की फ्रांस में ज़रूरत

नहीं होती है; क्योंकि उन के लिए यह नियम लागू नहीं रक्खा गया है। सिनेट के सदस्यों के लिए भी यह नियम लागू नहीं है और ये सरकारी नौकर होते हुए भी सिनेट के सदस्य हो सकते हैं। फ़्रांस जैसे प्रजातंत्र राज्य में सरकारी नौकरों को व्यवस्थापक-सभा की किसी सभा के सदस्य रहने का अधिकार होना आश्चर्य की बात है।

अगर किसी सदस्य को सभा से इस्तीफ़ा देना होता है, तो उस इस्तीफ़े पर वह सभा विचार करती है, जिस का वह सदस्य होता है। इंगलैंड की तरह व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों को सभा में अपनी इच्छानुसार बोलने और मत देने की पूरी स्वतंत्रता होती है। सभा में बोलने और मत देने के लिए किसी सदस्य पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है। सरकारी नीति और करतूतों का विरोध करनेवालों को सरकार के अत्याचार से बचाने के लिए फ्रांस की राज-व्यवस्था में यह शर्त भी रक्खी गई है कि व्यवस्थापक सभा की बैठकों के ज़माने में बिना सभा की राय के किसी सदस्य को किसी अपराध के लिए वारंट पर गिरफ़्तार नहीं किया जा सकता है। सभा चाहे तो अपनी पूरी अवधि तक भी सदस्य को गिरफ़्तार होने से रोक सकती है। अगर कोई सदस्य किसी अपराध के लिए वारदात के मौक़े पर ही पकड़ा जावे अथवा उस ने पुलिस के किसी नियमों का भंग किया हो, तो सभा उस में हस्ताक्षेप नहीं करती है। जिस ज़माने में सभा की बैठकें नहीं होती हैं, उस ज़माने में सदस्यों को अपराध के लिए मामूली नागरिकों की तरह बिना किसी रोक-टोक के पकड़ा जा सकता है। सिनेट और चेंबर दोनों के सदस्यों को ६०० पौंड सालाना का वेतन इंगलैंड की तरह राष्ट्रीय-कोष से दिया जाता है, जिस से ग़रीब आदमी भी जिन्हें रोटी कमाने की फ़िक्र रहती है, व्यवस्थापक-सभा के सदस्य बन सकें और देश पर शासन करने की शक्ति अमीरी का चोचला ही न बन जाय। इस वेतन को न लेने या लौटाने का अधिकार किसी को नहीं है, जिस से सदस्यों में ग़रीब-अमीर का भेद नहीं रहता है। सदस्यों को नाम-मात्र का किराया दे कर देश भर की रेलवे पर सफ़र करने का अधिकार भी होता है।

फ्रांस की व्यवस्थापक-सभा के भी दुनिया की अन्य व्यवस्थापक-सभाओं की तरह तीन काम मुख्य हैं—क़ानून बनाना, राष्ट्रीय आय-व्यय का निश्चय करना, और देश के शासन की देख-रेख करना। फ्रांस में क़ानूनी मसविदे व्यवस्थापक-सभा में पेश करने का अधिकार प्रजातंत्र के प्रमुख और सिनेट और चेंबर के सभी सदस्यों को होता है। प्रमुख की ओर से जो मसविदे पेश किए जाते हैं, वह वास्तव में मंत्रि-मंडल के मसविदे होते हैं और उन को प्रधान-मंत्री अथवा और कोई मंत्री सरकारी मसविदों के नाम से व्यवस्थापक-सभा में पेश करता है। बिना प्रमुख के हस्ताक्षर के कोई सरकारी मसविदा धारासभा में पेश नहीं हो सकता। मंत्रियों को अन्य सदस्यों की तरह अपनी ओर से निजी मसविदे पेश करने का अधिकार भी होता है, जिन को सरकारी मसविदे न मान कर साधारण सदस्यों के मसविदों की तरह निजी मसविदे माना जाता है। मगर मंत्री अपने इस अधिकार का उपयोग नहीं करते हैं। निजी मसविदे धारासभा में पेश होने से पहले सभा की एक समिति के पास विचार के लिए भेजे जाते हैं। अगर वह समिति उन मसविदों को पसंद नहीं करती है, तो छः महीने तक वह मसविदे व्यवस्थापक-सभा में पेश नहीं हो सकते हैं। फ्रांस में साधारण

सदस्यों को सरकारी और निजी दोनों मसविदों में संशोधन पेश करने और प्रस्ताव और नए मसविदे पेश करने का इतना अधिक अधिकार दिया गया है कि मंत्रि-मंडल का व्यवस्थापक-सभा पर, इंगलैंड की तरह अंकुश नहीं रहता है। क़ानून बनने के लिए हर एक मसविदे पर साधारण तौर से दोनों सभाओं में दो-दो बार पाँच दिन के अंतर से विचार होना चाहिए। जब तक दोनों सभाओं में, सदस्यों की बहु-संख्या किसी मसले पर मत देने में भाग नहीं लेती है, तब तक कोई मसला तय नहीं समझा जाता है। कुछ ख़ास बातों को छोड़ कर व्यवस्थापक-सभा की दोनों शाखाएँ सम्मान और शक्ति में बराबर की मानी जाती हैं, और दोनों का काम भी एक ही सा चलता है। दोनों सभाओं से जब तक कोई मसविदा एक ही सूरत में मंज़ूर हो कर नहीं निकलता है, तब तक वह क़ानून का रूप धारण नहीं कर सकता है। अक्सर दोनों सभाओं की राय मिलाने के लिए मसविदे इस सभा से उस सभा और उस सभा से इस सभा की यात्रा करते हैं। सरकारी मसविदों पर तो दोनों सभाओं की राय एक करना फ़्रांस में आसान होता है; क्योंकि मंत्री दोनों सभाओं में आ जा सकते हैं। मगर जब किसी निजी मसविदे पर राय का फ़र्क़ हो जाता है, तो दोनों सभाओं की एक सम्मिलित कमेटी के पास फ़ैसले के लिए मसविदा भेज दिया जाता है। कभी-कभी सरकारी मसविदों को भी इसी प्रकार की कमेटी के पास भेजने की भी नौबत आ जाती है।

क्रांति के बाद से राष्ट्रीय आय व्यय के संबंध में फ़्रांस में कुछ सिद्धांतों को, राज-व्यवस्था में ख़ास तौर पर न लिख कर भी अटल माना जाता है। वे सिद्धांत यह हैं—'प्रजा की राय अथवा उस के प्रतिनिधियों की राय बिना लिए कोई कर नहीं लगाया जायगा; एक साल से अधिक एक बार कोई कर स्वीकार नहीं किया जायगा; देश का धन केवल देश की राय से ख़र्च किया जायगा; प्रजा के प्रतिनिधि हर साल राष्ट्र की आयात-निर्यात का सरकार की सहायता से एक पत्रक तैयार करेंगे।' रुपए-पैसे के संबंध के सारे मसविदे जिस प्रकार इंगलैंड में निचली सभा हाउस ऑव् कामन्स में पहले पेश होते हैं, उसी प्रकार फ़्रांस में वे पहले चेंबर ऑव् डेपुटीज़ में आते हैं। इंगलैंड में कुछ कर स्थायी क़ानूनों के आधार पर लिए जाते हैं और बहुत-सा ख़र्च अनिश्चित समय के लिए मान लिया जाता है। मगर फ़्रांस में सारे कर साल भर के लिए ही लगाए जाते हैं और ख़र्च भी सिर्फ़ एक वर्ष के लिए ही मंज़ूर किया जाता है। चेंबर ऑव् डेपुटीज़ विभिन्न विभागों की तफ़सील देख कर उन के लिए ख़र्च तय कर देता है और कार्य-कारिणी के अधिकारियों को इस संबंध में इंगलैंड की तरह अधिक स्वतंत्रता नहीं छोड़ता है। हिसाब का साल पहली जनवरी से शुरू होता है। अक्तूबर या नवंबर से दूसरे साल पेश होनेवाले बजट के बनने की तैयारी शुरू हो जाती है अर्थात् जो बजट सन् १९३७ ई० में पेश होगा, उस का बनना सन् १९३५ ई० में शुरू हो जाता है। सारी मंत्रि-मंडली अपने विभागों की मदद से जो आमदनी और ख़र्च के अंक तैयार करती है, उन सब को मिला कर अर्थ-सचिव लगभग तीन हज़ार पृष्ठ का एक राष्ट्रीय आय-व्यय का बयान तैयार कर के चेंबर ऑव् डेपुटीज़ के सामने पेश करता है। चेंबर उस को ग्यारह ब्युरों के चार-चार प्रतिनिधियों की ४४ सदस्य की 'बजट-कमेटी' के पास विचार के लिए भेज देता है। यह कमेटी तीन-चार महीने की काफ़ी मेहनत के बाद चेंबर के

सामने आय-व्यय के इस बयान को संशोधित कर के पेश करती है, और फिर उस पर चेंबर में बहस होती है। पहले सारे बयान पर आम चर्चा चलती है, फिर एक-एक तफ़सील पर बहस होती है। सदस्यों को सब तरह के संशोधन करने की पूरी स्वतंत्रता होती है। बजट कमेटी से निकल कर और सदस्यों के संशोधनों के बाद अर्थ-सचिव के पास से आए हुए राष्ट्रीय आय-व्यय पत्रक की शक्ल अक्सर इतनी बदल जाती है, जितनी कि इंगलैंड में कभी नहीं बदल सकती। इंगलैंड में जिन खर्चों की माँग सरकार की ओर से नहीं की जाती है, उन को स्वीकार नहीं किया जाता है। फ़्रांस में ऐसा कोई नियम नहीं है। साधारण सदस्यों के संशोधनों से अक्सर बहुत-सा खर्च बढ़ तक जाता है। पहले हर एक तफ़सील पर बहस हो कर हर एक तफ़सील पर अलग-अलग मत लिए जाते हैं; फिर सारे मसविदे पर इकट्ठे मत ले लिए जाते हैं। कमेटी से निकल कर तीन-चार महीने तक आय-व्यय के मसविदे पर चेंबर में बहस चलती है। चेंबर में मंज़ूर हो जाने पर मसविदा अर्थ-सचिव के पास फिर जाता है, और उस को वह सिनेट में पेश करता है। वहाँ फिर उस पर चेंबर की तरह चर्चा चलती है। मगर सिनेट में इतना समय नहीं लगता है। फिर भी सिनेट बहुत सी ज़रूरी तबदीलियाँ करती है और चेंबर और सिनेट की राय मिलाने के लिए मसविदा इधर से उधर, उधर से इधर आता-जाता है और कमेटियाँ और कॉन्फरेंसें होती हैं। जिन बातों पर दोनों सभाओं की राय नहीं मिलती है, उन पर सभाओं में फिर से विचार किया जाता है। अंत में दोनों सभाओं की राय मिल जाने पर मसविदा पास हो कर क़ानून बनता है और प्रमुख के हस्ताक्षर हो कर उस पर साल की पहली तारीख से अमल शुरू हो जाता है। चेंबर को सारे बजट को अस्वीकार कर देने का हक़ होता है। मगर आज तक कभी चेंबर ने ऐसा किया नहीं है।

व्यवस्थापकी ढंग की सरकार क़ायम करने में फ़्रांस ने इंगलैंड की नक़ल की है। इंगलैंड के राजा की तरह फ़्रांस की सरकार की कार्यकारिणी का प्रमुख अर्थात् फ़्रांस प्रजा-तंत्र का प्रमुख किसी शासन-कार्य के लिए ज़िम्मेदार नहीं समझा जाता है। कार्यकारिणी का सारा काम मंत्री करते हैं। मंत्रियों को शासन की आम नीति के लिए सम्मिलित रूप से और खास कामों के लिए व्यक्तिगत रूप से व्यवस्थापक सभा के प्रति जवाबदार माना जाता है। सरकारी मसलों की हार हो जाने पर सब मंत्री एक साथ इस्तीफ़ा दे देते हैं। यह सब होते हुए भी फ्रांस की व्यवस्थापकी सरकार इंगलैंड की व्यवस्थापकी सरकार से भिन्न है। इंगलैंड में मंत्रियों की जवाबदारी का सिर्फ़ यह अर्थ होता है कि व्यवस्थापक-सभा उन के कामों पर कड़ी नज़र और देख-भाल रखती है। फ़्रांस की व्यवस्थापक-सभा मंत्रियों की लगाम खींच-खींच कर उन का नाक में दम किए रहती है। इंगलैंड की तरह फ़्रांस में केवल दो बड़े राजनैतिक दल भी नहीं हैं। वहाँ आठ-नौ राजनैतिक दल होने से किसी एक दल का मंत्रि-मंडल नहीं बन पाता है। हर मंत्रि-मंडल में कई दलों के मंत्रियों की खिचड़ी रहती है। दलों की आपस की कलह के कारण फ़्रांस में बड़ी जल्दी-जल्दी मंत्रि-मंडल बदलते रहते हैं। इंगलैंड में उन्नीसवीं सदी के बीच से पिछले यूरोपीय युद्ध के प्रारंभ तक सिर्फ़ बारह प्रधान मंत्री हुए थे। फ़्रांस में सिर्फ़ १६०० ई० से १६१४ ई० तक

बारह प्रधान मंत्री हो गए थे। इंगलैंड में सन् १८७३ से १६१४ ई० तक ग्यारह मंत्रि-मंडल हुए थे। फ्रांस में इसी समय में पचास हो गए थे। सन् १८७५ ई० से १६०० ई० तक फ्रांस में सिर्फ़ चार साल ऐसे बीते थे, जिन में कम से कम एक से अधिक मंत्रि-मंडल न बदला हो; और पचास में से सिर्फ़ चार मंत्रि-मंडल ऐसे हुए थे जो दो वर्ष से अधिक तक रहे।[1] बाक़ी सब मंत्रि-मंडल कुछ महीनों तक रह कर पानी के बबूलों की तरह उड़ गए। फ्रांस में मंत्रि-मंडलों की ज़िंदगी का औसत आठ मास से अधिक नहीं होता। इतना कम समय तक अधिकार में रहनेवाले मंत्रि-मंडलों को शासन की कोई नीति निश्चय करना कठिन हो जाता है। बहुत-सी ज़रूरी बातों का वर्षों तक निश्चय नहीं हो पाता है और जिन आदमियों को इंगलैंड में मंत्री बनाने का कोई स्वप्न भी नहीं देख सकता वे फ्रांस में मंत्रियों की गद्दी पर बैठ-बैठ कर चले जाते हैं। इंगलैंड में व्यवस्थापकी सरकार का धीरे-धीरे विकास हुआ है इस लिए वहाँ जलवायु के माफ़िक़ आने का कष्ट उसे नहीं उठाना पड़ा है। फ्रांस में यह पौदा एक दम समूचा लगा दिया गया है, इस लिए वहाँ उस से मीठे फल प्राप्त करने के लिए अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इंगलैंड का मंत्रि-मंडल क़ानून बनाने और शासन-कार्य दोनों में व्यवस्थापक-सभा को नाक पकड़ कर चलाता है। पार्लीमेंट मंत्रि-मंडल को शासन-कार्य के संचालन में पूरी आज़ादी देती है। परंतु फ्रांस की व्यवस्थापक-सभा शासन की नीति ही निश्चय करने के लिए उत्सुक नहीं रहती, बल्कि तफ़सीलों में भी बहुत दख़ल देती है—यहाँ तक कि अधिकारियों को नियुक्त करने, उन की तरक़्क़ी के हुक्म निकालने और दूसरी बहुत-सी बातों तक में टाँग अड़ाती है।

फ्रांस में व्यवस्थापक-सभा छोटी-छोटी बातों पर भी मंत्रियों को निकाल देती है। इंगलैंड में पार्लीमेंट में मंत्रियों से शासन संबंधी हाल जानने के लिए सदस्य सिर्फ़ प्रश्न पूछते हैं। मंत्री चाहते हैं तो प्रश्न का उत्तर देते हैं और उत्तर पा कर सदस्य चुप हो जाते हैं। फ्रांस में प्रश्न पूछने का ढंग कुछ और ही है। यहाँ मंत्री चाहें अथवा न चाहें, जब किसी सदस्य को कोई प्रश्न पूछना होता है तब उस के लिए समय निश्चित कर दिया जाता है और निश्चित समय पर प्रश्न पर चर्चा होती है। उत्तर के बाद सभा से इस बात पर मत लिए जाते हैं कि अगर सभा मंत्रियों के उत्तर से संतुष्ट हो गई हो तो दूसरा उस दिन का काम चलाया जाय। अगर सभा दूसरा काम चलाने की इच्छा प्रकट नहीं करती है तो मंत्रियों को इस्तीफ़ा दे देना पड़ता है। फ्रांस में मंत्रियों से इस प्रकार के प्रश्न सिर्फ़ शासन का हाल-चाल जानने के लिए ही नहीं पूछे जाते हैं; इस बहाने से वहाँ मंत्रि-मंडलों को गिराने का प्रयत्न किया जाता है। इंगलैंड में मंत्री के किसी उत्तर पर तब तक चर्चा नहीं हो सकती जब तक चालीस सदस्य मिल कर उस के लिए प्रार्थना न करें और ऐसी प्रार्थना कभी-कभी ही की जाती है। इंगलैंड में मंत्रि-मंडल और व्यवस्थापक-सभा की राय में भेद हो जाने पर मंत्रि-मंडल को हाउस ऑव् कामन्स को भंग कर के नया

---

[1] इस पुस्तक को लिखते-लिखते ही फ्रांस में तीन-चार मंत्रि-मंडल बने और बिगड़े।

चुनाव कराने का अधिकार होता है, जिस से मंत्रि-मंडल की कॉमन्स पर धाक रहती है। फ़्रांस में मंत्रि-मंडल प्रमुख द्वारा चेंबर ऑव् डेपुटीज़ को बिना सिनेट की राय के, भंग नहीं करा सकता। फ़्रांस में एक बार मंत्रि-मंडल ने चेंबर को इस प्रकार भंग कराया था उस समय इस सत्ता का इतना खुला दुरुपयोग हुआ था कि उस के बाद से, इस सत्ता का उपयोग ही अप्रिय हो गया। अस्तु, मंत्रि-मंडल की यह सत्ता फ़्रांस में मृतप्राय हो गई और फ़्रांस का मंत्रि-मंडल अक्षरशः व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार होता है। अगर मंत्रि-मंडल की बात व्यवस्थापक-सभा न माने तो व्यवस्थापक-सभा को भंग करा के राष्ट्र से अपने मत की सभा चुनने की विनती फ़्रांस का मंत्रि-मंडल नहीं कर सकता है। इंगलैंड का मंत्रि-मंडल व्यवस्थापक-सभा के सिर पर पैर रख कर राष्ट्र से अपने मत की व्यवस्थापक-सभा चुनने की विनती कर सकता है, क्योंकि वह अपने को राष्ट्र के मतदारों के प्रति ज़िम्मेदार मानता है। व्यवस्थापक-सभा के मतों पर नियत रहने से फ़्रांस का मंत्रि-मंडल इंगलैंड की तरह टिकाऊ और ज़ोरदार नहीं होता। एक अँगरेज़ लेखक ने तो यहाँ तक लिख मारा है कि फ़्रांस मुल्क व्यवस्थापकी सरकार के क़ाबिल ही नहीं है। मगर ऐसा कहना उचित नहीं है क्योंकि फ़्रांस में बिल्कुल इंगलैंड के ढंग की व्यवस्थापकी सरकार न होने पर भी व्यवस्थापकी सरकार अवश्य है। मंत्रि-मंडल फ़्रांस में अधिक टिकाऊ न होने पर भी वहाँ की सरकार बड़ी प्रजा-सत्तात्मक, सस्ती और बाअसर है। इस के दो कारण हो सकते हैं—एक तो वहाँ इंगलैंड की तरह हर विभाग में होशियार और दक्ष अधिकारी रहते हैं, जिस से काम पर मंत्रि-मंडलों के बदलते रहने पर भी अधिक असर नहीं पड़ता। दूसरे मंत्रि-मंडलों के बदलने पर भी बहुत से पुराने मंत्री लौट-फेर कर किसी न किसी विभाग के अधिनायक बन कर नए मंत्रि-मंडलों में आ जाते हैं। उदाहरणार्थ सन् १९३२ ई० में ब्रियाँ के राजनीति से अलग होने पर फ़्रांस में बड़ा दुख प्रकट किया गया था, क्योंकि जब तक ब्रियाँ राजनीति में भाग लेता रहा, तब तक फ़्रांस में कोई मंत्रि-मंडल उस के बिना पूर्ण नहीं समझा जाता था।

चेंबर ऑव् डेपुटीज़ को देश के रुपए-पैसे की थैली पर क़ब्ज़ा रखने का जिस प्रकार विशेष अधिकार है उसी प्रकार सिनेट के भी दो ख़ास अधिकार रक्खे गए हैं। एक तो सिनेट को प्रजातंत्र के प्रमुख की राय से चेंबर को भंग कर के नया चुनाव कराने का अधिकार है। दूसरा अधिकार अदालती है। जब चेंबर ऑव् डेपुटीज़ प्रजातंत्र के प्रमुख पर देशद्रोह अथवा मंत्रियों पर कुशासन का अपराध लगाता है, तो उन का मुक़दमा सिनेट की अदालत के सामने पेश होता है। प्रमुख और मंत्रियों के मुक़दमे सुनने के अतिरिक्त जब कोई नागरिक या नागरिकों का समूह राष्ट्र के प्रति द्रोह करने अथवा उस के अमन-चैन को भंग करने का प्रयत्न करता है तो भी प्रजातंत्र का प्रमुख मंत्रियों के हस्ताक्षर से अपना हुक्म निकाल कर उन लोगों के मुक़दमों का विचार करने के लिए सिनेट की अदालत बिठा सकता है। सन् १८८९ ई० और १८९९ ई० में दो बार इस प्रकार सिनेट की अदालत बैठ चुकी है। हर साल सिनेट अपने सदस्यों में से एक कमीशन चुन लेती है, जो ज़रूरत होने पर इस प्रकार के मुक़दमों की जाँच करता है।

५—स्थानिक शासन और न्याय-शासन

१—स्थानिक शासन

राजाओं के राज अथवा राजाशाही के ज़माने में फ्रांस सूबों में बँटा हुआ था। कोई सूबे छोटे थे, तो कोई इतने बड़े, जिन में आज कल के कई डिपार्टमेंट समा जायँ। यह सूबे पुरानी नवाबी के समय से नवाबों के क़ब्ज़े में थे। नवाब मनमाने कर लगाते थे और अपनी इच्छानुसार उन का शासन करते और फ़ौज रखते थे अर्थात् यह सूबे एक प्रकार की छोटी-छोटी रियासतों की तरह थे। नवाबों की इच्छा होती थी तो राजा का साथ देते थे और इच्छा नहीं होती थी तो राजा से बिगड़ भी जाते थे। राजा को अपने से उन्हें मिलाए रखने में बड़ी दिक़्क़त होती थी। बड़े धीरे-धीरे अपनी नवाबी क़ायम रखते हुए भी आपस में मिल कर फ्रांस को एक राष्ट्र बनाने की बात इन लोगों की समझ में आई। जब राजा की ताक़त बढ़ जाती थी तब वह कमज़ोर नवाबों को कुचल कर उन के सूबों पर अपने सूबेदार और अपनी सत्ता क़ायम कर देता था। राजा के सूबेदारों को ज़मीदारों, ताल्लुक़ेदारों, अमीर-उमरावों, महाजनों और पादरियों के ज़रिये से कर लगाने और वसूल करने के अधिकार होते थे। अक्सर यह सूबेदार भी इतने बलवान हो जाते थे कि राजा को उन पर दबाव रखना कठिन हो जाता था। पीछे बड़ी कठिनाइयों के बाद राजा के चुने हुए लोगों की सभाएँ इन सूबेदारों को शासन में सलाह और मदद करने के लिए क़ायम की जाने लगीं।

परंतु फ्रांस की क्रांति ने नवाबी को छिन्न-भिन्न कर दिया। सन् १७८९ ई० के व्यवस्थापक-सम्मेलन ने, जो फ्रांस की राज्य-व्यवस्था की पुनर्घटना करने के लिए बैठा था, इस बात का एलान किया, कि "अधिकार और सत्ता का जन्मदाता राष्ट्र है और कोई नहीं। फ्रांस में क़ानून का राज्य है और कोई क़ानून के ऊपर नहीं है।" व्यवस्थापक-सम्मेलन को यह भी भय था—और सच्चा भय था—कि बड़े-बड़े सूबे और उन पर शासन करनेवाले अधिकारी या सूबेदार क़ायम रहे तो फ्रांस को एक मज़बूत राष्ट्र बनाने के कार्यक्रम में बड़ी अड़चनों का सामना करना पड़ेगा। अस्तु, सभा ने पुराने सूबों को मिटा कर फ्रांस को लगभग बराबर के ऐसे ८३ भागों में बाँटा जिन में स्थानिक जीवन अर्थात् भाषा और रीति-रिवाज एक से थे। यहाँ तक कि पुराने सूबों की याद तक मिटा देने के लिए देश के इन नए विभागों के नाम स्थानिक नदियों, पहाड़ों और समुद्र के नामों पर रक्खे गए। इन्हीं विभागों को डिपार्टमेंट कहते हैं।

व्यवस्थापक-सभा ने डिपार्टमेंट के शासन का भार स्थानिक चुने हुए प्रतिनिधियों पर रक्खा था। उस ने ३६ स्थानिक प्रतिनिधियों की एक कौंसिल, आठ सदस्यों की एक डाइरेक्टरी और एक अधिकारी को शासन का काम सौंपा था। परंतु कुछ ही दिनों में मालूम हो गया कि इस प्रकार अधिकार बाँट देने से फ्रांस के स्थायी एकीकरण में कठिनाई होगी, इस लिए फ्रांस की उस समय की राष्ट्रीय क्रांतिकारी सरकार का एक अधिकारी भी डिपार्टमेंट में रक्खा गया। बाद में नेपोलियन ने डिपार्टमेंट के चुनावों को बंद

कर दिया और उन का शासन चलाने के लिए अपना एक अधिकारी प्रीफ़ेक्ट रक्खा। इस प्रीफ़ेक्ट को मदद और सलाह देने के लिए उस ने एक कौंसिल भी रक्खी। मगर यह कौंसिल बिल्कुल दिखावटी और खिलौना थी क्योंकि उस के सदस्यों को वह ख़ुद उन ज़मींदारों में से चुनता था, जो उस की नीति में हाँ में हाँ मिलानेवाले होते थे। सन् १८३० ई० की क्रांति के बाद कौंसिल चुनने का अधिकार फिर डिपार्टमेंट के मतदारों को दे दिया गया। मगर फिर भी मत देने का अधिकार सिर्फ़ पैसेवालों को रहने से सत्ता पूरी तरह से जनता के हाथ में आई। बाद में सन् १८४८ ई० की क्रांति सब को मताधिकार मिल जाने से डिपार्टमेंटों की कौंसिलें पूरी तरह से प्रजा की प्रतिनिधि बनीं और सन् १८७१ ई० में एक क़ानून बना कर फ्रांस की व्यवस्थापक-सभा ने डिपार्टमेंट को शासन के बहुत-से अधिकार दिए जो अभी तक क़ायम हैं।

अब हर डिपार्टमेंट की राजधानी में एक आलीशान इमारत पर फ्रांस का तिरंगा झंडा लहराता हुआ नज़र आता है और इस इमारत पर 'प्रीफ़ेक्चर' शब्द लिखे होते हैं। यह इमारत फ्रांस राष्ट्र या किसी व्यक्ति की संपत्ति नहीं होती बल्कि डिपार्टमेंट की मिलकियत होती है। इस में डिपार्टमेंट का सब से बड़ा अधिकारी प्रीफ़ेक्ट और उस के दफ़्तर रहते हैं। इसी में डिपार्टमेंट की कौंसिल का हॉल भी होता है।

प्रीफ़ेक्ट नाम का अधिकारी फ्रांसीसी सरकार का डिपार्टमेंट में प्रतिनिधि होता है। पेरिस से आनेवाले सारे सरकारी हुक्मों की तामील उसी के ज़रिए होती है। वह डिपार्टमेंट में सेना की भर्ती का ज़िम्मेदार, डिपार्टमेंट का ख़ज़ांची और पुलिस का मुख्य अधिकारी माना जाता है। कम्यूनों में रक्खी जानेवाली तमाम पुलिस की नियुक्ति वही मंज़ूर करता है। डिपार्टमेंट भर के स्कूलों और पाठशालाओं की देख-भाल और शिक्षकों की नियुक्ति भी वही करता है। दूसरे छोटे-छोटे सरकारी अधिकारियों को भी वही नियुक्त करता है। सरकार का डिपार्टमेंट में प्रतिनिधि होने के साथ-साथ प्रीफ़ेक्ट डिपार्टमेंट की कौंसिल का सरकार के प्रति एलची समझा जाता है। वह स्थानिक कौंसिल का सदस्य और उस का मुख्य अधिकारी होता है क्योंकि शासन के ज़रिये उस के हाथ में होने से कौंसिल के सारे काम उसी के द्वारा होते हैं। गृहमंत्री प्रीफ़ेक्ट को नियुक्त करता है और स्थानिक शासन गृहमंत्री का विभाग होने से वह गृहमंत्री के मातहत होता है। मगर दूसरे मंत्रियों को भी डिपार्टमेंट के सारे काम उसी के द्वारा कराने होते हैं। अस्तु कोई भी मंत्री उस के किसी काम की रोक-थाम कर सकता है। मगर जब तक उस को निकाल न दिया जाय तब तक उस के सिवाय और किसी के ज़रिये कोई मंत्री डिपार्टमेंट में कोई काम नहीं करा सकता। जो सरकारी हुक्म पेरिस से प्रीफ़ेक्ट के पास आते हैं, उन में अपनी बुद्धि न घुसेड़ कर उसे जैसे के तैसे पालन करने होते हैं। मगर स्थानिक शासन में अपनी बुद्धि चलाने का उसे बहुत कुछ मौक़ा रहता है। अदालत में मुक़दमा चलाने या सरकार में अर्ज़ी भेजने के अतिरिक्त उस का हाथ स्थानिक शासन में कोई नहीं रोक सकता। वही डिपार्टमेंट का बजट तैयार करता है और दूसरा काम-काज कौंसिल के सामने पेश करता है। अस्तु, कौंसिल जो कुछ भला-बुरा करती है वह बहुत कुछ उसी पर निर्भर रहता है। डिपार्टमेंट की किसी कम्यून की

बैठक को एक मास तक बंद करने और किसी मेयर को एक मास के लिए बर्खास्त करने का अधिकार उसे होता है। मेयर जिन पुलिसवालों को रखता है उन की नियुक्ति भी वही स्वीकार करता है। बाज़-बाज़ डिपार्टमेंट में बड़ी-बड़ी कम्यूनें और उन के चुने हुए अधिकारी भी होते हैं। मगर उन की पुलिस पर भी प्रीफ़ेक्ट का अधिकार होता है। कम्यून के अधिकारियों के पास प्रीफ़ेक्ट अपने ख़ुद हुक्म निकाल कर भी तामील के लिए भेज सकता है और कम्यून की जिन कार्रवाइयों को वह ग़ैर-क़ानूनी समझे उन को रोक सकता है। जब उस के कामों पर कौंसिल में विचार होता हो तब न जा कर दूसरे सब मौक़ों पर वह कौंसिल की बैठकों में भाग ले सकता है। डिपार्टमेंट से चुने जानेवाले चेंबर और सिनेट के सदस्यों से अच्छा संबंध बनाए रखना पड़ता है क्योंकि उन की और गृहमंत्री की राय पर उस की नौकरी निर्भर होती है। फ्रांस की सरकार का रुझान स्थानिक शासन का दायरा दिन-दिन बड़ा करने की तरफ़ है। इस लिए हर तरह से प्रीफ़ेक्ट को स्थानिक नेताओं की सलाह से काम करना होता है और वह वहाँ नौकरशाही नहीं जमा पाता।

कौंसिल-जनरल—डिपार्टमेंट में प्रीफ़ेक्ट सरकार का प्रतिनिधि माना जाता है और उस के मुक़ाबिले में प्रजा के प्रतिनिधि डिपार्टमेंट की 'कौंसिल-जनरल' के सदस्य होते हैं। एक-एक कैंटन[1] से सार्वजनिक मत से एक-एक सदस्य कौंसिल-जनरल में चुन कर आता है। किसी डिपार्टमेंट में कम किसी में अधिक, जितनी जिस डिपार्टमेंट में कैंटनों की संख्या होती है उतने सदस्य उस डिपार्टमेंट की कौंसिल-जेनरल में होते हैं। सदस्य होनेवाला २५ वर्ष के ऊपर, डिपार्टमेंट में रहनेवाला और सीधा सरकार को कर देनेवाला होना चाहिए। कुछ सरकारी नौकर सदस्य नहीं हो सकते। सदस्यों का चुनाव छः वर्ष के लिए होता है, और हर तीसरे साल आधे सदस्यों का चुनाव होता है। उन को कोई भत्ता नहीं दिया जाता। सदस्य बनने की इज्ज़त ही उन के लिए काफ़ी समझी जाती है। यही सदस्य डिपार्टमेंट से आनेवाले सिनेट के सदस्यों के चुनाव में भाग लेते हैं। इस के सिवाय राष्ट्रीय राजनीति से इन सदस्यों का दूसरा कोई संबंध नहीं होता। डिपार्टमेंट के चुनाव के झगड़े 'स्टेट कौंसिल' के सामने फ़ैसले के लिए जाते हैं।

हर साल कौंसिल-जनरल की दो बैठकें होती हैं। दोनों बैठकों का समय क़ानून से तय कर दिया गया है—एक का पंद्रह दिन के लिए, दूसरी बैठक का महीने भर के लिए। दो तिहाई सदस्यों की लिखित प्रार्थना आने पर प्रजातंत्र का प्रमुख अथवा प्रीफ़ेक्ट आठ दिन की ख़ास बैठक भी बुला सकते हैं। अगर कौंसिल अपने क़ानूनी समय से अधिक बैठे तो प्रीफ़ेक्ट उस को भंग कर सकता है। अगर कौंसिल अपने क़ानूनी कामों से आगे बढ़ कर कोई काम करती है तो प्रमुख उस काम को अपने हुक्म से रद्द कर सकता है। सदस्यों को काम में लापरवाही करने या सभा में ग़ैर-हाज़िर रहने पर दंड भी दिया जा सकता है। पहली बैठक में आम शासन के काम-काज का विचार होता है। महीने

---

[1] चुनाव का क्षेत्र कैंटन कहलाता है।

भर की दूसरी बैठक में प्रीफ़ेक्ट के पेश किए हुए डिपार्टमेंट के बजट और हिसाब-किताब पर विचार होता है। इन बैठकों में सदस्यों को प्रीफ़ेक्ट और दूसरे विभागों के मुख्य अधिकारियों से हाल जानने के लिए ज़बानी और लिखित सवाल पूछने और उत्तर पाने का हक़ होता है। देख-भाल और पूछ-ताछ करने की ताक़त कौंसिल को अधिक होती है, प्रस्ताव करने की ताक़त कम होती है। जो कर चेंबर ऑव् डेपुटीज़ तय करता है उसी के एक भाग का उपयोग करने का अधिकार कौंसिल को होता है। किसी तरह के नए कर लगाने का अधिकार कौंसिल-जनरल को नहीं होता है। खर्च करने के बारे में भी कौंसिल जो निश्चय करती है उस की मंज़ूरी प्रजातंत्र के प्रमुख के हुक्म से होती है। कौंसिल का काम खास कर शासन का निरीक्षण और देख-रेख करना माना जाता है; शासन का कार्य-क्रम रचना नहीं। कौंसिल अपने-अपने अधिकारियों, स्कूलों और अदालतों के काम में आनेवाली इमारतों को किराए पर लेने, उन को अच्छी तरह रखने, पुलिस की तनख्वाह देने, मतदारों की सूचियाँ बनवाने और छपाने का खर्च करने, सड़कों, रेल, पुल और दूसरे डिपार्टमेंट के सार्वजनिक उपयोगी चीज़ों को बनवाने और ठीक रखने और पागलखानों, दवाखानों और ग़रीबों के मदद करने का काम करती है। डिपार्टमेंट के खर्च के लिए चेंबर ऑव् डेपुटीज़ जो कर तय करता है उस को कौंसिल-जेनरल ऐरोंडाइज़मेंटों में बाँटती है। हमारे देश में जो काम ज़िला बोर्ड करते हैं उन सारे कामों को और कुछ ज़िला मजिस्ट्रेट के कामों तथा कुछ और थोड़े-से कामों को फ्रांस में डिपार्टमेंट की कौंसिल-जेनरल करती है। कौंसिल की बैठकों के समय को छोड़ कर, और सब समय प्रजातंत्र के प्रमुख को, कारण बतला कर, कौंसिल को भंग कर देने का अधिकार होता है। कौंसिल राजनैतिक प्रश्नों पर विचार करने के लिए नहीं होती। अस्तु, जब कभी कौंसिल के सदस्य किसी राजनैतिक प्रश्न पर गरम होने लगते हैं तो प्रीफ़ेक्ट उन्हें धीरे से क़ानून की याद दिला देता है। फिर भी उस की बात न सुन कर, अगर कौंसिल किसी राजनैतिक प्रश्न पर अपना मत प्रगट करती है तो उस से प्रीफ़ेक्ट के काम पर कुछ असर नहीं पड़ता। कौंसिल साल भर में बहुत थोड़े से समय के लिए बैठती है। अस्तु, यह अपनी ग़ैर-हाज़िरी में प्रीफ़ेक्ट को सलाह और मदद देने के लिए, अपने सदस्यों का एक कमीशन चुन लेती है, जिस की बैठकें हर महीने होती हैं। कहा जाता है कि, "कौंसिलों पर सरकारी अंकुश बहुत रहता है; और उन से अधिक काम नहीं लिया जाता है। कोशिश करने से यह कौंसिलें अधिक काम की बन सकती हैं।"

ऐरोंडाइज़मेंट—डिपार्टमेंटों को ऐरोंडाइज़मेंटों में बाँटा गया है। यही ऐरोंडाइज़मेंट ही पुराने ज़िले थे। इन में एक नायब प्रीफ़ेक्ट शासन का काम चलाने के लिए रहता है। डिपार्टमेंट की तरह, एक-एक कैंटन से एक-एक चुने हुए प्रतिनिधियों की, एक कौंसिल यहाँ भी होती है। इस कौंसिल को बजट वग़ैरह बनाने का कोई काम नहीं करना होता। न मालूम हमारे देश के कमिश्नरों की तरह फ्रांस के स्थानिक शासन में यह पाँचवाँ पहिया गाड़ी में क्यों लगाया गया है? बहुत ज़माने से ऐरोंडाइज़मेंटों को तोड़ने की बातें होती हैं। मगर शायद स्थानिक जनमत अभी तक इस बात की तरफ़ इतना नहीं हो पाया है

कि इस काम में हाथ लगाया जा सके।

कैंटन—कैंटन सिर्फ़ चुनाव के लिए एक सहूलियत का क्षेत्र है जहाँ से कौंसिल-जनरल' और ऐरोंडाइजमेंट की कौंसिलों के लिए सदस्य चुने जाते हैं। केंटन में एक छोटा न्यायालय भी रहता है।

कम्यून—डिपार्टमेंट नाम के विभागों की जन्मदात्री फ्रांस की 'नेशनल ऐसेंबली' थी। यह क्षेत्र देश की सरकार का शासन अच्छी तरह चलाने के लिए बनाए गए थे। परंतु कम्यून नाम के क्षेत्र भारतीय गाँवों की तरह वे ईंटे और पत्थर हैं जिन से फ्रांसीसी राष्ट्र का निर्माण हुआ है। फ्रांस के गाँव और नगर हमारे देश के गाँव और बहुत से नगरों की तरह बड़े पुराने काल से चले आते हैं। जो मकान और झोपड़े आजकल दिखाई पड़ते हैं वे अधिक से अधिक डेढ़ या दो सौ वर्ष पहले के नहीं होंगे। मगर इन मकानों और झोपड़ों के स्थान पर दूसरे रहने के स्थान थे; और उन से पहिले और दूसरे। इसी प्रकार और आगे खोज करें तो और और बहुत काल तक पीछे चले जाने पर भी किसी न किसी तरह के रहने के घरों का पता चलता है। फ्रांस के लोग बहुत काल से खेती-बारी और पशु-पालन का काम करते आए हैं। हमारे देश की तरह उन लोगों के पूर्वजों ने भी नदी, नालों, चश्मों, पहाड़ियों के पास अच्छी सुभीते की जगहें देख देख कर, रहने के स्थान बनाए थे। अपनी रक्षा के लिए अक्सर इन रहने के स्थानों के चारों ओर वे पत्थर और चूने की चहारदीवारियाँ भी बना लेते थे। सब मिल कर अपने गाँव की समस्याओं पर विचार करते थे और मिलकर गाँव की व्यवस्था चलाते थे। हर गाँव में मज़बूत पंचायतें थीं, और पंचायती व्यवस्था चलती थी। उसी प्रकार नगरों में भी कारीगरों और दूसरे काम करनेवालों ने व्यवस्था चलाने के लिए पंचायतें बना ली थीं। इन्हीं का नाम फ्रांस में पीछे से कम्यून पड़ा। देश भर में इस प्रकार के हज़ारों कम्यून थे। बारहवीं सदी में किसानों और मजदूरों ने जमीदारों और सरदारों की ग़ुलामी से अपने को मुक्त करने के लिए सर उठाया तो देश भर में मारकाट छिड़ गई जो बहुत दिनों तक क़ायम रही। कभी कोई कम्यून जीत कर राजा से अपनी व्यवस्था स्वय चलाने का अधिकार ले लेती थी, तो कभी कोई कम्यून हार कर और भी ग़ुलामी में जकड़ जाती थी। कम्यूने अपना शासन चलाने के लिए एक अधिकारी भी चुन लेती थीं जिस को वह मेयर कहती थीं। धीरे-धीरे कम्यूनों की ताक़त बहुत बढ़ गई। अस्तु, चौदहवीं सदी से निरंकुश राजाओं ने उन की ताक़त घटाने के लिए उन पर हमले शुरू किए जो अठारवीं सदी तक जारी रहे।

राज्य-क्रांति के बाद व्यवस्थापक-सम्मेलन के बैठने के समय इन कम्यूनों की ताक़त खत्म हो रही थी। परंतु व्यवस्थापक-सम्मेलन ने फ्रांस का राष्ट्रीय जीवन गढ़ने के लिये कम्यूनों को उतना ही जरूरी समझा जितना किसी इमारत को बनाने के लिए ईंटें जरूरी होती हैं। अस्तु, व्यवस्थापक-सम्मेलन ने फ्रांस को ४४००० कम्यूनों में बाँट देने का निश्चय किया। फ्रांस की आबादी को देखते हुए यह संख्या अधिक थी। इस लिए पीछे से संख्या घटा दी गई और अब फ्रांस में क़रीब ३६२२५ कम्यूनें हैं। सन् १६१८ ई०

में क़रीब ३६२२६ कम्यूनें थीं जिन में से अधिकतर की आबादी १५०० से कम थी—बहुतों की तो ५०० से भी कम थी। ११७ कम्यूनें ऐसी भी थीं जिन की आबादी बीस हज़ार से अधिक थी। पेरिस और लियौं नगरों को छोड़ कर दूसरे सारे शहरों की भी कम्यूनें हैं। कम्यूनों की संख्या आबादी के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है। जिन कम्यूनों की आबादी बढ़ जाती है वह दो में बँट जाती हैं, जिन की कम हो जाती है वह दूसरों में मिल जाती हैं। कम्यूनों की हैसियतों में भी बहुत काल से फ़र्क़ चला आता था। पहले 'अच्छा क़सबा' आता था, फिर क़स्बा, फिर हाट, और हाट के बाद गाँव। व्यवस्थापक-सम्मेलन ने इस भेद को भी मिटा दिया और सब कम्यूनों की क्रांति के समय की 'समता' की दुहाई पर, एक हैसियत मान ली गई और सभी कम्यूनों को एक-एक कौंसिल और एक-एक मेयर चुनने का और बहुत-सा शासन का काम चलाने का एक-सा अधिकार दे दिया गया। सर्व-साधारण को स्वतंत्रता और सत्ता देने के जोश में व्यवस्थापक-सम्मेलन ने कम्यूनों को कुछ ऐसे अधिकार भी दे दिए, जो वास्तव में राष्ट्रीय सरकार को होने चाहिए थे। उस का नतीजा यह हुआ कि उन अधिकारों का दुरुपयोग हुआ जिन को बाद में कन्वेंशन ने रोकने के प्रयत्न किए। परतु वे प्रयत्न अधिक सफल नहीं हुए। व्यर्थ की गड़बड़ मच गई और कम्यूनों का भाग्य फिर अधर में लटकने लगा। अंत में नेपोलियन के हाथ में सत्ता आते ही कम्यूनों का भी यही हाल हुआ, जो डिपार्टमेंटों का हुआ। उस ने कम्यूनों की सारी स्वतंत्रता छीन ली और मेयर और कौंसिल के सदस्यों को वह स्वयं या उस के अधिकारी नियुक्त करने लगे। स्वतंत्रता के साथ-साथ उस ने कम्यूनों की समता को भी नष्ट कर दिया। 'अच्छे क़स्बों' को फिर से जिलाया गया और बहुत से कम्यूनों के मेयरों का ख़िताब 'बेरन' कर दिया गया। सन् १८३० ई० की क्रांति के बाद फिर से कम्यूनों को जिलाने का प्रयत्न शुरू हुआ और सन् १८४८ की क्रांति के बाद ६००० की आबादी से छोटी कम्यूनों के मतदारों को अपनी कौंसिल और मेयर चुनने के अधिकार मिले। बाद में दूसरे साम्राज्य ने कम्यूनों को फिर दबा दिया और तीसरे प्रजातंत्र ने उन को फिर जीवित किया। पीछे से राष्ट्रीय सरकार और स्थानिक संस्थाओं के अधिकारों को अलग कर दिया गया और तब से पेरिस और लियौं के नगरों को छोड़ कर फ़्रांस भर में कम्यूनों का शासन चलता है।

फ़्रांस के हर गाँव, हाट, क़स्बे और शहर में एक इमारत मिलेगी, जो सब नागरिकों की इमारत है। इस पंचायती इमारत में ग़रीब-अमीर सभी जा आ सकते हैं। इसी में मेयर की अध्यक्षता में कम्यून की पंचायत बैठती है। कम्यून का चुनाव २१ वर्ष के ऊपर के सारे नागरिक दूसरे चुनावों की तरह लगभग उन्हीं शर्तों पर करते हैं। जो आदमी दूसरे चुनाओं के लिए खड़े हो सकते हैं, वह कम्यून के लिए भी खड़े हो सकते हैं। मगर ५०० की आबादी की एक ही कम्यून में बाप, बेटे, दादे, नाती, भाई, बहनोई क़ानून के अनुसार एक साथ सदस्य नहीं हो सकते हैं क्योंकि किसी कम्यून को किसी एक कुनबे की चीज़ बना देना उचित नहीं समझा गया है। मगर न जाने क्यों क़ानून ने घरों के चाकरों को कम्यून के लिए खड़े होने का अधिकार नहीं दिया है। कम्यून की बैठकें साल भर में चार बार साधारण तौर पर होती हैं। मेयर और प्रीफ़ेक्ट ख़ास बैठकें भी बुला सकते हैं। कम्यूनों में

जो चर्चा चलती है, वह एक रजिस्टर पर लिख ली जाती है और उस पर सारे सदस्यों के दस्तख़त रहते हैं। इस कार्रवाई के रजिस्टर और बजट के देखने या नक़ल करने का हक़ सर्वसाधारण के होता है। सर्वसाधारण से कम्यून की कार्रवाई गुप्त नहीं रक्खी जाती। हर नागरिक को कम्यून की कार्रवाई के जानने का अधिकार होता है। कम्यून के उन सब प्रस्तावों पर जो क़ानून के ख़िलाफ़ नहीं होते हैं, अधिकारियों के अमल करना होता है। मगर बहुत से प्रस्तावों पर अमल करने के लिए प्रीफ़ेक्ट या उन से अधिक ज़रूरी पर सरकार की, और उन से भी अधिक ज़रूरी पर व्यवस्थापक-सभा की राय ले लेने की क़ैद रक्खी गई है। कौंसिल के अस्पताल वग़ैरह का हिसाब भी देना होता है और सिनेट के सदस्यों के चुनने के लिए प्रतिनिधि चुनने होते हैं।

दूसरे साम्राज्य के ज़माने में निरंकुशता के प्रतिनिधि मेयरों का रोब बढ़ाने के लिए उन के चमकीली-दमकीली पोशाकें दी गई थीं। सफ़ेद ज़री के काम का एक नीला कोट जिस के कालर पर एक वृक्ष की शाखा का चित्र होता था, एक सफ़ेद जाकेट, एक टोप जिस में काले पर लगे होते ही थे और सीप की मूठ की एक तलवार हर कम्यून के मेंबर के दी जाती थी। आज कल वह सिर्फ़ ज़रूरत के वक्त अपनी शक्ति का चिह्न-स्वरूप एक तिरंगा फेंटा बाँध लेते हैं। मेयर और उस के नीचे काम करने वालों के कौंसिल के सदस्यों में से कौंसिल चुनती है। मेयर जनता के लिए कौंसिल की प्रतिमा और कम्यून के लिए सरकार की प्रतिमा होता है। वह कम्यून के प्रस्तावों के कार्य में परिणत करता है, कम्यून के नौकरों के नियुक्त करता है, कम्यून की तरफ़ से सब ज़रूरी काग़ज़ों पर सही करता है और अगर कम्यून पर कोई मुक़दमा चलता है, तो उस की तरफ़ से अदालत में हाज़िर होता है। वही गाँव में शांति और स्वास्थ्य क़ायम रखने और जान-माल के सुरक्षित रखने का ज़िम्मेदार होता है। इस संबंध में वह नियम निकालता है और जो उन नियमों को भंग करता है, उस पर अदालत जुर्माना करती है। सड़कों पर पानी छिड़कने, कीचड़ हटाने, रास्ते झाड़ने, कुत्तों के न छोड़ने, खिड़की से कूड़ा न फेंकने, गाड़ियाँ न भगाने वग़ैरह के बहुत से नियम वह बनाता है। लोगों की ज़िंदगी, स्वास्थ्य, शांति और नींद तक पर वह नज़र रखता है। अगर कहीं आग लग जाती है या कभी अहला आ जाता है, तो वह गाँव के सब लोगों से मदद लेने का अधिकारी होता है। लोगों के घोड़े, गाड़ियाँ, हथियार सब कुछ वह ज़रूरत पड़ने पर माँग सकता है। ऐसे मौक़ों पर वह 'जनहित के अवतार' का स्वरूप धारण कर लेता है और व्यक्तिगत हितों के उस के सामने सिर झुका देना पड़ता है। सरकार के प्रतिनिधि की हैसियत से वह क़ानूनों का एलान और पालन कराता है। अपराधियों के खोजने और पकड़ने में वह न्यायालयों की मदद करता है। कोई फ़िसाद हो जाय, तो पुलिस, गाँव और जंगलों के चौकीदारों और फ़ौज तक के ज़रूरत होने पर मदद के लिए बुलवा सकता है। विवाह, जन्म, मृत्यु के काग़ज़ों पर उस की गवाही के दस्तख़त होते हैं। प्रीफ़ेक्ट की मर्ज़ी से कम्यून अपना बजट भी बनाती है।

(२) न्याय-शासन

शासकी अदालतें : कौंसिल ऑव् स्टेट—फ्रांस में जो मुक़दमे सरकारी शासन के संबंध में होते हैं उन की सुनवाई न्याय-मंत्री के विभाग के साधारण न्यायालयों में नहीं होती है बल्कि गृहमंत्री के विभाग की शासकी अदालतों में होती है। फ्रांस में सार्वजनिक क़ानून, जिस से सरकारी शासन की कार्रवाई का संबंध होता है और वैयक्तिक-क़ानून, जिस से साधारण व्यक्तियों के एक-दूसरे से संबंध का ताल्लुक़ होता है, दोनों में बहुत भेद माना गया है। नागरिकों के एक-दूसरे से झगड़ों को साधारण न्याय की अदालतें तय कर सकती हैं। मगर जो झगड़े नागरिकों और सरकार के शासन में होते हैं, जिन में सरकारी अधिकारों पर हमला होता है, उन का फ़ैसला ख़ास शासकी अदालतों में होता है। सब से बड़ी शासकी अदालत को 'कौंसिल ऑव् स्टेट' कहते हैं। इस में मंत्री और कुछ दूसरे शासन के बड़े अधिकारी न्यायाधीश का काम करते हैं। शासन-संबंधी बातों की यह आख़िरी अदालत होती है, अर्थात् दूसरी अदालतों में मुक़दमा हो चुकने के बाद यहाँ अपीलें आती हैं। शासन-संबंधी जो मामले इस के पास सलाह के लिए भेजे जाते हैं उन पर अपनी राय व्यवस्थापक-सभा को भेजना भी इस का काम होता है।

प्रीफ़ेक्ट की कौंसिल—कौंसिल ऑव् स्टेट के नीचे चार अदालतें होती हैं। एक 'प्रीफ़ेक्ट की कौंसिल', दूसरी 'अपीलों की अदालत', तीसरी 'सार्वजनिक शिक्षा की बड़ी अदालत'[1], और चौथी 'हिसाब-जाँच अदालत'[2]। यह चारों अदालतें आपस में एक-दूसरे से नीचे दर्जे की नहीं होती हैं। सब कौंसिल ऑव् स्टेट के नीचे होती हैं। प्रीफ़ेक्ट की कौंसिल इन सब में ज़रूरी होती है। उस का प्रीफ़ेक्ट से बहुत संबंध रहता है। ऐरोंडाइज़मेंट और कम्यून की कौंसिलों के चुनाव के झगड़ों का फ़ैसला यह अदालत करती है। सरकार और नागरिकों के बीच के सारे झगड़े भी पहले इसी अदालत के सामने लाए जाते हैं। इस अदालत के फ़ैसले दूसरी अदालतों से जल्दी हो जाते हैं और उन में साधारण न्याय की अदालतों से पैसा भी कम ख़र्च होता है। इस अदालत के लगभग हर एक फ़ैसले की अपील स्टेट कौंसिल में की जा सकती है। प्रीफ़ेक्ट का इस अदालत से संबंध रहता है, मगर उस पर उस का कुछ ज़ोर या दबाव नहीं रहता है। इस अदालत के जज स्थायी होते हैं और उन में से कम से कम एक को शासन का अच्छा अनुभव होता है। जजों को राष्ट्रीय सरकार नियुक्त करती है और उन को किसी अपराध पर ही निकाल सकती है।

साधारण न्यायालय—फ्रांस की सब से बड़ी न्याय की अदालत 'सेसेशन कोर्ट' है। वह पेरिस में बैठती है और उस में दूसरे साधारण न्यायालयों से आनेवाली अपीलें सुनी जाती हैं। इस अदालत के नीचे २३ अदालतें अपील सुनने के लिए और होती हैं, जिन के हर एक के अधिकार की सीमा में कई डिपार्टमेंट आ जाते हैं। उन डिपार्टमेंटों के

[1] 'सुपीरियर कौंसिल ऑव् पब्लिक इन्स्ट्रक्शन।' [2] 'कोर्ट ऑव् आडिट।'

एरोंडाइज़मेंटों के मुख्य नगरों में बैठनेवाली अदालतों की सारी अपीलें पहले यहाँ आती हैं। ऐरोंडाइज़मेंट में बैठनेवाली अदालतें कैंटन के 'जस्टिस ऑव् दि पीस' की अदालत से आए हुए मुक़दमों पर विचार करती हैं। राष्ट्र की रक्षा से संबंध रखनेवाले मुक़दमों का विचार सिनेट के सामने होता है। सारे जजों को न्यायमंत्री प्रजातंत्र के प्रमुख के हस्ताक्षरों से नियुक्त करता है। और सिवाय 'जस्टिस ऑव् दि पीस' के—जिन को प्रमुख अपनी इच्छा से निकाल सकता है—इन जजों को बिना क़सूर के निकाला नहीं जा सकता है।

जूरी की अदालतें—साधारण अदालतों में फ्रांस में इंगलैंड की तरह जूरी नहीं बैठती। जज ही सारी बातों का फ़ैसला करता है। मगर साल में चार बार हर डिपार्टमेंट में जूरी की खास अदालतें बैठतीं हैं और उन के सामने फ़ौजदारी के मुक़दमे और राजनैतिक और अख़बारी अपराधों की सुनवाई होती है। मुलज़िमों को अपराधी ठहराने या न ठहराने का पूरा अधिकार जूरी को होता है। जज सिर्फ़ सज़ा तय करता है।

झगड़ों की अदालत[1]—यह अदालत इस बात का फ़ैसला करती है कि कौन-सा मुक़दमा साधारण न्यायालय में और कौन-सा शासकी अदालत में जाना चाहिए। इस अदालत के न्यायाधीश तीन स्टेट कौंसिल के चुने हुए प्रतिनिधि और तीन मेशन कोर्ट के चुने हुए प्रतिनिधि होते हैं और उन का अध्यक्ष बन कर न्यायमंत्री बैठता है।

६—राजनैतिक-दल

फ्रांस की राजक्रांति के बिल्कुल प्रारंभ में ही फ्रांस के राजनैतिक क्षेत्र में एक ऐसा दल खड़ा हो गया था जिस का उद्देश्य राजाशाही को नाश कर के फ्रांस में प्रजातंत्र राज्य की स्थापना करना था। तब से फ्रांस में तीसरे प्रजातंत्र की स्थापना होने तक राजनैतिक दलों का आपस में झगड़ा बराबर इसी एक प्रश्न पर होता था। प्रजातंत्रवादी और राजतंत्रवादी दोनों में से कोई भी दल कभी इंगलैंड की तरह एक सुसंगठित और टिकाऊ दल नहीं बना सका। मगर जब कभी व्यवस्थापक-सभा के अंदर अथवा बाहर झगड़ा उठता था तब उस की जड़ में खास तौर पर यही एक विचार होता था। प्रजातंत्रवादियों की सन् १७९२ ई० और सन् १८४८ ई० में जीत होने पर उन्हों ने दोनों बार राजाशाही को हटा कर प्रजातंत्र की स्थापना की। उन के स्थापित किए हुए प्रजातंत्र अधिक दिन तक क़ायम न रह सके परंतु प्रजातंत्रवादी अवश्य बढ़े। सन् १८७१ ई० की 'नेशनल ऐसेंबली' में प्रजातंत्रवादियों की संख्या से राजतंत्रवादियों की संख्या ढाई गुनी के क़रीब अधिक थी। मगर जिस प्रकार राजतंत्रवादी असंगठित थे उसी तरह प्रजातंत्रवादी। प्रजातंत्रवादी ज़रा राजतंत्रवादियों से कम असंगठित थे; फिर भी उन में तीन दल थे। एक प्रख्यात गैंबेटा के गरम प्रजातंत्रवादियों की टोली थी; दूसरी लूबेट के अनुयायिओं की एक टुकड़ी थी; तीसरे थीयर्स के मध्यस्थ प्रजातंत्रवादी थे। राजतंत्र-वादियों के घोर विरोध के खतरे के सामने भी यह लोग आपस में मिल नहीं

[1] 'ट्रिब्यूनल आव् कन्फ्लिक्ट्स।'

पाते थे। इसी वजह से सन् १८७३ ई० में थीयर्स को प्रमुख पद पर से हटा कर राजतंत्रवादी मार्शल मेकमोहन को प्रजातंत्र का प्रमुख बनाने में राजतंत्रवादी सफल हुए।

मगर राजतंत्रवादी भी आपस में मेल न कर सके जिस के फलस्वरूप आखिरकार प्रजातंत्र की राज-व्यवस्था जैसा प्रारंभ में बताया ही जा चुका है पास हो गई। सन् १८७६ ई० के चुनाव में सिनेट में राजतंत्रवादियों की बहुसंख्या आई और वह सन् १८८२ तक क़ायम रही। मगर 'चेंबर ऑव् डेपुटीज़' में शुरू ही से प्रजातंत्रवादी राजतंत्रवादियों से दुगने थे। पहले तो राजतंत्रवादी यही ख्वाब देखते रहे कि प्रजातंत्र को उखाड़ कर वे फिर से राजाशाही क़ायम कर सकेंगे। उन में से कितने ही लोगों ने इस के लिए बहुत-सा प्रयत्न भी किया। मगर बाद में धीरे-धीरे वे ठंडे पड़ गए। कुछ तो उन में से प्रजातत्र के पक्षपाती बन गए और शेष राजतंत्रवादी न बन कर 'अनुदार' कहलाने लगे। चेंबर के प्रजातंत्रवादी दलों में से गैंबेटा का सब से बड़ा दल उस के मरने के बाद प्रजातंत्रवादियों से अलग हो कर गरम दल कहलाने लगा। सन् १८८५ ई० के चुनाव में इस दल के १५० सदस्य चेंबर में चुन कर आए थे जिन की बिना सहायता के प्रजातंत्रवादियों को सरकार पर क़ब्ज़ा रखना असंभव हो गया। अस्तु, इस के बाद से फ्रांस में अनुदार दल, गरम दल, और प्रजातंत्रवादी दल—तीन दल हो गए। किसी भी एक दल को चेंबर में बहु-संख्या नहीं मिलती थी। कभी दोनों प्रजातंत्रवादी दल मिल कर अनुदार दल के विरुद्ध मंत्रि-मंडल बना लेते थे; तो कभी एक प्रजातंत्रवादी दल अनुदार दल से मिल कर दूसरे प्रजातंत्रवादी दल के विरोध में मंत्रि-मंडल बना लेता था। इसी प्रकार बहुत दिनों तक काम चलता रहा। जब-तब एक ही दल का मंत्रि-मंडल बनाने के भी प्रयत्न किए गए, मगर ऐसे मंत्रि-मंडल अधिक दिन तक न चल सके।

पिछली सदी की फ़्रांसीसी दलबंदी की टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडी की अधिक ख़ाक न छान कर हम इस सदी के प्रारंभ में फ्रांस के चेंबर ऑव् डेपुटीज़ के राजनैतिक दलों पर नज़र डालें तो हमें पिछले समय के अनुदार और प्रजातंत्रवादियों के झगड़ों के मुख्य कारण मिट जाने से इन नामो के इस सदी में कोई दल नहीं मिलते। जो थोड़े-बहुत सदस्य अब तक अपने को यह पुराने नाम देते थे उन के लिए भी उन नामों का अर्थ अब वह नहीं था जो पिछली सदी में किया जाता था। उदाहरणार्थ इस सदी के अनुदार दल में राजाशाही के पक्षपाती बिरले ही थे, या कोई थे तो उन की बातों की उतनी ही क़दर की जाती थी जितनी अफ़ीमचियों की। उसी तरह अपने को 'प्रजातंत्रवादी' के नाम से पुकारनेवालों में 'अनुदार' और दूसरे हर क़िस्म के विचारों के आदमी भी थे। यूरोप का पिछला महासमर शुरू होने पर 'चेंबर ऑव् डेपुटीज़' में राजाशाही क़ायम करने का अब तक स्वप्न देखनेवाले 'राजाशाही दल' के सदस्यों की संख्या कुल छब्बीस थी।

दूसरा दल अपने को 'उदार दल'[1] के नाम से पुकारता था। इस दल का जन्म

---

[1] 'एक्शन लिबरेल।'

सन् १६०१ ई० में धार्मिक संस्थाओं और प्रजातंत्र-विचारों के संघर्ष के कारण हुआ था। इस का उद्देश्य धार्मिक संस्थाओं और प्रजातंत्र में मेल कराना था। अस्तु, यह दल उन क़ानूनों का विरोध करता था जो धार्मिक संस्थाओं पर हमला करने के लिए बनाए जाते थे। इस दल के सदस्य अधिकतर पैसेवाले ही होते थे इस लिए यह दल मालदारों की मिलकियत के अधिकारों को मज़बूत करने के लिए क़ानून बनाने का पक्षपाती भी था। मगर समाजवादियों की होड़ में चुनाव में मज़दूरों के मत लेने के लिए यह दल मज़दूरों की कम से कम मज़दूरी क़ानूनन तय करने, उद्योग-संघों[1] और श्रमजीवियों के सामाजिक बीमे[2] का हामी भी था। सन् १६१४ ई० के चुनाव में इस दल को समाजवादी दल से एक लाख मत अधिक मिले। मगर इस दल के मत देश भर में बिखरे होने के कारण ३४ से अधिक इस के प्रतिनिधि चेंबर में नहीं जा सके। 'समाजवादी दल' के मत उद्योग-धंधों स्थानों पर इकट्ठे होने से उन के १०२ सदस्य चुने गए। स्वभावतः 'उदार दल' अनुपात-निर्वाचन का पक्षपाती था और 'समाजवादी' उस का विरोधी।

'राजाशाही दल', 'उदार दल' और 'समाजवादी दल' के सिवाय सन् १६०० ई० के चेंबर में एक और भी दल बैठता था जिस को 'संघ दल' कहते थे। अपनी भाषा में उसे संघ न कह कर हम 'पिटारा दल' कह लें तो भी अनुचित न होगा यह दल पूरा भानमती का पिटारा ही था। इस दल में ऐसे सब तरह के लोगों के लिए जगह थी जिन का उद्देश्य फ़्रांसीसी-प्रजातंत्र की, भूत और भविष्य के स्वप्न देखनेवाले दलों के ऊटपटांग हमलों से रक्षा करना था। इस दल का संगठन बहुत मज़बूत था। लगभग पंद्रह वर्ष तक फ़्रांस के सारे मंत्रि-मंडल इसी दल में से बने और फ़्रांस-सरकार की नीति बिल्कुल इसी दल के हाथ में रही। इस संघ में एक 'प्रगतिशील प्रजातंत्रवादी दल' था जिस का नेता पॉल डेशानेल था। उस में अधिकतर मध्य श्रेणी और खाते-पीते घरों के लोग थे, जो फ़्रांस की क्रांति की घोषणा में जिन व्यक्तिगत अधिकारों की घोषणा की गई थी—ख़ास कर मिलकियत के अधिकारों की—उन पर ज़ोर देते थे। दूसरे कई तरह के विचारवालों का एक 'गरम दल' था जिस के सदस्य आम तौर पर अपने को गंबेटा के सच्चे अनुयायी कहते थे। इन की संख्या संघ में सब से अधिक थी; इस लिए वही अधिकतर संघ की नीति निश्चय करते थे। प्रख्यात फ़्रांसीसी नेता क्लेमांसो, कोंबर और केलौ इसी गरम दल के थे। संघ में तीसरा एक 'गरम समाजवादी दल' था, जो पैदावार के सारे ज़रियों और राष्ट्र की सारी संपत्ति पर सरकार का क़ब्ज़ा अर्थात् ख़ालिस समाजवादी-कार्यक्रम का पक्षपाती था। इस में ब्रियाँ, मिलारांड, और विवयानी जैसे प्रभावशाली नेता शामिल थे। धार्मिक संस्थाओं के विरोध और उन की ताक़त घटाने का प्रश्न जब तक फ़्रांस में ज़ोर पर रहा तब तक यह सब दल मिले रहे, और 'भानमती का पिटारा' काम चलाता रहा। सब ने मिल कर धार्मिक संस्थाओं के पंजों से फ़्रांस की सरकार को मुक्त किया, पाखंडी पंथों को देश से निकाला और धार्मिक शिक्षा को साधारण शिक्षा से अलग किया। मगर जब आमदनी पर कर, चुनाव का ढंग इत्यादि रचनात्मक कार्यक्रम के सामाजिक प्रश्न

---

[1] 'ट्रेड यूनियन्स।' [2] 'सूद इन्स्योरान्स।'

खड़े होने लगे तब भानमती के इस पिटारे में से निकल-निकल कर यह विभिन्न मंडलियाँ अपने-अपने आर्थिक हितों और सामाजिक विश्वासों के अनुसार झगड़ने लगीं। फ्रांस का 'चेंबर ऑव् डेपुटीज़' दलबंदी का अखाड़ा बन गया। मंत्रि-मंडल जल्दी-जल्दी बनने और मिटने लगे। इतने में इत्तफाक से यूरोपीय महासमर छिड़ गया और सारे विभिन्न दल आपस की नोंच-खसोट भूल कर देश की रक्षा के गंभीर विचार में पड़ गए।

युद्ध शुरू होने पर विवियानी प्रधान मंत्री था। समाजवादी लड़ाई में देश का साथ देंगे या नहीं इस में शुरू में कुछ शंका थी, क्योंकि एक बड़े समाजवादी नेता ज़ौरे ने युद्ध छेड़ने का विरोध करने के लिए आम हड़ताल करने की घोषणा की थी। मगर जब यह पता लगा कि फ्रांसीसी सरकार के युद्ध रोकने के सारे प्रयत्न निष्फल हो चुके हैं और जरमनी बेलजियम और फ्रांस पर हमला करनेवाला है तो फ्रांस के सब दल मिल कर एक हो गए और सब राष्ट्र के बचाव की फ़िक्र में लग गए। फ्रांसीसी सेना की थोड़ी-सी हारें होते ही विवियानी ने एक नए मंत्रि-मंडल की रचना की जिस में डेलकासे, ब्रियाँ, मिलारांड जैसे प्रभावशाली लोगों को उस ने शामिल कर लिया। 'सम्मिलित समाजवादी दल' के दो प्रतिनिधि गेस्डे और सेंबा भी उस में शामिल हुए। फ्रांस के लिए ऐसा मिश्रित मंत्रि-मंडल कोई नई बात नहीं थी क्योंकि वहाँ ऐसे मंत्रि-मंडल हमेशा ही बनते रहते थे। मगर इंगलैंड के मिश्रित युद्ध-मंत्रिमंडल से नौ महीने पहले ही फ्रांस ने युद्ध-मंत्रिमंडल बना लिया था। एक साल से कुछ अधिक समय बीत जाने पर समाजवादियों ने इस मंत्रिमंडल का विरोध शुरू किया जिस से इस मंत्रिमंडल को हट जाना पड़ा। फिर ब्रियाँ ने प्रधान मंत्री बन कर देश भर के अच्छे-अच्छे आदमियों को ले कर तेईस आदमियों का एक बड़ा मंत्रि-मंडल बनाया जिस में सब दलों के बुद्धिमान लोग और छः भूतपूर्व प्रधान मंत्री थे। समाजवादी सदस्यों ने इस मंत्रि-मंडल पर भी शुरू से ही हमले शुरू किए क्योंकि उन को यह बात पसंद नहीं थी कि युद्ध-संबंधी बातें उन्हें न बताई जायँ और वे आँखें मींच कर मंत्रि-मंडल के लिए मत देते जायँ। अस्तु, कुछ ही महीने में इस मंत्रि-मंडल को भी इस्तीफ़ा देना पड़ा। ब्रियाँ ने फिर प्रधान-मंत्री बन कर अब की बार दस आदमियों का एक मंत्रि-मंडल तैयार किया और उस ने युद्ध-संचालन का भार एक 'युद्ध-मंडल' पर रख दिया जिस में प्रधान मंत्री, परराष्ट्र-मंत्री, अर्थ-सचिव, युद्ध-सचिव, जलसेना-सचिव, अस्त्रशास्त्र-सचिव, और युद्ध-सचिव तथा उद्योग-सचिव रक्खे गए थे। मार्च सन् १९१७ तक इस मंत्रि-मंडल ने काम चलाया और फिर इस को भी इस्तीफ़ा दे देना पड़ा। बाद में कई मंत्रिमंडल आए और गए और काफ़ी गड़बड़ी रही। अंत में फ्रांस के प्रचंड राजनीतिज्ञ क्लेमांसो ने प्रधान मंत्री बन कर एक मंत्रि-मंडल की रचना की जो सब तरफ़ के हमले झेल कर भी युद्ध के बाद शांति होने तक क़ायम रहा।

युद्ध-काल में सब का ध्यान युद्ध में लीन रहने के कारण फ्रांस में नए दल खड़े नहीं हुए। लोगों का ख्याल था कि लड़ाई के बाद पुराने दल फिर अपने-अपने रास्ते पकड़ेंगे अगर लड़ाई जल्द ही खत्म हो गई होती तो शायद ऐसा होता भी। मगर वर्षों तक खून की नदियाँ बहने का नज़ारा देख चुकने के बाद फ्रांसीसियों को पुरानी दलबंदी की बातें

तुच्छ लगने लगीं और लड़ाई के बाद उन्हीं पुराने विचारों और कार्य-क्रमों पर पुराने दलों का फिर खड़ा होना नामुमकिन हो गया। जिन दलों ने पुराने विचारों पर फिर से खड़े होने की कोशिश की उन्हें ज़्यादह कामयाबी नहीं मिली। 'गरम समाजवादी दल' तो बिल्कुल ग़ायब ही हो गया क्योंकि इस दल के लोग सिवाय धार्मिक संस्थाओं के विरोध के और किसी मामले में कभी एक मत के नहीं रहते थे। अस्तु, धार्मिक प्रश्न सामने न रहने पर वे लोग लड़ाई के बाद बिखर कर दूसरे दलों में जा मिले। अपने पुराने कार्य-क्रम पर खड़े होने में सब से अधिक सफलता एक 'सम्मिलित समाजवादी दल' को ज़रूर मिली। अगर उस के कुछ जोशीले सदस्यों ने उद्योग-धधों में हड़तालें करा-करा कर एकदम 'मज़दूर पेशा-शाही का निरंकुश राज्य' स्थापित करने का व्यर्थ प्रयत्न कर के जनता को नाराज़ न कर दिया होता तो इस दल को और भी अधिक सफलता मिली होती। शांति स्थापित हो जाने के बाद कई नए दल खड़े हुए। एक का नाम 'नई प्रजासत्ता[१]' था। यह दल प्रजातंत्र के प्रमुख और मंत्रियों के अधिकारों को कम करने और व्यवस्थापक-सभा के अधिकारों को बढ़ाने का विरोधी, धारासभा और कार्य-कारिणी की सत्ताओं को बिल्कुल अलग-अलग कर देने और सरकार के काम को अधिक सीधा और सरल कर देने का पक्षपाती था, और बोल्शेविज़्म का घोर विरोधी था। दूसरा एक दल अपने को 'चौथा प्रजातंत्र' के नाम से पुकारता था। यह देश के सारे राजनैतिक और आर्थिक जीवन को छोटे-छोटे हिस्सों में बाँट देने का कार्य-क्रम गढ़ कर लाया था। तीसरा एक 'राष्ट्रीय प्रजातंत्र संघ दल' था जिस में पिछले पिटारे की तरह सब कुनबों के लोग थे यह दल बोल्शेविज़्म का विरोधी और समाज में शांति और स्थिरता, धर्म से शिक्षा को अलग करने, देश में मेल रखने, और लीग ऑव् नेशंस का साथ देने का पक्षपाती था। सब तरह के गरम विचारवालों के मेल से एक चौथा 'प्रजासत्तात्मक प्रजातंत्र-संघ दल' भी बना था, जो बोल्शेविज़्म और अनुदार-विचार दोनों का विरोधी एक बड़ा प्रजासत्तात्मक दल बनना चाहता था। मगर, उस के कार्य-क्रम का अधिकतर भाग 'राष्ट्रीय संघ' और 'सम्मिलित समाजवादियों' में बट जाने के कारण वह उतना ज़ोरदार नहीं बन सका और इस लिए वह बीच का रास्ता छोड़ कर अधिक गर्मी की तरफ़ चल पड़ा है। सन् १९१९ के चुनाव में बोल्शेविज़्म के विरुद्ध हवा बहने से समाजवादियों की बहुत हार हुई और 'राष्ट्रीय-संघ दल' का हर जगह तूती बोल उठा। अस्तु, लड़ाई के बाद फ़्रांस में नए दलों ने उठ कर लड़ाई के पहले के दलों को या तो मिटा दिया या बिल्कुल बेकार कर दिया। 'गरम समाजवादी दल' लुप्त हो गया और समाजवादी विचारों के लोग संगठित होने और क्रांतिकारी समाजवाद और बोल्शेविज़्म की तरफ़ झुकने लगे तथा शांति और क़ायम सामाजिक जीवन की स्थिरता चाहनेवालों ने अच्छी तरह संगठित हो कर सामाजिक क्रांति की की ओर देश को ले जाने-वालों का सामना किया।

फ़्रांस में इंगलैंड और अमेरिका की तरह ऐसे बड़े-बड़े राजनैतिक दल नहीं हैं, जिन की देश भर में संगठित शाखाएँ फैली हों और जिन के कटे-छटे कार्यक्रम हों। वहाँ के लोग

---

[१] 'डेमोक्रैटी नौवेल।'

अपनी तबीयत और रुझान के अनुसार प्रभावशाली नेताओं के साथ हो जाते हैं और जब तबीयत और रुझान बदल जाती है तब अलग हो जाते हैं। वहाँ के राजनैतिक दल देश भर में न फैल कर व्यवस्थापक-सभा में ही रहते हैं और अधिकतर चुनावों के बाद बनते हैं। 'सम्मिलित समाजवादी दल' और 'उदार दल' के सिवाय दूसरे राजनैतिक दलों का न तो कोई संगठन है और न उन में कोई व्यवस्था ही है। व्यवस्थापक-सभा के लिए उम्मीदवार अपने आधार और बल पर खड़े हो जाते हैं और अपने चुनाव का प्रबंध ख़ुद ही कर लेते हैं। कभी-कभी ही चुनावों में राष्ट्रीय प्रश्नों का विचार रख कर मत दिए जाते हैं, आम तौर पर निजी और स्थानिक विचारों ही का मत देने में ख़याल रहता है। इंगलैंड और अमेरिका की तरह फ्रांस में दल बनने की अभी कोई आशा भी नहीं की जा सकती। फ्रांसीसियों की अंग्रेज़ों की तरह क्रियात्मक बुद्धि और अमली स्वभाव नहीं है। वे आदर्श-वादी, काल्पनिक और दिलचले स्वभाव के होते हैं। जिन सिद्धांतों को वह आदर्श बना लेते हैं उन से बस चिपक जाते हैं और उन को ज़रा भर भी छोड़ना या उन पर समझौता करना पसंद नहीं करते हैं। अस्तु फ्रांस में बहुत-से छोटे-छोटे दल बनते रहते हैं। फ्रांसीसियों में भावुकता प्रधान है। राजनैतिक मामलों में भी वह विचारशीलता से भावुकता ही को अधिक काम में लाते हैं। चुनाव में खड़े होनेवाले उम्मीदवारों के एलान भी सिद्धांतों की व्याख्या और भावुक बातों से भरे होते हैं। देश की हाल की राजनैतिक समस्याओं का उन में बहुत कम ज़िक्र होता है। एक तो फ्रांस का चुनाव का ढंग भी छोटे-छोटे दलों को बनने में सहूलियत देता है, दूसरे फ्रांस में व्यवस्थापक-सभा की समितियों को इतनी ताक़त रहती है कि मंत्रि-मंडल व्यवस्थापक-सभा पर इंगलैंड की तरह अपनी धाक नहीं जमा पाता है। तीसरे फ्रांस में सवाल पूछ कर मंत्रियों को इस्तीफ़ा देने पर मजबूर कर देने का सदस्यों को अधिकार होता है। इन सब कारणों से फ्रांस में टिकाऊ मंत्रि-मंडल और उन के परिणाम-स्वरूप सुसंगठित राजनैतिक दल नहीं बन पाते। इंगलैंड की तरह दो दल फ्रांस में इतिहास के कारण नहीं बन सके। प्रजातंत्र स्थापित हो जाने के बाद फिर सत्ता एक बार भी राजतंत्रवादियों के हाथ में आ जाती तो वह अवश्य ही प्रजातंत्र को ख़त्म कर के फिर राजाशाही क़ायम कर देते। अस्तु, फ्रांस में लोगों ने राजाशाही को एक बार दफ़न कर के फिर राजतंत्रवादियों को कभी सत्ता नहीं लेने दी। किसी न किसी प्रजातंत्रवादी दल को ही लोग मत देते रहे। प्रजातंत्रवादी दलों की ही संख्या फ्रांस में बढ़ती रही है, इंगलैंड की तरह एक के बाद दूसरे दल के हाथ में सरकार नहीं आई। इंगलैंड के राजनीतिज्ञ हमेशा से कहते हैं कि बिना दो सुसंगठित दलों के किसी देश में व्यवस्थापकी प्रजासत्तात्मक सरकार का क़ायम होना असंभव है; परंतु फ्रांस में दो सुसंगठित दल न होने पर भी व्यवस्थापकी प्रजासत्तात्मक सरकार काम करती है।

इटली की सरकार

१—राज-व्यवस्था

मेडीटेरेनियन सागर में एक लंबे बूट जूते की तरह घुसे हुए, फ्रांस के दक्षिणी, यूरोपीय देश, इटली की पुरानी राज-व्यवस्था बेलजियम और फ्रांस से मिलती-जुलती थी। सच तो यह है कि वह बिल्कुल फ्रांस की नक़ल थी। इस देश की राज-व्यवस्था के विकास का अध्ययन और लड़ाई के बाद उस के राजनैतिक रुझान का अध्ययन बड़ा रोचक है। बहुत दिनों तक इटली निर्जीव, निकम्मा, आपस की फूट और कुशासन से जर्जरित था। मिलान, टस्कनी और मोडेना के धनधान्य-पूर्ण भाग पर आस्ट्रिया का राज्य था; पर्मा, नेपल्स और सिसली पर स्पेन साम्राज्य का अधिकार था। बाक़ी भाग छः स्वतंत्र रियासतों में बटा हुआ था। एक सारडीनिया की रियासत थी जिस में सारडीनिया का जज़ीरा, पीयडमोंट और नाम के लिए सेवॉय और नीस भी शामिल थे। दूसरी भी धर्माधिराज पोप की रियासत थी और लूका और सेनमेरिनो की दो छोटी-छोटी रियासतें भी थीं। वेनिस जेनेआ की दो पुरानी रियासतें अलग थीं। इन सब में एक सारडीनिया की रियासत में तो कुछ जीवन की झलक दिखाई देती थी; बाक़ी सब जगह निर्जीविता, अत्याचार, अंधाधुंध और अन्याय का बाज़ार गर्म था। विश्वविजयी नेपोलियन ने जब इटली में प्रवेश किया तो उस की तेज़ तलवार के सामने एक एक कर के, लगभग इन सभी कमज़ोर रियासतों को हार माननी पड़ी। बहुत काल के बाद इटली का लगभग पूरा भाग एक असर के नीचे आया। एक विदेशी की तलवार के नीचे ही सही मगर इटली एक तो बना। ग़ुलामी में इटली एक बन सकता है तो स्वतंत्रता में भी बन सकेगा इस बात पर विचार करने के लिए साधारण लोगों को एक जीती-जागती मिसाल तो मिली। मगर नेपोलियन ने इटली को जीत कर एक ही नहीं किया उस ने वहाँ फ्रांस की राजक्रांति से उत्पन्न हुई राज-व्यवस्था भी क़ायम की। कई जगह पर उस ने फ्रांस के नमूने पर प्रजातन्त्र रियासतें भी खड़ी कीं; जिन का काम चलाने के लिए दो सभा की व्यवस्थापक-सभाएँ और डाइरेक्टरी बना दी गई थीं। फ्रांसीसी स्थानिक शासन और न्याय-शासन का तरीक़ा इटली में भी जारी किया गया जो अब तक इटली में चला जाता है। मगर नेपोलियन की लीपज़िग में हार होते ही उस का इटली का साम्राज्य भी बालू के महल की तरह गिर पड़ा

और फिर इटली में वही पुरानी रियासतें—मुर्दों की भाँति क़ब्र में से निकल कर—खड़ी हो गईं। इटली देश के फिर छोटे-छोटे टुकड़े हो गए। वियाना की कांग्रेस में इटली को दस रियासतों में बाँट दिया गया और उस के बाद लगभग पूरा देश सीधे या टेढ़े तौर पर आस्ट्रिया के असर में आ गया। सारडीनिया में विक्टर ऐमेनुयल की एक इटेलियन रियासत रह गई थी, उस ने भी आस्ट्रिया से सदा के लिए दोस्ती की संधि कर ली। मगर नेपोलियन के ज़माने में इटली का एकीकरण और उस में प्रजासत्तात्मक संस्थाओं की बाढ़ देख चुकनेवाले इटली देश को भविष्य में 'एक और स्वाधीन' इटली राष्ट्र का स्वप्न दीखने लगा था।

सन् १८१५ से १८४८ तक इटली आस्ट्रिया के चाणक्य मेटरनिख की निरंकुश नीति का शिकार रहा। देश भर की किसी रियासत में कोई निश्चित राज-व्यवस्था, व्यवस्थापक-सभा या और किसी क़िस्म के प्रजासत्तात्मक शासन के चिह्न नहीं थे। सन् १८२० ई० में नेपल्स में क्रांति हो जाने से वहाँ के राजा फ़र्डीनेंड ने और उसी प्रकार सन् १८२१ में, पीयडमांट में क्रांति हो जाने से, वहाँ के राजा ने इन रियासतों में प्रजासत्तात्मक राज-व्यवस्था मंज़ूर कर ली थी। मगर प्रजा के नेता आपस में मेल न कर सके जिस से यह आंदोलन विफल हो रहा। आस्ट्रिया के इशारे पर उठती हुई प्रजा का सिर कुचल दिया गया। इसी प्रकार सन् १८३१-३२ में मोडेना, पर्मा और पोप की रियासतों में भी उत्पात खड़े हुए थे, जिन में काफ़ी उगती हुई राष्ट्रीयता की झलक थी। मगर उन को भी आस्ट्रिया की मदद से दबा दिया गया था। इटली का क्रांतिकारी दल देश को आस्ट्रिया के पंजे से क्रांति द्वारा मुक्त कर के एक राष्ट्र बनाने की बहुत दिनों से तैयारी कर रहा था। प्रख्यात मेज़िनी के 'यंग इटली' अख़बार ने बहुत-से नौजवानों के दिल और दिमाग़ क्रांति के लिए तैयार कर दिए थे। देश-भक्त आनेवाली क्रांति की ओर आशा की आँखों से देख रहे थे। सन् १८४६ ई० में पोप ने अपनी रियासतों में प्रजा को बहुत-से अधिकार दिए और पीयडमोंट और टस्कनी की रियासतों ने भी उस का फ़ौरन अनुकरण किया। सन् १८४८ ई० में नेपल्स में फिर क्रांति हो गई और वहाँ के राजा फ़र्डीनेंड को अपने बाप की तरह मजबूर हो कर प्रजा को अधिकार देने पड़े। प्रजा की चुनी हुई एक प्रतिनिधि-सभा और राजा की नियुक्त एक पीयर्स की सभा को व्यवस्थापक-सभा माना गया। टस्कनी के राजा ने भी पाँच दिन बाद इसी तरह की राज-व्यवस्था अपनी प्रजा को दे दी। ट्यूरिन की म्यूनिसिपेलिटी ने पीयडमोंट के राजा चार्ल्स एलबर्ट के पास एक प्रार्थना-पत्र, जिस पर बहुत-से अमीरों, सरदारों और सरकारी अफ़सरों के हस्ताक्षर थे और जिस में एक प्रजासत्तात्मक राज-व्यवस्था की माँग की गई थी, भेजा था। एलबर्ट ने उस पर ख़ूब विचार कर के मंत्रियों और अधिकारियों की सभा में कहा कि, 'राज्य, राजछत्र और धर्म की ख़ैर! मेरा विश्वास हो गया है, और इसी में है कि प्रजासत्तात्मक राज-व्यवस्था जल्दी से जल्दी क़ायम कर दी जाय।' दूसरे ही दिन इस घोषणा का एलान कर दिया गया और राज-व्यवस्था तैयार करने के लिए एक कमीशन बैठा दिया गया। इस कमीशन ने फ़्रांस की सन् १८३० ई० की राज-व्यवस्था को नमूना मान कर

उसी ढंग की एक राज-व्यवस्था गढ़ कर शीघ्र ही तैयार कर दी। देश की मूल राज-व्यवस्था[1] के नाम से ४ मार्च सन् १८४८ ई० को इस राज-व्यवस्था की घोषणा हुई जो इटली के संयुक्त राज्य की राज्य-व्यवस्था का आज तक आधार है। इसी बीच में लुई फ़िलिप के राज्यच्युत हो जाने, जर्मनी में क्रांति होने और मेटरनिख के पदच्युत होने की खबरें आईं जिस से इटली में उत्साह की लहर उठ खड़ी हुई। पोप और नेपल्स के राजा ने प्रजा के दबाव से उत्तरी इटली की रियासतों को आस्ट्रिया के बंधनों से मुक्त करने के लिए सेनाएं भेजीं। ऐसा मालूम होने लगा मानो पीयडमोंट के राजा चार्ल्स एलबर्ट के नेतृत्व में स्वीकार कर के इटली ने एक राष्ट्रीय आंदोलन खड़ा करके एक राष्ट्र हो जाने का निश्चय कर लिया हो। जुलाई मास में नेपल्स में प्रजासत्तात्मक राज-व्यवस्था क़ायम हो गई और सन् १८४९ ई० की फ़रवरी में पोप और उस की प्रजा में झगड़ा हो जाने पर रोम में भी एक पार्लीमेंट बन गई और रोम को प्रजातंत्र क़रार दे दिया गया। मगर अचानक ही नेपल्स के राजा ने लड़ाई से हाथ खींच लिया और नेपल्स की प्रजासत्तात्मक राज-व्यवस्था को खत्म कर दिया जिस से सुधारकों की शक्ति क्षीण हो गई। निरंकुश राजा किस समय क्या करेगा कोई कह नहीं सकता? तुलसीदास की 'जानि न जाय निशाचर माया' निरंकुश शासन के लिए बिलकुल ठीक उतरती है। नेपल्स, आस्ट्रिया और फ्रांस की सहायता ले कर पोप ने भी रोम के प्रजातंत्र को खत्म करके फिर से अपना निरंकुश शासन क़ायम कर लिया। उत्तर और मध्य देश की उठती हुई रियासतों को एक-एक कर के आस्ट्रिया ने दबा दिया और फिर से वहाँ आस्ट्रिया का अखंड आतंक क़ायम हो गया। निरंकुशता के राक्षस ने प्रजा की स्वाधीनता को कुचल कर फिर अपना माया-जाल बिछा दिया और प्रजा के अधिकारों के पक्षपाती निराश और दुखी हो कर इधर-उधर तितर-बितर हो गए। एक पीयडमोंट की रियासत में अवश्य स्वाधीनता की कुछ झलक अब तक दिखाई देती थी। वहाँ के राजा चार्ल्स ने एक लड़ाई में बुरी तरह हार हो जाने पर सिंहासन छोड़ दिया था और उस का लड़का विक्टर इमेनुयल द्वितीय गद्दी पर आ बैठा था।

विक्टर इमेनुयल को अपनी प्रजा के अधिकार छीन लेने के लिए सब तरफ़ से सलाहें दी गईं, बहुत-से प्रलोभन दिए गए और तरह-तरह के सब्ज़ बाग़ दिखाए गए। मगर उस ने किसी की तरफ़ कुछ ध्यान नहीं दिया और प्रजा की स्वाधीनता और अधिकारों को जैसा का तैसा क़ायम रक्खा। अस्तु, इटली के देश-भक्तों की निगाहें पीयडमोंट की तरफ़ लग गईं और सब को स्वाधीनता की आशा पीयडमोंट से होने लगी। यह आशाएं व्यर्थ न गईं। सन् १८४८ ई० के बाद से इटली की स्वाधीनता और राष्ट्रीयता के विकास का इतिहास पीयडमोंट रियासत के संगठन, नेतृत्व, उत्थान और विस्तार का ही इतिहास है। विक्टर इमेनुयल खुद कोई बड़ा राजनीतिज्ञ नहीं था। मगर उस में काफ़ी बुद्धि और ईमानदारी थी। उस ने एक ऐसे मनुष्य को अपना मंत्री बनाया था जो यूरोप के आधुनिक इतिहास के गिने-चुने राज-नीतिज्ञों में हो गया है। उस का नाम काउंट केवूर था। मेज़िनी की क्रांति-

---

[1] स्टैटो कॉन्स्टिट्यूशनल डेल रेग्नो।

कारी भंडा और क़लम, गेरीबाल्डी की तलवार और केवूर की राजनीति ने इटली को स्वतंत्र और एक राष्ट्र बनाने में अद्वितीय काम किया। केवूर सन् १८५२ ई० में मंत्री बनने से पहले ही प्रजा के अधिकारों और इटली की राष्ट्रीय एकता का कट्टर पक्षपाती मशहूर था। पहले तो इमेनुयल और केवूर की इच्छा इटली से आस्ट्रियनों का प्रभाव हटा कर पोप की अध्यक्षता में इटली को कई रियासतों की संघ का एक राष्ट्र बनाने की थी। मगर पीछे से उन का उद्देश्य सारे इटली का एक केंद्रित, राष्ट्रीय सरकार के नीचे एकीकरण करना हो गया। सन् १८५५ ई० में केवूर ने फ्रांस से 'हमले और बचाव में दोस्ती' की एक संधि कर के फ्रांस के इशारे पर सन् १८५६ में आस्ट्रिया से लड़ाई छेड़ दी। आस्ट्रिया की हार हो गई और पीयडमोंट ने लोंबार्डी की रियासत जिस के नागरिक बहुत दिनों से पीयडमोंट से मिलना चाहते थे, आस्ट्रिया से छीन ली। मगर संधि की शर्तों के अनुसार केवूर को सेवाय और नीस फ्रांस को दे देना पड़ा। फिर भी पीयडमोंट का बड़ा फ़ायदा हुआ क्योंकि उस की आस्ट्रिया पर जीत हो जाने से देश में उत्साह का तूफ़ान-सा उठ खड़ा हुआ और मध्य इटली की बहुत-सी रियासतों ने बिगड़कर पीयडमोंट से मिल जाने का एलान कर दिया। टस्कनी, मोडेना, पर्मा, रोमग्ना की चार रियासतों के प्रतिनिधियों की सभाओं ने मिल कर जब एकमत से पीयडमोंट के राज्य में मिल जाने की राय प्रगट की तब उन के नागरिकों के पीयडमोंट रियासत की तरफ़ से, इस बात पर मत लिए गए कि वे स्वतंत्र रियासतें रहना पसंद करेंगी अथवा पीयडमोंट में मिल जाना। इन रियासतों की जनता के बहुत बड़ी संख्या में पेयडमोंट से मिल जाने के लिए मत मिलने पर पीयडमोंट की व्यवस्थापक-सभा की राय से वहाँ के राजा ने पीयडमोंट से इन रियासतों के मिल जाने की घोषणा की और इन सब रियासतों से फ़ौरन प्रतिनिधि चुन कर ट्यूरिन की पार्लामेंट में बैठने के लिए आ गए। एक साल के भीतर-भीतर ही लगभग इटली के आधे लोग पीयडमोंट के झंडे के नीचे मिल कर एक हो गए। फिर गैरीबाल्डी ने अपने 'हज़ार वीरों' की सहायता से नेपल्स और सिसली को मुक्त कर के सन् १८६० ई० में पीयडमोंट से मिला दिया। इसी समय में पीयडमोंट की सेनाओं ने पोप की अम्ब्रिया और मार्चेज़ नाम की रियासतों को जीत कर उन के नागरिकों के मत से ट्यूरिन की पार्लामेंट में मिला लिया। आख़िरकार देशभक्तों का स्वप्न पूरा हुआ, और उन की मेहनत सफल हुई। बहुत वर्षों से बिखरा हुआ इटली आख़िरकार एक बना और "ईश्वर की कृपा और राष्ट्र की इच्छा से विक्टर इमेनुयल द्वितीय को इटली का राजा" क़रार दिया गया। सिर्फ़ वेनेशिया और रोम के दो प्रांत मिलने के लिए रह गए। सन् १८६६ ई० में इटली की आस्ट्रिया के विरुद्ध संधि होने पर वेनेशिया भी इटली में मिल गया। फ्रांस और जरमनी का सन् १८७० ई० में युद्ध छिड़ने पर पोप की सहायता के लिए रक्खी हुई फ्रांस की सेना रोम से हट जाने पर देशभक्तों की सेनाएँ रोम में घुस गईं और रोम को भी इटली के संयुक्त राष्ट्र में मिला लिया गया। प्राचीन रोम फिर इटली राष्ट्र की राजधानी बनाया गया और नवंबर सन् १८७१ ई० में इटली के स्वाधीन राष्ट्र की व्यवस्थापक-सभा की पहली बैठक रोम में हुई।

पीयडमोंट के राजा चार्ल्स एलबर्ट ने जो राज-व्यवस्था पीयडमोंट में क़ायम की

भी उसी के अनुसार पीयडमोंट की रियासत का काम चलता था। फिर दूसरी रियासतों ने भी जब पीयडमोंट से मिलने की इच्छा प्रकट की और उन के नागरिकों के मत ले कर इस राज-व्यवस्था में मिला लिया गया। वेनिशिया और रोम के नागरिकों ने भी इसी व्यवस्था के लिए मत दिए। अस्तु, इटली राष्ट्र की राज-व्यवस्था यही रही। यह राज-व्यवस्था राजा की ओर से प्रजा को दी गई थी इस लिए यह कहा जा सकता है कि राजा को उस में तबदीली करने या उस को वापिस ले लेने का अधिकार था। मगर बात ऐसी नहीं थी। राज-व्यवस्था में इस बात का कोई ज़िक्र न होने पर भी कि उस में परिवर्तन किस तरह से किया जा सकता है, सब की राय यही थी कि उस में परिवर्तन सिर्फ़ प्रजा की इच्छा से हो सकता है, क्योंकि उस का जन्म प्रजा की इच्छा पर हुआ था। यह राय इटली में सर्वमान्य हो गई है और इस लिखित राज-व्यवस्था में अब तक इस संबंध की कोई शर्त न जोड़ कर भी इंगलैंड की पार्लीमेंट की तरह इटली की व्यवस्थापक-सभा का सब प्रकार के क़ानून बनाने का अधिकार माना जाता है। तब से अब तक इटली की व्यवस्थापक-सभा में कई बड़े-बड़े उथल-पुथल मचा देनेवाले क़ानून पास हो चुके हैं, जिन का इटली की राज-व्यवस्था से साफ़ संबंध था। मगर व्यवस्थापक-सभा को सर्व-शक्तिमान मान कर भी ऐसे क़ानून सभा में तभी स्वीकार किए जाते हैं जब देश की साफ़ तौर पर राय उन की तरफ़ होती है। तरह-तरह के क़ानूनों, रिवाजों, और नई-नई संस्थाओं के, इस राज-व्यवस्था में बाद में धीरे-धीरे मिल जाने से इटली की आज-कल की राज-व्यवस्था का काम-काज सिर्फ़ इस चार्ल्स एलबर्ट की लिखित राज-व्यवस्था को देख कर ही नहीं जाना जा सकता है। इंगलैंड की तरह इटली की आजकल की राज-व्यवस्था बहुत-से रिवाजों पर चलती है जिन को जानने के लिए इटली की राजनैतिक संस्थाओं का अध्ययन ज़रूरी है। लिखित राज-व्यवस्था इटली की बहुत छोटी है; अमेरिका की लिखित राज-व्यवस्था की आधी भी नहीं है।

२—राजछत्र

इटली के १८४८ ई० के क्रांतिकारी असल में सभी प्रजातंत्र-वादी थे। और उन्हीं ने इटली में प्रजातंत्र-राज्य की स्थापना का स्वप्न देख कर ही क्रांति की आग भड़काई थी। परंतु घटना-चक्र से इटली का प्रजातंत्र राज्य बनना असंभव हो गया और जैसा हम ने देखा, वह पीयडमोंट राजघराने के नेतृत्व में एक 'प्रतिनिधि राजा-शाही राज्य' बन गया। अगर मेज़िनी की श्रद्धा और उस के क्रांतिकारी प्रयत्न, गेरीबाल्डी की तलवार और केवूर की राज-नीति को इटली राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधनेवाला कहा जा सकता है, तो उस के साथ-साथ यह बात भी माननी ही पड़ेगी कि पीयडमोंट के राजा विक्टर इमेनुअल की उदारता, दूरदर्शिता और उस की सर्व-प्रियता भी इटली को एक स्वाधीन और संगठित राष्ट्र बना देने में एक मूल कारण थी। इस राजा के झंडे के नीचे इटली को मिल कर एक हो जाने का बड़ा अच्छा अवसर मिला। अगर दुनिया के किसी राज-घराने को अभिमान के साथ किसी प्रजा-तंत्रात्मक-राज्य के ऊपर अपना राजछत्र क़ायम रखने का उचित अधिकार हो सकता है,

तो वह पीडमोंट के प्राचीन सेवोय राजकुल को है, जिस का अभी तक इटली पर राजछत्र क़ायम है। यूरोप के राजघरानों में आजकल राज करनेवाला यह सब से पुराना राज-घराना है। इस कुल का सब से बड़ा बेटा इटली के राजछत्र का अधिकारी होता है।

उस का व्यक्तित्व राज-व्यवस्था के अनुसार पवित्र और अखंड माना जाता है। उस को १,६०,५०,००० लाइर[1] सालाना राष्ट्र के ख़ज़ाने से ख़र्च के लिए दिया जाता है, जिस में से दस लाख वह ख़ज़ाने को लौटा देता है। वह एक सुंदर ऊँचाई पर बने हुए राज-महल में रहता है, जिस में प्राचीन काल में स्वास्थ्य अच्छा करने के लिए पोप अक्सर जा कर रहते थे। कहने के लिए उस को बहुत अधिकार हैं। मगर इंगलैंड के राजा की तरह वह अपनी इच्छा से राजकाज में कुछ कर नहीं सकता है; क्योंकि इंगलैंड की तरह इटली में भी बिल्कुल व्यवस्थापकी राज है। मंत्री सारा राजकाज चलाते हैं और वे व्यवस्थापक-सभा के प्रति सारे राजकाज के लिए जवाबदार होते हैं। कहने के लिए इटली के राजा को क़ानूनों को मंज़ूर और एलान करने, अपराधियों को क्षमा प्रदान करने और उन की सज़ा कम करने, युद्ध छेड़ने, संधि करने, ऑर्डीनेंस निकालने, सिनेट के सदस्य और अधिकारियों को नियुक्त करने इत्यादि के बहुत-से अधिकार हैं। मगर इन अधिकारों का उपयोग वास्तव में मंत्रि-मंडल करता है। नाम के लिए राजा को व्यवस्थापक-सभा के किसी प्रस्ताव को नामंज़ूर करने का अधिकार है। मगर उस का उपयोग करने का कभी मौक़ा नहीं आता है; क्योंकि जब किसी मंत्रि-मंडल का व्यवस्थापक-सभा पर ज़ोर नहीं रहता है, तो वह इस्तीफ़ा दे देता है और नया मंत्रि-मंडल जो व्यवस्थापक-सभा के मेल से काम चला सकता है, नियुक्त हो जाता है। अतः राजा को व्यवस्थापक-सभा के किसी प्रस्ताव को नामंज़ूर करने का मौक़ा ही नहीं आता। राज-व्यवस्था के अनुसार जिन संधियों से राष्ट्र की संपत्ति और सीमा पर कोई असर पड़ता है, उन संधियों को करने से पहले राजा को उन पर व्यवस्थापक सभा की राय ले लेनी चाहिए। मगर सैनिक और दोस्ती की संधियों के सिवा लगभग और सब प्रकार की संधियाँ दूसरे राष्ट्रों से होने से पहले उन पर व्यवस्थापक-सभा की राय ले ली जाती है। फिर भी अंतर्राष्ट्रीय मामलों में राजा की बात काफ़ी सुनी जाती है और अंतर्राष्ट्रीय प्रबंधों में उस का अच्छा हाथ रहता है।

इंगलैंड के राजछत्र की तरह इटली का राजछत्र व्यवस्थापक राजछत्र होने पर भी इटली का राजा इंगलैंड के राजा से अधिक राज-काज में भाग लेता है। इटली का राजा इटली राष्ट्र की सेनाओं का सेनाधिपति होता है और कई बार युद्ध छिड़ने पर वह अपनी सेनाओं के साथ युद्ध-क्षेत्र में भी गया है। उस को प्रधान मंत्री के चुनने में[2] भी बहुत

---

[1] इटली का सिक्का।

[2] जब से इटली में फ़ेसिस्टदल के नेता मुसोलिनी का अधिकार स्थापित हुआ है तब से राजा की इन सत्ताओं पर बहुत कुछ असर पड़ा है। अब यह कहना ठीक न होगा कि, उस को प्रधान मंत्री के चुनने में बहुत कुछ स्वतंत्रता रहती है अथवा वह मंत्रियों को निकाल या निकाल सकता है।

कुछ स्वतंत्रता रहती है। वह फ्रांस के प्रमुख की तरह मंत्रि-मंडल की बैठकों का अध्यक्ष हो कर बैठता है और मंत्रि-मंडल के काम में हिस्सा लेता है। व्यवस्थापक-सभा से मंत्रियों का संबंध ठीक रहने पर भी वह चाहे तो उन को निकाल सकता है और मंत्रियों को सलाह देने, हिदायत करने और झिड़कने का अधिकार तो उसे हमेशा ही रहता है। हर बात में वह मंत्रियों की सलाह पर ही अमल करने के लिए, भी बाध्य नहीं होता है। राज-व्यवस्था क़ायम होने के बाद से आज तक इटली के किसी राजा ने कभी अपना व्यक्तिगत निरंकुश शासन फिर से स्थापित करने का प्रयत्न नहीं किया है। इटली के एक राष्ट्र बनने से अब तक जितने राजा हुए हैं, वे सब अच्छे स्वभाव और प्रकृति के हुए हैं और उन्हों ने अपने राजकुल की सर्व-प्रियता बढ़ाई है। पिछली लड़ाई में यूरोप के बहुत-से राजछत्र डावांडोल हो गए; मगर इटली का राजछत्र लड़ाई के बाद भी सर्व-प्रिय रहा है।

३—मंत्रि-मंडल

राजा प्रधान मंत्री को नियुक्त करता है, और प्रधान-मंत्री अपने मंत्रियों को चुन कर उसके सामने पेश करता है, जिन को राजा मंज़ूर कर के नियुक्त कर देता है। मगर इंगलैंड की तरह इटली की व्यवस्थापक-सभा में सरकारी दल के विरोधी दल का अभी हाल तक कोई एक ही नेता नहीं होता था, जिस को राजा बुला कर प्रधान-मंत्री नियुक्त कर दे, और जो आसानी से अपना मंत्रि-मंडल बना ले। फ्रांस की तरह इटली की व्यवस्थापक-सभा में मुसोलनी के आने तक बहुत-से दल होते थे। राजा को फ्रांस के प्रमुख की तरह बहुत-से लोगों से बात-चीत कर के, किसी ऐसे मनुष्य को प्रधान-मंत्री चुनना होता था, जो उस की राय में ऐसा मंत्रि-मंडल बनाने के योग्य होता था, जिस का विरोध व्यवस्थापक-सभा में न हो। इटली के प्रायः सभी मंत्रि-मंडलों में सभी दलों के लोग होते थे क्योंकि कई दलों की सहायता से ही मंत्रि-मंडलों को व्यवस्थापक सभा में बहु-संख्या मिलती थी। मंत्रि-मंडल के सदस्य, चेंबर ऑव् डेपुटीज़ या सिनेट के सदस्यों में से या बाहर से भी बनाए जा सकते हैं। मगर मंत्री अक्सर चेंबर ऑव् डेपुटीज़ के सदस्यों में से ही चुने जाते हैं। जो बाहर से लिए जाते हैं, वह रिवाज के मुताबिक़ चेंबर में कोई जगह खाली होते ही चुन कर आ जाते हैं। प्रधान मंत्री भी बिरला ही कोई कभी सिनेट का सदस्य होता है। प्रायः वह चेंबर में से ही लिया जाता है। मगर युद्ध और जल-सेना के मंत्री अक्सर सिनेट के सदस्य होते हैं। यह मंत्री अक्सर विशेषज्ञों में से बनाए जाते हैं, जो प्रायः या तो सिनेट के सदस्य होते हैं या जिन को बाद में सिनेट का सदस्य बना दिया जाता है। आम तौर पर हर शासन-विभाग का एक मंत्री होता है। पिछली लड़ाई खत्म होने पर पर राष्ट्र, युद्ध, जल-सेना, अर्थ, खज़ाना[१], उपनिवेश, शिक्षा, निर्माण-कार्य, डाक और तार, न्याय और धर्म, व्यापार और श्रम, खेती, सार्वजनिक सहायता और पेंशन, मार्ग और अस्त्र-शस्त्र इन चौदह विभागों के चौदह मंत्री थे। कभी-कभी बिना विभाग के मंत्री भी मंत्रि-मंडल में ले लिए जाते हैं। हर मंत्री के नीचे

[१] इटली में अर्थ-सचिव और कोष-सचिव दो मंत्री होते हैं। मगर कभी-कभी दोनों विभागों को एक ही मंत्री के अधीन भी कर दिया जाता है।

एक उपमंत्री होता है। उस का चुनाव भी मंत्री की तरह ही किया जाता है।

हर एक मंत्री अपने-अपने विभाग का शासन चलाता है, और सब मंत्री मिल कर शासन की आम नीति निश्चित करते हैं और क़ानूनी मसविदे तैयार कर के व्यवस्थापक-सभा में रखते हैं। इटली के मंत्रियों को भी वही सारे काम करने होते हैं जो और दूसरे व्यवस्थापकी सरकार के मंत्रियों को करने होते हैं। जो मसविदे सरकार की तरफ़ से व्यवस्थापक-सभा में पेश किए जाते हैं उन पर और संधियों, शासन-संबंधी झगड़ों, धर्म-क्षेत्र और राज-क्षेत्र की गुत्थियां, व्यवस्थापक-सभाओं की अर्ज़ियां, सिनेट के सदस्यों और एलचियों की नियुक्ति और अन्य दूसरी बहुत-सी शासन और न्याय-संबंधी बातो पर मंत्रि-मंडल में विचार होता है। प्रधान मंत्री मंत्रि-मंडल की बैठकें बुलाता है, बैठकों में अध्यक्ष का आसन लेता है, विभागों के शासन की ख़बर पूछता है और सब मंत्रियों की नीति और चाल को एक ढंग में रखता है।

मंत्रियों और उपमंत्रियों को व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं में बैठने और चर्चा में भाग लेने का अधिकार होता है। मगर अपना मत वे उसी सभा में डालते हैं जिस के वे सदस्य होते हैं। सभाओं को किसी मंत्री को सभा की बैठकों में ज़बरदस्ती हाज़िर रखने का अधिकार नहीं होता। मगर किसी ख़ास मंत्री के ख़ास तारीख़ों या मौक़ों पर सभा में हाज़िर रहने के लिए सदस्यों की ओर से अक्सर प्रार्थनाएँ की जाती हैं और अगर आवश्यक मंत्रियों को उस समय पर कोई दूसरा बड़ा ज़रूरी काम नहीं होता है तो वे सदस्यों की प्रार्थना स्वीकार करते हैं। फ़्रांस की व्यवस्थापक-सभा की तरह इटली की व्यवस्थापक-सभा मंत्रियों की कार्रवाई पर कड़ी नज़र रखती है, और उन के काम-काज में बहुत कुछ हस्तक्षेप करती है। फ़्रांस की तरह इटली में भी मंत्रियों से प्रश्न पूछ कर उन पर चर्चा चलाई जा सकती थी और उस के परिणाम-स्वरूप मंत्रियों को निकाला जा सकता था। फ़्रांस की तरह अक्सर इस अधिकार का व्यवस्थापक-सभा के सदस्य दुरुपयोग करते थे। व्यवस्थापक-सभा को मंत्रियों से काग़ज़ात तलब करने और उन के काम की जाँच करने के लिए कमीशन नियुक्त करने का भी अधिकार होता था। फ़्रांस की तरह इटली में भी मुसोलनी के आने तक जल्दी-जल्दी मंत्रि-मंडल बदलते रहते थे। मगर सरकार की नीति इतनी जल्दी-जल्दी नहीं बदलती थी क्योंकि अक्सर वही लोग लौट फिर कर मंत्रि मंडलों में आ जाते थे। फिर भी इटली के मंत्रि-मंडल, दलबंदी की बीमारी और व्यवस्थापक-सभा की छेड़खानी की वजह से, बहुत बाअसर और ज़ोरदार नहीं होते थे। राजा के नाम पर कार्यकारिणी का काम मंत्रि-मंडल चलाता था। मगर मंत्रि-मंडल के पास व्यवस्थापक-सभा को हमेशा क़ाबू में रखने की शक्ति नहीं होती थी और व्यवस्थापक-सभा के सदस्य शासन के मामलों में व्यर्थ का बहुत-सा हस्तक्षेप करते थे। मसविदे पेश कर के अपने असर से क़ानून बनाने का अधिकार मंत्रि-मंडल को होता था। मगर व्यवस्थापक-सभा पर ज़ोर डालने की शक्ति उस के पास न होने से सभा के सामने पेश किए हुए मसविदे उसी रूप में या कभी-कभी बिल्कुल तक स्वीकार नहीं होते थे, और मंत्रि-मंडल जिन सुधारों को करना चाहता था वह प्रायः बहुत दिनों तक रुके पड़े रहते थे। व्यवस्थापकी सरकार की पद्धति में मंत्रि-मंडल

अपनी ताक़त के बल पर कार्यकारिणी और धारासभा की शक्तियों को एक सूत्र में बाँध कर रखता है। मगर इटली के मंत्रि-मंडल दलबंदी के झगड़ों की वजह से जल्द जल्द बदल जाने के कारण बहुत कमज़ोर रहते थे और वे इस शक्ति का प्रयोग नहीं कर पाते थे। लेकिन ऑर्डीनेंस निकाल कर अर्थात् व्यवस्थापक-सभा की राय न ले कर अपने हुक्म से बहुत-से काम करने का अधिकार इटली के मंत्रि-मंडल को था। जिस प्रकार अपने देश में सन् १९३१-३२ ई० के असहयोग आंदोलन के ज़माने में वायसराय ने कार्यकारिणी कौंसिल[1] की सलाह से बहुत-से आर्डीनेंस निकाले थे और उन पर उसी तरह अमल किया गया था जिस तरह क़ानूनों पर किया जाता है; उसी प्रकार इटली के मंत्रि-मंडल को भी आर्डीनेंस निकाल कर अस्थायी क़ानून जारी करने या व्यवस्थापक-सभा के पास किए हुए क़ानूनों को उलट देने का ज़बरदस्त अधिकार होता है। आश्चर्य यह है कि मंत्रि-मंडल के इस अधिकार की इटली की व्यवस्थापक-सभा शिकायत तक नहीं करती थी बल्कि कभी-कभी खुद मंत्रि-मंडल से इस अधिकार का उपयोग करने के लिए कहती थी। सन् १८८२ ई० के बड़े ज़रूरी चुनाव के मसविदे पर व्यवस्थापक-सभा ने बहस कर के उस का आखिरी फ़ैसला और उस के जारी करने का काम इस अधिकार के अनुसार मंत्रि-मंडल पर छोड़ दिया था। मंत्रियों के अतिरिक्त स्थानिक अधिकारियों को भी इसी प्रकार का अधिकार रहता है। मालूम होता है इटली के लोग अधिकार के ज़ोर के सामने सिर झुकाना पसंद करते हैं, और शायद इसी लिए मुसोलनी का लोहा इटली ने बड़े उत्साह से मान लिया है।

४—व्यवस्थापक—सभा

१—सिनेट

इटली में क़ानून बनाने का अधिकार राजछत्र और व्यवस्थापक-सभा को है। व्यवस्थापक-सभा के दो भाग हैं—एक सिनेट और दूसरा 'केमेरा दे दिपुताती' अर्थात् प्रतिनिधि-सभा। इटली की सिनेट दुनियाँ भर में इस बात में अनोखी है कि इस के सदस्यों की कोई संख्या निश्चित नहीं है। कुछ वर्ग निश्चित कर दिए गए हैं जिन वर्गों के लोगों में से राजा—असल में राजा के नाम पर मंत्रि-मंडल—जितने सदस्य चाहे उतने सिनेट के लिए ज़िंदगी भर के लिए चुन सकता है। सन् १८४८ ई० में जब राज-व्यवस्था क़ायम हुई थी तब सिनेट के ७८ सदस्य थे और १९१६ ई० में ३९५ सदस्य थे। अक्सर बड़े अधिकारियों, प्रख्यात लेखकों, वैज्ञानिकों और दूसरे देश का नाम ऊँचा करनेवाले लोगों और ३००० लाइर का कम से कम तीन वर्ष तक सरकार को सीधा कर देनेवाले लोगों में से सिनेट के सदस्य चुने जाते हैं। सिनेट के सदस्यों की क़ानून के अनुसार कम से कम चालीस वर्ष की उम्र होना ज़रूरी है। मगर राजा के खांदान के राजदुलारों को २१ वर्ष की उम्र से सिनेट में बैठने और २५ वर्ष की उम्र से मत देने का जन्मसिद्ध अधिकार होता है।

---

[1] इक्ज़ीक्यूटिव कौंसिल।

इटली की सिनेट शानदार संस्था होती है क्योंकि उस में देश भर के लगभग सभी मशहूर और बड़े आदमी होते हैं। मगर उस के हाथ में बहुत ताक़त नहीं होती है। अगर सिनेट व्यवस्थापक-सभा की दूसरी शाखा 'केमेरा दे दिपुताती' के किसी ज़रूरी प्रस्ताव का विरोध करने की धमकी देती है तो राजा के नाम से मंत्रि-मंडल सिनेट में नए सदस्य भर कर सिनेट का स्वर अपनी इच्छा के अनुसार मिला लेने का अधिकार रखता है। सन् १८६० ई० में ऐसा मौक़ा पड़ जाने पर एक दम सिनेट में ७५ नए सदस्य ठूँस दिए गए थे। अस्तु, सिनेट केमेरा दे दिपुताती की बराबरी की सभा नहीं है, उस से कहीं कमज़ोर है। सिनेट को इस बात का फ़ैसला करने का अधिकार होता है कि जो सदस्य सिनेट के लिए चुन कर आते हैं उन को सिनेट में बैठने का अधिकार है या नहीं। मगर इस का सिर्फ़ इतना ही अर्थ होता है कि जो वर्ग निश्चित कर दिए गए हैं उन्हीं वर्गों में से राजा को सिनेट के सदस्य चुनना चाहिए और जब तक राजा इस सीमा का उल्लंघन नहीं करता है तब तक सिनेट किसी सदस्य के बारे में कोई उज्र नहीं करती है।

२—केमेरा दे दिपुताती

केमेरा दे दिपुताती अर्थात् इटली की व्यवस्थापक-सभा की—जिस को हम प्रतिनिधि-सभा कह सकते हैं—निचली सभा में, क़रीब ५०८ सदस्य होते हैं। उन का चुनाव एक-एक क्षेत्र से एक-एक सदस्य और सीधा और गुप्त मत देने के, सिद्धांत पर होता था। प्रतिनिधि-सभा पाँच वर्ष के लिए चुनी जाती थी मगर पाँच वर्ष ख़त्म होने से पहिले ही अक्सर यह सभा भंग हो जाती थी। आम तौर पर औसतन प्रतिनिधि-सभा क़रीब तीन वर्ष तक काम करती थी। तीस वर्ष की उम्र से ऊपर के इटली राष्ट्र के उन सब मर्द नागरिकों को जिन से किसी कारण से मताधिकार छीन नहीं लिया गया है—प्रतिनिधि-सभा के सदस्यों के चुनाव में मत डालने का अधिकार होता है। मगर राष्ट्र की सेना में सेवा कर चुकनेवालों और पढ़ना-लिखना जाननेवाले नागरिकों को मत देने का अधिकार २१ वर्ष की उम्र में ही प्राप्त हो जाता है। किसी क्षेत्र से चुनाव के लिए खड़े होनेवाले उम्मीदवार को उसी क्षेत्र में बसने वाला होना ज़रूरी नहीं है। मगर चुनाव में सफल होने के लिए उस को उस क्षेत्र के सारे मतदारों के दसवें भाग से अधिक और चुनाव में पड़नेवाले मतों के आधे से अधिक मत मिलने चाहिए। अगर किसी भी उम्मीदवार को किसी क्षेत्र से इतने मत नहीं मिल पाते हैं तो एक हफ़्ते के बाद फिर से चुनाव होता है। और उस में जिस को सब से अधिक मत मिलते हैं उसी को चुन लिया जाता है। पादरी और मंत्री, उपमंत्री और सेना के अफ़सरों को छोड़ कर सरकार के तनख्वाहदार नौकरों और सरकार से पैसा पानेवाले और सब मनुष्यों को प्रतिनिधि सभा के लिए उम्मीदवार होने का हक़ नहीं है। मंत्रियों और उपमंत्रियों को छोड़ कर दूसरे सरकार के तनख्वाह पानेवाले लोगों की चालीस से अधिक संख्या किसी समय प्रतिनिधि-सभा में क़ानून के अनुसार नहीं हो सकती है। सदस्यों को पत्र-व्यवहार के ख़र्चे के लिए २००० लाइर सालाना और कोई दूसरी आमदनी न होने पर निजी ख़र्चे के लिए ४००० लाइर सालाना सरकारी ख़ज़ाने से दिए जाते हैं। जिन सदस्यों को ४००० लाइर से कम की आमदनी होती है उन को सिर्फ़ उतने लाइर सालाना और दिए जाते हैं जिन

को मिला कर उन की आमदनी ४००० लाइर साल की हो जाती है। सरकारी रेलों पर मुफ़्त सफ़र करने का अधिकार भी सदस्यों को होता है।

३—कामकाज

क़ानून के अनुसार दोनों सभाओं की बैठकें एक साथ ही बुलाई जानी चाहिएँ और दोनों सभाओं की बैठकें एक साथ ही शुरू और ख़त्म होनी चाहिएँ। क़ानून में सालाना बैठक के लिए कोई क़ैद नहीं है। मगर बजट पर विचार करने के लिए हर साल व्यवस्थापक-सभा की बैठक होती है और छोटी-मोटी छुट्टियाँ ले कर बराबर एक साल तक और कभी-कभी दो साल तक बैठक होती रहती है। सिनेट के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष की नियुक्ति राजा करता है और मंत्रियों का चुनाव सदस्य अपने साथियों में से स्वयं करते हैं। प्रतिनिधि-सभा के सारे अधिकारियों का चुनाव सभा अपनी बैठक के समय के लिए ख़ुद करती है। मगर इंगलैंड के हाउस ऑव् कामन्स की तरह प्रतिनिधि-सभा का अध्यक्ष बार-बार एक ही आदमी जब तक वह राज़ी होता है चुना जाता है और उस के बारे में दलबंदी का विचार नहीं किया जाता है। प्रतिनिधि-सभा के सदस्य नौ भागों में और सिनेट के पाँच भागों में—जिन्हें युफ़िसी कहते हैं—बाँट दिया जाता है और दो महीने के बाद पर्ची डाल कर इन भागों के सदस्य बदलते रहते हैं। यह युफ़िसी ही विभिन्न विषयों पर विचार करने के लिए कमेटियाँ चुनते हैं। दोनों सभाएँ सब से ज़रूरी 'अर्थ-कमेटी' को स्वयं चुनती हैं। ख़ास प्रश्नों पर विचार करने के लिए ख़ास कमेटियाँ भी प्रतिनिधि-सभा बनाती हैं। चुनाव और नियमों के लिए कमेटियाँ सभा के अध्यक्ष नियत करते हैं।

दोनों सभाएँ अपनी कार्रवाई के नियम ख़ुद बनाती हैं। सभाओं की बैठकें सार्वजनिक होती हैं। परंतु दस सदस्यों की प्रार्थना पर बैठकें गुप्त की जा सकती हैं। दोनों सभाओं की बैठकों में जब तक आधे से अधिक सदस्य मौजूद न हों तब तक कोई बैठक बाक़ायदा नहीं मानी जा सकती और न किसी विषय पर विचार हो सकता है। प्रतिनिधियों को, जिन क्षेत्रों से वे चुन कर आते हैं उन का प्रतिनिधि नहीं, बल्कि सारे राष्ट्र का प्रतिनिधि समझा जाता है। सभाओं में मत खड़े होकर दिए जाते हैं मगर, बाँट होने पर[1] और रुपए-पैसे के मामलों पर या जिन प्रश्नों में किसी पर व्यक्तिगत आक्षेप होता है उन पर गुप्त दिए जाते हैं। सब मसविदे दोनों सभाओं में स्वीकार हो जाने पर ही क़ानून का रूप धारण कर सकते हैं। राष्ट्र के प्रति राजद्रोह के मुक़दमों और मंत्रियों पर प्रतिनिधि-सभा द्वारा चलाए गए कुशासन के मुक़दमों का विचार करने के लिए राजा सिनेट को अदालत का काम भी सौंप सकता है। इंगलैंड की तरह न्याय-शासन से संबंध रखनेवाले मसविदे पहले सिनेट में पेश किए जाते हैं। धन से संबंध रखनेवाले मसविदे और आम तौर पर दूसरे मसले प्रतिनिधि-सभा में पेश होते हैं। ज़रूरी मसलों को व्यवस्थापक-सभा के सामने अधिकतर प्रधान-मंत्री या और दूसरे मंत्री या उपमंत्री पेश करते हैं। मगर साधारण सदस्य

---

[1] डाइ-विज़न

भी बड़ी आज़ादी से बहुत-से मसले व्यवस्थापक-सभा में पेश करते हैं। इंगलैंड की तरह साधारण सदस्यों पर दलबंदी का अंकुश इतना नहीं रहता है कि वे अपने नेताओं की इच्छा के बिना कोई प्रश्न न उठावें[1] साधारण सदस्यों को अपने मसविदे पेश करने के लिए सिनेट में सदस्यों के २/३ मत और प्रतिनिधि सभा में नौ युक्तिसी में से तीन युक्तिसी की राय मिल जाने की ज़रूरत होती है।

५—राजनैतिक दलबंदी

यूरोप के लगभग सभी देशों में राजसत्ता और धर्म-सत्ता में जनता पर अधिकार के लिए झगड़े हुए हैं। मगर इस संबंध में इटली की-सी समस्या का किसी दूसरे देश को सामना नहीं करना पड़ा है। इटली देश में ईसाइयों के केथौलिक-पंथ के धर्म-गुरु पोप की सत्ता बहुत दिनों से चली आती थी। पोप धार्मिक मामलों में ही अपना अधिकार नहीं दिखाता था, बल्कि राजनैतिक मामलों में भी दख़ल देता था; क्योंकि अन्य राजाओं की तरह वह रोम के आस-पास की रियासतों पर राज्य भी करता था। एक प्रकार से पोप का इटली में वही स्थान था, जो टर्की में सुल्तान का। टर्की का सुल्तान टर्की का राजा होने के साथ-साथ ही दुनियाँ भर के मुसलमानों का ख़लीफ़ा भी होता था। कमालपाशा ने ख़लीफ़ा को टर्की से निकाल कर टर्की की राजनैतिक और ख़िलाफ़त की उलझन हमेशा के लिए सुलझा दी उसी प्रकार जैसा हम देख चुके हैं, विक्टर ईमेनुअल दूसरे ने सन् १८७० ई० में अपनी सेनाएँ भेज कर पोप की रियासतों पर क़ब्ज़ा जमा कर इटली को एक राष्ट्र और रोम को उस राष्ट्र की राजधानी बना दिया। उस ने पोप को इटली से न निकाल कर उस को अपनी धर्म-गद्दी पर बैठा रहने दिया क्योंकि देश-भक्तों की इच्छा पोप को मिलाए रखने की थी। सन् १८७१ ई० में इटली राष्ट्र की व्यवस्थापक-सभा ने एक क़ानून पास कर के पोप को इटली के राजा के समान, महान और पवित्र स्वीकार किया तथा उस को वेटीकन और लेटरन महलों और उस के आस-पास की इमारतों, अजायबघरों, पुस्तकालयों, बाग़-बगीचों, ज़मीन और केस्टल गेंडोल्फ़ो गाँव का सदा के लिए राजा माना। पोप की इस जागीर को हर प्रकार के करों और सार्वजनिक उपयोग से बरी माना गया और राष्ट्र के किसी अधिकारी को अधिकारी की हैसियत से पोप की इस जागीर में बिना पोप की इजाज़त पाँव रखने का अधिकार नहीं था। पोप की रियासतों के राष्ट्र में मिल जाने से पोप को जो माली नुक़सान हुआ उस के मुआवज़े में पोप के लिए राष्ट्रीय ख़ज़ाने से ३२,२५,००० लाइर सालाना की किश्त तय कर दी गई। पोप के धार्मिक कामों में सरकार या सरकार के किसी अधिकारी को दस्तंदाज़ी करने का हक़ नहीं माना गया। पोप को अपना अलग डाक और तारघर क़ायम करने और अपनी मोहर लगा कर इटली के राष्ट्रीय डाकख़ानों के द्वारा ख़त भेजने या दूसरे राष्ट्रों के राजदूतों की तरह अपने दूतों को इधर-उधर ख़बर ले कर भेजने का भी अधिकार

---

[1] यह सब बातें मुसोलिनी के समय के पहले के लिए ही ठीक थीं। अब तो पूरा फ़ेसिस्ट दल का राज्य है और जो मसले मुसोलिनी और दल का दल पसंद करता है वही पेश होते हैं।

माना गया। पोप और उस के पादरियों को धार्मिक मामलों में पूरी स्वतंत्रता दी गई और उस में राजसत्ता ने किसी प्रकार का हस्तक्षेप का अधिकार अपने पास नहीं रक्खा। मगर साथ ही साथ राजसत्ता में किसी प्रकार का हस्तक्षेप करने का अधिकार पोप से भी हमेशा के लिए छीन लिया गया।

यह क़ानून अभी तक क़ायम है। आजकल के किसी भी राजनैतिक नेता की नज़र से यह काफ़ी उदार फ़ैसला था। मगर पोप ने इस प्रबंध को हृदय से स्वीकार नहीं किया। उस को यह बात बहुत खली कि उस की रियासतें और उस के राजनैतिक अधिकार उस से छीन लिये गए। वह इटली राष्ट्र को अपना शत्रु समझने लगा और उस ने शत्रु के हाथ से दान लेना पसंद नहीं किया। उस को आशा थी कि पोपलीला में विश्वास रखने वाले राष्ट्रों की सहायता से वह अपनी रियासतें फिर प्राप्त कर लेगा। अस्तु उस ने वेटीकन के महल में अपने आप को क़ैदी मान लिया और अपनी ज़मीन के बाहर इटली के राजा की ज़मीन पर क़दम न रखने की क़सम-सी खा ली। फ्रांस इत्यादि बहुत-से राष्ट्रों से सहायता माँगने पर भी जब बहुत दिनों तक उसे कोई सहायता न मिली तो उस ने झुँझला कर इटली की राजनीति में अपने धार्मिक प्रभाव के बल पर रोड़े अटकाने का निश्चय किया और सन् १८८३ ई० में पोप ने एक फ़तवा निकाला कि, कैथोलिक पंथ में विश्वास रखनेवालों को इटली के चुनावों में मत डालना और इटली सरकार के अधिकारी बनना अनुचित है। फिर बारह बरस के बाद एक दूसरा इसी प्रकार का फ़तवा निकाल कर इटली की राजनीति में भाग लेना 'अनुचित' के स्थान में 'हराम' कर दिया गया। मगर इस फ़तवे का असर उल्टा हुआ। इटली में कैथौलिक पंथ के लोगों की संख्या अधिक थी। मगर उन में काफ़ी देशभक्ति और राष्ट्रीयता आ गई थी लोगों ने पोप के इन फ़तवों की कुछ परवाह नहीं की। हाँ, थोड़े-से भले आदमी राजनीति से ज़रूर अलग हो गए और उन की भलाई की सहायता इटली की राजनीति को न मिलने से सरकार कुछ कमज़ोर ज़रूर हुई। मगर धार्मिक सत्ता ने देशभक्ति का विरोध कर के अपना बल बहुत घटा लिया। इटली की व्यवस्थापक-सभा ने पोप के विषय में जो क़ानून पास किया था उस पर, पोप के स्वीकार न करने पर भी, इटली की सरकार अपनी तरफ़ से अमल करती रही। अब धर्मसत्ता राजसत्ता की इतनी कट्टर विरोधी इटली में नहीं रही है। मगर आज तक इटली के ख़ज़ाने से पोप एक पैसा नहीं लेता है और न वह इटली राज्य की ज़मीन पर क़दम रखता है। सन् १९२० ई० में पोप ने एक फ़तवा निकाल कर 'कैथोलिक राजाओं को इटली के राजा से रोम में भेंट करने की मनाई का फ़तवा' रद्द कर दिया था। मगर उसी फ़तवे में उस ने इस बात की ओर भी ध्यान खींचा था कि युद्ध ख़तम हो जाने के बाद पुराने अधिकार फिर उस को वापस मिल जाने चाहिए।

राजसत्ता और धर्मसत्ता के इस झगड़े, इटली के लोगों की राजनैतिक नातजुरबेकारी और कूप-मंडूकता तथा हमारे देशवासियों की-सी उन की 'तेरह कनौजिया और चौदह चूल्हे' वाली अभागी आदत के मारे इटली में बहुत-से छोटे-छोटे राजनैतिक दल बन गए थे। उन के कार्य-क्रम बड़ी जल्दी-जल्दी बदलते रहते थे। इटली के एक राष्ट्र बन जाने

के बाद सन् १८७० ई० से १८७६ ई० तक 'अनुदार' कहलानेवाले एक राजनैतिक गुट्ट के हाथ में इटली सरकार की बागडोर रही। यह लोग प्रजा-सत्ता में बहुत विश्वास रखनेवाले नहीं थे। इस का कारण शायद यह था कि इटली के अधिकतर लोग उस समय तक अपढ़ और अज्ञान थे। इस के बाद बीस बरस तक प्रजासत्ता में विश्वास रखनेवालों के हाथ में सरकार की लगाम आई। सन् १८८२ ई० में एक 'चुनाव क़ानून' पास कर के मतदारों की संख्या बढ़ा दी गई। मंत्रि-मंडल बहुत-से गुट्टों की सहायता से काम चलाते थे। कोई दल संगठित सर्वदेशीय राजनैतिक दल नहीं था। मगर इस समय के सारे मंत्रि-मंडलों का 'प्रजासत्ता का ज़ोर बढ़ाने' और 'अंतर्राष्ट्रीय मामलों में हिम्मत से काम करने' की तरफ़ रुझान था। सन् १८९६ ई० से पिछली यूरोप की लड़ाई शुरू होने तक इटली के राजनैतिक अखाड़े में इतने दल आए और गए कि बस एक दंगल की-सी धूम मची रहती थी।

इटली में प्रारंभ ही से पोप में अंध-विश्वास रखनेवालों के राजनीति से अलग हो जाने के कारण कोई एक बड़ा और संगठित दक़ियानूसी राजनैतिक दल नहीं बना और इसी लिए उस का विरोध करने के लिए कोई एक बड़ा और संगठित उदार दल नहीं बना। राजनैतिक मामलों में हिस्सा लेनेवाले सभी राजनैतिक मामलों में कम या ज़्यादा उदार तबियत के लोग होते थे। कम या ज़्यादा उदार तबियत की बुनियाद पर ही दल बनते और बिगड़ते रहते थे। मगर इस प्रकार के दलों को राजनैतिक भाषा में दल न कह कर झुंड, टोलियाँ या गुट्ट ही कहना उचित होगा, क्योंकि वे अधिकतर व्यक्तिगत हितों या विचारों पर ही निर्धारित रहते थे। एक टोली को छोड़ कर लोग दूसरे गुट्ट में ज़रा-ज़रा सी बात पर जा मिलते थे। व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों का अधिकतर स्थानिक बातों पर ध्यान रहता था। पिछली लड़ाई शुरू होने तक या यों कहिए कि बालकन युद्ध तक इटली राष्ट्र को किसी ऐसे जीवन-मरण के प्रश्न का सामना नहीं करना पड़ा जिस के लिए लोग स्थानिक बातों को भूल कर राष्ट्र-हित की बड़ी बातों पर विचार करने लगते हैं, और जिन विचारों की बुनियाद पर ही राष्ट्रीय राजनैतिकदल बनते हैं। दूसरे इटली में लोगों की आदत विचारों के बजाय किसी तेजस्वी नेता का पल्ला पकड़ कर चलने की भी बहुत है। सन् १८७०-१९१४ ई० के आधे काल तक तो हमेशा इटली के प्रख्यात नेता, देप्रेतिस, क्रिस्पी और जियोलिटी इन तीन में से ही कोई न कोई एक प्रधानमंत्री बनता था। जियोलिटी में बहुत गुण नहीं थे, वह गरम विचारों का प्रजा-सत्तावादी नेता माना जाता था; मगर वक़्त पड़ने पर उस ने अनुदार से अनुदार काम तक किए। फिर भी उस की इटली में सन् १९१४ ई० में पूजा-सी होती थी।

समाजवादी दल और कैथोलिक दल—लड़ाई से पूर्व, कुछ काल से, इटली में राष्ट्रीय दल भी बनने लगे थे। पुराने प्रजातंत्रवादी, गरम दल और समाजवादी विचार वालों के मेल से एक काफ़ी बड़ा 'समाजवादी दल' बन गया था। प्रजातंत्रवादियों ने पिछले समय में इटली की बड़ी सेवा की थी। मगर बाद में न तो उन का संगठन ही रहा और न अधिक संख्या ही। प्रजातंत्र में विश्वास रखनेवाले लोग अधिकतर समाजवादियों

में मिलते जाते थे। राज-घराना देश भर में सर्वप्रिय था क्योंकि वह प्रजासत्ता के रास्ते में कभी कोई अड़चनें नहीं डालता था, और राजकार्य प्रजासत्ता के सिद्धांतों पर चलता था। अस्तु, लोग प्रजातंत्र की कोई खास ज़रूरत नहीं समझते थे। 'गरम दल' प्रजातंत्रवादियों से अधिक ज़ोरदार था। यह लोग राजतंत्रवादी थे मगर पुराने दलों की सरकार पर से उन का विश्वास उठ गया था। इस दल में अधिकतर कारीगर और मध्यम श्रेणी के निचले दर्जे के लोग थे जो समाजवाद से घबराते थे। समाजवाद का बीज इटली में फ्रांस की सन् १८७१ ई० की पददलित 'कम्यून' के लोगों ने आ कर बोया था। पहले तो समाजवादी अधिकतर 'अराजकतावादी' थे। मगर पीछे से सन् १८८२ के चुनाव का क़ानून बन जाने के बाद वे वैध उपायों से समाजवाद क़ायम करने के पक्षपाती हो गए। सन् १८८५ में मिलन नगर में श्रमजीवियों की एक कांग्रेस की स्थापना की गई जिस के बहुत जल्द चालीस हज़ार सदस्य हो गए। मगर इस कांग्रेस पर अराजकतावादियों ने कब्ज़ा कर लिया था और एक ही वर्ष में वह दबा दी गई। सन् १८६१ ई० में एक समाजवादी पत्र मिलन से निकाला गया और इसी साल मिलन में पहली समाजवादी कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिस में डेढ़ सौ श्रमजीवियों की संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सन् १८६२ ई० में जिनोआ की कांग्रेस में अराजकतावादियों को इस कांग्रेस से निकाल दिया गया और तब से इटली के समाजवादी भी फ्रांस इत्यादि देशों के समाजवादियों की तरह हो गए। बाद में क्रिस्पी और उस के बाद की सरकारों के अत्याचार का सामना करने के लिए 'प्रजातंत्रवादी', और 'गरम दल' एक 'समाजवादी' दल में मिल गए और "बालिग़ स्त्री-पुरुषों को मताधिकार, प्रतिनिधि सभा और म्यूनिसिपेलिटियों के सदस्यों को वेतन, उदार दंडनीति, स्थायी सेना के स्थान में जल-सेना, कारखानों के लिए अच्छे क़ानून, बीमारी के लिए अनिवार्य बीमा,[1] किसान और ज़मींदार-संबंधी क़ानूनों का संशोधन, रेलों और खानों पर राष्ट्रीय क़ब्ज़ा, अनिवार्य शिक्षा, खाने की चीज़ों पर से कर हटाना, आमदनी पर बढ़ता हुआ कर, और वारिसी जागीरें मिलने पर कर", इत्यादि माँगों को इस नए दल ने अपना लक्षित कार्य-क्रम बनाया।

पुराने दलों से लोग उकता गए थे। समाजवादी दल की माँगें और कार्य-क्रम अमली था और दल के नेता भी क़ाबिल थे अस्तु बड़ी जल्दी ही दल की ताक़त बहुत बढ़ गई। सन् १८६५ ई० में जिस दल को सिर्फ़ ३५,००० मत मिले थे उसी को १८६५ ई० में १,०८,००० मत और सन् १६०४ ई० में ३,०१,००० मत मिले और इस दल के ४४ सदस्य प्रतिनिधि सभा में चुन कर आ गए। इस समय तक इस दल में इटली के बड़े-बड़े मशहूर लोग आ मिले थे। मगर और देशों की तरह समाजवादियों के गरम और नरम पक्षों में यहाँ भी झगड़ा चलता रहता था। लड़ाई शुरू होने के समय गरम क्रांतिकारी समाजवादियों का समाजवादी दल में ज़ोर था। अस्तु, सुधारी समाजवादी[2] इस दल से अलग होकर एक नए दल में जा मिले थे।

---

[1] कंपल्सरी इंश्योरेंस अगेंस्ट सिकनेस।

[2] रिफ़ार्मिस्ट सोशलिस्ट्स।

समाजवादियों की ताक़त बढ़ती देख कर पुरातन-प्रेमी धार्मिक लोग भी घबराने लगे थे। सन् १९०४ ई० के चुनाव में बहुत-से उन कैथोलिक लोगों तक ने सरकार का साथ दिया जो अभी तक पोप की इच्छानुसार राजनीति से अलग रहते थे; क्योंकि उन की राय में सरकार का साथ दे कर, पुरातन समाज-व्यवस्था की रक्षा करना धार्मिक कर्तव्य था। पोप ने भी उन लोगों की यह बात मान ली थी और पोप की तरफ़ से आगे के लिए एक फ़तवा भी निकाल दिया गया था कि कैथोलिक लोगों को पुरानी समाज-व्यवस्था की रक्षा करने के लिए संगठित रूप से राजनीति में भाग लेना चाहिए।' इस के बाद से कैथोलिक राजनीति में खुल कर भाग लेने लगे और सन् १९१३ ई० के चुनाव में उन के दल के 'प्रतिनिधि-सभा' में ३५ सदस्य चुन कर आए। पुरानी समाज-व्यवस्था क़ायम रखने के साथ ही इस दल के कार्य-क्रम में कारखानों की दशा सुधारने के लिए क़ानून, मज़दूरों का बीमा, सहकारी संस्थाएँ और ज़मीन के अधिक बाँट की मांगें भी शामिल थीं। धार्मिक लोगों के संगठित रूप से राजनीति में घुसने से धर्मसत्ता के विरोधियों के दल ने भी ज़ोर पकड़ा और प्रजातंत्रवादी, गरम दल और समाजवादियों का आपस का मेल और भी दृढ़ हो गया। धार्मिक लोग जिस चीज़ को कमज़ोर करने आए थे उन के आने से उल्टी वह ज़ोरदार बनी।

लड़ाई के ज़माने में समाजवादी लड़ाई के विरोधी रहे, और कैथोलिक दल के लोग इटली के युद्ध में शरीक होने के पक्षपाती थे। सन् १९१९ में संधि हो जाने के बाद कैथोलिक दल ने अपना नाम बदल कर 'लोक-दल'[1] रख लिया और एक नए कार्य-क्रम का एलान किया, जिस में 'न्याय और स्वतंत्रता के सिद्धांतों के लिए लड़ने' और 'युद्ध की बीमारी से लोगों को बचाने और सामाजिक न्याय को ज़िंदा चीज़ बनाने' के लिए लोगों को मिल कर एक हो जाने के लिए बुलावा दिया गया। इटली की राजनीति में यह दल शासन का अधिकार-विभाजन,[2] कुटुंब, वर्ग, कम्यून, व्यक्तिगत मर्यादा और स्वतंत्रता की रक्षा और इज्ज़त, अनुपात-निर्वाचन, स्त्रियों के लिए मताधिकार, निर्वाचित सिनेट, क़ानून और न्याय-शासन का सुधार इत्यादि बहुत-सी बातें चाहता था। खास ध्यान देने की बात यह है कि धर्मसत्ता का राज फिर से स्थापित करने की माँग इस दल की माँगों में कहीं नहीं थी। धार्मिक स्वतंत्रता की सिर्फ़ माँग की गई थी और राष्ट्र को धर्म का विरोधी न मान कर सिर्फ़ उन नास्तिक लोगों को नास्तिक धर्म का विरोधी बताया गया था, जो हमेशा धार्मिक लोगों पर अत्याचार करने के पक्षपाती रहते थे। सन् १९१९ के चुनाव में इस दल के १०१ सदस्य प्रतिनिधि-सभा में चुन कर आए और पोप की सहायता और इस दल के योग्य नेताओं की योग्यता के कारण, जिन्हों ने समकालीन सभी ज़रूरी बातों को अपने प्रोग्राम में मिला लिया था इस दल की ताक़त शीघ्र ही बहुत बढ़ गई। यह दल सरकार का साथी और समाजवादी दल के मुक़ाबिले में एक प्रकार का सुसंगठित अनुदार-दल था। मगर युद्ध की थकावट का लड़ाई के विरोधी समाजवादियों ने भी इस चुनाव में खूब फ़ायदा उठाया। प्रतिनिधि-सभा में ४० सदस्यों की जगह पर अब उन के भी

---

[1]पापुलर पार्टी। [2]डिसेंट्रलाइज़ेशन।

१५६ सदस्य चुन गए। अस्तु सब से बड़ा दल प्रतिनिधि-सभा में 'समाजवादी दल' था।

फ़ेसिस्ट दल—इटली सदियों से घरेलू समस्याओं के सुलझाने में लगा था। दुनिया में आगे बढ़ कर कोई साहस का काम करने का उसे मौक़ा नहीं मिला था। सन् १९११ ई० में टर्की से युद्ध छिड़ने पर इटली के नौजवानों की आँखें उसी तरह खुलीं, जिस प्रकार रूस और जापान के युद्ध ने जापान के लोगों की आँखें खोल दी थीं। समाजवादियों ने अपने सिद्धांतों के अनुसार टर्की से युद्ध का विरोध किया। इन समाज-वादियों में मुसोलिनी नाम का एक इटेलियन नौजवान भी था, जिस ने सरकार की लड़ाई की नीति का विरोध करने के लिए एक आम हड़ताल करा दी जिस के कारण उसे कई मास तक जेल की हवा खानी पड़ी। बाद में साम्राज्यशाही का विरोधी रहते हुए भी यही मुसोलिनी देश भक्ति का उपासक बना। जब सन् १९१४ ई० की यूरोप की लड़ाई छिड़ी, तब मुसोलिनी ने इटली के हित में इटली को आस्ट्रिया के विरुद्ध लड़ाई में शामिल हो जाने की सलाह दी। उस का कहना था कि हाथ पर हाथ रख कर बैठने और क्रांति की बातें करनेवाले कभी श्रमजीवियों की क्रांति न कर सकेंगे। आम लोगों को युद्ध में जा कर हथियारों का इस्तेमाल और मरना-मारना सीखना चाहिए। जो आज युद्ध में लड़ेंगे, वही कल क्रांति कर सकेंगे। समाजवादियों ने उस को अपने दल से निकाल दिया। मगर मुसोलिनी ने अपनी कोशिश जारी रक्खी। बहुत-से उत्साही नौजवान उस से आ मिले। जगह-जगह पर देश भर में देश के लिए मर मिटने के लिए तैयार देश भक्तो के दल खड़े हो गए और उन्हो ने लड़ाई के मैदान में जा कर गोलियाँ खाई और गोलियां चलाई। देश भक्तों ने अपने इन दलों और टोलियों को 'फ़ेसी' का नाम दिया था; जिस का अर्थ 'क्रांतिकारी टोली' है। सन् १९१५ से १९१७ ई० तक मुसोलिनी ने युद्ध-क्षेत्र की खाइँयों में युद्ध किया। बाद में घायल हो कर जब वह लड़ाई के नाक़ाबिल ठहरा दिया गया, तब वह लौट कर मिलन नगर में आया और एक अख़बार का संपादक बन कर युद्ध के पक्ष में बड़े ज़ोरों से बराबर लेख लिखता रहा। इटली की फ़ौज ने जब आस्ट्रिया की फ़ौजों को हराया तो मुसोलिनी ने ही पहले-पहल विजेता इटेलियन सेनापति की तारीफ़ के नारे बुलंद कर के इटली की युद्ध में जीत की दुहाई दी। लड़ाई के ज़माने में 'फ़ेसी' के सदस्यों ने सैनिक संगठन और कड़ी सैनिक व्यवस्था और साम्राज्यशाही के पाठ सीखे। इटली की व्यवस्थापक-सभा एक-मत से लड़ाई के पक्ष में नहीं थी। अस्तु उधर तो इटली के सिपाही गा-बजा कर युद्ध-क्षेत्र में गोलियाँ खाने को भेज दिए जाते थे और इधर व्यवस्थापक-सभा में 'आम लोगों की स्वतंत्रता,' 'बोलने की आज़ादी,' 'मज़दूरों के हक़ों' इत्यादि विषयों पर लंबी लंबी चर्चाएँ चलती थीं और राजनीतिज्ञों के मंत्रि-मंडलों की गद्दियों पर बैठने के दाँव-पेंच होते थे। इस आचरण-हीनता को देख कर मुसोलिनी का दिल जलता था और उस का और उस के दलवालों का व्यवस्थापक-सभा, व्यवस्थापकी राज और प्रजासत्तात्मक कहलानेवाली सभी संस्थाओं की तरफ़ से दिल हटता जाता था। युद्ध छिड़ने से पहले व्यवस्थापक-सभा की युद्ध में शामिल होने या न होने की लंबी चर्चाओं पर लिखते हुए मुसोलिनी ने ऊब कर अपने पत्र 'पोपोलो दे इतालिया' के अग्रलेख में लिखा था, 'भाड़ में जाय यह व्यवस्थापक-सभा!

जिन प्रजा के प्रतिनिधियों को आगे बढ़ कर प्रजा का उत्साह और बल बढ़ाना था, वह ढीली-ढीली बातें कर के प्रजा के उत्साह पर पानी डाल रहे हैं, प्रजा को निर्जीव बना रहे हैं। इन प्रतिनिधियों को गोली से मार देना चाहिए और निर्जीव मंत्रियों को जेल में डाल देना चाहिए। व्यवस्था ठीक करने के लिए ऊपर से शुरुआत करने की ज़रूरत है। इटली की पार्लामेंट वह ज़हरीली फुड़िया है, जो राष्ट्र के सारे खून को खराब कर रही है। इस को काट कर फेंक देना चाहिए।' फिर सन् १९१८ ई० में रण-क्षेत्र से लौट कर मुसोलिनी ने व्यवस्थापक-सभा की चर्चाओं के विषय में लिखा—'हम लड़ाई में विश्वास रखनेवालों ने बड़ी ग़लती की, जो ढिलमिल यक़ीनवालों के हाथ में सरकार की लगाम रहने दी। यह लोग सैकड़ों आदमियों को युद्ध में मरने के लिए भेज कर यहाँ बैठे-बैठे राजनैतिक स्वतंत्रता पर व्याख्यान झाड़ते हैं और तरह-तरह की माँगें पेश करते तथा ऐसी बातें कर रहे हैं, जिन से लड़ाई में हार तक हो सकती है। शायद वे हमारे देश को और अच्छी तरह हलाक करने और दिल खोल कर हमारा खून बहाने की स्वतंत्रता चाहते हैं। उधर सैनिक जिन को मरने के लिए भेज दिया जाता है—जिन्हें ज़रा भी चूँ चाँ करने की स्वतंत्रता नहीं है और अगर करे तो उन्हें गोली से मार दिया जाता है—खाइयों में पूछते हैं कि हम क्यों मरें! और इधर उन को वहाँ भेजनेवाले अभी तक रोम में बैठे यही चर्चा कर रहे हैं कि युद्ध में भाग लिया जाय या नहीं? इस अभागी, अपराधी, दिल की बुड्ढी शास्त्रियों की भीड़ को डुबो देने की ज़रूरत है।' साम्राज्यशाही की झलक मुसोलिनी में पहले-पहल देखने को तब मिली जब यूनान ने युद्ध में मित्र राष्ट्रों की तरफ़ मिलने के लिए क़दम बढ़ाया। मुसोलिनी यूनान की इस हरकत पर बड़ा नाराज़ हुआ क्योंकि युद्ध के बाद सुलह होने पर वह यूनान में इटली का दख़ल चाहता था। मुसोलिनी ने खुल्लम-खुल्ला एलान किया कि इटली की बाढ़ के लिए इटेलियन साम्राज्य की ज़रूरत है, और इटली को एशिया माइनर में साम्राज्य स्थापित करना चाहिए। मगर जब सुलह में इटली की इन माँगों पर ध्यान नहीं दिया गया तब इटली के सब्ज़बाग़ देखनेवाले लोगों को बड़ी निराशा हुई।

लड़ाई से लौटनेवाले देश-भक्तों की टोलियों की इटली भर में जगह-जगह पर 'फ़ेसियो' क़ायम हो गई थीं। लड़ाई से लौटे हुए अधिकतर लोग बेकार फिरते थे, और उन को किसी प्रकार का काम मिलना असंभव था। चीज़ें मँहगी थीं। चारों तरफ़ आर्थिक कष्ट के मारे दंगे-फ़िसाद होते थे। कई प्रांतों की सरकार समाजवादियों के हाथ में थी। क्रांति-कारी—समाजवादी असंतोष की ज़मीन तैयार देख कर लोगों को भड़काते फिरते थे। अस्तु हड़तालों की चारों तरफ़ भरमार थी। लड़ाई से लौटी हुई टोलियाँ अक्सर मार-काट कर डालती थीं। सरकार सब चुप चाप देखती थी। उस में इन सब उत्पातों को रोकने की शक्ति नहीं थी। 'फ़ेसियो' नाम की टोलियों के लोग जिस जगह जैसी ज़रूरत होती थी उस जगह वैसे ही काम अपने-अपने कप्तान के मातहत कर बैठते थे। कहीं ज़बरदस्ती हड़तालें तोड़ डालते थे तो कहीं मज़दूरों की तरफ़ से लड़ बैठते थे। मिलन, ट्यूरिन और फ़्लोरेंस में इन टोलियों का ख़ास तौर पर ज़ोर था। बहुत-से नौजवान अपनी पढ़ाई-लिखाई और काम-

काज छोड़ कर अपने देश का मान बढ़ाने के उत्साह में लड़ाई में भाग लेने गए थे। उन में से बहुत-से सेना में अफ़सर रह चुके थे, और उन्हें आशा थी कि घर लौटने पर उन का वीरों की तरह स्वागत होगा और वे इज्ज़त के साथ देश के राष्ट्रीय जीवन में नेता बनेंगे। मगर मान और इज्ज़त के स्थान में जब उन्हें युद्ध-विरोधियों और निराश जनता के ताने और गालियाँ सुनने को मिलीं और उन को रोटियों के लाले भी पड़ने लगे तब उन्हों ने अपना संगठन कर के अपनी इज्ज़त के लिए अपने हाथ ऊँचे करने का निश्चय किया। मुसोलिनी ने २१ मार्च सन् १६१६ के दिन मिलन में ४५ ख़ास-ख़ास लोगों की एक सभा बुला कर 'फ़ेसिये' का एक संगठन और कार्य-क्रम बनाया, जिस से देश भर में बिखरे हुए फ़ेसियों की टोलियों को एक निश्चित मार्ग और राष्ट्रीय हैसियत प्राप्त हो गई। इस ४५ आदमियों के संगठन का नाम मुसोलिनी ने 'लड़ाऊ टोली'[1] रक्खा जिस का उद्देश बोल्शेविज़म के मुक़ाबले में सिर्फ़ पुरानी समाज-व्यवस्था को क़ायम रखना ही नहीं था क्योंकि मुसोलिनी के शब्दों में 'लड़ाऊ टोली' ने सिर्फ़ 'क़ायम रहने' के लिए जन्म नहीं लिया था बल्कि 'लड़ कर और आगे बढ़ कर', इटली देश में एक सच्चा जीवन पैदा करने के लिए जन्म लिया था। इस टोली का हाल के लिए युद्ध-मंत्र 'क्रांतिकारी युद्ध के क्रांतिकारी फलों के लिए लड़ो' रक्खा गया क्योंकि मुसोलिनी यूरोपीय युद्ध को इटली के लिए क्रांतिकारी मानता था और उस से इटली के लिए जितना फ़ायदा हो सके उठाना चाहता था। इस टोली का कार्य-क्रम भी किन्हीं विशेष सिद्धांतों पर नहीं रचा गया। 'हाल के—काम का' कार्य-क्रम बना लिया गया क्योंकि मुसोलिनी की राय में यह टोली किन्हीं ख़ास सिद्धांतों के प्रचार के लिए नहीं जन्मी थी। 'लड़ाऊ टोली' देश में केवल सुव्यवस्था और जीवन क़ायम करना चाहती थी और वह जिन उपायों से और जैसे हो सके वैसे करना चाहती थी। अस्तु, उस के कार्य-क्रम में ख़ास बातें यह रक्खी गई :—

१. फ़्रियूम और सारे डेलमेशिया को इटली के लिए प्राप्त करना।
२. सब बालिग़ मर्द और औरतों के लिए मताधिकार।
३. सूची-पद्धति से अनुपात निर्वाचन।
४. सेनाएँ भंग कर देने के बाद जल्द से जल्द राष्ट्रीय चुनाव।
५. प्रतिनिधि-सभा के उम्मीदवारों की उम्र ३१ वर्ष से घटा कर २५ वर्ष।
६. प्रतिनिधियों का एक नेशनल ऐसेंबली बनाने के लिए चुनाव।
७. नेशनल ऐसेंबली की तीन वर्ष तक बैठक।
८. नेशनल ऐसेंबली का एक नई राज-व्यवस्था गढ़ना।
६. सिनेट को उड़ा देना।
१०. धंधेवालों का क़ानून बनाने के लिए 'आर्थिक समितियों' को चुनना।
११. मज़दूरों के लिए आठ घंटे की मज़दूरी का क़ानून।
१२. जो मज़दूरों की संस्थाएं अपने उद्योगों का प्रबंध चलाने के योग्य हों उन के द्वारा उन का प्रबंध—ख़ास तौर पर रेलों का—रैल के कर्मचरियों द्वारा प्रबंध।

[1] फ़ेसियो दे कांबैटिमेंटो।

१३. एक जल-सेना का संगठन।

१४. गोला-बारूद के कारखानों पर सरकार का क़ब्ज़ा।

१५. मिलकियत पर कड़ा कर।

१६. कुछ गिरजों के माल पर सरकार का क़ब्ज़ा और पादरियों की कुछ रियायतों को मिटाना।

१७. मौरूसी जागीर मिलने पर कड़ा कर।

१८. मुनाफ़ों में से ८१ सैकड़ा ले लेना।

जिस दिन यह कार्य-क्रम बनाया गया था उसी दिन शाम को फ़ेसिज़्म के व्यवस्थापक-सम्मेलन में "पैदावार में सहकार; बँटाव में वर्ग-संग्राम" का सिद्धांत स्वीकार किया गया और तीन खास निम्न एलान किए गए।

१. युद्ध के वीरों और शहीदों को मान।

२. लीग ऑव् नेशंस स्वीकार, साम्राज्यशाही का विरोध; फ़ियूम और डेलमेशिया पर क़ब्ज़ा।

३. इटली को युद्ध से दूर रखने की सलाह देने वाले सारे उम्मीदवारों का चुनाव में विरोध।

मुसोलिनी का विचार इस समय शायद जर्मनी की तरह पैदावारी धंधों का एक राज्य क़ायम करना था। मगर मुसोलिनी के इस प्रोग्राम के लिए किसी ने बहुत उत्साह नहीं दिखाया। जिन लड़ाई से लौटे हुए सैनिकों पर मुसोलनी अपनी सफलता के लिए आशा रखता था उन्हों ने उस का साथ न दे कर उभाड़नेवाले समाजवादियों की 'लाल पल्टन' को पसंद किया। फ़ेसिस्ट लोगों को भी उस की बातें नहीं जचीं। हथियारबंद लोगों को ले कर सरकारी अफ़सरों का सामना करने के अपराध में मुसोलनी और उस के कुछ खास साथियों को चुनाव के ज़माने में पकड़ कर २१ दिन के लिए जेल में भी डाल दिया गया। उस के उम्मीदवारों की बुरी तरह हार हुई और कुछ ही मास में उस के कार्यक्रम की किसी को याद तक नहीं रही। समाजवादी और बुद्धिमान् राजनैतिक दलों के लोग मुसोलनी के कार्यक्रम की लाश पर मुँह चिढ़ाने और क़हक़हे लगाने लगे। मुसोलनी के दिल को बड़ी चोट लगी। जियोलिटी फिर प्रधान मंत्री हुआ।

मुसोलनी का राजनैतिक कार्यक्रम नाकामयाब हुआ। मगर फ़ेसिस्ट टोलियों की प्रतिदिन मार-काट जारी रही। आए दिन जिधर सुनो उधर से फ़ेसिस्टों की बोलशेविकों से मुठभेड़ और मार-काट हो जाने के समाचार आते थे। फिर फ़ेसिस्टों की दूसरी नेशनल कांग्रेस मई सन् १६२० में मिली तो उस में एक बहुत छोटा-सा कार्यक्रम बनाया गया जिस में सिर्फ़ तीन बातें रक्खीं गईं।

१. लड़ाई का समर्थन।

२. विजय का मान।

३. ज़बानी और अमली राजनीतिज्ञों के समाजवाद का विरोध।

इन तीनों बातों का एक ही अर्थ था, अर्थात् जिन पुराने राजनीतिज्ञों के हाथों में

इटली की लगाम थी उन के प्रति 'घृणा और उन का विरोध'। मुसोलिनी और उस के साथियों को अपनी टोलियों की चारों तरफ़ मार-काट पसंद नहीं थी क्योंकि वे अच्छी तरह समझते थे कि उन का काम पूरा हो जाने पर फिर उन को क़ाबू में रखना असंभव हो जायगा। अस्तु फ़ेसिज़्म को सिर्फ़ एक 'जीवन-दायक लड़ाऊ आंदोलन' ही न रख कर वे उस को जल्दी से जल्दी एक मज़बूत राजनैतिक दल बनाने के प्रयत्न में लगे। मंत्री, उपमंत्री, प्रांतिक मंत्री चुने गए और संगठन करने के लिए चारों ओर देश में आदमी फैला दिए गए। इसी बीच में अप्रैल सन् १९२१ में जियोलिटी ने प्रतिनिधि-सभा को अपनी इच्छा के अनुसार न पा कर भंग कर दिया और फ़ेसिस्ट और राष्ट्रीयता के पक्षपातियों से 'समाजवादी-दल' और 'जन-दल' के लोगों के विरुद्ध सरकार की सहायता करने की प्रार्थना की। राष्ट्रीय पक्षवालों ने इस मौक़े का फ़ायदा उठाया। नए चुनाव में ३५ फ़ेसिस्ट और क़रीब दस राष्ट्रीय पक्ष के स्वतंत्र सदस्य प्रतिनिधि सभा में चुन कर आ गए। मगर सभा में दाख़िल होने के कुछ ही दिन बाद मुसोलनी ने उदारदल के नेता जियोलिटी से साफ़ कह दिया कि राष्ट्रीय पक्ष के भरोसे पर वह न रहे क्योंकि उदार दल की पूछ देश में कहीं नहीं है। उदार दल वालों को देश सहायता नहीं देगा और वे कुछ न कर पायेंगे। जब राजा व्यवस्थापक-सभा के खुलने पर व्याख्यान देने आया तो मुसोलनी अपनी टोली के साथ सभा से उठ कर चला गया। बाद में अख़बारों में एक लेख भेज कर उस ने अपने इस काम को समझाने के लिए एलान किया कि फ़ेसिस्ट राजाशाही तंत्र के माननेवाले नहीं हैं। वे प्रजातंत्रवादी हैं। इस पर राष्ट्रीय पक्ष के सदस्य इस टोली से अलग हो गए क्योंकि वे राजतंत्रवादी थे। अस्तु मुसोलनी अपनी एक मत की टोली का निर्द्वंद नेता बन कर प्रतिनिधि-सभा में बैठा। मगर मिलन के गुट्ट को छोड़ कर आम फ़ैसिस्ट राजाशाही के विरोधी नहीं थे और राजा पर हमले उन्हें बुरे लगते थे। मुसोलनी के एलान का उस के दल में भी विरोध हुआ और मुसोलनी ने जमीन अपने पावों के नीचे से खिसकती देख कर प्रजा-तंत्र का ज़िक्र ही छोड़ दिया और कहने लगा कि फ़ेसिस्ट न प्रजा-तंत्रवादी हैं और न राज-तंत्र-वादी, वे तो देश का भला करना चाहते हैं। मुसोलनी ने अपनी मार-काट करने वाली टोलियों के समाजवादी दलों पर हमले रोकने और समाजवादियों से मेल करने का प्रयत्न भी करना चाहा क्योंकि देश में बोलशेविक क्रांति होने का अब खतरा नहीं रहा था। समाजवादी लोग देश में काफ़ी बदनाम और फ़ेसिस्ट लोग प्रजा की नज़रों में काफ़ी उठ चुके थे। ज़रूरत से अधिक मार-काट जारी रखने से फ़ेसिस्ट दल के बदनाम हो जाने का भी डर था। मगर अधिकतर लड़ने वाली टोलियाँ देशभक्ति के विरोधी समाजवादियों से फ़ैसला करने के बिल्कुल विरुद्ध थीं और वे 'समाजवाद की लाश तक जला देना चाहती थीं। अस्तु मुसोलनी का समाजवादियों से समझौता फ़ेसिस्टों ने स्वीकार नहीं किया। इस पर रौसी और मुसोलनी ने फ़ेसिस्ट दल के सामने अपने इस्तीफ़े रख दिए। मजबूर हो कर दल ने समझौता मान लिया और नेताओं ने इस्तीफ़े लौटा लिए। फिर भी समाजवादियों पर टोलियों की मारकाट जारी रही। मुसोलनी ने दल सुव्यवस्थित और संगठित करने पर बहुत ज़ोर दिया। मुसोलनी के ही आदमी दल के कर्ता-धर्ता चुने

गए। दल का सैनिक भाग अर्थात् फेसिस्ट 'जनदल' का संगठन ठीक किया गया। जनदल के रीतरिवाज और गीत निश्चय किए गए। पुरानी रोमन सैनिकों की चाल, रोमन सलाम और 'इया इया-आ-ला-ला' का नाद अख्तियार किया गया। बिल्कुल रोमन सेना के ढंग पर 'जनदल' का संगठन किया गया और उस का मुसोलिनी स्वयं नायक बना। वर्दी, रोमन सलाम, रोमन चाल, नाद और 'जनदल' के संगठन की नवीनता नौजवानों को बहुत भाई और कालिजों के बहुत से विद्यार्थी और दूसरे नौजवान जनदल में आ आ कर मिलने लगे। फ़ौजी चाल चलने के सिवाय प्रारंभ में जनदल का काम आमतौर पर समाजवादियों की हड़तालें तोड़ना ही था। मगर सौभाग्य से उन्हें शीघ्र ही बड़ा काम मिल गया।

नए चुनाव में अनुपात-निर्वाचन की पद्धति के कारण मध्यवर्गों के गुट्ट ही फिर चुन कर आ गए थे और प्रतिनिध-सभा के क़रीब आधे सदस्य इन गुट्टों के थे। मगर इटली के उत्तर भाग में 'समाजवादी' दल और दक्षिण भाग में अपना नाम 'लोक-दल' रख लेनेवाला पुराना 'केथौलिक दल' भी काफ़ी ज़बरदस्त थे। इन दोनों का आपस में मेल दुर्लभ था। सरकार को चलने के लिए इन दोनों में से एक दल की सहायता अनिवार्य थी। अस्तु सरकार ने इन दोनों को लड़ाने का खेल खेलना शुरू किया। एक के बाद दूसरे लगातार बहुत से मंत्रिमंडल बने और टूटे। 'लोकदल' के हाथों में कुंजी होने से वह अपनी सरकार चाहता था। मध्यम-वर्ग के सदस्य समाजवादी प्रधान मंत्री का नाम तक सुनने को तैयार नहीं थे। समाजवादी सिवाय समाजवादी के और किसी प्रधान-मंत्री के लिए तैयार नहीं थे। राजा मध्य-वर्ग के प्रधान मंत्री चुन-चुन कर हार गया। ऐसा मालूम होने लगा कि राजा को समाजवादी प्रधान मंत्री चुनना पड़ेगा और शायद मुसोलनी भी समाजवादी मंत्रि-मंडल में एक मंत्री का पद लेगा। मगर मुसोलनी ने ख़ुद प्रधान-मंत्री बन कर 'लोकदल' और 'समाजवादी' दलों का एक मंत्रि मंडल बनाने की तैयारी तो ज़ाहिर की मगर किसी दूसरे प्रधान मंत्री के मंत्रि-मंडल में स्वय शामिल होने से साफ़ इन्कार कर दिया। लोग व्यवस्थापक-सभा की इस हालत से थक गए। राष्ट्रीय पक्ष वालों ने—जो सदा से व्यवस्थापकी सरकार के विरोधी थे—फ़ेसिस्टों से मिल कर किसी एक दल पर हमला न कर के 'व्यवस्थापकी सरकार-पद्धति' पर ही ज़ोरों से अख़बारों में हमला शुरू किया। ऊबे हुए अख़बारों ने भी इस हमले में उन का साथ दिया।

इधर मुसोलनी 'उदार सरकार' बनाम 'फ़ेसिस्ट सरकार' पर लेख पर लेख लिख रहा था। २० सितम्बर के दिन विक्टर इमेनूअल की सेनाओं का रोम पर क़ब्ज़ा करने का वर्ष-दिन मनाया गया और इस दिन मुसोलनी ने ऐलान किया कि फ़ेसिस्ट इटली पर शासन करने के लिए तैयार हैं। उस ने आनेवाली फ़ेसिस्ट क्रांति का भी ज़िक्र किया और 'रोम पर कूच करो!' की पुकार शुरू की। राजा से मेल रखने के विचार से उस ने इस बात का भी ऐलान किया कि फ़ेसिस्ट राजा-शाही के विरोधी नहीं हैं; बल्कि उन को उल्टी शिकायत है कि आजकल का राजा अपनी राजसत्ता का पूरा उपयोग नहीं करता है।

फिर .फेसिस्ट की टोलियों के बोलज़ानो से जरमनों को निकाल देने पर भी जब सरकार ने कुछ हस्तक्षेप नहीं किया, तब मुसोलनी ने प्रतिनिधि-सभा के पास अपनी माँगें पेश कर दीं। उस की माँगें यह थीं, 'प्रतिनिधि सभा को भंग कर दिया जाय, चुनाव के क़ानून का सुधार और नया चुनाव शीघ्र से शीघ्र किया जाय। सरकार को राष्ट्र की विरोधी शक्तियों का कड़ाई से सामना करना चाहिए, आर्थिक स्थिति सुधारनी चाहिए, डेलमेशिया छोड़ देने पर फिर से विचार होना चाहिए और फेसिस्टों को, वायुयान के कमीशन पर क़ब्ज़ा और परराष्ट्र, युद्ध, जलसेना, श्रम और सार्वजनिक निर्माण-कार्य के पाँच मंत्रीपद मिलने चाहिए।' उस ने इन माँगों के साथ यह ख़बर भी भेज दी थी कि 'अगर यह माँगें .खुशी से स्वीकार नहीं होंगी', तो वह 'उन्हें ज़बरदस्ती से मंज़ूर कराएगा क्योंकि व्यवस्थापक-सभा के निकम्मेपन से देश को बचाने का अब कोई दूसरा मार्ग नहीं रहा है।' प्रतिनिधि-सभा के राजनीतिज्ञ उस की इन माँगों पर मुस्कराने लगे। वे अधिक से अधिक फ़ेसिस्टों को बिना विभाग के एक-दो मंत्री और दो-चार उपमंत्री पद दे कर संतुष्ट करने को तैयार थे। वे .फेसिज़्म को केवल एक मज़ाक़ और अधिक से अधिक एक नई हवा समझते थे। उस से डरते नहीं थे; क्योंकि फ़ेसिस्ट लोगों की राजनैतिक क्षेत्र में अभी तक अधिक ताक़त नहीं थी। उन के काफ़ी सदस्य तक प्रतिनिधि सभा में नहीं थे।

मगर .फेसिस्टों का उत्तर इटली के लगभग सारे नगरों पर पूरा ज़ोर था। अक्टूबर के महीने में उन्हों ने प्रीफ़ेक्टसों और पुलिस के दफ़्तरों पर क़ब्ज़ा जमाना और दक्षिण के नगरों में अपनी ताक़त फैलाना शुरू कर दिया। जिन रेल और तार के दफ़्तरों की उन्हों ने हड़तालों में रक्षा की थी, उन पर उन्हों ने अब अपना पहरा रख दिया। २४ अक्टूबर को दक्षिण प्रदेश के नेपल्स नगर में दक्षिण में .फेसिज़्म का ज़ोर बढ़ाने के लिए .फेसिस्टों की कांग्रेस बैठी और उस में खुल्लम-खुल्ला क्रांति का ज़िक्र करते हुए मुसोलनी ने कहा कि, 'अगर क़ानूनी तरीक़े से काम नहीं होगा तो फिर .ग़ैर-क़ानूनी तरीक़ों का इस्तेमाल किया जायगा और रोम पर कूच करना पड़ेगा।' .फेक्टा नाम का एक हँसमुख आदमी इस समय प्रधान मंत्री था। मगर वह बेचारा कुछ कर-धर नहीं सकता था; क्योंकि प्रतिनिधि-सभा में उस का बहुमत नहीं था। अस्तु जैसे ही उस की सरकार ने इस्तीफ़ा दिया वैसे ही .फेसिस्ट टोलियों को रोम से तीस मील दूर के एक मुक़ाम पर इकट्ठा होने का 'फ़ेसिस्ट सैनिक समिति' की तरफ़ से हुक्म मिला। और २८ अक्टूबर को रोम में काली क़मीज़ें पहने हुए क़रीब पचास हज़ार .फेसिस्टों की टोलियाँ घुसीं। 'सैनिक समिति' ने कूच का हुक्म देते वक़्त एलान किया था कि यह कूच सेना, पुलिस, राजा अथवा काम करनेवालों के ख़िलाफ़ नहीं है; बल्कि उन 'निकम्मे राजनैतिक गुट्टों के ख़िलाफ़ है, जो चार वर्ष से इटली में मज़बूत सरकार क़ायम नहीं कर सके हैं।' सरकारी फ़ौजें भी आईं; मगर कोई लड़ाई या .खून-ख़राबा नहीं हुआ। २८ अक्टूबर को तीसरे पहर सालंदरा ने मुसोलनी से अपने मंत्रि-मंडल में मंत्री बनने के लिए पूछा। मुसोलनी ने इन्कार कर दिया। अस्तु २६ अक्टूबर को टेलीफ़ोन पर मुसोलनी को राजा ने बुला कर अपना मंत्रि-मंडल बनाने के लिए आज्ञा दी और मुसोलनी दूसरी ही

गाड़ी से यह कहता हुआ मिलन छोड़ कर रोम के लिए चल पड़ा कि, 'कल इटली को मंत्रि मंडल ही नहीं; बल्कि सरकार मिल जायगी।' रास्ते में उस ने उतर कर एक लाख पचास हज़ार एकत्र फ़ेसिस्टों की सलामी ले ३० अक्टूबर को मंत्रि-मंडल तैयार कर के रोम में घुस आनेवाले पचास हज़ार सैनिकों को चौबीस घंटे के भीतर वापस चले जाने का हुक्म दे दिया। दुनिया के इतिहास में यह एक अनोखी क्रांति हुई। इस को विचारों की क्रांति कहना ही अधिक उचित होगा। क्योंकि इटली के नौजवानों ने एक झंडे के नीचे इकट्ठे हो कर बिना ख़ून-ख़राबा किए इटली को बूढ़ों की निर्जीव राजनीति से बचा लिया।

६—फ़ेसिस्ट सरकार

मुसोलनी ने अपने नए मंत्रि-मंडल में अपने सिवाय सिर्फ़ तीन और फ़ेसिस्ट रक्खे। बाक़ी सब मंत्रियों को उस ने एक समाजवादी दल को छोड़ कर और सब दलों से लिया। अपने हाथ में उस ने पर-राष्ट्र-विभाग और ब्लांकी को उपमंत्री बना कर, गृह-विभाग रक्खे। फ़ेसिस्ट अपनी जीत को किसी से बाँटना पसंद नहीं करते थे। उन्हें इस प्रबंध से काफ़ी निराशा हुई जिस से दल में मुसोलनी का बहुत विरोध भी हुआ। मगर मुसोलनी व्यवस्थापक-सभा से मिल कर काम करना चाहता था। मुसोलनी ने व्यवस्थापक-सभा में जा कर सिनेट से तो अपनी गुस्ताख़ियों के लिए क्षमा माँगी और इस 'इटली के प्रख्यात् पूर्वजों की प्रख्यात जगह के लिए' बहुत इज़्ज़त दिखलाई और उस ने वादा किया कि क़ानून के अनुसार ही भविष्य में मैं चलूँगा और दूसरे राष्ट्रों से मेल और इटली में पूर्ण स्वतंत्रता की नीति पर क़ायम रहूँगा। मगर प्रतिनिधि सभा से उस ने बिल्कुल उल्टा व्यवहार किया। वहाँ जाकर वह बोला—'मैं आप के सामने आया हूँ। इस में आप ने मुझे कुछ इज़्ज़त नहीं दी है और न मैं आप से अपनी गुस्ताख़ी के लिए माफ़ी माँगता हूँ। जिन्हें हाल के वाक़यों पर दुःख हो, वह अपने कमरों में बैठ कर अबलाओं की तरह आँसू के दरिये बहा सकते हैं। मैं तो यह मानता हूँ कि क्रांति को अपने अधिकार होते हैं। तीन लाख नौजवान जब मेरे इशारे पर सब कुछ कर गुज़रने को तैयार हैं, तो मैं चाहूँ तो आप की इस निकम्मी सभा में ख़ून की कीचड़ कर दूँ। मैं चाहता तो आप की इस सभा को ठोकर मार कर निकाल देता और निरी फ़ेसिस्टी सरकार क़ायम कर लेता। मगर मैं ने ऐसा नहीं किया; क्योंकि मैं ऐसा नहीं करना चाहता हूँ—कम से कम अभी इस की ज़रूरत नहीं है। फिर उस ने अपना कार्यक्रम बता कर एक साल के लिए सब कुछ सियाह-सफेद करने की पूरी ताक़त की माँग पेश की, जिस से सरकार को सुसंगठित बनाया जा सके और ख़र्च में कमी की जा सके। उस ने वायदा किया कि अपने सारे कामों का हिसाब वह प्रतिनिधि-सभा को देगा। मगर साथ ही उस ने यह भी जता दिया कि प्रतिनिधि-सभा दो दिन या दो वर्ष में जब ज़रूरत होगी भंग की जा सकती है। 'आप को या तो जनता के भावों के सामने सिर झुकाना होगा या नेस्तनाबूद हो जाना पड़ेगा' इन शब्दों में उस ने अपना व्याख्यान समाप्त किया, 'भद्र पुरुषो, देश को अब बहुत-सी अपनी बकवास सुनाना बंद करिए। बावन सदस्य मेरे व्याख्यान पर बोलना चाहते हैं, यह संख्या बहुत बड़ी है।

इस बकवास की बजाय अब हम लोगों को शुद्ध हृदय और सचेत मन से देश का मान और धन बढ़ाने के प्रयत्न में लग जाना चाहिए। ईश्वर मेरे इस काम में मेरी सहायता करे!'

सदस्य नौसिखिए मुसोलनी की फटकार सुन कर दंग रह गए। समाजवादियों का नेता तुराती कहने लगा, 'मुसोलनी फिर यह व्यवस्थापक सभा का भूत क्यों क़ायम रक्खता है। इस से तो सीधा स्वेच्छाचारी राज्य वह चलाए तो मैं पसंद करूँगा।' जियोलिटी ने कहा—'यह प्रतिनिधि सभा इसी क़ाबिल है।' सिनेट के लोग प्रतिनिधि-सभा पर मुसकराने लगे। मगर बाहर देश में और अख़बारों में मुसोलनी के इस व्याख्यान की बड़ी तारीफ़ हुई। प्रतिनिधि-सभा में मुसोलनी की माँग मंजूर हुई और सरकार को एक साल के लिए सारी ताक़त दे दी गई। प्रतिनिधि-सभा ने 'नेस्तनाबूद' होने से 'देश के भावों के सामने सिर झुकाना' ही बेहतर समझा। समाजवादियों और कम्यूनिस्टों ने प्रतिनिधि-सभा में मुसोलनी का विरोध किया। मगर मुसोलनी को 'लोकदल' की तरफ़ से बहुत चिंता थी क्योंकि इस दल की सहायता पर ही मुसोलनी की सरकार निर्भर थी। लोक-दल का नेता डौनस्तरजो, अपने हाथ में कुंजी देख कर कान खड़े करने लगा। वह शिकायत करने लगा कि उस के दल के काफ़ी आदमी मंत्रि-मंडल में नहीं रक्खे गए और फ़ेसिस्ट लोग इटली के दक्षिण भाग में उस के दल की हर तरह से ताक़त तोड़ने की कोशिश करते हैं। अप्रैल सन् १९२३ ई० में लोक-दल की सालाना सभा में मुसोलनी की बड़ी बुराइयाँ भी की गईं। अस्तु मुसोलनी ने अधिक इंतज़ार करना उचित नहीं समझा। लोक-दल के मंत्रि-मंडल में दो मंत्रि थे जिन में से एक तो मर गया और दूसरे का मुसोलनी ने इस सभा के बाद इस्तीफ़ा ले लिया। मुसोलनी को अपनी स्थिति का डर हुआ और इस लिए उस ने चुनाव का क़ानून बदलने की माँग शुरू की। उस ने व्यवस्थापक-सभा के सामने एक मसविदा पेश किया जिस के अनुसार 'जिस दल को देश भर में सब से अधिक मत मिलें उस को हर चुनाव-क्षेत्र से दो तिहाई जगहें मिल जानी चाहिए।' मुसोलनी ने एक व्याख्यान में कहा कि, 'मैं अपने चारों ओर सारे राजनैतिक दलों के खंडर बिखरे हुए देखना चाहता हूँ जिस से फ़ेसिज़्म की एक इमारत ही पर सब की नज़रें पड़ें। अगर यह मसविदा प्रतिनिधि-सभा स्वीकार नहीं करेगी तो एक दूसरी क्रांति करनी पड़ेगी।' लोक-दल का नेता इस धमकी को सुन कर चुपचाप इस्तीफ़ा दे कर चला गया और यह चुनाव का क़ानून इस संशोधन के साथ पास हो गया कि सब से अधिक मत मिलने के साथ-साथ कम से कम मतों के २५ फ़ी सदी मत भी मिलने चाहिए।

प्रतिनिधि-सभा का नया चुनाव हुआ और फ़ेसिस्टों के जनदल ने देश भर में चुनाव के दिन एकत्र हो कर फ़ेसिस्टों की मदद की। देश भर में जितने मत पड़े थे उस के दो तिहाई फ़ेसिस्टों को मिले। मुसोलनी ने सोचा कि अब प्रतिनिधि-सभा ठीक तरह से काम करेगी। उस की व्यवस्थापक-सभा के काम के बारे में यह राय थी कि जो मसविदे मंत्रि-मंडल व्यवस्थापक-सभा के सामने रक्खे उन पर निष्पक्ष रूप से विचार करना और उन पर अपनी निष्पक्ष सलाह देना व्यवस्थापक-सभा का काम है न कि हमेशा सरकार का विरोध करना। उस को यह देख कर बड़ा आश्चर्य और दुःख हुआ कि नई प्रतिनिधि-

सभा के शुरू होते ही अल्प संख्या के दलों ने चुनावों और सरकार के विरोध का और अपने-अपने दलों के कार्यक्रमों का रोना फिर उसी पुरानी चाल से शुरू कर दिया। समाजवादियों के दो नेता ऐमेनडोला और मेटियोटी को खास कर सरकार को तंग करने में मज़ा-सा आता था। मुसोलनी ने इन दलों से मेल करने और उन्हें समझाने की बड़ी कोशिशें कीं। उस ने समझाया कि 'तुम लोग जो यह अपने-अपने कार्यक्रमों से चिपक गए हो इस का अर्थ क्या है ? तुम्हें आगे या पीछे किधर भी तो जाना होगा। या तो ताक़त और हिम्मत हो, तो क्रांति कर के सत्ता हाथ में कर लो अथवा जिन के हाथ में सत्ता है उन का साथ दो।' मगर उस की यह बातें किसी की समझ में न आईं। इसी बीच में दुर्भाग्य से किसी फ़ेसिस्ट ने मेटियोटी की हत्या कर डाली। अब तो विरोधियों ने चीं-पुकार मचा दी। मुसोलनी से इस्तीफ़ा माँगा जाने लगा। 'जनदल' को भंग कर डालने के लिए पुकार मच उठी। मुसोलनी ने राष्ट्रीय पक्ष के लोगों को अच्छी तरह हाथ में रखने के विचार में दो राष्ट्रीय पक्ष के मंत्री अपने मंत्रि-मंडल में और फ़ौरन बढ़ा लिए और कई राष्ट्रीय पक्ष-वालों को फ़ेसिस्ट दल की बड़ी कौंसिल में भी रख लिया। उस ने अपने दल को फिर से संगठित करने और हिंसा को दबाने का वादा किया मगर अपना इस्तीफ़ा देने या 'जनदल' को भंग करने में साफ़ इन्कार कर दिया। इस पर लगभग सारे विरोधी प्रतिनिधि सभा छोड़ कर ऐवेंताइन पहाड़ी पर एक आफ़िस में जा बैठे और वहाँ से क़लम और स्याही की गोला-बारूद और काग़ज़ी वायुयानों से फ़ेसिस्टों पर हमले करने लगे। दस राजनैतिक दलों और छः सात गुट्टों ने मिल कर फ़ेसिस्टो की सरकार पर हमला शुरू किया। मुसोलनी ने उन्हें मनाने की बड़ी कोशिशें कीं क्योंकि वह विरोधी दलों को व्यवस्थापक-सभा में स्थान देना चाहता था जिस से कि उन की समालोचना और विचारों का सरकार को लाभ मिल सके। मगर जब विरोधियों को वह किसी प्रकार संतुष्ट न कर सका और उन्हों ने उस की सरकार के ख़ून की माँग जारी ही रक्खी, तो उस ने आख़िरकार मजबूर हो कर विरोधियों को ४८ घंटे के अंदर कुचल डालने का एलान किया। विरोधी अख़बारों को बंद कर दिया गया या उन की आवाज़ कमज़ोर कर दी गई। फ़ेसिस्टों का विरोध करनेवाले वकीलों की सनदें छीन ली गईं और प्रोफ़ेसरों को निकाल दिया गया और सारी विरोधी संस्थाओं को भंग कर दिया गया। अपने पक्षपाती सदस्यों की प्रतिनिधि-सभा के आगे मुसोलनी ने बहुत ही क़ानून और ज़ाब्ते की पाबंदी दिखाई, यहाँ तक कि छोटी-छोटी बजट इत्यादि की तफ़सीलों पर भी, जिन पर व्यवस्थापक-सभा में आम तौर पर चर्चा नहीं होती थी, सदस्यों को चर्चा करने का मौक़ा दिया। फ़ेसिस्ट दल की कौंसिल की तरफ़ से नई फ़ेसिस्ट सरकार क़ायम करने के विचार से निम्न-लिखित बातों पर विचार करने के लिए एक कमीशन भी बैठाया गया :—

१. कार्यकारिणी और धारा का संबंध।
२. सरकार और अख़बार।
३. सरकार और रुपए-पैसे का व्यवहार करनेवाली संस्थाएं।
४. सरकार और गुप्त संस्थाएं।
५. सरकार और अंतर्राष्ट्रीय दल।

६. सरकार और उद्योग संघें।

मगर इस कमीशन की रिपोर्ट के इंतज़ार में न बैठे रह कर मुसोलनी ने स्वयं फ़ौरन ही सरकार को सुधारना शुरू कर दिया। अनुपात-निर्वाचन उस ने एक क़ानून पास कर के बंद कर दिया और स्त्रियों को उस ने भी मताधिकार दे दिए। क़ानून बनाने के बजाय अपने हुक्म निकाल कर काम करने की ताक़त हाथ में ले लेने से उस का काम आसान हो गया था। परंतु पुराने क़ानूनों की आदी अदालतों ने उस के इन हुक्मों पर अमल करने में आना-कानी दिखाई इस लिए उसे न्याय-शासन को बदलने की भी ज़रूरत हुई। 'कौंसिल ऑव् स्टेट' की सरकारी कामों को ग़ैर-क़ानूनी ठहराने की ताक़त छीन ली गई और सारी प्रांतीय अदालतों को तोड़ कर एक अदालत बना दी गई। नए क़ानून बनाए गए जिन में फ़ेसिस्टों के सिद्धांतों का समावेश किया गया और नौकरशाही में भी बहुत कुछ काँट-छाँट की गई। सन् १६२६ ई० के एक अगस्त मास में ही ६५ नायब प्रीफ़ेक्टों को कम कर दिया गया और सत्रह नए प्रांत क़ायम कर दिए गए। सुधार-कमीशन को फ़ेसिस्ट दल के हुक्म के बजाय राजा के हुक्म से काम करने का हुक्म दिया गया। थोड़े से शब्दों में कहा जाय तो सारी सरकार का इन फ़ेसिस्ट सिद्धांतों पर संगठन किया जाने लगा कि, "व्यवस्थापकी सरकार कमज़ोर और केवल दलबंदी का ढकोसला होती है। प्रजा के प्रतिनिधियों की सरकार का अर्थ सिर्फ़ यही होता है कि कुछ पेशावर राजनीतिज्ञों के हाथ में सरकार की लगाम रहती है। दलों के एक दूसरे से झगड़ों के मारे कभी कोई सरकार ताक़तवर नहीं हो पाती और जो सरकार ताक़तवर नहीं उस को सरकार नहीं कहा जा सकता। सरकार को दलों या व्यक्तियों का प्रतिनिधि नहीं बल्कि राष्ट्र का प्रतिनिधि होना चाहिए। सरकार के मुक़ाबले में व्यक्ति को कोई स्वतंत्रता नहीं दी जा सकती। व्यक्ति कुछ नहीं है; सब कुछ इटली है। स्वतंत्रता अधिकार नहीं, कर्तव्य है। जितनी अधिक मज़बूत सरकार होनी है उतनी ही अधिक लोगों को स्वतंत्रता मिलती है। स्वतंत्रता उन राष्ट्रों में होती है जो प्रगतिशील, उद्योगी और सृजक होते हैं और जो अपने सदस्यों की सृजकशक्ति के विकास का मौक़ा देते हैं। जो शक्तिमान् होता है उसी को राष्ट्र पर शासन करने का अधिकार होता है। सरकार की सत्ता पर किसी संस्था के हाथ रखने का अधिकार नहीं है। जब तक सरकार मज़बूत रहती है तभी तक वह सरकार कहलाने और शासन करने की अधिकारी होती है।" राजव्यवस्था के शब्दों के अनुसार इटली के मंत्रिमंडल की कार्यकारिणी सत्ता का जन्मदाता व्यवस्थापक-सभा के स्थान में राजा को समझा जाने लगा और व्यवस्थापक-सभा का काम सिर्फ़ सरकार के प्रस्तावों पर समालोचना और राय ज़ाहिर करना माना गया। फ़ेसिस्ट सरकार, फ़ेसिस्ट दल और फ़ेसिस्टों का 'जनदल' फ़ेसिज़्म के तीन स्तंभ बन गए। फ़ेसिस्ट दल को मुसोलनी ने फिर से अच्छी तरह संगठित किया और राजा का एक हुक्म निकाल कर 'जनदल' को इटली राष्ट्र की 'राजनैतिक पुलिस' बना दिया।

रोसौनी नाम का एक मज़दूरों का समाजवादी नेता उत्तर अमेरिका में इटली के मज़दूरों का संगठन करता था। वहाँ उस ने इटली के मज़दूरों के प्रति दूसरे देश के मज़दूरों का बर्ताव देख कर यह निश्चय किया था कि अभी अंतर-राष्ट्रीय भाईचारे के

समाजवादी विचार पर इटली के मज़दूरों का संगठन करना ठीक न होगा। इटली के मज़दूरों को राष्ट्रीयता के विचारों पर संगठित करना होगा। अस्तु अमेरिका से लौट कर उस ने इटली में मज़दूरों का संगठन इसी सिद्धांत पर करना शुरू कर दिया था और धीरे-धीरे उस ने इटली में बहुत-सी मज़दूरों की संघें भी बना लीं थीं। मुसोलनी और रोसौनी के राष्ट्रीय विचार मिलते-जुलते थे। अस्तु मुसोलनी के हाथ में ताक़त आने के बहुत दिन पहिले ही मुसोलनी ने उस से फ़ेसिस्टों के मेल की बात चलाई थी। नई फ़ेसिस्ट सरकार के संगठन पर विचार करने के लिए अगस्त सन् १९२४ ई० में मुसोलनी ने जो कमीशन बैठाया था उस के बैठने के बाद ही देश भर में चारों तरफ़ मज़दूर और मालिकों के झगड़े छिड़े और एक आर्थिक संकट खड़ा हो गया। अस्तु इस कमीशन ने, जिस का एक सदस्य रोसौनी भी था—अन्य व्यवस्थापक सुधारों पर समय न ख़राब कर के इटली की आर्थिक व्यवस्था पर ही अधिक विचार किया और इटली के लिए एक ऐसी आर्थिक व्यवस्था तैयार की जिस को निम्नलिखित तीन भागों में बाँटा गया था।

१. राष्ट्रीय सरकार और राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था।

२. उद्योग-संघों की क़ानूनी हैसियत।

३. मज़दूरी के ठेकों को उद्योगों के लिए तय करने और उन ठेको पर अमल करने के लिए मज़दूरी के क़ानून और सिद्धांतों के नियम और अदालतें।

इस नई आर्थिक व्यवस्था के अनुसार जो सरकार का नया रूप बना उस का नाम कमीशन ने 'सामाजिक सरकार'[1] रक्खा था। कमीशन के सदस्य अच्छी तरह जानते थे कि वे इन नए सुधारों से एक बिल्कुल नई प्रकार की सरकार की रचना कर रहे हैं। उन्हों ने अपनी रिपोर्ट में व्यवस्थापकी सरकार को साफ़ शब्दों में निकम्मा और इटली के अयोग्य बतलाया। उन के इस 'सामाजिक सरकार' के मसविदे में २३ धाराएं थीं जिन के अनुसार उद्योगी संघों की क़ानूनी हैसियत मानी गई थी और व्यापार, उद्योग और खेती के लिए प्रांतों में 'मंडलों' की स्थापना की गई थी। सारे राष्ट्र को ही तीन श्रेणियों में बाँट दिया गया था। एक श्रेणी में साधारण धंधेवाले, कारीगर और सार्वजनिक सेवक; दूसरी श्रेणी में खेती और खेती का उद्योग और तीसरी श्रेणी में उद्योग, व्यापार और मकानों के मालिक वग़ैरह आते थे। इन श्रेणियों की विभिन्न संघों के सदस्यों को एक प्रांतिक मंडल के लिए प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया गया था। तीनों श्रेणियों के तीन प्रांतिक मंडलों की एक-एक सभा और एक-एक कौंसिल रक्खी गई थी। तीनों मंडलों का मिल कर एक 'कॉरपोरेट कालेज'[2] बनाया गया था और हर प्रांतिक कालेज की एक सभा और एक कौंसिल रक्खी गई थी। इन प्रांतिक कालेजों को 'राष्ट्रीय सामाजिक सभा'[3] के सदस्य चुनने का अधिकार था और 'राष्ट्रीय सामाजिक सभा' को अपना अध्यक्ष चुनने का अधिकार था। 'राष्ट्रीय सामाजिक सभा' को तीन श्रेणियों के अनुसार तीन समितियों में बाँट दिया गया था। इन प्रांतिक और राष्ट्रीय संस्थाओं को राष्ट्र का सारा आर्थिक शासन—मज़दूर और मालिकों के झगड़ों को चुकाना और

---

[1]कॉरपोरेट स्टेट [2]कारपोरेट कालेज [3]दि नेशनल कॉरपोरेट कौंसिल।

सरकार को उचित क़ानून बनाने में सहायता करना इत्यादि सौंपा गया था। सरकार को इन संस्थाओं के संगठन में किसी भी समय हस्तक्षेप करने का अधिकार रक्खा गया था। परंतु सरकार किसी संस्था को भंग कर दे, तो छः मास के अंदर ही दूसरी नई संस्था का चुना जाना ज़रूरी रक्खा गया था। कुछ लोगों का प्रस्ताव था कि 'राष्ट्रीय सामाजिक सभा' को इटली की व्यवस्थापक-सभा की तीसरी शाखा बना देना चाहिए। मगर कमीशन ने यह निश्चय किया कि व्यवस्थापक-सभा की प्रतिनिधि-सभा के आधे सदस्यों को चुनने का अधिकार प्रांतिक 'कॉरपोरेट कालेजों' को होगा और प्रतिनिधि-सभा के बाक़ी आधे सदस्यों का चुनाव जैसा अभी तक होता है उसी प्रकार होगा और सिनेट जैसी की तैसी क़ायम रहेगी।

कमीशन के कुछ उदार तबियत के सदस्यों को यह व्यवस्था पसंद नहीं थी। उन का मत था कि इस व्यवस्था से राष्ट्र के नागरिक तंग आर्थिक हितों की कोटियों में बँट जाते हैं, जिस से राष्ट्र के सम्मिलित हित की तरफ़ से लोगों का ध्यान हटा रहा करेगा और इटली में एक मज़बूत राष्ट्र क़ायम होने के बजाय वही पुरानी कमज़ोरियाँ क़ायम रहेंगी। कट्टर राष्ट्रीयता के पक्षपाती 'संघवादियों' का कहना था कि हर एक उद्योग के लिए सिर्फ़ एक ही संघ होनी चाहिए और उस उद्योग में सारे काम करनेवालों को उस एक संघ का ही सदस्य होने के लिए क़ानून द्वारा लोगों को बाध्य करना चाहिए और मज़दूरी के ठेकों को तय करने के लिए हड़तालें करना सरकार के हुक्म से ग़ैर-क़ानूनी ठहरा देना चाहिए। कुछ मज़दूर नेताओं का कहना था कि मज़दूर-संघों पर सरकार का बहुत अधिकार नहीं रहना चाहिए और उन को अपने काम में पूरी तरह से स्वतंत्रता होनी चाहिए। उद्योग-धंधों के मालिक भी इस व्यवस्था से घबराए और उन्हों ने शोर मचाया कि इस क़ानून से तो इटली के सारे आर्थिक जीवन पर रोसौनी के मज़दूर-संघों के महा-मंडल का राजनैतिक कब्ज़ा ही जम जावेगा। आख़िरकार २ अक्टूबर सन् १६२५ ई० को विदोनी के राजमहल में सरकार की तरफ़ से मालिक और मज़दूर दोनों पक्षों के प्रतिनिधि बुलाए गए और उन का यह समझौता हुआ कि मज़दूरी के काम के संबंध में जो ठेके होंगे वे मालिकों की संस्था उद्योग महा-मंडल[1] और मज़दूरों की संस्था 'संघ महामंडल'[2] की अंतर्गत संस्थाओं में ही होंगे। इस विदोनी राजमहल के समझौते को राजा के फ़रमान से क़ानूनी करार दे दिया गया और मालिकों का 'उद्योग महामंडल' और मज़दूरों का 'संघ महामंडल' क़ानूनी संस्थाएँ बन गईं। जिस 'संघ' में कम से कम एक उद्योग या धंधे में काम करनेवालों में से कम से कम दस फ़ीसदी सदस्य न हों उस की क़ानूनी हैसियत नहीं रक्खी गई थी। रोसौनी ने उद्योगों में काम करनेवालों की संघों के महामंडल में धंधों में काम करनेवालों की संघों को भी बाद में मिला लिया, जिस से इटली के नागरिकों के तीन वर्ग न रह कर दो ही वर्ग रह गए। ऐसी संघों को जिन में मालिक और मज़दूर दोनों शरीक हो जाते थे बंद कर दिया गया। हर उद्योग या धंधे में एक दिन की मज़दूरी का औसत मज़दूर-संघों के हर एक सदस्य से और उतना ही हर एक मज़दूर

---

[1] 'कॉन्फ़ेडेरेशन् अव् इंडस्ट्री'

[2] 'कॉन्फ़ेडेरेशन् अव् कार्पोरेशंस'

के लिए मालिकों से चंदा क़ानून के अनुसार इटली में कर की तरह ले लिया जाता है। इस चंदे का उपयोग महामंडलों की संस्थाओं के लिए ही किया जाता है। परंतु इन महामंडलों के अंतर्गत संस्थाओं के सिवाय दूसरी स्वतंत्र संस्थाएँ बनने की क़ानून मुमानियत नहीं करता है। यद्यपि चंदा सब से क़ानून के अनुसार महामंडलों की संस्थाओं के लिए ही लिया जाता है। स्वभावतः लोग महामंडल की संस्थाओं में शामिल होना पसंद करते हैं। इन संस्थाओं के अध्यक्ष और मंत्री संस्थाओं की व्यवस्था के अनुसार चुने जा सकते हैं। मगर गृहमंत्री को यह अधिकारी स्वीकार होने की क़ैद रक्खी गई है। मज़दूर और मालिकों के आपस के ठेके विदोनी राजमहल के समझौते के अनुसार क़ानूनी समझे जाते हैं और उन पर दोनों पक्षों को क़ानून के अनुसार अमल करना पड़ता है। रोसौनी इन ठेकों से सरमाये में मज़दूरों का हिस्सा क़ायम करना चाहता है क्योंकि यह उस के जीवन का एक बड़ा उद्देश है। सैनिकों, पुलीस, सरकारी अफ़सरों और प्रोफ़ेसरों को किसी संघ में शामिल होने की इजाज़त नहीं है क्योंकि वे सरकार के अंग माने जाते हैं। सब के हितों की रक्षा करना सरकार का धर्म माना जाता है और फ़ेसिज़्म सिद्धांत के अनुसार किसी का हित सरकार से अलग नहीं हो सकता। अस्तु, यह सरकारी नौकर अपने हितों की सरकार से रक्षा करने के लिए संघ नहीं बना सकते हैं और न वे सरकार से मज़दूरी के बारे में ठेका कर सकते हैं। परंतु दूसरे सरकारी नौकरों को संघों में शामिल होने की इजाज़त दी जा सकती है। रेल, तार, डाक, टेलीफ़ोन, प्राइमरी स्कूलों में काम करनेवाले और कर एकत्र करनेवाले, इत्यादि कुछ सरकारी नौकरों की अब कई संघें बन गई हैं। 'उद्योगी अदालतें' भी क़ायम कर दी गई हैं और जो इन अदालतों का हुक्म नहीं मानते हैं उन को कड़ी सज़ा दी जाती है। किसी प्रकार की राजनीतिक बातों के लिए मज़दूरों की हड़तालें या मालिकों की तरफ़ से कारखाने बंद तो क़ानून के अनुसार हो ही नहीं सकते हैं। दूसरे प्रकार की हड़तालों और कारखानों को बंद करने के संबंध में भी इतने कड़े नियम रक्खे गए हैं कि लगभग उन की मुमानियत ही सी है। मालिकों के इटली में अब छः महामंडल हैं जिन में 'राष्ट्रीय फ़ेसिस्ट उद्योग महामंडल' सब से प्रमुख है। एक मज़दूरों का 'राष्ट्रीय फ़ेसिस्ट संघ महामंडल' है जिस में विभिन्न धंधों के मज़दूरों के सात 'संघ-मंडल' शामिल हैं। इन सब के ऊपर महामंडलों का सरकारी विभाग है और उस का एक महामंडल-मंत्री होता है। यह मंत्री सरकार की आर्थिक प्रश्नों पर नीति निश्चय करने के लिए 'उद्योग-महामंडल' और 'संघ-महामंडल' के अधिकारियों से अक्सर सलाह लेता है। मुसोलनी ने स्वयं पहले महामंडल-मंत्री का पद ग्रहण किया था क्योंकि वह पुरानी मुर्दा व्यवस्थापक-सभा के स्थान में एक आर्थिक व्यवस्थापक-सभा क़ायम करना चाहता था। उस ने एलान किया था कि सन् १६२६ ई० में इस प्रतिनिधि-सभा की मियाद ख़त्म हो जाने पर नई 'सामाजिक प्रतिनिधि-सभा' काम करना शुरू करेगी। इस 'संघीय प्रतिनिधि-सभा' के चुनाव के बारे में सन् १६२८ ई० में जो नया चुनाव का क़ानून पास किया गया था उस के अनुसार मालिकों और मज़दूरों की तरह संस्थाओं को अपने-अपने उम्मीदवारों के आठ सौ नाम की एक सूची महामंडल-मंत्री को देने का

अधिकार था जिस में से फ़ेसिस्ट दल की कार्यकारिणी की सलाह से महामंडल-मंत्री ४०० नाम चुन लेगा। इन ४०० चुने हुए नामों की एक सूची पर इकट्ठे सब संघों के सदस्यों के मत लिए जायँगे और मतदारों को इस सूची को, बिना कुछ घटाए-बढ़ाए जैसा का तैसा, स्वीकार करने या न करने का ही केवल अधिकार था। अगर मंत्री की चुनी हुई यह सूची मतदारों को स्वीकार न हुई तो इस का अर्थ सरकार में अविश्वास समझा जायगा और उस हालत में रोम की बड़ी अपील की अदालत हुक्म निकाल कर चुनाव की एक नई तारीख़ मुक़र्रर करेगी और सब को अपनी-अपनी सूचियाँ चुनाव के लिए पेश करने का अधिकार होगा। मगर जिन संस्थाओं में पचास हजार या उस से अधिक बाक़ायदा चंदा देनेवाले सदस्य मतदार होंगे, उन्हीं संस्थाओं को उम्मीदवारों की सूचियाँ पेश करने का अधिकार होगा। जिस सूची को सब से अधिक मत मिलेंगे, उस के सारे उम्मीदवार चुन लिए जायँगे। परंतु किसी भी सूची में जितने सदस्य चुने जानेवाले होंगे, उन से तीन चौथाई से अधिक के नाम न होंगे क्योंकि एक चौथाई सदस्य दूसरी सूचियों में से जितने मत उन को मिलेंगे, उस के हिसाब से ले लिए जायँगे। इस क़ानून के अनुसार होनेवाले सन् १९२९ के चुनाव में इटली के ९० फ़ी सदी मतदारों ने 'सामाजिक प्रतिनिधि-सभा' के चुनाव में भाग लिया था और उन में से ९८ फ़ी सदी ने फ़ेसिस्ट दल की सूची के लिए मत डाले थे।

फ़ेसिस्ट सरकार के भविष्य के संबंध में अभी कोई बात निश्चय रूप से कहना कठिन है। यूरोपीय युद्ध के बाद उलट-पलट मच जाने से जगह-जगह पर जो सामाजिक प्रयोग किए जा रहे हैं, फ़ेसिज़्म भी उन्हीं में से एक है। इटली की आज कल जिस संस्था में देखो उस में फ़ेसिज़्म का रंग भरा जा रहा है। पुराने बेरंगे उदार कहलाने वाले स्कूलों की जगह पर अब स्कूलों में राष्ट्रीयता, स्वाभिमान और चरित्र-बल की शिक्षा दी जाती है। इटली जाति को संगठित और मज़बूत बनाने के लिए सात से अट्ठारह वर्ष तक के सभी नवयुवकों को सैनिक शिक्षा दी जाती है। पुरानी मतलबी लोगों की आर्थिक नीति के स्थान में अब राष्ट्र के हित के ध्यान से राष्ट्र का आयव्यय-पत्रक तैयार होता है। सब अदालतों का एक बड़ी अदालत में मिलान कर के न्याय-शासन भी है। फ़ेसिज़्म के इस सिद्धांत पर ज़ोर दिया गया है कि राष्ट्र एक बदन की तरह है जिस के हिस्से नहीं किए जा सकते हैं। फ़ेसिज़्म सिर्फ़ एक कैथोलिक संप्रदाय को मानता है। आर्थिक जीवन में भी राष्ट्रीय हित के विचार से सरकार हस्तक्षेप करती है। सरकार का राष्ट्रीय जीवन के सब पहलुओं पर अधिकार रखने के लिए क़ानूनों को इस तरह बदल दिया गया है कि व्यक्तियों के सरकार के मुक़ाबले में कोई अधिकार नहीं माने गए हैं, और सरकार का हर जगह दबाव रखने की सहूलियतें रक्खी गई हैं। समाज को धंधों और उद्योग के बल पर एक राष्ट्र में संगठित कर के वर्ग-युद्ध से इटली को दूर रखने की योजना की गई है। प्रांतों के स्थानिक-शासन में सब से ज़रूरी आर्थिक बातों का कुछ भी विचार नहीं रक्खा जाता था क्योंकि हर प्रांत में सरकारी आर्थिक समितियाँ रहती हैं। सरकार की सत्ता की कार्यकारिणी सत्ता ही सब से बड़ा पैमाना होने से प्रधान मंत्री, दूसरे मंत्रियों और प्रीफ़ेक्टों की सत्ता बहुत बढ़ा दी गई है। चुनी हुई म्यूनिसिपेलिटियों की जगह अब सरकार की नियत की हुई

म्यूनिसिपेलिटियाँ होती हैं। सरकार को सिर्फ़ साधारण क़ानूनों पर निर्भर न रह कर ज़रूरत पड़ने पर आम तौर पर अपने हुक्मों से काम चलाने का अधिकार है। प्रधान मंत्री की ताक़त का ज़रिया प्रतिनिधि-सभा के स्थान में राजा माना जाता है। व्यवस्थापक-सभा को सिर्फ़ प्रजा के भावों को ज़ाहिर करने का ज़रिया समझा जाता है। उस का सरकारी शासन में हाथ नहीं होता। अखबारों और वकीलों को दबा कर रक्खा जाता है क्योंकि फ़ेसिज़्म के सिद्धांत के अनुसार "सब कुछ राष्ट्र के भीतर है और राष्ट्र के लिए है; राष्ट्र के विरुद्ध कुछ नहीं है। राष्ट्र के द्वारा ही व्यक्ति का हित हो सकता है।" शायद इटली के राष्ट्रीय जीवन के बिखरे हुए कणों को फ़ौलाद में ढालने के लिए फ़ेसिज़्म की भट्टी की ज़रूरत थी। फ़ेसिस्टों का कहना है कि विक्टर इमेनुअल और कैवूर ने इटली को एक राष्ट्र बनाया, मेज़िनी और गेरीबाल्डी ने इटली को राष्ट्रीय जीवन दिया और फ़ेसिज़्म ने इटली को राष्ट्रीय सरकार दी। इटली के राजनैतिक क्षेत्र में अब बस एक 'फ़ेसिस्ट दल' ही का राज है। दूसरे सारे दल लुप्त हो गए हैं।

इस दल ने मुसोलनी को इतना ऊँचा चढ़ा दिया है और उस की इतनी पूजा होने लगी है कि 'दल का राज होने के बजाय' 'मुसोलनी का निरंकुश राज' है, कहा जाय तो भी अनुचित न होगा। यह स्थिति कब तक क़ायम रहेगी, अथवा इस का क्या परिणाम होगा आज निश्चय रूप से नहीं कहा जा सकता। मुसोलनी ने पुराने रोमन सीज़रों की तरह अबीसीनिया राष्ट्र पर चढ़ाई कर के उस को हड़प लिया है और इटली राष्ट्र को एक 'मज़बूत राष्ट्रीय सरकार' देने का अपना दावा ही पूरा नहीं कर दिया है बल्कि इटली राष्ट्र को एक साम्राज्य भेंट किया है जिस से इटली के लोग उस पर दीवानों की तरह लट्टू दीखते हैं। कुछ दिन पहले का कमज़ोर और लचर इटली आज यूरोप के सर्व-शक्तिमान राष्ट्रों में ही नहीं गिना जाने लगा है, बल्कि यूरोप के सुख और दुःख की कुंजी सी उस के हाथ में आ गई दीखती है। मुसोलनी के सारे स्वप्न अभी पूरे नहीं दीखते हैं और नई शक्ति और मान प्राप्त अपने मदोन्मत्त देशवासियों को वह कहाँ और ले जायगा अभी नहीं कहा जा सकता। उस ने पुराने रोमन सीज़रों की तरह सफ़ेद घोड़े पर चढ़ कर हाल ही में अपने साम्राज्य लीबिया में प्रविष्ट हो कर जो भाषण दिया और इटली सरकार स्पेन में जो हरकतें कर रही है अथवा जो प्रयत्न मेडीटेरेनीयन सागर में इटली का प्रभुत्व जमाने के लिए किए जा रहे हैं, उस से यह प्रतीत होता है कि इटली की नई नीति से यूरोप में दूसरा भयंकर महाभारत छिड़ जायगा। यदि यूरोप में दूसरा युद्ध छिड़ा तो उस के बाद फिर भी इटली में फ़ेसिस्ट राज्य क़ायम रहेगा या इस युद्ध में फ़ेसिज़्म और यूरोपीय सभ्यता सभी भस्मीभूत हो जायँगी, नहीं कहा जा सकता।

अभी तो चैन से गुज़रती है,
आक़बत की ख़ुदा जाने।

बेलजियम की सरकार

१—राज-व्यवस्था

फ्रांस और जरमनी के बीच में बसा हुआ बेलजियम देश यूरोप का कुरुक्षेत्र रहा है। पिछली यूरोप की लड़ाई में जरमनी ने पहले-पहल बेलजियम को ही धर दबोचा था और इसी देश की भूमि पर यूरोप के सैनिकों के ख़ून की नदियाँ बही थीं। बेलजियम, शारल्मेन, पंचम चार्ल्स और नेपोलियन बोनापार्ट के साम्राज्यों का भाग रहा और स्पेन, आस्ट्रिया, फ्रांस, और हॉलैंड की गुलामी करने के बाद उसे स्वाधीनता मिली। इतने यवनों की दासता में रह कर भी बेलजियम ने किसी तरह अपनी हस्ती क़ायम रक्खी और फ्रांस की राजक्रांति होने पर उस से सबक़ ले कर बेलजियम की राष्ट्रीय कांग्रेस ने भी स्वाधीनता का एलान कर दिया। ७ फ़रवरी, सन् १८८३ ई० का दिन बेलजियम के इतिहास में सुनहरा दिन था। उस दिन स्वाधीन बेलजियम की राज व्यवस्था को राष्ट्र ने स्वीकार कर के सेक्सकोबर्ग के लियोपोल्ड के सिर पर स्वाधीन बेलजियम की सीमित राजाशाही का ताज रक्खा था। हॉलैंड ने बहुत हाथ-पाँव पीटे। मगर दूसरे राष्ट्रों ने उस की परवाह न कर के बेलजियम को स्वाधीन राष्ट्र स्वीकार कर लिया।

बेलजियम की इस राज-व्यवस्था के अनुसार देश को नौ प्रांतों में बाँटा गया और उन के विभाग करने और सीमाएँ बदलने के लिए नया क़ानून बनाने की ज़रूरत होने की शर्त लगा दी गई, और नागरिकों को भी बहुत-से अधिकार दिए गए। 'क़ानून के सामने सब को एक' माना गया; 'जाति और वर्ग-भेद' को सरकार की तरफ़ से स्वीकार नहीं किया गया; सब को 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' मानी गई; बिना वारंट किसी को चौबीस घंटे से

अधिक क़ैद रखने की और किसी के घर और माल में हस्तक्षेप करने की सख्त मनाई कर दी गई; धार्मिक स्वतंत्रता, अखबारों की स्वतंत्रता, बोलने, मिलने और सरकार से विनती करने की स्वतंत्रता भी सब को दी गई। जिस प्रकार गंगा की जन्मदात्री गंगोत्री है उसी प्रकार सारी राजशक्ति की जन्मदात्री, इस राज-व्यवस्था में, जनता को ठहराया गया और इस शक्ति का उपयोग केवल राज-व्यवस्था के नियमों के अनुसार ही करने की शर्त रक्खी गई। क़ानून बनाने का अधिकार राजा, सिनेट और प्रतिनिधि-सभा को मिला कर दिया गया। इन तीनों में से किसी को भी मसविदे पेश करने का अधिकार दिया गया; मगर रुपए-पैसे के मसविदे और फ़ौज-संबंधी क़ानूनों का विचार पहले प्रतिनिधि-सभा के सामने होना ज़रूरी रक्खा गया। सरकार की कार्यकारिणी की सत्ता इंगलैंड की तरह राजा में मानी गई; मगर फ़्रांस के प्रमुख की तरह वह शासन के किसी काम के लिए जवाबदार नहीं समझा जाता है, और उस का कोई हुक्म जब तक उस पर किसी मंत्री के हस्ताक्षर न हों बाक़ायदा नहीं होता है। शासन के कामों के लिए जवाबदार मंत्री होते हैं। न्याय का शासन अदालतें करती हैं। मगर क़ानूनों का अर्थ व्यवस्थापक-सभा करती है। अमेरिका की तरह बेलजियम की कोई अदालत किसी क़ानून को राज-व्यवस्था के विरुद्ध बता कर ग़ैरक़ानूनी नहीं ठहरा सकती है। बेलजियम की सरकार सीमित राजाशाही है। सरकार पर प्रजा का पूरा क़ब्ज़ा है और व्यवस्थापक-सभा को हर बात का आख़िरी अधिकार है। इस राज-व्यवस्था को संशोधित करने के लिए यह ज़रूरी होता है कि पहले व्यवस्थापक-सभा यह तय करे कि किन बातों का राज-व्यवस्था में बदलना या जोड़ना ज़रूरी है। यह तय हो जाने के बाद व्यवस्थापक-सभा की दोनों शाखाएँ भंग हो जाती हैं। फिर जो नई सिनेट और प्रतिनिधि-सभा चुन कर आती हैं उन के सामने वे बातें पेश की जाती हैं। दोनों सभाओं में अलग-अलग तीन-चौथाई से कम सदस्य हाज़िर होने पर इन बातों पर विचार नहीं हो सकता है, और हाज़िर सदस्यों के तीन-चौथाई से कम मत किसी प्रस्ताव के लिए मिलने पर भी वह स्वीकार नहीं होता है।

२—व्यवस्थापक-सभा

बेलजियम की व्यवस्थापक-सभा की दो शाखाएँ हैं—एक सिनेट और दूसरी प्रतिनिधि-सभा।

सिनेट—हर एक प्रांत से कुछ सदस्यों को मतदार और कुछ को प्रांतिक कौंसिलें सिनेट के लिए इस हिसाब से चुनते हैं कि पाँच लाख से कम आबादी के प्रांतों की तरफ़ से तीन और दस लाख की आबादी से बड़े प्रांतों की तरफ़ से चार सदस्य सिनेट में बैठने के लिए जावें। मतदारों द्वारा सीधे सिनेट के लिए चुने जानेवाले सदस्यों की संख्या प्रतिनिधि-सभा के सदस्यों की संख्या से आधी रक्खी गई है। सिनेट के सदस्य आठ साल के लिए चुने जाते हैं और उन में से आधे हर चार साल बाद नए चुने जाते हैं। सिनेट के सदस्य को बेलजियम का अधिकारप्राप्त नागरिक और रहनेवाला, १२०० फ़्रांक

की आमदनी की जागीर रखनेवाला होना चाहिए। जिस प्रांत में सिनेट की उम्मीदवारी के लिए खड़े हो सकनेवालों की संख्या '५००० की आबादी के लिए एक' के हिसाब से कम होती है, उस प्रांत में यह हिसाब पूरा करने के लिए दूसरे कम कर देनेवालों में से सब से अधिक कर देनेवालों के नाम भी सूची में जोड़ दिए जाते हैं। इन नए लोगों को जहाँ उन के नाम दर्ज होते हैं वहाँ से खड़े होने का हक़ होता है। कौंसिलों से जो सिनेट के लिए सदस्य चुने जाते हैं, उन के लिए यह मिलकियत की शर्त ज़रूरी नहीं है। मगर यदि वे उस कौंसिल के—जो उन्हें चुनती है—सदस्य हों या दो वर्ष पहले तक भी सदस्य रह चुके हों तो वह सिनेट के लिए उम्मीदवार नहीं हो सकते हैं। सिनेट के लिए खड़े होने-वालों की उम्र कम से कम चालीस वर्ष होनी चाहिए। सदस्यों को सिनेट में कोई वेतन या भत्ता नहीं मिलता है। बेलजियम के युवराजों को १८ वर्ष की उम्र से सिनेट में बैठने और कार्रवाई में भाग लेने और २१ वर्ष की उम्र से मत देने का अधिकार होता है।

प्रतिनिधि-सभा—प्रतिनिधि-सभा के सदस्यों का चुनाव चार वर्ष के लिए होता है और उन की आधी संख्या सिनेट की तरह हर दो वर्ष बाद नई चुनी जाती है। २५ वर्ष के ऊपर के सारे अधिकारप्राप्त मर्द नागरिकों को अपने रहने की कम्यून में एक वर्ष तक रह चुकने पर प्रतिनिधि-सभा के सदस्यों के चुनाव में मत देने का हक़ होता है। एक से अधिक मत देने का अधिकार भी लोगों को होता है। विवाहित पुरुषों, बाल-बच्चों-वाले रँडुओं को, जिन की उम्र ३५ वर्ष के ऊपर होती है और जो पाँच फ्रांक से कम गृहस्थी का कर नहीं देते हैं, २५ वर्ष से ऊपर के उन लोगों को जिन के पास कम से कम २००० फ्रांक की क़ीमत की असल जागीर होती है, या इस क़ीमत की ज़मींदारी होती है, या जिन का नाम सरकार को क़र्ज़ देनेवालों में होता है, या जिन का बेलजियम के सरकारी सेविंग्स बैंक में इतना रुपया होता है जिस से उन्हें कम से कम १०० फ्रांक का ब्याज मिलता हो, उन सब को चुनाव में एक-एक मत अधिक देने का अधिकार होता है। २५ वर्ष से ऊपर के उन लोगों को जिन के पास ऊँची शिक्षा प्राप्त करने का, या सेकेंडरी का ऊँचा दर्जा पास करने का अधिकार-पत्र होता है, अथवा जो ऐसे अधिकार या धंधे में होते या रह चुके होते हैं जिस में सेकेंडरी शिक्षा के ऊँचे दर्जे की योग्यता की ज़रूरत होती है, उन सब को दो-दो मत अधिक देने का अधिकार होता है। मगर किसी को तीन से अधिक मत देने का अधिकार नहीं होता है। सब मतदारों को मत के अधिकार का उपयोग करना ज़रूरी होता है और जो इस अधिकार का उपयोग नहीं करता है, उस पर २५ फ्रांक जुरमाने से ले कर मत देने और अधिकारी बनने के अधिकार तक छीन लेने का दंड सरकार कर सकती है। आबादी के हिसाब से क़ानून के अनुसार प्रतिनिधि-सभा के सदस्यों की संख्या तय कर दी जाती है। मगर चालीस हज़ार की आबादी के लिए एक प्रतिनिधि से अधिक संख्या नहीं बढ़नी चाहिए। सदस्यों को बेलजियम के अधिकार-प्राप्त नागरिक, देश में रहनेवाला, और कम से कम २५ वर्ष की उम्र का होना चाहिए। सदस्यों को ४००० फ्रांक सालाना का भत्ता और सभा में आने-जाने के लिए मुफ़्त रेल की सवारी दी जाती है।

३—राजा और मंत्री

सेक्स-कोबर्ग के राजघराने को बेलजियम की गद्दी पर बैठने का मौरूसी अधिकार है। राजा को क़ानूनों के अनुसार सिर्फ़ सीमित राजाशाही के अधिकार हैं और इन क़ानूनों के भीतर ही राजा को रहना पड़ता है। उस का कोई हुक्म बिना किसी मंत्री की सही के जायज़ नहीं माना जाता है। इंगलैंड की तरह राजा मंत्रियों के हाथ का गुड्डा होता है। मंत्री प्रतिनिधि-सभा के प्रति ज़िम्मेदार होते हैं और उन्हीं को सरकार के सारे अधिकार होते हैं। राजा मंत्रियों को नियुक्त करता और निकालता है सही। मगर वह उन्हीं को नियुक्त करता है जिन की प्रतिनिधि-सभा में बहुसंख्या होती और जब तक यह बहुसंख्या रहती है, तब तक उन को नहीं निकाल सकता है। उसी प्रकार राजा क़ानूनों के स्वीकार और अमल के लिए एलान करता है। मगर वह क़ानूनों को रोक या बंद नहीं कर सकता है। राजा जल और थल सेना का सेनाधिपति होता है और युद्ध, संधि और मैत्री करने के उसे अधिकार माने गए हैं। मगर जिन संधियों से बेलजियम के किसी नागरिक पर कोई व्यक्तिगत असर पड़ता है, वह बिना व्यवस्थापक-सभा के सामने लाए नहीं की जा सकती हैं। व्यवस्थापक-सभा की बैठकें आम तौर पर नवंबर के दूसरे हफ़्ते में शुरू होती हैं। मगर राजा उन को पहले भी बुला सकता है। उस को दोनों सभाओं को भंग करने और सभाओं की बिना राय के एक बैठक में एक बार और अधिक से अधिक एक मास तक स्थगित कर देने के भी अधिकार हैं।

बेलजियम में परराष्ट्र, गृह, कलाविज्ञान, खेती-बारी, उद्योग और श्रम, न्याय, अर्थ, सार्वजनिक निर्माण-कार्य, युद्ध, रेल इन दस विभागों के दस मंत्री होते हैं। इंगलैंड की तरह प्रतिनिधि-सभा की बहुसंख्या के मंत्री नेता होते हैं। मगर फ़्रांस की तरह उन्हें दोनों सभाओं में बोलने का अधिकार होता है। सभाओं को भी उन को सभा में हाज़िर रखने का अधिकार होता है। फ़्रांस की तरह उन से प्रश्न पूछने और उन प्रश्नों पर चर्चा चला कर मंत्रियों पर विश्वास और अविश्वास दिखलाने का अधिकार भी सदस्यों को होता है। हर प्रतिनिधि-सभा शुरू में ही फ़्रांस के चेंबर के ब्युरो की तरह छः भागों में बट जाती है। और हर महीने इन भागों के सदस्य पत्ती डाल कर बदलते रहते हैं। सारे मसविदे पहले इन भागों के पास जाँच के लिए भेजे जाते हैं। अगर किसी मसविदे की जाँच के लिए सभा कोई ख़ास कमेटी बनाती है, तो वह उस के पास भेजा जाता है क्योंकि सभा को ख़ास कामों के लिए ख़ास कमेटियाँ बनाने का भी हक़ होता है। हर ब्युरो अपना एक रिपोर्टर चुन लेता है। ब्युरो के छः रिपोर्टरों और प्रतिनिधि-सभा के अध्यक्ष की एक 'केंद्रीय कमेटी' होती है जो अपना एक रिपोर्टर अलग चुनती है। सभा की दो चुनी हुई स्थायी कमेटियाँ रहती हैं। एक 'रुपए-पैसे और हिसाब-किताब' की कमेटी और दूसरी 'खेती, उद्योग और व्यापार' की कमेटी।

४—न्याय-शासन

सारे बेलजियम के लिए सब से बड़ी एक अदालत जिस को फ़्रांस की तरह सेसेशन

कोर्ट कहते हैं, देश की राजधानी ब्रूसेल्ज़ में बैठती है। उस के जजों को राजा दो सूचियों में से चुन कर नियुक्त करता है। एक सूची ख़ुद अदालत की तरफ़ से बना कर भेजी जाती है और दूसरी सिनेट भेजती है। इस अदालत के नीचे तीन अदालतें अपील की होती हैं, जिन के जजों को राजा उन्हीं अदालतों और प्रांतिक कौंसिलों की भेजी हुई दो सूचियों में से चुन लेता है। उन के बाद वे अदालतें आती हैं, जिन में मुक़दमे लिए जाते हैं। उन के जजों को राजा ख़ुद नियुक्त करता है। मगर उन के प्रधान और उपप्रधानों को अदालतों और प्रांतिक कौंसिलों को भेजी हुई सूचियों में से चुनता है। इन के सिवाय और बहुत-सी फ़ौजदारी की, सैनिक और व्यापारी अदालतें भी होती हैं। मगर फ्रांस और यूरोप के दूसरे देशों की तरह शासकी अदालतें बेलजियम में नहीं होती हैं। जजों को ज़िंदगी भर के लिए नियुक्त किया जाता है और बिना उन का अपराध साबित किए उन को निकाला या मुल्तवी नहीं किया जा सकता है। उन का तबादला भी बिना उन की मर्ज़ी या उन को दूसरा पद दिए नहीं किया जा सकता है।

५—राजनैतिक दल

पिछले यूरोपीय युद्ध तक बेल्जियम में 'कैथोलिक दल' और 'उदार दल' दो ही राजनैतिक दल ज़ोरदार थे। कभी एक का मंत्रिमंडल होता था तो कभी दूसरे का। 'कैथोलिक दल' शुरू में ज़ोरदार था। बाद में 'उदार दल' उस से ज़ोरदार हो गया था। उन्नीसवीं सदी भर 'उदारदल' का ही प्रभाव बेल्जियम की राजनीति पर रहता था। मगर बीसवीं सदी में 'समाजवादी दल' का ज़ोर बढ़ने से 'उदारदल' का ज़ोर घट गया है। लड़ाई के बाद से किसी एक दल का 'मंत्रि-मंडल' बेल्जियम में नहीं होता है। फ्रांस की तरह वहाँ भी कई दलों का मिला कर आम तौर पर 'मंत्रि मंडल' बनाया जाता है। 'समाजवादी दल' श्रमजीवियों की उन्नति करना चाहता है; मगर वह गरम विचारों और समष्टिवादियों का घोर विरोधी है। एक 'समष्टिवादी दल' भी है। लड़ाई के बाद बेल्जियम के टुकड़े करके एक नया 'फ़्लेमिश राष्ट्र' बनाने के उद्देश से एक 'सामना दल' भी बना था। मगर बेल्जियम के सब से ज़बरदस्त राजनैतिक दल 'कैथोलिक दल' और 'समाजवादी दल' दो ही हैं।

जर्मनी की सरकार

१—साम्राज्य की राज-व्यवस्था

इटली की तरह जर्मनी भी बहुत-सी रियासतों में बँटा हुआ था और इन सब रियासतों को मिला कर जर्मनी को एक राष्ट्र बनाने की कठिन समस्या इस देश को भी सुलझानी पड़ी थी। रोमन साम्राज्य की शक्ति का ह्रास हो जाने पर जिस दिखावटी धागे में यह रियासतें बँधी थीं, वह भी टूट गया था। उन्नीसवीं सदी के शुरू में लगभग तीन सौ से अधिक छोटी-बड़ी रियासतों पर ख़ुदमुख़्तार राजाओं का निरंकुश राज्य हो गया था जो प्रजा-सत्तात्मक राज्य के ज़िक्र पर मुँह चिढ़ाते थे और देश के हित से अपने हित को ही अधिक समझते थे। जर्मनी का आर्थिक जीवन संघों, नगरों, प्रांतों और राजाओं के जाले में फँसा पड़ा था। आधे के क़रीब लोग गुलाम थे। नौकरशाही और सैनिकशाही का तूती बोलता था। लोग अज्ञान और उदासीनता में डूबे हुए थे। इंगलैंड और फ्रांस की तरह राजनैतिक जीवन के विकास के जर्मनी में कहीं कोई चिन्ह नहीं थे। नेपोलियन की लड़ाइयों से जर्मनी को यह फ़ायदा हुआ कि बहुत-सी छोटी-छोटी रियासतें ख़तम हो गईं और वियाना की कांग्रेस के समझौते के अनुसार रोमन साम्राज्य के स्थान में जर्मनी में जर्मनी की बाक़ी बड़ी रियासतों के एक संघ का राज्य क़ायम हुआ। सन् १८१५ ई० में जर्मनी आस्ट्रिया की अध्यक्षता में लगभग ३८ ख़ुदमुख़्तार रियासतों का एक संघ था। इस संघ में शासन का कोई एक आम तरीक़ा नहीं था। सब रियासतों में अपना-अपना स्वेच्छाचार चलता था। संघ की एक आम-सभा ज़रूर होती थी। मगर उस में विभिन्न रियासतों के प्रतिनिधि सिर्फ़ एलचियों की तरह आपस में मिल कर सलाह करने के लिए

आते थे। इस सभा का रियासतों पर कोई अधिकार नहीं था। धीरे-धीरे प्रशिया की रियासत के नेतृत्व में चुंगीकरी के लिए एक आम योजना बनी और इस आर्थिक एकीकरण से जर्मनी के बाद के राजनैतिक एकीकरण में भी आसानी हुई। वियाना की कांग्रेस में निश्चय हुआ था कि जर्मनी के संघ की सारी रियासतों को अपने-अपने यहाँ लिखित राज-व्यवस्था और व्यवस्थापक-सभाएँ क़ायम करनी चाहिए। सन् १८१६ ई० से शुरू हो कर धीरे-धीरे लगभग सभी रियासतों को राजव्यवस्था दे दी गई थी और यह व्यवस्थाएँ पिछली यूरोप की लड़ाई तक क़ायम रहीं। यह राज-व्यवस्थाएँ प्रजा-सत्ता के उदार सिद्धांत पर नहीं गढ़ी गई थीं और जर्मनी की सब से बड़ी दो रियासतों प्रशिया और आस्ट्रिया, ने अपने यहाँ कोई राज-व्यवस्था क़ायम नहीं की थी। जर्मनी में बहुत से उदार विचारों के लोग अपने देश में प्रजा-सत्तात्मक व्यवस्थापक-सभाओं का राज देखना चाहते थे। मगर आस्ट्रिया के कूटनीतिज्ञ मंत्री मेटरनिख के प्रभाव ने सारे मध्य-यूरोप को राहु की तरह ग्रस रक्खा था। जहाँ-कहीं उदार विचारों के लोग ज़रा-भी सिर उठाने का प्रयत्न करते थे, वहीं उन को मेटरनिख के इशारे पर फ़ौरन् कुचल दिया जाता था।

फिर भी अंदर-अंदर आग सुलगती रहती थी। स्वयं आस्ट्रिया की राजधानी वियाना तक में उपद्रव हो जाते थे। जब सन् १८४८ ई० में फ्रांस में राज्यक्रांति हुई तब जर्मनी में भी चारों ओर आग भड़क उठी। जहाँ-तहाँ रियासतें घबरा कर प्रजा को अधिकार देने लगीं। आख़िरकार सन् १८१५ ई० की संघयोजना की, राष्ट्र के विचार से, पुनर्घटना करने का विचार करने के लिए प्रजा के ५८६ प्रतिनिधियों का—पचास हज़ार की आबादी के लिए एक प्रतिनिधि के हिसाब से—फ्रेंकफर्ट में एक सम्मेलन बुलाया गया। इस सम्मेलन में देश भर से सिर्फ़ प्रजा के चुने हुए प्रतिनिधि ही आए थे और सरकार या राजाओं की तरफ़ से किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया गया था। इस प्रकार की सभा जर्मनी के इतिहास में पहली ही बार बैठी थी। मगर इस सम्मेलन के सदस्य इतने विभिन्न विचारों के थे कि वे आपस में मिल कर शीघ्र ही कोई एक राज-व्यवस्था नहीं तैयार कर सके। वे एक वर्ष तक छोटी-छोटी बातों पर ही आपस में झगड़ते रहे। और इस बीच में रियासतों ने उठती हुई प्रजा को दबा दिया जब सम्मेलन ने अपनी व्यवस्था तैयार कर के पेश की तो निरंकुश राजा ग़ुर्राने लगे। इस सम्मेलन में क़रीब दो सौ प्रजातंत्रवादी सदस्य थे परंतु फिर भी नई राज-व्यवस्था में एक वैध साम्राज्य, दो-सभा की एक व्यवस्थापक-सभा, सर्वसाधारण को मताधिकार और उत्तरदायी मंत्रिमंडल की व्यवस्था रक्खी गई थी। अधिकतर रियासतों ने इस राज-व्यवस्था को स्वीकार कर लिया था। मगर जिन बड़ी रियासतों की बिना मंजूरी के इस राज-व्यवस्था का सफल होना एक क्षण के लिए भी संभव नहीं था उन में से एक ने भी इस को स्वीकार नहीं किया था। जब सम्मेलन की ओर से प्रशिया के राजा को राजछत्र की भेंट की गई तो उस ने उसे यह कह कर लेने से इन्कार कर दिया कि "राजछत्र अमीरों के और मेरे हाथों में है। प्रजा को मुझे राजछत्र देने का अधिकार नहीं है।" अस्तु, यहाँ पर इस राजनैतिक नाटक का पटाक्षेप हो गया और इस के बाद सन् १९१८ ई० तक फिर जर्मनी में प्रजासत्ता ने सिर ऊँचा नहीं किया।

सन् १८४८ ई० की इस क्रांतिकारी लहर का इतना अच्छा नतीजा ज़रूर निकला कि प्रशिया के राजा ने अपनी रियासत में सन् १८५० ई० में एक राज-व्यवस्था क़ायम की, जिस के अनुसार दो-सभा की एक व्यवस्थापक-सभा स्थापित हुई, सर्व-साधारण के एक काफ़ी भाग को मताधिकार मिला और बहुत-से व्यक्तिगत अधिकार प्रजा के माने गए। यही राज-व्यवस्था प्रशिया में लड़ाई के बाद तक क़ायम थी। जर्मनी भर में एक प्रशिया ही ऐसी रियासत थी जहाँ किसी क़िस्म की राज-व्यवस्था क़ायम थी और जहाँ प्रजा के थोड़े बहुत कुछ अधिकार माने जाते थे। अस्तु! जर्मनी को 'एक सुसंगठित और प्रभावशाली राष्ट्र बनाने का स्वप्न' देखनेवाले देशभक्तों की आँखें प्रशिया की ओर उसी तरह लगी रहती थीं जिस प्रकार इटली में देशभक्तों की आँखें पीयडमोंट रियासत की तरफ़ लगी रहती थीं। दूरदर्शी देशभक्तों का विचार था कि जर्मनी को एक राष्ट्र और जर्मनी में प्रजा-सत्तात्मक सरकार की स्थापना किसी ज़ोरदार जर्मनी की रियासत के द्वारा ही की जा सकेगी और उन्हें ऐसी रियासत एक प्रशिया ही दीखती थी। अतएव बहुत दिनों तक जर्मन राष्ट्र का एकीकरण और उत्थान तथा प्रशिया की उन्नति का जर्मनी में एक ही अर्थ समझा जाता था। प्रशिया का राजा विलयम प्रथम अपनी सेना का अच्छी तरह संगठन कर के तलवार के बल पर जर्मनी को एक राष्ट्र बनाना चाहता था। मगर प्रशिया की व्यवस्थापक-सभा ने उस का साथ नहीं दिया। उस ने बिस्मार्क को अपना प्रधान बनाया। बिस्मार्क ने सारा विरोध कुचल कर फ़ौज का अच्छी तरह संगठन किया और जिस तरह केवोर ने इटली की रियासतों को मिला कर एक राष्ट्र बनाया था उसी तरह उस ने आस्ट्रिया को जर्मन संघ से निकाल कर जर्मन रियासतों को प्रशिया के नेतृत्व में एक जर्मन राष्ट्र में मिला कर जर्मनी में सन् १८६७ ई० में एक राज-व्यवस्था की स्थापना की। इस राज-व्यवस्था के मुख्य अंग चार थे। पहला 'प्रेसीडीयम' अर्थात राष्ट्र की अध्यक्षता प्रशिया के राजघराने में मानी गई। दूसरा अध्यक्ष की सहायता के लिए एक फ़ेडरल चांसलर अर्थात 'संघीय प्रधान' रक्खा गया। तीसरी एक 'बंडसराथ' नाम की राष्ट्रीय कौंसिल थी जिस में सब रियासतों के प्रतिनिधि थे। चौथी एक 'रीशटाग' नाम की सभा थी जिस में देश भर के पुरुषों के मतों से चुने हुए प्रतिनिधि थे।

जर्मनी के दक्षिणी भाग की चार रियासतें इस नई संघ में सम्मिलित नहीं हुई थीं। सन् १८७० ई० में फ्रांस और जर्मनी की लड़ाई छिड़ने पर जर्मनी में देश-प्रेम का उफान आने पर यह रियासतें भी प्रशिया की अध्यक्षता में नए जर्मन संघ में मिल गईं और 'उत्तरी जर्मन संघ' के स्थान में एक नया 'जर्मन साम्राज्य' सन् १८७१ ई० में स्थापित हो गया और इस साम्राज्य के अध्यक्ष प्रशिया के राजा का ख़िताब 'क़ैसर जर्मन' हो गया। नई रियासतों के मिलने से पिछली राज-व्यवस्था में तबदीली करने की भी ज़रूरत हुई और इस लिए इस राज-व्यवस्था में फेरफार करके एक नई राज-व्यवस्था गढ़ी गई। इस राज-व्यवस्था की ७८ शर्तों में उन सब बातों का ज़िक्र है जो आम तौर पर इस प्रकार के दस्तावेज़ों में होती हैं। जर्मन साम्राज्य को यूरोप की सब से बड़ी सैनिक शक्ति बनाने के इरादे से सड़कें, कर, तार और सेना इत्यादि केंद्रीय सत्ता

के हाथ में रक्खी गई जिस से विभिन्न रियासतें जर्मन साम्राज्य की उद्देश-पूर्ति के मार्ग में आड़े न आ सकें। व्यवस्थापक-सभा के बहुमत से राज-व्यवस्था में फेरफार किया जा सकता था। परंतु राज-व्यवस्था के किसी संशोधन के विरोध में बंडसराथ में चौदह मत पड़ जाने पर वह संशोधन अस्वीकार हो जाता था। अकेले प्रशिया के बंडसराथ में सत्रह मत होने से प्रशिया का विरोध होने पर किसी संशोधन का स्वीकार होना असंभव था। अगर प्रशिया किसी संशोधन के पक्ष में हो तो उस के विरुद्ध चौदह मत इकट्ठा करना मुश्किल होता था। सन् १८७१ ई० से १९१४ ई० तक इस राज-व्यवस्था में बाक़ायदा संशोधन तो सिर्फ़ ग्यारह बार ही किया गया, मगर और सब देशों की तरह साधारण क़ानून और रिवाज इत्यादि द्वारा सरकार के रंग में फेरफार होते रहे।

पिछली लड़ाई तक जर्मन साम्राज्य में ९९ वर्ग मील की छोटी ब्रेमेन नगर की रियासत से ले कर प्रशिया की १३४६१६ वर्ग मील की बड़ी रियासत तक कुल मिला कर २५ रियासतें शामिल थीं। जर्मन साम्राज्य न तो पिछले राजाओं के संघ की तरह ही था और न प्रजा का बनाया हुआ ही था। पच्चीस रियासतों की बनाई हुई एक नई रियासत का नाम जर्मन साम्राज्य था। प्रभुता किसी एक रियासत में न रह कर जर्मन साम्राज्य की सरकार में थी। अर्थात् रीशटाग में प्रभुता नहीं थी, रियासतों की प्रतिनिधि बंडसराथ में थी। नागरिकता, कर, माप, तोल, मुद्रा, पेटेंट, जल और थल सेना के संबंध में हर प्रकार के क़ानून बनाने का पूरा अधिकार साम्राज्य को था। उसी तरह रियासतों को अपने बजट बनाने, पुलिस, मार्ग, ज़मीन और शिक्षा के संबंध में हर तरह के क़ानून बनाने का पूरा अधिकार था। बीच के बाक़ी बहुत से विषयों में साम्राज्य और रियासतों दोनों का हाथ रहता था। मगर साम्राज्य के अधिकारों का क्षेत्र दिन-दिन बढ़ता और रियासतों के अधिकारों का क्षेत्र घटता जाता था। परराष्ट्र, जलसेना, डाक और तार का सारा काम सम्राज्य की संस्थाएँ चलातीं थीं। बाक़ी विषयों में साम्राज्य का काम रियासतों की संस्थाओं के द्वारा चलता था। सेना का काम प्रशिया रियासत की संस्थाओं के हाथ में था। अमेरिका के संघीय राज्य का सारा राजकीय काम चलाने के लिए केंद्रीय सरकार की संस्थाएँ होती हैं। मगर जर्मनी में संघीय साम्राज्य की सरकार का बहुत-सा काम सहूलियत के लिए रियासतों की संस्थाओं के द्वारा ही चलाया जाता था। साम्राज्य की सरकार कर और चुंगी लगाती थी और रियासतों की सरकारें उस को उगाती थीं। न्याय का शासन भी साम्राज्य के नाम पर नहीं होता था। रियासतों के न्यायाधीश और न्यायालय ही सारा न्याय का काम करते थे। साम्राज्य की सरकार में साम्राज्य की संस्थाएँ और रियासतों की संस्थाएँ दोनों ही शामिल थीं। जर्मन रियासतों का यह संघ क़ानून के अनुसार भंग नहीं हो सकता था। साम्राज्य की सरकार को संघ से किसी रियासत को निकाल देने, किसी रियासत को विभाजित करने या उस को किसी दूसरी रियासत से मिलाने या बिना किसी रियासत की मर्ज़ी के उस की हैसियत में किसी तरह का फेरफार करने का अधिकार नहीं था। किसी रियासत को भी साम्राज्य से अलग हो जाने अथवा अपनी हैसियत में फेरफार करने का अधिकार नहीं था। अगर कोई रियासत साम्राज्य के अधिकार का उल्लंघन करने का प्रयत्न

करे तो बंडसराथ की सलाह से साम्राज्य की सरकार को उस रियासत पर चढ़ाई करने के लिए सेनाएँ भेजने का अधिकार था।

मगर सब रियासतें बराबर की नहीं समझी जाती थीं। जितनी आबादी शेष चौबीस रियासतों की मिला कर नहीं थी उतनी अकेली प्रशिया की थी। प्रशिया ने संघ बनाने में मेहनत भी बहुत की थी। स्वभावतः प्रशिया का बहुत असर था। प्रशिया का राजा साम्राज्य का शहंशाह था। प्रशिया की वोटें बंडसराथ में सब मसविदों को हरा सकती थीं। परराष्ट्र कमेटी को छोड़ कर बंडसराथ की सब कमेटियों की अध्यक्षता प्रशिया के हाथ में थी। राज-व्यवस्था की शर्तों के अनुसार साम्राज्य की सेना का संगठन और संचालन भी शहंशाह और प्रशिया की रियासत के हाथ में रक्खा गया था। सन् १६१४ ई० तक न तो कोई जर्मन सेना थी और न कोई जर्मन युद्ध-सचिव। सब रियासतों में अलग-अलग सेनाएँ थीं और उन का संगठन और संचालन प्रशिया की अध्यक्षता में होता था। कुछ दूसरी रियासतों ने भी संघ में मिलते वक्त अपने हाथ में कुछ अधिकार रखने की शर्तें कर ली थीं और उन शर्तों के अनुसार कुछ रियासतों को अपनी डाक, तार, कर और रेलवे पर अधिकार थे। रियासतों को दूसरे देशों में अपने-अपने एलची भेजने का अधिकार भी था। मगर एक दो रियासतों को छोड़ कर लगभग सभी ने अपने अलग एलची भेजना बंद कर दिए थे।

२—शहंशाह क़ैसर

जर्मन-साम्राज्य की राज-व्यवस्था के अनुसार प्रशिया का राजा जर्मनी का शहंशाह माना गया था। प्रशिया के राजा की हैसियत से उस की जो कुछ जागीर थी, उस के सिवाय शहंशाह की हैसियत से उस को और कोई जागीर नहीं दी गई थी। शहंशाह का न कोई अलग ताज था, न उस का कोई अलग खज़ाना, और न कोई उस का अलग दर्जा। प्रशिया के राजा को केवल क़ैसर का खिताब दे कर जर्मन-साम्राज्य का अधिपति या शहंशाह मान लिया गया था। जिस नियम और क्रम के अनुसार प्रशिया के राजा गद्दी पर बैठते थे उस के सिवाय शहंशाह की गद्दी के और कोई नियम नहीं थे। परंतु जो प्रशिया की गद्दी का मालिक होता था, वही जर्मन साम्राज्य की राज-व्यवस्था के अनुसार जर्मनी का शहंशाह होने का हक़दार हो जाता था। क़ैसर की व्यक्तिगत और कुल की रक्षा के लिए कुछ नियम ज़रूर थे। क़ैसर किसी को जवाबदार नहीं था। उस पर न तो किसी अदालत के सामने मुक़दमा चलाया जा सकता था और न उस को क़ैसर पद से च्युत किया जा सकता था। उस के शरीर पर हमला करनेवाले के लिए फाँसी की सज़ा रक्खी गई थी और उस पर शब्दों से हमला करनेवाले को कड़ा दंड।

प्रशिया के साम्राज्य की सब से बड़ी रियासत होने से, और बंडसराथ में प्रशिया के बहुत-से मत होने से, तथा प्रशिया के राजा के जर्मनी के शहंशाह होने से साम्राज्य की नीति ढालने का शहंशाह को बहुत मौक़ा रहता था। अगर जर्मनी की किसी दूसरी छोटी रियासत के राजा को जर्मन-साम्राज्य का शहंशाह चुना गया होता तो शहंशाह का साम्राज्य की नीति निश्चय करने में इतना हाथ कदापि न रहता। शहंशाह को बंडसराथ और

रीशटाग की सभाएँ बुलाने, खोलने, स्थगित और बंद करने का अधिकार था। क़ानून के अनुसार रीशटाग को भंग कर के एक मास के भीतर नई रीशटाग का चुनाव कराने का अधिकार बंडसराथ को था। मगर वास्तव में रीशटाग को शहंशाह बंडसराथ की मर्ज़ी से भंग किया करता था। बंडसराथ में पास हो जानेवाले मसविदे रीशटाग के सामने शहंशाह के नाम में पेश किए जाते थे। क़ानून के अनुसार शहंशाह को मसविदे पेश करने का कोई हक़ नहीं था, मगर वास्तव में इस हक़ का ख़ूब प्रयोग होता था। क़ानून के व्यवस्थापक-सभा में पास हो जाने पर अमल के लिए एलान करने का अधिकार शहंशाह को था, मगर उन को नामंज़ूर करने का अधिकार उस को नहीं था। किसी नियम की पाबंदी न होने की बुनियाद पर किसी क़ानून को एलान करने से इन्कार करने का हक़ शहंशाह को था। चांसलर की सही से आर्डीनेंस निकालने का अधिकार भी उसे था।

बंडसराथ के प्रस्ताव पर साम्राज्य की मुख्य अदालत के न्यायाधीश नियत करने और अपराधियों को क्षमा देने का हक़ शहंशाह को था और शहंशाह ही साम्राज्य के क़ानूनों पर अमल करवाता था। अगर कोई रियासत साम्राज्य के नियमों के विरुद्ध काम करती थी, तो शहंशाह बंडसराथ के सामने शिकायत पेश कर के बंडसराथ की मर्ज़ी से उस रियासत पर चढ़ाई के लिए सेनाएँ भेज सकता था। चांसलर और अन्य अधिकारियों को नियत करने और निकालने का काम भी शहंशाह का ही था। अंतर्राष्ट्रीय मामलों में साम्राज्य का प्रतिनिधि क़ैसर होता था। साम्राज्य के नाम पर युद्ध छेड़ने और सुलह करने और साम्राज्य की तरफ़ से एलची भेजने और एलची लेने का काम भी क़ैसर ही करता था। जर्मनी का दुनिया भर में साम्राज्य क़ायम करने की महत्वाकांक्षा पूरी करने के लिए क़ैसर ने अपने इन अधिकारों का अंत में ख़ूब प्रयोग किया था। राज-व्यवस्था के अनुसार बिना शहंशाह की मर्ज़ी के कोई संधि नहीं की जा सकती थी और अधिकतर संधियाँ उसी के प्रस्ताव पर होती थीं। मगर उन संधियों को पूरा करने के लिए जो ऐसे विषयों के संबंध में होती थीं जो साम्राज्य के क़ानूनों के क्षेत्र में आते थे बंडसराथ के मत और उन पर अमल के लिए रीशटाग के मत की ज़रूरत होती थी। युद्ध छेड़ने के लिए भी शहंशाह पर बंडसराथ के मत की शर्त रक्खी गई थी। परंतु साम्राज्य पर एकदम हमला होने पर शहंशाह बिना बंडसराथ की सलाह लिए फ़ौरन् लड़ाई शुरू कर सकता था। अगर शहंशाह को लड़ाई छेड़ना ही हो तो बंडसराथ में प्रशिया के लगभग एक तिहाई से अधिक मतों की सहायता से 'साम्राज्य पर आक्रमण' का बहाना आसानी से पैदा किया जा सकता था। अस्तु सन १९१४ ई० का युद्ध छेड़ने के लिए इसी बहाने को काम में लाया गया था।

साम्राज्य की सेनाओं का सेनाधिपति भी शहंशाह ही माना गया था। संघ क़ायम होने के समय प्रशिया के सिवाय और किसी रियासत के पास कोई जल-सेना नहीं थी। बाद में प्रशिया की यही जल-सेना बढ़ कर साम्राज्य की बड़ी भारी जल-सेना हो गई। मगर वह हमेशा प्रशिया के अधिकारियों के ही हाथों में रही। हर एक रियासत की थल-सेना अलग-अलग थी और उन रियासतों के राजा अपनी-अपनी सेना के सेनापति माने गए थे। परंतु इन सेनाओं की भर्ती, संगठन, क़वायद और व्यवस्था साम्राज्य के क़ानूनों के अनुसार होती

थी। इन सेनाओं की संख्या का निश्चय साम्राज्य की धारा-सभा करती थी और उन का खर्च साम्राज्य के ख़ज़ाने से दिया जाता था। शहंशाह क़ैसर सारी सेनाओं का सेनाधिपति माना जाता था और उस को अधिकारियों को नियुक्त करने, सेनाओं का मुआयना करने, इकट्ठा करने और युद्ध के समय जिस तरह चाहे इस्तेमाल करने का अधिकार था। जर्मन-साम्राज्य का कोई युद्ध-सचिव नहीं था। प्रशिया का युद्ध-सचिव ही साम्राज्य का सारा काम चलाता था। इस प्रकार जर्मन-साम्राज्य की सारी महान् सेना लड़ाई के लिए एक-रूप संगठित सेना थी, और शहंशाह क़ैसर को उस को ले कर दुनिया पर चढ़ाई कर देने का अधिकार था, जैसा कि उस ने अभिमान में चूर हो कर सन् १६१४ ई० में करने का प्रयत्न किया।

३—चांसलर

जिस स्थान पर बृटिश साम्राज्य में मंत्रि-मंडल होता है, उस पर जर्मन-साम्राज्य में सिर्फ़ एक अधिकारी होता था, जिस को चांसलर कहते थे। चांसलर को शहंशाह नियुक्त करता था। चांसलर बंडसराथ का अध्यक्ष होता था, और बंडसराथ का सारा काम-काज उस की देख-रेख में होता था। शहंशाह का कोई हुक्म जब तक उस पर चांसलर की सही नहीं होती थी बाक़ायदा नहीं समझा जाता था। शहंशाह के हुक्म पर चांसलर की सही हो जाने से हुक्म की ज़िम्मेदारी चांसलर की हो जाती थी। चांसलर बंडसराथ का सदस्य होता था। अगर शहंशाह किसी ऐसे आदमी को चांसलर नियुक्त करना चाहता था, जो बंडसराथ का सदस्य नहीं होता था तो उस को वह प्रशिया की सरकार की ओर से बंडसराथ में जानेवाले प्रतिनिधियों में प्रशिया के राजा की हैसियत से आसानी से नामज़द कर सकता था। बंडसराथ में प्रशिया की सरकार के प्रतिनिधि की हैसियत से चांसलर दूसरे प्रशिया के प्रतिनिधियों के साथ प्रशिया के राजा का प्रतिनिधि समझा जाता था। बंडसराथ के अध्यक्ष की हैसियत से चांसलर बंडसराथ की बैठकों की तारीख़ें निश्चित करता था। रियासतों और रीशटाग से बंडसराथ के लिए जो काग़ज़ात आते थे वह सब उस के पास आते थे। हर अवसर पर वह बंडसराथ का प्रतिनिधि समझा जाता था। जो मसविदे बंडसराथ में पास हो जाते थे उन को शहंशाह के नाम से वह रीशटाग के सामने विचार के लिए पेश करता था और चांसलर की हैसियत से नहीं बल्कि बंडसराथ के एक साधारण सदस्य की हैसियत से रीशटाग में वह मसविदों पर चर्चा में भाग लेता था। क़ानून पास हो जाने के बाद जब उन को चांसलर शहंशाह के नाम में एलान कर देता था तभी उन पर अमल हो सकता था।

शासन का अधिकतर काम रियासतों की सरकारों द्वारा चलता था। मगर सारे शासन की बागडोर का आख़िरी सिरा चांसलर के हाथ में रहता था। शासन का सारा अधिकार शहंशाह के बाद चांसलर को ही होता था। शहंशाह उस को नियुक्त करता था। शहंशाह के सिवाय और उस को कोई निकाल नहीं सकता था। शहंशाह के प्रतिनिधि की हैसियत से वह शासन का काम चलाता था। पश्चिम की सरकारों में उस की बराबरी का और कहीं कोई अधिकारी नहीं था।

चांसलर के नीचे साम्राज्य का शासन चलाने के लिए बहुत-से शासन-विभाग होते थे। इन विभागों के अधिपति चांसलर नियुक्त करता था और वह चांसलर को शासन-कार्य के लिए जवाबदार होते थे। दूसरे देशों के मंत्रि-मंडल के सदस्यों की तरह उन का चांसलर के साथियों का दर्जा नहीं माना जाता था। कई विभाग-पतियों को मंत्री का खिताब होने पर भी वह चांसलर को ही जवाबदार होते थे। जर्मन साम्राज्य के खास शासन विभागों में पर-राष्ट्र-विभाग, उपनिवेश-विभाग, गृह-विभाग, अर्थ-विभाग, जलसेना-विभाग और डाक-विभाग यह सात विभाग थे। रेल्वे, बैंक और कर्ज़ इत्यादि के शासन के लिए कई कमेटियाँ भी थीं। राज-व्यवस्था में शहंशाह के हुक्म पर चांसलर की सही होने की शर्त में इस बात का ज़िक्र भी था कि चांसलर की सही हो जाने से ज़िम्मेदारी चासलर की हो जाती है। मगर इस ज़िम्मेदारी का इंग्लैंड या फ्रांस की मंत्रियों की ज़िम्मेदारी के मुक़ाबले में कुछ अर्थ नहीं था। इंग्लैंड और फ्रांस में मंत्रियों की ज़िम्मेदारी का अर्थ यह होता है कि अगर व्यवस्थापक-सभा को मंत्रियों के काम में विश्वास न रहे तो मंत्रियों से व्यवस्थापक-सभा इस्तीफ़ा ले सकती है। मगर जर्मन साम्राज्य के मंत्री सिर्फ़ चासलर को जवाबदार होते थे और चांसलर शहंशाह को। रीशटाग के चांसलर के विरुद्ध हो जाने पर भी उस को इस्तीफ़ा देना ज़रूरी नहीं होता था।

४—व्यवस्थापक-सभा : (१) बंडसराथ

जिस प्रकार चांसलर के मुक़ाबले का यूरोप में और किसी जगह कोई अधिकारी नहीं था उसी तरह बंडसराथ की तरह कोई दूसरी सभा भी नहीं थी। हाउस ऑव् लार्ड्स की तरह अथवा फ्रांस की सिनेट की तरह जर्मन-साम्राज्य की बंडसराथ व्यवस्थापक-सभा की सिर्फ़ ऊपरी सभा नहीं थी। बंडसराथ जर्मन-साम्राज्य की केंद्रीय संस्था थी और उस को क़ानून, शासन, परामर्श, न्याय और कूटनीति इत्यादि के बहुत-से अधिकार थे। बंडसराथ के सदस्य रियासतों के प्रतिनिधि होते थे जिन को रियासतों के राजा या सिनेट नियुक्त करती थी। बंडसराथ में कुल मत ६१ थे जिन में से राज-व्यवस्था के अनुसार प्रशिया के १७, बवेरिया के ६, सेक्सनी के ४, वर्टबर्ग के ४, बेडन के ३, हेसे के ३, मेकलेंबर्ग श्वेरिन के २, ब्रंसविक के २, रीशलेंड के ३ और बाक़ी सत्रह रियासतों से एक-एक। ब्रूंसविक के दो मत और वाल्डेक रियासत का एक मत आपस में रियासतों के समझौते से, हमेशा प्रशिया को मिलते थे। रीशलेंड के गवर्नर को शहंशाह नियुक्त करता था और गवर्नर बंडसराथ में जानेवाले प्रतिनिधियों को नियुक्त करता था। अस्तु रीशलैंड के ये तीन मत भी प्रशिया के ही हाथ में रहते थे। मगर क़ानून में यह शर्त रक्खी गई थी कि रीशलैंड के यह तीन मत, प्रशिया का किसी मामले में इन तीन मतों को छोड़ कर बहुमत न होने पर; अथवा बंडसराथ में मत बराबर बट जाने पर और राज-व्यवस्था में संशोधन के प्रश्नों पर प्रशिया के पक्ष में नहीं गिने जायँगे। अगर जन-संख्या के हिसाब से रियासतों में मत बाँटे गए होते तो प्रशिया को एक तिहाई के स्थान में आधे से अधिक मत मिलते, क्योंकि प्रशिया की आबादी और सब रियासतों से मिला

कर अधिक थी। बिस्मार्क ने, दूसरी रियासतों के मन से यह डर दूर करने के विचार से कि जर्मन साम्राज्य-संघ में प्रशिया का राज्य हो जावेगा, प्रशिया के मत कम रक्खे थे। मगर राज-व्यवस्था में संशोधन न करने की शक्ति चौदह मतों में रख कर उस ने प्रशिया के हितों को प्रशिया के हाथों में सुरक्षित रक्खा था।

जिस रियासत के बंडसराथ में जितने मत थे उतने प्रतिनिधि उस को बंडसराथ में भेजने का अधिकार होता था। रियासतों के प्रतिनिधियों की क़ानून के अनुसार एलची की हैसियत होती थी और शहंशाह को उन की एलचियों की तरह रक्षा करनी होती थी। आम तौर पर प्रतिनिधि रियासतों के मंत्री और बड़े अधिकारी होते थे। सभा की हर एक नई बैठक के लिए नए प्रतिनिधि रियासतों से चुने जाते थे। मगर पिछली लड़ाई से कई साल पहले से बंडसराथ की बैठक बराबर बैठी ही रहती थी; इस लिए प्रतिनिधि किसी भी समय भेजे और बुलाए जा सकते थे। प्रतिनिधि बंडसराथ में अपनी राय के अनुसार मत नहीं देते थे। उन की सरकार की जैसी हिदायत होती थी उसी के अनुसार वह मत देते थे। फिर भी बंडसराथ बिल्कुल एक एलचियों की सभा या सिर्फ़ विचार करने की जगह ही नहीं थी। रियासतों के मत जिस तरफ़ पड़ते थे एक साथ पड़ते थे। रियासत के प्रतिनिधियों में से एक प्रतिनिधि भी अपनी रियासत की ओर से सारे मत दे सकता था, क्योंकि मत देने के लिए सारे प्रतिनिधियों के हाज़िर होने की ज़रूरत नहीं होती थी। प्रशिया के बीस मत हमेशा एक साथ पड़ने से प्रशिया की बात हर काम में चलती थी। कभी-कभी छोटी रियासतें मिल कर प्रशिया के प्रस्तावों को किसी विषय पर हरा भी देती थीं।

बंडसराथ की सभा की बैठक शहंशाह अर्थात् शहंशाह के नाम पर चांसलर जब चाहे तब बुला सकता था। चांसलर या उस की ग़ैरहाज़िरी में जिस सदस्य को वह नियुक्त कर दे वह सभा का अध्यक्ष होता था। हर रियासत की तरफ़ से विचार के लिए मसविदे पेश किए जा सकते थे। शहंशाह को विचार के लिए कोई मसविदा पेश करने का हक़ नहीं था। मगर शहंशाह कोई मसविदा चाहता था तो प्रशिया के राजा की हैसियत से अपनी रियासत के प्रतिनिधियों द्वारा उस मसविदे को पेश करा सकता था। सभा की बैठकें आम तौर पर बंद होती थीं। अकसर सभा ख़त्म होने पर सभा की कार्रवाई की एक मुख़्तसर रिपोर्ट अख़बारों को दे दी जाती थी। अगर सदस्यों की इच्छा नहीं होती थी, तो यह रिपोर्ट भी नहीं भेजी जाती थी। आम तौर पर किसी मामले के निश्चय के लिए ६१ मतों की बहु-संख्या काफ़ी होती थी। बराबर मत बँट जाने पर प्रशिया के प्रतिनिधियों को फ़ैसला करने का अधिकार हो जाता था। दो बातों में ६१ मतों की सिर्फ़ बहु-संख्या से फ़ैसला नहीं किया जा सकता था। एक तो राज-व्यवस्था में किसी संशोधन के विरुद्ध १४ मत होने पर वह संशोधन स्वीकार नहीं हो सकता था। दूसरे जल-थल सेना और कुछ करों के संबंध में मतभेद होने पर अगर प्रशिया प्रचलित प्रबंध की तरफ़दारी करता था तो उस में परिवर्तन नहीं किया जा सकता था।

अधिकतर बंडसराथ का काम व्यवस्थापक-सभा की निचली सभा रीशटाग के विचार के लिए मसविदे तैयार करना होता था। यह काम ज़्यादातर बंडसराथ की कमेटियों

में होता था। बंडसराथ की बारह स्थायी कमेटियाँ थीं—आठ राज-व्यवस्था की शर्तों के अनुसार और चार स्थायी नियमों के अनुसार। सेना और कोट, जल-सेना, चुंगी और कर, व्यापार, रेल, तार और डाक, न्याय, हिसाब-किताब और पर-राष्ट्र-विषय की आठ स्थायी कमेटियाँ साल भर के लिए राज-व्यवस्था के अनुसार बना ली जाती थीं। बंडसराथ गुप्त मत डाल कर निश्चय कर देती थी कि किस कमेटी पर किस रियासत के प्रतिनिधि रहें और फिर उन कमेटियों पर प्रतिनिधि नामजद करने का काम उन रियासतों पर छोड़ दिया जाता था। मगर 'जलसेना कमेटी' के सारे सदस्यों और 'सेना और कोट कमेटी' के एक को छोड़ कर और सब सदस्यों को शहंशाह नियुक्त करता था। हर कमेटी में सात सदस्य और कम से कम पाँच रियासतों के प्रतिनिधि रहते थे। जलसेना-कमेटी में सिर्फ़ पाँच सदस्य होते थे। सब कमेटियों के अध्यक्ष प्रशिया के होते थे। एक सिर्फ़ 'परराष्ट्र-विषय-कमेटी' की अध्यक्षता बवेरिया के हाथ में थी।

जर्मन-साम्राज्य की केंद्रीय संस्था होने से बंडसराथ सब तरह का राज-कार्य करती थी और उस को सब तरह के बहुत-से अधिकार थे। राज-व्यवस्था के अनुसार क़ानून बनाने का काम बंडसराथ और रीशटाग दोनों का था। मसविदे शुरू करने का काम ख़ास तौर पर रीशटाग का रक्खा गया था। मगर अमल में आम तौर पर हमेशा बंडसराथ मसविदे पेश करती थी। अर्थ-संबंधी मसविदे तक पहले बंडसराथ में पेश होते थे। मसविदे बंडसराथ में तैयार और पास हो कर रीशटाग के पास विचार और मंज़ूरी के लिए आते थे और क़ानून बन कर शहंशाह के एलान करने से पहले फिर एक बार वे बंडसराथ के पास जाँच और विचार के लिए भेजे जाते थे। हर हालत में क़ानून बनने से पहले हर मसविदे की आख़िरी मंज़ूरी बंडसराथ में होती थी। यह कहना अनुचित न होगा कि रीशटाग की सिर्फ़ मंज़ूरी होती थी और क़ानून बनाती बंडसराथ थी। साम्राज्य के क़ानूनों के शासन का कोई और क़ानूनी प्रबंध न होने पर बंडसराथ ही उन का शासन करती थी और जहाँ-कहीं साम्राज्य के क़ानूनों में त्रुटियाँ नज़र आती थीं उन को आर्डी-नेंसों के द्वारा पूरा करती थी। देश पर आक्रमण होने के सिवाय शहंशाह अपने युद्ध छेड़ने, अपराधी रियासत पर हमला करने और साम्राज्य के क़ानूनों के क्षेत्रों में आनेवाले विषयों के संबंध में संधियाँ करने के अधिकारों का बिना बंडसराथ की सलाह के प्रयोग नहीं कर सकता था। शहंशाह की सलाह से बंडसराथ रीशटाग को भंग कर के नया चुनाव करा सकती थी। बंडसराथ के सदस्यों को अपनी रियासतों के हितों के संबंध में रीशटाग में जा कर चर्चा में भाग लेने का अधिकार था। बंडसराथ साम्राज्य का सालाना बजट तैयार करती थी, साम्राज्य की रियासतों का खाता जाँचती थी और 'शहंशाही बैंक' और शहं-शाही क़र्ज़ कमीशन' पर देख-रेख रखती थी। 'शहंशाही अदालत' के न्यायाधीश शहंशाह बंडसराथ की राय से नियुक्त करता था। रियासतों की अदालत में न्याय न मिलने पर उन अदालतों की अपीलें, साम्राज्य और रियासतों के झगड़े और व्यक्तिगत क़ानून के क्षेत्र में आनेवाले झगड़ों को छोड़ कर, रियासतों के आपस के झगड़े किसी एक पक्ष की शिकायत आने पर बंडसराथ के पास न्याय के लिए आते थे और उन पर बंडसराथ अदालत की

हैसियत से विचार करती थी। किसी रियासत में जब कभी कोई ऐसा झगड़ा खड़ा होता था जिस के न्याय का प्रबंध उस रियासत की राज-व्यवस्था में नहीं होता था, तो किसी एक पक्ष की प्रार्थना पर वह झगड़ा समझौते के लिए और अगर समझौता नामुमकिन हो तो साम्राज्य के क़ानूनों के अनुसार फ़ैसले के लिए बंडसराथ के सामने आता था। इतनी विभिन्न ताक़त बंडसराथ के हाथ में होने से स्वभावतः वह साम्राज्य की सब से शक्तिशाली संस्था थी। जर्मन-साम्राज्य के पक्षपाती कहते थे कि बंडसराथ में सब रियासतों के सचिव होने से बंडसराथ दुनिया की सब से अनुभवी और दक्ष धारा-सभा थी। वह यह भी मानते थे कि बंडसराथ अन्य यूरोपीय व्यवस्थापक-सभाओं की 'ऊपरी सभाओं' की तरह संकुचित और अनुदार नहीं थी। परंतु यह कहना ठीक नहीं है। बंडसराथ में रियासतों के राजाओं के नियुक्त किए हुए प्रतिनिधि होते थे, जो स्वभावतः परिवर्तन के विरोधी होते थे। अस्तु बंडसराथ प्रजासत्ता की पक्षपाती कभी नहीं हो सकती थी।

५—व्यवस्थापक-सभा : (२) रीशटाग

बंडसराथ जिस प्रकार रियासतों की सरकारों की प्रतिनिधि थी, उसी प्रकार व्यवस्थापक सभा की 'निचली सभा' रीशटाग साम्राज्य की प्रजा की प्रतिनिधि समझी जाती थी। रीशटाग विभिन्न रियासतों की प्रजा की प्रतिनिधि नहीं मानी जाती थी बल्कि साम्राज्य की सारी प्रजा की सम्मिलित रूप से प्रतिनिधि समझी जाती थी। जर्मन साम्राज्य में अगर प्रजा की थोड़ी बहुत आवाज़ कहीं थी तो वह रीशटाग में कही जा सकती थी। इंग्लैंड के 'हाउस ऑव् कॉमन्स' या फ्रांस के 'चैंबर ऑव् डेपुटीज़' की तरह शक्तिमान् सभा रीशटाग न होने पर भी वह दुनिया की महान धारा-सभाओं में से थी। राज-व्यवस्था के अनुसार एक निश्चित तारीख़ पर सारे साम्राज्य में रीशटाग के लिए ३९७ प्रतिनिधियों का चुनाव होता था। सारी जर्मनी को एक लाख की आबादी के चुनाव के ज़िलों में इस प्रकार बाँट दिया गया था कि कोई जिला दो रियासतों में फैला नहीं था। हर ज़िले से एक प्रतिनिधि चुना जाता था। प्रतिनिधियों का चुनाव पाँच वर्ष के लिए होता था। दिवालियों, मुहताजों, नागरिकता के अधिकार छिन जानेवाले लोगों और सेना के नौकरों को छोड़ कर हर २५ वर्ष की उम्र के मर्द को अपने ज़िले में मत देने का अधिकार था। एक से अधिक मत कोई नहीं दे सकता था। कोई भी बाक़ायदा मतदार एक साल तक किसी रियासत में रह चुकने पर रीशटाग के लिए चुना जा सकता था। पाँच वर्ष ख़त्म होने से पहले ही रीशटाग भंग हो जाने पर साठ दिन के अंदर नया चुनाव हो कर भंग होने के नब्बे दिन के भीतर नई रीशटाग की सभा होना ज़रूरी था। हर चुनाव का ज़िला तहसीलों में बँटा हुआ था और हर तहसील के मतदारों की सूचियाँ तहसीलों में चुनाव से चार हफ़्ते पहले सब के देखने के लिए रख दी जाती थीं। मतदारों के गुप्तरूप से मत देने का, क़ानून के अनुसार, ख़ास इंतज़ाम रक्खा गया था। अगर किसी उम्मीदवार को, जितने मत उस के ज़िले में पड़ते थे, उन की बहु-संख्या नहीं मिलती थी तो पंद्रह दिन बाद फिर मत पड़ते थे। दूसरी बार मत पड़ने पर

सिर्फ़ वे दो उम्मीदवार ही खड़े हो सकते थे जिन को पहले मत पर सब से अधिक मत मिलते थे। दूसरे मत पर दोनों में से जिस को अधिक मिलते थे वही चुन लिया जाता था। अगर दूसरे मत पर इत्तफ़ाक़ से दोनों को बराबर-बराबर मत मिलते थे तो चिट्ठी डाल कर जिस का नाम निकलता था, वह चुना जाता था।

राज-व्यवस्था के अनुसार साल भर में एक बार रीशटाग की बैठकें ज़रूर होती थीं। जिस समय बंडसराथ की बैठकें न होती हों, उस समय रीशटाग की बैठक नहीं बुलाई जा सकती थी। जब शहंशाह या चांसलर चाहे तब रीशटाग की सभा बुलाई जा सकती थी। शहंशाह की ओर से सभा को बुलावा भेजा जाता था और शहंशाह ख़ुद या उस के नाम पर कोई उस का प्रतिनिधि बड़े ठाट-बाट से सभा की बैठकें खोलता था। रीशटाग की बिना मर्ज़ी के शहंशाह तीस दिन तक रीशटाग की सभा मुल्तवी कर सकता था और बंडसराथ की सलाह से वह उस को भंग कर सकता था। रीशटाग की सभा में सदस्यों की अक्सर बहुत कम हाज़िरी रहती थी। इस के शायद दो कारण थे। एक तो रीशटाग को अधिक सत्ता न होने से सदस्यों का उस के काम में अधिक दिल नहीं लगता था। दूसरे सदस्यों को खर्च के लिए भत्ता भी नहीं मिलता था। घरों से सभा-स्थल तक आने के लिए उन्हें सिर्फ़ रेल की सवारी मुफ़्त दी जाती थी। बिस्मार्क ने शुरू से ही सदस्यों को भत्ते का कट्टर विरोध किया था और समाजवादी संस्थाओं के अपने सदस्यों के गुज़ारे के लिए चंदा जमा करने पर, साम्राज्य की अदालत ने सदस्यों को इस प्रकार की सहायता देना तक ग़ैरक़ानूनी क़रार दे दिया था। जब सभा में अक्सर कोरम तक मिलना असंभव हो गया तब सन् १६०६ ई० में बड़ी अनिच्छा से चांसलर ने रीशटाग के सदस्यों को ३००० मार्क सालाना साम्राज्य के खजाने से देना स्वीकार किया था।

रीशटाग अपने काम-काज के नियम ख़ुद बनाती थी। रीशटाग का एक अध्यक्ष दो उपाध्यक्ष और आठ मंत्री होते थे। चुनाव के बाद, रीशटाग की पहली बैठक में चार हफ़्ते के लिए अध्यक्ष और उपाध्यक्षों का चुनाव होता था। चार हफ़्ते बीत जाने पर पहली बैठकों के शेष समय के लिए दूसरा चुनाव होता था। बाद में हर नई बैठकों के लिए नए अध्यक्षों और उपाध्यक्षों का चुनाव किया जाता था। मंत्रियों का हर जलसे के शुरू में जलसे के पूरे समय के लिए चुनाव कर लिया जाता था। जिस दल की रीशटाग में बहुसंख्या होती थी उसी के यह सब अधिकारी चुने जाते थे। बैठक के प्रारंभ में सभा के सब सदस्यों को चिट्ठी डाल कर जहाँ तक मुमकिन होता था सात बराबर के भागों में बाँट दिया जाता था। फ़्रांस और इटली के ब्युरो की तरह इन भागों का काम सदस्यों के चुनावों की जाँच और कमेटियाँ चुनना होता था। इटली के ब्युरो हर दो मास और फ़्रांस के हर एक मास बाद बदलते रहते थे। जर्मनी में वे सभा के पूरे समय के लिए चुने जाते थे। परंतु पचास सदस्यों के प्रस्ताव करने पर किसी समय भी सदस्यों की फिर से बाँट हो सकती थी। रीशटाग की एक 'चुनाव कमेटी' स्थायी होती थी। दूसरी कमेटियाँ ज़रूरत पड़ने पर सारे ब्युरों से बराबर-बराबर के सदस्य ले कर, चुन ली जातीं थीं। मगर असल में कमेटियों के सदस्यों की सूचियाँ दलों के नेता जैसी बना देते थे उसी के अनुसार चुनाव हो जाता

था। कमेटियों का काम मसविदों पर प्राथमिक विचार करना, उन पर लोगों की गवाहियाँ लेना और रीशटाग के सामने रिपोर्ट पेश करना होता था। मगर सभी मसले कमेटियों के पास नहीं भेजे जाते थे।

यूरोप की दूसरी व्यवस्थापक-सभाओं के ढंग पर सदस्य सभाभवन में अर्धचंद्राकार बैठते थे। सरकारी पक्ष के सदस्य अध्यक्ष की दाहिनी ओर और प्रजापक्षी सदस्य बाईं ओर बैठते थे। दाएँ-बाएँ दोनों ओर सामने की जगहें बंडसराथ के सदस्यों के बैठने के लिए खास तौर पर रहती थीं। सभा का अध्यक्ष दलबंदी से ऊपर माना जाता था और चर्चा में वह इस बात का हमेशा ध्यान रखता था कि पक्ष और विपक्ष में बोलनेवालों को एक दूसरे के बाद बराबर मौक़ा मिलता रहे। सदस्य अपनी जगह या अध्यक्ष के सामने के चबूतरे से, जहाँ से चाहते थे अपनी इच्छा के अनुसार बोलते थे। तीस सदस्यों के प्रस्ताव पर 'चर्चा स्थगित' का प्रस्ताव लिया जा सकता था। रीशटाग की बैठकें क़ानून के अनुसार जनता के लिए खुली होती थीं। उस की चर्चा अखबारों में छपती थी। परंतु स्थायी नियमों के अनुसार अध्यक्ष या दस सदस्यों के प्रस्ताव पर बंद बैठकें भी हो सकती थीं।

जर्मन साम्राज्य की व्यवस्थापक-सभा दो सभा की व्यवस्थापक-सभा के सिद्धांत पर नहीं बनाई गई थी। जर्मन साम्राज्य की व्यवस्थापक-सभा रीशटाग ही थी क्योंकि बंडसराथ क़ानून बनाने के सिवाय और भी बहुत-सा ऐसा काम करती थी जो आम तौर पर यूरोप में व्यवस्थापक-सभा की किसी सभा को नहीं करना पड़ता। मगर चूँकि रीशटाग क़ानून बनाने का काम जर्मनी की अनोखी संस्था बंडसराथ के नेतृत्व और दबाव में करती थी, रीशटाग का साम्राज्य की राजनीति पर बहुत कम असर रहता था। अधिकतर मसले पहले बंडसराथ में ही पेश होते थे। रीशटाग के पास बाद में वे मसले विचार के लिए आने पर रीशटाग उन्हें कुछ दिन तक रोक या लटका ज़रूर सकती थी; मगर बिल्कुल उन को अस्वीकार नहीं कर सकती थी। रीशटाग के बंडसराथ से आनेवाले मसलों को अस्वीकार करने का विचार दिखाने पर बंडसराथ रीशटाग को भंग करने की धमकी दे सकती थी। अस्तु, हमेशा रीशटाग को बंडसराथ की बातें चुपचाप स्वीकार कर लेनी होती थीं। कार्यकारिणी पर भी रीशटाग का कोई दबाव या रोक नहीं थी। चांसलर और मंत्री कोई अपने कामों के लिए रीशटाग के जवाबदार नहीं होते थे। मंत्रियों से रीशटाग के सदस्य सवाल तक नहीं पूछ सकते थे। चांसलर से सवाल पूछे जा सकते थे। मगर वह सदस्यों के सवालों की इतनी कम परवाह करता था कि अक्सर जो दिन सवालों के लिए रक्खा जाता था उस दिन वह सभा में आने की भी तकलीफ़ नहीं करता था। प्रश्नों पर चर्चा के बाद कार्यकारिणी में विश्वास या अविश्वास बतलाने के प्रस्ताव का भी पीछे से नियम हो गया था। मगर इन प्रस्तावों का कार्यकारिणी पर अधिक असर नहीं होता था, क्योंकि जब तक शहंशाह का विश्वास चांसलर पर रहता था तब तक उसे कोई हटा नहीं सकता था। रीशटाग के हाथ में सत्ता न होने से उस के सदस्यों को सरकार की हाँ में हाँ मिलाने का ही काम अधिकतर रहता था। अस्तु बहुत-से कमज़ोर चरित्र और तबियत के सदस्य सरकार

की खुशामद कर के अपना फ़ायदा बनाने की फ़िक्र में ही लगे रहते थे। बाद में तो देश के बहुत-से क़ाबिल आदमियों ने रीशटाग में जाना तक छोड़ दिया था क्यों कि वे उस को निरी बातों की दूकान समझते थे। फिर भी लगातार कड़ी आलोचना कर के रीशटाग सरकार की नीति पर थोड़ा-बहुत असर डाल सकती थी।

६—राजनैतिक दलबंदी और कायापलट

यूरोप की पिछली लड़ाई शुरू होने के समय जर्मनी दुनिया के महान् राष्ट्रों में था। जर्मनी का उद्योग, व्यापार, धन-दौलत, कृषि, विज्ञान, विद्वत्ता, कला, साहित्य, जल और थल सेना इत्यादि दुनियाँ की आँखें चौंधियाते थे। मगर सब तरह की इतनी तरक्क़ी होने पर भी जर्मनी की सरकार निरी निरंकुश थी। ऊपर से देखने में जर्मनी की सरकार इतनी निरंकुश नहीं लगती थी। परंतु वास्तव में वह दुनियाँ की दक़ियानूस से दक़ियानूस निरंकुश सरकारों में से थी। फिर भी जर्मनी की सरकार का काम बड़ी दृढ़ता, होशियारी और योग्यता से चलाया जाता था और दुनियाँ की क़ाबिल से क़ाबिल सरकारों में उस की गिनती होती थी। लेखकों का कहना है कि जर्मनी की सरकार का शासन इतनी सुयोग्यता से चलता था कि अपने अच्छे से अच्छे दिनों में महान् रोम-साम्राज्य या आजकल बृटिश साम्राज्य का शासन भी शायद ही चलता होगा। जर्मनी की सरकार के निरंकुश रह जाने का मुख्य कारण यही हो सकता है कि अवसर आने पर प्रगतिशील राजनैतिक दलों के आपस में मेल न कर सकने से जर्मनी को एक और मज़बूत राष्ट्र बनाने का काम प्रशिया की निरंकुश सरकार और निरंकुशता के कट्टर पुजारी बिस्मार्क के फ़ौलादी हाथों में आ पड़ा था। बिस्मार्क ने अपनी सेना के ज़ोर पर जर्मनी को बड़ा बनाया था। अस्तु, उस की सरकार का बल भी प्रजासत्ता के स्थान पर सेना की सत्ता पर ही क़ायम रहा। जर्मन साम्राज्य की निरंकुशता के सब से ज़बरदस्त तीन स्थंभ कहे जा सकते थे। एक प्रशिया रियासत का 'होहेन-ज़ोलेर्न' राजकुल जो जर्मन-साम्राज्य की शहंशाहियत का मालिक था। दूसरा 'जंकर' नाम के बड़े-बडे ज़मींदारों और तालुक़्क़ेदारों का दल। तीसरी प्रशिया के अधिकार में साम्राज्य की सुसंगठित महान् सेना। जर्मनी के लोगों की फ़र्माबरदारी की आदत और जर्मनी में जान-बूझ कर फैलाए गए 'कल्टूर' का असर भी निरंकुशता के लिए बड़ी उपयोगी चीज़ें थीं। जर्मन शब्द 'कल्टूर' का अनुवाद असंभव है। इस एक शब्द में ज्ञान, तबियत, उत्साह, स्वभाव, महत्वाकांक्षा, सफलता और ध्येय सब का समावेश हो जाता है। पीढ़ियों तक जर्मनी के स्कूलों में बच्चों को एक 'कल्टूर' का पाठ दिया गया था। जर्मनी के नागरिकों के दिमाग़ में एक से विचार और दिलों में एक-सा लोहा और लड़ाई भर दी गई थी। 'झगड़े से जीवन में प्रगति होती है' के सिद्धांत पर जर्मनी को प्रगति के मार्ग पर बढ़ाने की महत्वाकांक्षा रखनेवाले 'कल्टूर' से लिप्त जर्मनी की नई संतान सब राष्ट्रों से झगड़े का दिन-रात स्वप्न देखती थी।

पहले-पहल होहेनज़ोलर्न के राजकुल का स्वीटज़रलेंड के उत्तर में दसवीं सदी में ज़ोलर्न पहाड़ी पर एक क़िला था, जहाँ से वह अपनी जागीर पर शासन करता था। बाद

में यह तेजस्वी राजकुल बढ़ता-बढ़ता जर्मन-साम्राज्य का शहंशाह हो गया। इस राज-कुल के राजा कठोर और कूटनीतिज्ञ होते थे और मित्र और शत्रु किसी के साथ व्यवहार में ज़रूरत पड़ने पर कुछ कसर नहीं उठा रखते थे। वे ईश्वर की ओर से अपने को राज्य का अधिकारी समझते, प्रजा-सत्ता के विचारों को हिक़ारत से देखते और सेना को अपनी राजनीति का केंद्र मानते थे। क़ैसर विलियम दूसरा जो लड़ाई के शुरू होने पर जर्मनी का शहंशाह था खुल्लमखुल्ला अपने व्याख्यानों में कहा करता था कि 'जर्मन जाति ईश्वर की चुनी हुई जाति है। जर्मन-साम्राज्य के शहंशाह के रूप में मुझ में ईश्वर की आत्मा उतरी है। मैं उस का हथियार, उस की तलवार और उस का वारिस हूँ। जो मुझ में विश्वास नहीं करेंगे, उन का सर्वनाश! जर्मनी के बैरियों का सर्वनाश!' साम्राज्य भर की सेना क़ैसर के हाथ में थी। रियासतों या रीशटाग का सेना पर कुछ अधिकार नहीं था। सेना का बजट तक पाँच साल के लिए मंज़ूर हो जाता था। सेना और अपने आप को क़ैसर दो क़ालिब और एक रूह की तरह मानता था और कहा करता था कि 'सेना ने जर्मन-साम्राज्य बनाया है, व्यवस्था-सभा की बहु-संख्याओं ने नहीं'। सेना और सरकार के लगभग सभी अधिकारी 'जंकर' वर्ग के होते थे। जिस प्रकार जर्मन साम्राज्य पर प्रशिया रियासत राज करती थी, उसी प्रकार प्रशिया के सिर पर इस 'जंकर' वर्ग की लाठी रहती थी अर्थात् जर्मन-साम्राज्य की ही लगाम इस वर्ग के हाथ में थी। एक बार चासलर केप्टीवी ने बाहर से जर्मनी में आनेवाले अनाज पर चुंगी कम कर दी थी तो इस वर्ग ने शोरग़ुल मचा कर चांसलर तक को शहंशाह से निकलवा दिया था। बाहर से आनेवाले अनाज पर चुंगी बढ़ी रहने से कि उन के अनाज की क़ीमत बढ़ी रही। यह ज़बरदस्त वर्ग हौहेनज़ौलर्न कुल और निरंकुश राज्य का कट्टर पक्षपाती था।

निरंकुश शासन के क़ायम रहने का एक दूसरा यह भी कारण था कि प्रजापक्ष के दल आपस में मिल कर काम नहीं करते थे। जर्मनी के मज़दूर और किसान मध्यम-वर्ग से मिल कर जंकरों की निरंकुशता का नाश करने का इस लिए प्रयत्न नहीं करते थे कि उन्हें भय था कि मध्यम-वर्ग का राज्य हो जायगा और उन को कुछ फ़ायदा नहीं होगा। मध्यम-वर्ग के लोग भी मज़दूर और किसानों से मिलने से हिचकते थे, क्योंकि उन्हें समाजवाद के राज्य का भय लगता था। इंग्लैंड की तरह जर्मनी में राजनैतिक दलों की सरकार न होने से जर्मनी में सरकार की नीति-निर्माण के लिए दल नहीं बनते थे। अपने हितों की रक्षा करने के लिए और अक्सर अपने आप को आगे बढ़ाने के लिए लोग दल बना लेते थे। राजनैतिक दल जर्मनी में सरकार की नीति की अधिक से अधिक आलोचना करने के सिवाय और कुछ नहीं कर सकते थे। अस्तु, राष्ट्रीय प्रश्नों पर दलबंदी का संगठन होने के बजाय स्थानिक छोटे-छोटे प्रश्नों पर बहुत से दल बन गए थे। बड़े दलों में यूरोपीय लड़ाई शुरू होने से पहले, ख़ास कर पाँच दल थे। 'अनुदार दल'[1], 'मध्य-दल'[2], 'राष्ट्रीय उदार-दल'[3], 'गरम दल'[4] और 'समाजवादी दल'। 'अनुदार दल' में अधिकतर पूर्व और

---

[1]कंसरवेटिव। [2]सेंटर। [3]नेशनल लिबरल। [4]रेडिकल और सोशियलिस्ट।

उत्तर-पूर्व प्रशिया के ज़मींदार लोग, उन के खेतों में काम करनेवाले मज़दूर और दूसरे नौकर और रेलवे के नौकर थे। इस दल की संख्या बहुत न होने पर भी यह दल सब से मुख्य था क्योंकि यह दल प्रशिया की सरकार का सब से ज़बरदस्त पक्षपाती था और इसी दल के लोगों ने साम्राज्य को बनाया था। यह दल स्वतंत्रता से अधिक सरकारी सत्ता में विश्वास करता था। और शहंशाह और अमीरों के अधिकारों का पक्ष ले कर हर प्रकार के राजनैतिक सुधारों का विरोध करता था। देश के बाहर से आनेवाले अनाज पर कड़ी चुंगी, जल-सेना का विस्तार, थल-सेना पर अधिक खर्च, उपनिवेशों का फैलाव और बाहर की दुनिया में जहाँ बने वहाँ जर्मनी की टाँग अड़ाने का यह दल घोर पक्षपाती था। इसी दल की नीति पर अमल करने से जर्मनी ने युद्ध के कुमार्ग पर चल कर आगे बुरे दिन देखे। कहा जाता है कि चुनाव में ज़मींदारों के घरानों के सरकारी अफ़सर नाजायज़ दबाव डाल कर इस दल के लिए और जहाँ इस दल के उम्मेदवार नहीं होते थे वहाँ मध्यदल के उम्मीदवारों के लिए लगभग दस लाख मत ले लेते थे। 'मध्यदल' में कैथोलिक संप्रदाय के लोग थे। इस में ग़रीब-अमीर सब तरह के लोग थे क्योंकि बिस्मार्क के आक्षेपों से कैथोलिक संप्रदाय के हितों की रक्षा करने के लिए ही इस दल का जन्म हुआ था। इस दल का कोई राजनैतिक प्रोग्राम नहीं था। परंतु बिस्मार्क की 'कैथोलिकों पर आक्षेप' की नीति बदल जाने पर भी यह दल क़ायम रहा। इस में अधिकतर जर्मनी के दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम भाग के कैथोलिक-पंथी मज़दूर और किसान होते थे। यह दल 'समाजवाद' का कट्टर विरोधी और सुधार की मीठी-मीठी बातें करने पर भी 'उदार दल' के मुक़ाबले में हमेशा 'अनुदार दल' की ही सहायता करता था।

'राष्ट्रीय उदार दल' में मध्यम-वर्ग के लोग और व्यापारी थे। इस दल का ज़ोर देश के मध्य और पश्चिम भाग के उद्योगी क्षेत्रों में था। यह दल राजनैतिक सुधारों का पक्षपाती, शिक्षा और शासन में सांप्रदायिक असर और सरकारी अधिकारियों का चुनाव में दस्तंदाज़ी का विरोधी था। 'अनुदार दल' की तरह सेना, उपनिवेशों के फैलाव और कड़ी परराष्ट्र-नीति का यह दल भी हामी था। मगर कारखानों में बने हुए माल पर कम चुंगी और खेती के माल पर चुंगी का पुनःविचार वह चाहता था और सारे सरकारी पद ज़मींदारों के हाथ में ही होना उसे बहुत बुरा लगता था। 'गरम दल' भी मध्यम-वर्ग के लोगों का दल था। मगर वह 'राष्ट्रीय उदार दल' की तरह कारखानेवालों और व्यापारियों के हाथ का कठपुतला नहीं था। वह और सब बातें 'उदार-दल' की तरह ही चाहता था। मगर माल पर सब प्रकार की चुंगी का विरोधी था और पूर्ण व्यवस्थापकी सरकार और सेना पर राजनैतिक सत्ता का अधिकार चाहता था।

'समाजवादी प्रजासत्तात्मक दल'[1] में सर्वसाधारण लोग थे। यही एक दल ऐसा था जिस का राष्ट्रीय कार्यक्रम था और जो सारे जर्मन साम्राज्य में फैला हुआ था। यह दल यूरोप भर में सब से अच्छा संगठित दल था। देश भर में जगह-जगह पर इस दल की शाखाएँ थीं। हर साल हज़ारों सार्वजनिक सभाएँ दल की ओर से की जाती थीं और

[1] सोशल डेमोक्रैटिक पार्टी।

लाखों पर्चे बाँटे जाते थे। दल के ७५ अखबार थे जिन के दस-बारह लाख ग्राहक थे। यह दल राजनैतिक सुधारों की अधिक परवाह नहीं करता था और पूँजीशाही को जड़ से उखाड़ कर सब प्रकार का अत्याचार मिटाने के लिए श्रमजीवियों का समाजशाही राज्य स्थापित करने का पक्षपाती थी। इस दल की मुख्य माँगें यह थीं—बीस वर्ष के ऊपर के साम्राज्यवासी सब स्त्री-पुरुषों को मताधिकार, अनुपात-निर्वाचन, रीशटाग का दूसरे वर्ष चुनाव, प्रतिनिधियों को वेतन, प्रजा को मसविदे पेश करने और नामंज़ूर करने का अधिकार, स्थानिक स्वशासन, सालाना कर, सर्वसाधारण को सैनिक शिक्षा, स्थायी सेना की जगह पर एक जन-सेना, विग्रह और संधि का रीशटाग के द्वारा फ़ैसला, अंतर्राष्ट्रीय झगड़ों का पंचायती फ़ैसला, बोलने और मिलने की स्वतंत्रता का सर्वसाधारण को हक़, औरतों की मर्दों से कम हैसियत बनानेवाले क़ानूनों का नाश, राष्ट्रीय ख़ज़ाने से धार्मिक ख़र्च न होना, अनिवार्य और मुफ़ शिक्षा, जनता के चुने हुए न्यायाधीशों द्वारा न्याय, मौत की सज़ा बंद, निरपराधियों को जेल हो जाने पर मुआवज़ा, मृतक संस्कार और दवादारू मुफ़, आमदनी, जायदाद और विरासत के करों से सारे करों का ख़र्च निकालना, परोक्ष करों और चुंगी-करों का नाश, मज़दूरों को आठ घंटे काम और बच्चों की मज़दूरी बंद।

दल के कार्यक्रम के दो—एक सिद्धांती और दूसरा अमली—पहलू थे। कुछ लोग सिद्धांती पहलू पर अधिक ज़ोर देते थे और कुछ अमली पर। अस्तु दल के अंदर भी कई फ़िरक़े थे। एक फ़िरक़ा बिल्कुल वर्ग-विग्रह[1] और ग़ैरसमाजवादियों से मिल कर काम न करने का पक्षपाती थी। दूसरा फ़िरक़ा ग़ैरसमाजवादियों से मिलने का विरोधी था मगर वैध उपायों से काम लेने का हामी था। तीसरा दल के सिद्धांतों से चिपटा रह कर पुनःविचार चाहता था। चौथा दल के प्रोग्राम की पुनर्घटना पर ज़ोर देता था। पाँचवाँ फ़िरक़ा साम्राज्यवादी समाजवादियों का था जो समाजवादी होते हुए भी जर्मन सेना, उपनिवेशों और व्यापार का फैलाव चाहते थे। समाजवादी दल के जितने नियमित सदस्य नहीं थे उस से कहीं अधिक उस को चुनाव में मत मिलते थे क्योंकि निरंकुशता को नीचा दिखाने की इच्छा रखनेवाले सभी लोग इस दल के लिए मत देते थे। रीशटाग में प्रवेश कर के इस दल के दो भाग हो गए थे। एक का नाम 'बहुसंख्या समाजवादी-दल' हो गया था जो वैध उपायों से काम लेता, तथा सरकार के काम में भाग लेता था। दूसरा 'स्वतंत्र समाजवादी' कहलाता था जो पूर्ण समाजवादी सरकार क़ायम न होने तक सरकार का विरोध करने का हामी था। सरकार समाजवादियों को राजाशाही का दुश्मन और उस को उखाड़कर फेंक देने के लिए षड्यंत्र रचनेवाला समझती थी और उन को हर प्रकार के सरकारी पदों, यहाँ तक कि प्रोफ़ेसर के पद तक से—सदा दूर रखती थी। मगर लड़ाई शुरू होने के पहले सन् १९१२ ई० के चुनाव में रीशटाग में समाजवादी दल के ही सब से अधिक सदस्य आए थे। ३९७ सदस्यों में ११० समाजवादी, ९० मध्यदल, ४५ अनुदार दल,

---

[1] क्लास-वार।

४४ राष्ट्रीय उदार दल और ४१ गरम-दल के सदस्य आए थे। बाक़ी दूसरे दलों के थे।

जर्मनी राजनैतिक सुधार की तरफ़ धीरे-धीरे क़दम बढ़ाने की कोशिश कर रहा था कि इतने में सन् १९१४ ई० की यूरोप की लड़ाई शुरू हो गई। कुछ समय के लिए सरकार का विरोध एक दम बंद हो गया। समाजवादी दल तक लड़ाई के बजट मंज़ूर करने लगा। मगर सन् १९१७ के क़रीब हवा का रुख़ बदला। प्रजा लड़ाई से ऊब उठी। रूस की अचानक राज्यक्रांति और अमेरिका के युद्ध में शरीक हो जाने से लोगों की आँखें खुलीं और 'स्वतंत्र समाजवादी दल' ने क़ैसर के पदत्याग और लड़ाई बंद कर के बिना मुआवज़े की संधि की खुल्लमखुल्ला माँग शुरू कर दी। रूस की राजक्रांति का जर्मनी की प्रजा पर प्रभाव देख कर लड़ाई में शीघ्र ही अपनी निश्चय हार समझ कर और अमेरिका के प्रमुख विल्सन का, 'जर्मनी में प्रजासत्तात्मक राज्य क़ायम न हो जाने तक जर्मनी से संधि की बातें न करने' का एलान सुन कर जर्मन सरकार डरी और वह जर्मनी में भी प्रजासत्तात्मक शासन क़ायम करने के वादे और बातें करने लगी। 'बहुसंख्या समाजवादी दल' ने जब देखा कि लड़ाई में जीत की कोई संभावना नहीं है, और क़ैसर का निरंकुश राज्य किनारे आ लगा है तो उस ने भी सरकार का साथ छोड़ कर फ़ौरन लड़ाई बंद कर के प्रजासत्तात्मक शासन क़ायम करने की माँग शुरू कर दी। 'कैथौलिक मध्य-दल' के नेता अर्ज़बरजर ने भी अपने दल की आवाज़ इन दलों में मिला दी। आख़िरकार सरकार ने इस विरोध के सामने सिर झुका कर 'प्रजासत्तात्मक शासन क़ायम करने का विचार करने के लिए' एक कमीशन नियुक्त किया। मगर ब्रेस्ट-लिटौस्क की संधि में रूस को नीचा दिखा देने से और लड़ाई के मैदान में फिर अपनी जीत होते देख कर सरकार का रुख़ बदला, और प्रजासत्तात्मक शासन की बातों को भुलावे में डाल देने का प्रयत्न होने लगा। परंतु निरंकुश जर्मन सरकार की यह आशाएँ बड़ी क्षणिक थीं। शीघ्र ही जर्मनी की लड़ाई के मैदान में फिर हारें होने लगीं और दुश्मनों की सेनाओं के जर्मनी में घुस आने की बात कुछ समय की बात लगने लगी। अस्तु क़ैसर ने घबरा कर अपने सारे अधिकार प्रजा को दे देने और जर्मनी में प्रजासत्तात्मक व्यवस्थापकी राज क़ायम करने की घोषणा निकाल दी।

मगर अब क़ैसर के एलानों और वादों का किसी पर कुछ असर होने का वक़्त नहीं रहा था। सेना की बुरी हालत हो गई थी। लड़ाई से जान बचाने के लिए हज़ारों आदमी भाग-भाग कर जंगलों में जा छिपे थे। स्त्रियाँ घरों से खाना ले जा कर उन्हें वहाँ खिला आती थीं। सरकार में अब किसी के ख़िलाफ़ कुछ करने की ताक़त नहीं रही थी। 'स्वतंत्र समाजवादी दल' के गरम भाग ने जो रूस के बोल्शेविकों का ढंग अख़्तियार करने के पक्ष में था, गोला-बारूद और अस्त्र-शस्त्र के कारख़ानों में हड़तालें करा कर लड़ाई बंद कराने का प्रयत्न किया और इन हड़तालों को सरकार ने कुचल दिया। मगर असंतोष की आग फैलती ही गई। बवेरिया रियासत धमकी देने लगी कि अगर जर्मन-साम्राज्य की तरफ़ से लड़ाई बंद कर के संधि की बातें न की जायँगी तो बवेरिया रियासत ख़ुद संधि कर लेगी। जर्मनी की हार महीनों पहले मार्न के मैदान में ही निश्चय

हो चुकी थी। मगर सेना-विभाग ने यह बात सब से गुप्त रक्खी थी। परंतु अब सारे देश को साफ़ दीखने लगा था कि जर्मनी की हार में ज़रा भी शंका नहीं है। 'सबमेरीन' के लगातार भयंकर हमलों से भी इंग्लैंड को भूखा मारने का इरादा पूरा नहीं हुआ था। ल्यूडेंडौर्फ़ को नई सेनाएँ मिलना बिल्कुल बंद हो गई थीं और मैदान की सेनाओं की थकावट और व्याकुलता देख कर उस के होश फ़ाख्ता हो उठे थे। इधर देश में लोग उकता कर प्रजासत्तात्मक शासन के लिए शोर मचाने लगे थे। कैसर ने डूबती हुई नैया को बचाने के लिए बेटेन रियासत के उदार राजकुमार मैक्स को चांसलर बना कर व्यवस्थापकी सरकार रचने की आज्ञा दी। राजकुमार मैक्स ने अपने मंत्रि-मंडल में समाजवादियों को रखने का निश्चय कर लिया था। 'बहुसंख्या समाजवादी दल' ने अपने नेता शीडमैन को मैक्स के साथ काम करने के लिए चुना। राजकुमार मैक्स का ख़याल था कि लड़ाई बंद करने का सब से अच्छा तरीक़ा यह होगा कि बजाय जर्मनी की तरफ़ से संधि की प्रार्थना करने के जर्मनी का लड़ाई के बाद मित्र-राष्ट्रों से अच्छी तरह व्यवहार करने और उन को बहुत-सी रियासतें देने के इरादे का एलान कर दिया जाय। साथ-साथ इस बात का एलान भी कर दिया जाय कि अगर संधि में जर्मनी को नीचा दिखाने की कोशिश की जायगी तो जर्मनी मरते दम तक लड़ेगा। मगर जब वह राजधानी बर्लिन में पहुँचा तो पहला ख़त उसे हिंडनबर्ग के पास से यह मिला कि 'आज शाम तक या कल सुबह तक हर हालत में अस्थायी संधि[1] अवश्य हो जानी चाहिए।' ल्यूडेंडौर्फ़ अपनी सेना के अपनी आँख के सामने शीराज़े बिखरते हुए देख कर छटपटा रहा था और किसी तरह, किसी बहाने से, सेना को आराम देने के लिए कुछ अवकाश पाने के लिए हाथ-पैर पटक रहा था। अंदर से उस का अभी तक यह ख़याल था कि अस्थायी संधि के बहाने थकी हुई जर्मन सेना को विश्राम देने और नई सेनाएँ लाने का वक़्त मिल जायगा। उस ने भी राजकुमार मैक्स के पास यही संदेशा भेजा कि 'शत्रुओं की सेनाएँ चौबीस घंटे के भीतर ही अवश्य भयंकर हमला शुरू करेंगी। तब अस्थायी संधि की बात करने से अभी चौबीस घंटे पहले अपनी तरफ़ से संधि की बात चलाना जर्मनी के लिए उपयोगी होगा।' राजकुमार मैक्स ने सोचा कि सेनापतियों के हस्ताक्षर से संधि की प्रार्थना बिल्कुल हार के समान होगी। अस्तु उस ने समय रहते अपने हस्ताक्षरों से अस्थायी संधि की प्रार्थना भेज दी।

इधर संधि का विचार चल रहा था और उधर जर्मन-सेना के मदांध अफ़सर नए हमले के नक़्शे बना रहे थे। अक्टूबर १९१८ में, जब कि जर्मनी की सेनाएँ फ़्लैंडर्स के मैदान में पिट कर पीछे हट रही थीं और शीघ्र ही बिल्कुल हार और सर्वनाश निश्चय दीखता था, उस समय भी जल-सेना के अधिकारियों ने आख़िरी बार बृटिश जल-सेना पर धावा बोल कर विजय प्राप्त करने या लड़ते-लड़ते अथाह सागर में ग़र्क़ हो जाने की योजना की। जल-सेना के अधिकारियों का ख़याल था कि जर्मनी की सेना हार कर जब बेलजियम से पीछे

---

[1] आरमिस्टिस

हटेगी, तब थेम्स के दहाने से अँगरेज़ों की सेना आ कर हालैंड में घुस कर पीछे से इस हटती हुई सेना पर हमला करेगी और अगर उस समय जर्मन जल-सेना बीच में आ जाय तो स्थल-सेना का बचाव हो जायगा। उन का यह भी खयाल था कि अगर एक बार भी बृटिश जल-सेना बाहर समुद्र में निकल आई और उस से जर्मन जल-सेना की मुठभेड़ हो गई तो बृटिश जल-सेना की ताक़त इतनी कुचल दी जायगी कि दुनिया की राजनीति ही बिल्कुल बदल जायगी। अस्तु उन्हों ने एक ऐसा नक़शा बनाया कि जर्मन जल-सेना का एक बड़ा भाग फ़्लैंडर्स के किनारे की तरफ़ जाय और एक भाग थेम्स नदी के दहाने की तरफ़ जा कर अँगरेज़ों की सेना को बढ़ने से रोके। समुद्रों पर सफ़र करनेवाला बेड़ा आगे बढ़ कर लड़ाई में भाग ले और जल-सेनापति ट्रोथा सेना का एक मज़बूत भाग ले कर पीछे तैयार रहे। लड़नेवाले जहाज़ी बेड़े के आगे सब से पहले बारह ज़ेपलिन[1] जायँ और जर्मनी की सारी सबमेरीन[2] बृटिश जल-सेना के दक्षिण मार्ग में कई पंक्तियों में रहें और उन का क्षेत्र खूब फैला दिया जाय। जिस दिन हमला हो, उसी दिन रात को सारे टौरपीडो[3] जहाज़ों को ले कर दुश्मन पर एकदम हमला कर दिया जाय। ६ अक्टूबर को राजकुमार मैक्स ने राष्ट्रों से संधि की बातें शुरू कर दी थीं। मगर जल-सेना के अधिकारियों ने इस बात का कुछ भी खयाल न कर के कि उन के बृटिश सेना पर हमला करने से जर्मनी के भाग्य पर क्या असर होगा, ३० अक्टूबर को अपने नक़्शे के अनुसार हमला शुरू करने के लिए जहाज़ निकाले। मगर सौभाग्य से सिपाहियों ने हड़ताल कर दी और कहा कि "अँगरेज़ हमारे देश पर हमला करेंगे तो हम जान पर खेल कर अपने देश की रक्षा करेंगे। मगर उन पर हमला करने के लिए हम नहीं जायँगे।" इस विद्रोह के लिए कई अफ़सरों को फ़ौरन् गोली से उड़ा दिया गया। मगर शीघ्र ही सैनिकों का विद्रोह कील और हैंबर्ग की सारी जल-सेना में फैल गया और अधिकारियों को उसे दबाना असंभव हो गया। गरम समाज-वादियों और जर्मनी के 'स्पार्टासिस्ट्स' कहलानेवाले कम्यूनिस्टों के स्वप्न की क्रांति शुरू हो गई। जिस 'लेनिनवाद की ज़हरीली हवा' को जर्मनी की निरंकुश सरकार ने रूस की सरकार का नाश करने में सहायता दी थी उसी ने अब जर्मनी की निरंकुश सरकार को हड़पने के लिए फैलना शुरू किया। मगर 'क्रांति, क्रांति' दिन रात चिल्लानेवाले दल भी इस अचानक क्रांति के लिए तैयार नहीं थे। उन के नेता आपस में एक विचार तक के नहीं थे। 'भेड़िया, भेड़िया' चिल्लानेवालों के सामने सचमुच भेड़िया आ खड़ा हुआ और उन की समझ में नहीं आता था कि क्या करें। सेना से लौटनेवाले सैनिकों से कुछ राइफ़िलें इत्यादि ले कर कम्यूनिस्टों ने इकट्ठी कर ली थीं। मगर उन से गलियों में थोड़ा-सा धूम-धड़ाका करने के सिवाय और किसी प्रकार की क्रांति नहीं की जा सकती थी। बर्लिन में सेना क्रांतिकारियों में शामिल हो गई। मगर वह बिल्कुल समझती नहीं थी कि

---

[1]जर्मनी के ख़ास लड़ाई के विमान। [2]पानी के भीतर चलनेवाले लड़ाई के जहाज़। [3]जिन जहाज़ों से सिगार के शक्ल का एक अस्त्र जहाज़ों पर फेंक कर जहाज़ों को फाड़ दिया जाता है।

उसे क्या करना है। सरकार का काम चलाने के लिए बर्लिन में रूस के ढंग पर 'मज़दूरों और सैनिकों की समितियाँ' धीरे-धीरे बन गईं। मगर शीघ्र ही यह समितियाँ अपने आप को शासन के काम के अयोग्य पा कर शासन का काम पुराने अधिकारियों के हाथ में देने लगीं। प्रांतों और रियासतों में लोग इस से भी कहीं कम तैयार थे।

स्वभाव से अक्रांतिकारी जर्मन जाति का क्रांति करने और राजाशाही को उलट कर प्रजातंत्र क़ायम करने का जर्मनी में एक अजीब दृश्य खड़ा हो गया था। सच तो यह है कि जर्मनी में प्रजा की तरफ़ से कोई ख़ास तैयारी कर के क्रांति नहीं की गई थी। जिस सेना के बल पर जर्मन सरकार चलती थी उस का बल टूट जाने पर शासकों की एक दम कमर-सी टूट गई थी और उन्हों ने घबरा कर कंधे डाल दिए थे। जल-सेना के विद्रोह से राजनैतिक क्रांति का कुछ संबंध नहीं था। राजकुमार मैक्स ने नोस्के नाम के सैनिकों को प्रिय रीशटाग के एक नेता को भेज कर जल-सेना को संतुष्ट कर दिया था। रूस के मैदानों से लौटनेवाली थल-सेनाओं में कुछ बोल्शेविक विचारों की महक ज़रूर थी। वरना थल-सेना सिर्फ़ लड़ाई से ऊब कर ही विद्रोह में शरीक हो गई थी। ७ नवंबर तक केवल सेना का ही विद्रोह नज़र आता था। मगर ७ और ८ नवंबर की रात को इस विद्रोह ने पूरी राजनैतिक क्रांति का रूप धारण कर लिया। बवेरिया की राजधानी म्यूनिख में 'स्वतंत्र समाजवादियों' ने सरकार के विरोध में एक बड़ा जलूस निकाला और एक सभा कर के प्रजा की माँगों में क़ैसर के राजच्युत होने की माँग भी पेश की। सभा से लौटनेवाली भीड़ ने राजमहल के पास पहुँच कर पहरा देनेवाले संतरियों के हथियार छीन लिए और अस्त्रालय पर छापा मार कर हथियारों पर कब्ज़ा कर लिया। इन हथियारों को ले कर उन्हों ने सैनिकों की बारकों पर हमला किया, क़ैदियों को जेल से छुड़ा दिया और पार्लीमेंट भवन में घुस कर एक सभा की। दूसरे दिन सुबह म्यूनिख की दीवारों पर 'स्वतंत्र समाजवादी' नेता कर्ट आइसनर का, 'बवेरिया के मज़दूर किसान और सैनिकों की सोवियट' के पहले प्रमुख की हैसियत से, बवेरिया के 'स्वतंत्र हो जाने की घोषणा' का एलान चिपका दिया गया। बवेरिया का राजा अपने कुल को ले कर भाग गया। रीशटाग में समाजवादियों की क़ैसर के राजत्याग की माँग और देश में उठते हुए तूफ़ान को देख कर शीडमैन ने राजकुमार मैक्स को सलाह दी कि व्यवस्थापक सरकार के क़ायम करने के साथ-साथ क़ैसर को राजत्याग करना भी ज़रूरी होगा। बवेरिया से भी इसी बात पर ज़ोर दिया गया और ६ नवंबर को समाजवादियों के प्रतिनिधियों ने चांसलर मैक्स के सामने इस बात की बाक़ायदा माँग रख दी। क़ैसर के सामने जब यह माँग रक्खी गई तो उस ने अपने राजत्याग से देश में अंधाधुंध ख़ून ख़राबा और बोल्शेविज़्म फैल जाने का डर बता कर अपनी इच्छा से राजत्याग करने से साफ़ इन्कार कर दिया। मगर समाजवादियों ने शीडमैन के द्वारा चांसलर के सामने अपना आख़िरी फ़ैसला यह रक्खा कि अगर दूसरे दिन दोपहर तक क़ैसर का राजत्याग और युवराज का अपने राज्याधिकारों से त्यागपत्र नहीं आ जायगा तो समाजवादी सरकार से अलग हो जायँगे। राजकुमार मैक्स ने भी इस माँग में अपनी आवाज़ मिला दी। सेना के अधिकारी क़ैसर के साथ महल में

अभी तक क्रांति के दबाने का विचार कर रहे थे। मगर उन को कोई सेना का ऐसा भाग नज़र नहीं आता था जिस की राजभक्ति पर वे भरोसा कर सकें। कोई अधिकारी कहता था कि क़ैसर के एक साधारण नागरिक की तरह अपने घर चला जाना चाहिए। किसी का कहना था कि अपनी स्वामि-भक्त फ़ौजों के साथ उन का नेता बन कर क़ैसर के जाना चाहिए। एक राय यह भी थी कि उस के लड़ाई के मैदान में जा कर लड़ते-लड़ते मर जाना चाहिए। हमारी समझ से अगर इस राय पर क़ैसर ने अमल किया होता तो उस के लिए बड़ी इज़्ज़त की बात होती। आख़िरकार बड़ी आना-कानी के बाद क़ैसर, प्रशिया के राजपद से त्यागपत्र न दे कर जर्मनी की शहंशाहियत का त्याग कर के जर्मनी छोड़ कर ६ नवंबर के काउंट बेनटिंक के यहाँ हालैंड चला गया। उसी प्रकार युवराज ने भी किया।

अब जर्मनी में 'समाजवादी दल' के सिवाय और कोई ऐसी संगठित सत्ता नहीं थी जो सरकार की स्थापना कर सकती थी। अस्तु चांसलर मैक्स ने 'बहुसंख्या समाजवादी दल' के नेता ईबर्ट के सरकार का काम सौंप दिया। उस ने तीन बहु-संख्या समाजवादी दल के प्रतिनिधि और तीन स्वतंत्र समाजवादी दल के प्रतिनिधि ले कर एक अस्थायी मंत्रि-मंडल बनाया और रूस की नक़ल कर के उस के 'पीपल्स कमीसेरीज़'[१] का नाम दिया। स्पार्टेसिस्टस् नाम के कम्यूनिस्ट दल को इस सरकार में शरीक नहीं किया गया था क्योंकि वह किसी प्रकार का समझौता न कर के वर्ग-युद्ध ही चाहते थे। अस्थायी सरकार ने क़ायम होते ही ६ नवंबर की शाम को प्रजा के लिए एक इस प्रकार का एलान निकाला— 'भाइयो, अब जर्मनी की प्रजा के आज़ादी है। क़ैसर ने राजत्याग कर दिया है और युवराज ने भी अपने अधिकारों से त्याग-पत्र दे दिया है। 'समाजी प्रजा-सत्तात्मक दल[१]' ने सरकार की बागडोर अपने हाथों में ले ली है और उस ने 'स्वतंत्र समाजी प्रजा-सत्तात्मक दल[२]' को सरकार में बराबरी की हैसियत पर भाग लेने का न्यौता दिया है। नई सरकार एक नए व्यवस्थापक-सम्मेलन के चुनाव का प्रबंध करेगी, जिस में बीस वर्ष की उम्र से ऊपर के सब स्त्री और पुरुषों के बराबर की हैसियत से मत देने का अधिकार होगा। नया व्यवस्थापक-सम्मेलन बन जाने पर अस्थायी सरकार अपने सारे अधिकार प्रजा के इन प्रतिनिधियों के हवाले कर के इस्तीफ़ा दे देगी।' अस्थायी संधि कर के स्थायी संधि की शर्तें ठीक करना, प्रजा के खाने के सामान का प्रबंध करना, सैनिकों के शीघ्र से शीघ्र अपने घरों के लौट जाने और रोज़गार-धंधों में लग जाने की सुव्यवस्था करना सरकार ने अपने फ़ौरन् के काम बनाए और ११ नवंबर के नई सरकार ने मित्र-राष्ट्रों से अस्थायी संधि पर हस्ताक्षर कर दिए।

स्वतंत्र समाजवादियों के गरम भाग स्पार्टेसिस्टस् के नेता कार्ल लीब्कनेख्ट और रोज़ा लक्ज़मबर्ग ने इस अस्थायी सरकार के विरोध में एक घोर आंदोलन खड़ा

---

[१] सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी।

[२] इंडिपेंडेंट सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी।

किया। हर जगह रूस के ढंग पर 'सैनिकों और मज़दूरों की कमेटियाँ' बन गईं जो अंड-बंड माँगें और शासन में ऊटपटाँग हस्तक्षेप करती थीं। ईबर्ट की सरकार के काफ़ी मुसीबत का सामना था। बर्लिन में बिल्कुल अराजकता-सी फैल गई थी। स्पार्टेसिस्टों ने धमकी दे रक्खी थी कि अगर आगामी व्यवस्थापक-सम्मेलन में क्रांतिकारियों की बहुसंख्या हुई, तो सम्मेलन के मार कर तितर-बितर कर दिया जायगा। उन्हों ने सरकार का साथ देनेवाले अखबारों के दफ़्तरों पर हमला कर के उन पर ज़बर्दस्ती कब्ज़ा कर लिया। परराष्ट्र विभाग के कुछ अधिकारियों ने अपने आप ही कुछ सैनिकों के भड़का कर अस्थायी सरकार के सदस्यों के गिरफ्तार करा देना चाहा। सेना के एक डिवीज़न ने सरकार से झगड़ा खड़ा कर लिया और सरकार के सदस्यों के गिरफ़्तार करने के लिए बढ़ने लगे आख़िरकार सरकार ने इस अराजकता के सेना की सहायता से दबाने का निश्चय किया। इस पर सरकार के तीन 'स्वतंत्र समाजवादी दल' के सदस्यों ने इस्तीफ़ा दे दिया। ईबर्ट ने नोस्के के, जो इस समय कील का गवर्नर था, और औगस्ट विज़ल नाम के एक दूसरे समाजवादी नेता के अपनी सरकार में मिला लिया। सरकार से इस्तीफा दे कर निकल जानेवाले नेता दूसरे गरम समाजवादियों से मिल कर क्रांति का विचार करने लगे। ५ जनवरी के स्पार्टेसिस्टों ने करीब दो लाख आदमी बरलिन की सड़कों पर इकट्ठे कर लिए और चार पाँच दिन तक थोड़ी-बहुत मारकाट और उत्पात भी होता रहा। नोस्के के जो कुछ सैनिक मिल सके थे उन का वह बर्लिन से कुछ दूर एक स्थान पर संगठन कर रहा था। ११ जनवरी के वह ३००० सुसंगठित सेना के ले कर बर्लिन में घुसा। दोनो ओर कुछ ख़ून-ख़राबा हुआ। कार्ल लीब्कनेख्ट और रोज़ा लक्ज़मबर्ग मारे डाले गए और प्रजा से हथियार रखा लिए गए। आख़िरकार शांति की स्थापना हुई और व्यवस्थापक-सम्मेलन के चुनाव के लिए रास्ता साफ़ हो गया।

१९ जनवरी सन् १९१९ की तारीख़ व्यवस्थापक-सम्मेलन के चुनाव के लिए निश्चित की गई थी। बीस वर्ष से ऊपर की उम्र के सब जर्मन स्त्री और पुरुषों के मत देने का अधिकार दिया गया था। डेढ़ लाख की आबादी के लिए एक प्रतिनिधि के हिसाब से सारे जर्मनी के ३७ चुनाव के ज़िलों में बाँटा था और अनुपात-निर्वाचन की पद्धति तय की गई थी। साढ़े तीन करोड़ मतदारों में से ३०४१०००० मतदारों ने इस चुनाव में मत डाले। मर्द मतदारों में से ८२.४ फ़ी सैकड़ा और औरतों में से ८२·३ फी सैकड़ा ने अपने मताधिकार का उपयोग किया। अल्सास लौरेन पर फ्रांसीसीयों का अधिकार हो चुका था इस लिए वहाँ चुनाव नहीं हो सका।

पुरानी राज-व्यवस्था ख़त्म हो जाने पर पुराने राजनैतिक दलों की भी पुनर्घटना हुई। मगर अधिकतर इन दलों के नाम इत्यादि ही बदले। विचारों और सिद्धांतों में अधिक फेरफार नहीं हुआ। पुराने 'अनुदार दल' और उस के छोटे-मोटे साथियों ने अपनी पुनर्घटना कर के अपना नाम 'जर्मन राष्ट्रीय लोकदल'[1] रख लिया और काउंट वेस्टार्प और बेरन

---

[1] जर्मन नेशनल पीपल्स पार्टी।

बौन गेम्प को अपना नेता बनाया। यह दल खुल्लमखुल्ला राजाशाही, सेनासत्ता और जर्मन-साम्राज्य के विस्तार का पक्षपाती था। मौक़ा मिलते ही प्रजातंत्र को उखाड़ फेंकने का इस का इरादा था। मगर हाल के लिए इस ने सेना को सुसंगठित करने, बोल्शेविज़्म का विरोध करने और देश को ऐसी संधि नामंज़ूर करने के लिए तैयार करना अपना कार्य-क्रम बनाया जिस में जर्मनी के उपनिवेश जर्मनी के हाथों से निकल जाने या जर्मनी के दुनिया की एक बड़ी ताक़त न रहने की शर्तें हो। पुराना 'राष्ट्रीय उदारदल'[१] एक नए 'जर्मन लोकदल'[२] में परिणित हो गया। इस दल का नेता डाक्टर स्ट्रेसमैन था। यह दल दिल से राजाशाही का पक्षपाती था और खुल्लमखुल्ला प्रजातंत्र की सफलता में अपना अविश्वास प्रकट करता था। मगर हाल में इस दल ने प्रजातंत्र सरकार का साथ देना मंज़ूर कर लिया था। यह दल व्यापारी वर्ग का होने से जर्मन राजनीति के संबंध में इस के विचार ज़मीदारों के 'जर्मन राष्ट्रीय लोकदल' से अधिक भिन्न नहीं थे। परंतु राजशाही, सेनासत्ता और साम्राज्य के बारे में यह दल इस समय अधिक चखचख करने के बजाय चुप रहना पसंद करता था। पुराने 'कैथौलिक मध्यदल' का नाम 'क्रिश्चियन लोकदल'[३] हो गया था। कैथौलिक लोगों के हितों की रक्षा करने के सिवाय इस दल का और कोई राजनैतिक कार्य-क्रम नहीं था। इस दल के नेता अर्ज़बरजर और डाक्टर स्पाह्न थे जिन की अध्यक्षता में इस दल ने अस्थायी सरकार का साथ देने का एलान कर दिया था और अर्ज़बरजर ने ही बाद में नई सरकार के मंत्रि-मंडल का सदस्य बन कर मित्र राष्ट्रों से संधि पूरी करने का सारा काम-काज किया।

पुराने 'गरम-दल'[४] और कुछ उदार-दल के लोगों का मिल कर एक नया 'जर्मन प्रजा-सत्तामक दल'[५] बन गया। थियोडोर वुल्फ़, कौरेड हॉउसमैन और प्रख्यात क़ानूनदाँ ह्यूगो प्रियस जिस ने आगे चल कर नई राज-व्यवस्था को गढ़ा, इस दल के नेताओं में थे। यह प्रजादल सार्वजनिक गरम-दलों में, जिन के हाथ में वास्तविक सत्ता आ गई थी, सब से नरम-दल था। यह दल मध्यवर्ग के लोगों का था। मगर प्रजातंत्र का पूरा पक्षपाती और धीरे-धीरे समाजवाद—ख़ास कर प्राकृतिक संपत्ति पर समाज के क़ब्ज़े—का भी पक्षपाती था। अन्य गरम-दलों में 'बहुसंख्या समाजवादी दल' और 'स्वतंत्र समाजी-दल' जैसे के तैसे रहे। अस्थायी सरकार से मुठभेड़ के बाद स्वतंत्र समाजवादी-दल के नए भाग स्पार्टसिस्टस् अर्थात बोल्शेविक ढंग के कम्यूनिस्टों की बिल्कुल ताक़त कम हो गई थी। उन्हों ने व्यवस्थापक-सम्मेलन के चुनाव में भाग भी नहीं लिया।

चुनाव में 'जर्मन राष्ट्रीय लोक-दल' के ४२ सदस्य चुन कर आए और 'जर्मन लोक-दल' के २१ सदस्य, अर्थात राजाशाही में विश्वास रखनेवाले कुल ६३ सदस्य थे। कैथौलिक 'क्रिश्चियन लोक-दल' के ८८ सदस्य चुने गए और 'जर्मन प्रजा-सत्तात्मक-दल' के ७५ सदस्य अर्थात मध्यवर्ग के १६३ सदस्य आए। 'बहुसंख्या समाजवादी-दल' के १६३ सदस्य चुने गए और 'स्वतंत्र समाजवादी दल' के सिर्फ़ २२ सदस्य अर्थात् समाज-

---

[१] नेशनल लिबरल पार्टी। [२] जर्मन पीपल्ज़ पार्टी। [३] क्रिश्चियन पीपल्ज़ पार्टी। [४] रेडीकल पार्टी। [५] जरमन डेमोक्रेटिक पार्टी।

शाही के पूर्ण पक्षपातियों के कुल १८५ सदस्य थे। समाजशाही के विरोधियों के कुल मिला कर २२६ सदस्य थे। दस सदस्य दूसरे छोटे-छोटे गुट्टों से चुन कर आए थे। चुनाव के इस फल को देख कर समाजवादियों को बड़ी निराशा हुई क्योंकि इस व्यवस्था-सम्मेलन में समाजशाही की सरकार जर्मनी में क़ायम करना असंभव था। समाजवादियों के आपस के झगड़ों से लोग उकता गए थे जिस से चुनाव में उन्हें बहुत सहायता नहीं मिली आखिरकार ६ फरवरी सन् १९१९ ई० के दिन जर्मनी के वीमार नगर में, जिस का यूनान की संस्कृति और कला की खान राजधानी एथंस से मुक़ाबला किया जाता था, जो किसी ज़माने में जर्मनी के जगप्रसिद्ध कवि गेटे और शिलर और संगीत-शास्त्री बाख और लिस्ट का कीर्ति-क्षेत्र और लगभग सौ वर्ष से अधिक तक विद्वत्ता का केंद्र रह चुका था, व्यवस्थापक-सम्मेलन की सभा राष्ट्रीय थियेटर में बैठी। सम्मेलन के सामने बड़ा कठिन काम था। शायद ही कोई इतने विभिन्न विचारों की सभा इतनी कठिन समस्याओं को एक साथ सुलझाने के लिए कभी बैठी होगी। जर्मनी की भावी सरकार के बारे में सदस्यों के तरह-तरह के विचार थे। युद्ध की भयावनी हार की छाया में यह सम्मेलन बैठा था और सभी दल एक दूसरे के सिर पर लड़ाई की ज़िम्मेदारी रखते थे। फ़्रांस से पराजित जर्मनी के लिए संधि की बुरी शर्तों की खबरें आ रहीं थीं। घर पर कम्यूनिस्टों की हार हो जाने पर भी वे बिल्कुल मर नहीं गए थे और इधर-उधर हड़तालें और मारकाट करा रहे थे। सम्मेलन की बैठक के समय ही म्यूनिख में कुछ समय तक बोल्शेविकों का तूती बोल उठा जिस से सारा देश बड़ी चिंता में पड़ गया। अस्तु इन सब आपत्तियों और संकटों के बीच में वीमार के व्यवस्थापक-सम्मेलन ने जर्मनी के लिए एक नई राज-व्यवस्था तैयार करने में जो सफलता प्राप्त की वह बड़ी तारीफ़ की बात है। उस से जर्मनी घोर विपत्ति और बर्बादी से बच गया और नई जर्मनी का भविष्य बन गया।

७—प्रजातंत्र राजव्यवस्था

वीमार के व्यवस्थापक-सम्मेलन ने अपना काम-काज चलाने के लिए रीशटाग में कार्रवाई के जो नियम थे उन्हीं का उपयोग किया। सम्मेलन के अधिकारी चुन लिए गए। बहुसंख्या समाजवादी दल, क्रिश्चियन लोक-दल और प्रजासत्तात्मक दल हर कार्रवाई में मिल कर काम करते थे। चार दिन के भीतर ही एक क़ानून पास कर के अस्थायी सरकार को बढ़ा कर नियमित कर दिया गया जिस से स्थायी राज-व्यवस्था के बन जाने तक कोई दिक्क़त न खड़ी हो। चांसलर की अध्यक्षता में अस्थायी मंत्रि-मंडल को कार्य-कारिणी की पूरी सत्ता दे दी गई। सम्मेलन द्वारा प्रजातंत्र के प्रमुख का चुनाव हो जाने पर प्रमुख को मंत्रि-मंडल नियुक्त करने का निश्चय भी किया गया और मंत्रि-मंडल को सम्मेलन के प्रति जवाबदार माना गया। मंत्रि-मंडल को मसविदे बना कर सम्मेलन के सामने पेश करने के काम में सलाह देने के लिए प्रजासत्तात्मक-शासन रखनेवाली सारी रियासतों के प्रतिनिधियों की एक 'रियासत कमेटी' क़ायम की गई। ईबर्ट को प्रजातंत्र का प्रमुख चुना गया और उस की प्रार्थना पर शीडमैन ने बहुसंख्या समाजवादी दल, क्रिश्चियन लोकदल,

और प्रजासत्तात्मक दल के नेताओं को ले कर मंत्रि-मंडल तैयार किया। ईबर्ट की निपट ग़ैर जवाबदार और क्रांतिकारी 'अस्थायी सरकार' को इस प्रकार एक अस्थायी मंत्रि-मंडल की, निर्वाचित प्रतिनिधियों के प्रति जवाबदार सरकार बना कर, समालोचना और शोर गुल की चिंता न कर के, सम्मेलन ने जल्दी से जल्दी राज-व्यवस्था गढ़ डालने का काम शुरू कर दिया। ३१ मार्च सन् १९१९ ई० को स्थायी राज-व्यवस्था २६२ मत के विरुद्ध ७६ मत से सम्मेलन में पास हुई थी और ११ अगस्त से यह राज-व्यवस्था अमल में आई। सम्मेलन ने क़ानून पास कर के जो अस्थायी व्यवस्था क़ायम की थी उस में नई राज-व्यवस्था बन जाने पर उस पर प्रजा के मत लेने की शर्त नहीं रक्खी गई थी। अस्तु सम्मेलन का मत ही आख़िरी मत था और नई राज-व्यवस्था को अमल में रखने के लिए किसी नई सरकार की ज़रूरत नहीं थी। ईबर्ट ने नई राज-व्यवस्था की शर्तों के अनुसार अधिकार की शपथ ले ली और मित्र-राष्ट्रों की अस्थायी संधि की भेजी हुई शर्तों को स्वीकार न करने के कारण शीडमैन के इस्तीफ़ा दे देने पर जुलाई से गस्टेव बौर की अध्यक्षता में जो मंत्रि-मंडल चला आता था वही जैसा का तैसा क़ायम रहा। व्यवस्थापक-सम्मेलन ने ही नई राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा का रूप धारण कर लिया। अस्थायी सरकार ने सम्मेलन शुरू होने से पहले ही प्रोफ़ेसर ह्यूगो प्रियस की अध्यक्षता में नई राज-व्यवस्था का मसविदा तैयार करने के लिए एक कमीशन नियत कर दिया था। बहस शुरू करने के लिए यह मसविदा सम्मेलन को बड़े काम का साबित हुआ और इसी मसविदे को फेरफार कर के आख़िर को स्वीकार किया गया।

जर्मन प्रजातंत्र की नई राज-व्यवस्था एक काफ़ी बड़ा दस्तावेज़ है। उस में प्राक्कथन के साथ १८१ धाराएँ हैं। १०८ धाराओं के पहले अध्याय में सरकार के ढाँचे और कर्त्तव्यों का ज़िक्र है। ५७ धाराओं के दूसरे अध्याय में जर्मन नागरिकों के अधिकारों और कर्त्तव्यों का ज़िक्र है। १६ धाराओं के तीसरे अध्याय में अस्थायी और स्थायी नियम दिए गए हैं। सब से महत्व की बात इस राज-व्यवस्था के दस्तावेज़ में यह है कि नागरिकों के व्यक्तिगत अधिकारों और स्वतंत्रता को सुरक्षित रखने के लिए तथा स्वीकृत सामाजिक समुदायों के सदस्यों का आपस में संबंध ठीक रखने के लिए बहुत-सी धाराएँ रक्खी गई हैं। पिछली जर्मन सामाज्य की राज्य-व्यवस्था में, सब के जर्मन साम्राज्य के नागरिक होने और नागरिकों की विदेशियों से रक्षा करने के ज़िक्र के सिवाय, नागरिकों के किसी प्रकार के व्यक्तिगत अधिकारों का कोई ज़िक्र नहीं था। प्रजातंत्र की राज-व्यवस्था में उस के विरुद्ध नागरिकों के अधिकारों पर बहुत ज़ोर दिया गया था। सब नागरिकों को क़ानून की नज़र में बराबर, औरतों-मर्दों के एक-से अधिकार और कर्तव्य, कुलीनता और अधिकार के कारण किसी को कोई ख़ास अधिकार नहीं, सब को एक राष्ट्र का नागरिक, देश में बसने, देश के बाहर जाने और देश में घूमने-फिरने का सब को एक-सा अधिकार, व्यक्तिगत स्वतंत्रता को अभंग, हर एक नागरिक के घर को उस का पवित्र देवालय यानी उस में घुसने का किसी को अधिकार नहीं, सब को विचार प्रगट करने की स्वतंत्रता और अल्प-संख्या जातियों को स्कूलों, अदालतों और शासन में अपनी भाषाओं के इस्तेमाल करने का

अधिकार माना गया था।

'सामुदायिक-जीवन' नाम के अध्याय में शांतिपूर्वक सभा करने, क़ानून के अविरुद्ध संस्थाओं में सम्मिलित होने और सरकार को अर्ज़ी पेश करने का सब को अधिकार माना गया है। राष्ट्र और चुंगियों को व्यक्तिगत सहायता देने, अपनी हैसियत के मुआफ़िक सार्वजनिक करों का बोझ उठाने और क़ानून के नियमों के अनुसार सेना में सेवा करने का सभी नागरिकों का कर्त्तव्य माना गया था। माताओं की रक्षा, बहुत-से बच्चोंवाले कुलों की सहायता, नौजवानों का दुरुपयोग रोकने और उन के नैतिक, मानसिक और शारीरिक हितों की रक्षा करने के लिए क़ानून बनाने का वादा किया गया। दूसरे 'धर्म और शिक्षा' से संबंध रखनेवाले भागों में सब को धार्मिक विश्वास और उपासना और धार्मिक संस्थाओं में संगठित होने की स्वतंत्रता मानी गई थी। राष्ट्र की ओर से किसी पंथ को माली सहायता देना या किसी पंथ को राष्ट्रीय धर्म स्वीकार नहीं किया गया। कला, विज्ञान और शिक्षा निःशुल्क रक्खी गई और शिक्षा के लिए देश, राष्ट्र और जाति का सहकार और स्कूलों में हाज़िरी अनिवार्य मानी गई। आठ वर्ष की प्राथमिक शिक्षा के बाद १८ वर्ष की उम्र तक स्कूलों में जर्मन राष्ट्रीय संस्कृति और अंतर्राष्ट्रीय भ्रातृभाव के भाव से नैतिक शिक्षा, नागरिकता का भाव और व्यक्तिगत तथा औद्योगिक कुशलता सिखाना आवश्यक रक्खा गया।

इसी भाग के आख़िरी हिस्से में 'आर्थिक-संगठन और आर्थिक-जीवन' का भी ज़िक्र किया गया। आर्थिक जीवन के मूल सिद्धांतों में न्याय को ध्येय मंत्र, किसी को अन्याय न हो तहाँ तक आर्थिक स्वतंत्रता, इक़रार पट्टे की स्वतंत्रता, सूदख़ोरी की मुमानियत, व्यक्तिगत मिलकियत का अधिकार, सरकार को मिलकियत पर सिर्फ़ प्रजा के फ़ायदे और क़ानून के अनुसार क़ब्ज़ा करने का अधिकार और सरकार को भाग दे देने के बाद व्यक्तियों को विरासत का अधिकार माना गया। ज़मीन का बटवारा और ज़मीन के इस्तेमाल की देख-भाल सरकार का काम माना गया, जिस से ज़मीन का दुरुपयोग न हो सके और हर जर्मन नागरिक को एक स्वस्थ रहने का स्थान अवश्य मिल सके। ज़मीन में व्यक्तिगत मिलकियत क़ायम रही। मगर ज़मीन के मूल्य में 'बिना-कमाई बढ़ती'[1] सार्वजनिक फ़ायदे के लिए चली जाने की शर्त रक्खी गई। सरकार को सारी ज़मीन पर भी सामाजिक क़ब्ज़ा कर सकने का अधिकार रक्खा गया। सब प्रकार की खानों और आर्थिक दृष्टि से उपयोगी प्राकृतिक चीज़ों पर उदाहरणार्थ जल-शक्ति इत्यादि पर सरकार का अधिकार माना गया। इस प्रकार के व्यक्तिगत व्यापार और उद्योगों को जिन का सामाजिक नियंत्रण हो सकता है उचित मुआवज़ा दे कर अपने हाथ में कर लेने का भी सरकार को अधिकार रक्खा गया। श्रमजीवियों पर सरकार की रक्षा ख़ास तौर पर रक्खी गई; उन को अपने हितों के बचाव और बढ़ाव के लिए अपना संगठन करने का अधिकार दिया गया। छोटी-छोटी श्रमजीवियों की कौंसिलों से ले कर एक ऐसी 'राष्ट्रीय अर्थ कौंसिल' तक की योजना रक्खी गई, जिस को राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा के सामने सामाजिक और आर्थिक मसविदों के प्रस्ताव भेजने और व्यवस्थापक-सभा के सामने पेश होने से पहले इस विषय के सरकारी

---

[1] अनअर्न्ड इंक्रीमेंट।

मसविदों पर विचार करने का अधिकार दिया गया। जर्मन राज-व्यवस्था रूस के समाजवादी विचारों की एक प्रकार से छाया है और इसी की नक़ल इटली की राज-व्यवस्था में भी की गई है।

राज-व्यवस्था में संशोधन और परिवर्तन व्यवस्थापक-सभा में उसी ढंग से करने की शर्त रक्खी गई, जिस तरह दूसरे क़ानून स्वीकार किए जाते हैं। मगर इस काम के लिए व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों की संख्या के दो-तिहाई भाग की सभा में हाज़िरी और जितने मत पड़ें, उस के दो-तिहाई मत-संशोधनों की स्वीकृति के लिए ज़रूरी रक्खे गए। व्यवस्थापक-सभा की दो सभाओं में से अगर एक किसी संशोधन को स्वीकार न करे तो मत पड़ने के बाद दो सप्ताह का समय दिया जाय और इस दो सप्ताह के भीतर अगर स्वीकार न करनेवाली सभा प्रजा का मत लेने की इच्छा प्रगट करे तो प्रजा के मत से उस का फ़ैसला हो। अगर इस प्रकार की कोई इच्छा प्रगट न की जाय तो दो सप्ताह खतम होने पर प्रजातंत्र का प्रमुख क़ानून के अमल करने के लिए एलान कर दे। प्रजा को सीधा संशोधन का प्रस्ताव करने और उस पर मत करने का भी अधिकार दिया गया। हर हालत में किसी भी फ़ैसले के लिए बाक़ायदा मतदारों के बहुमत की ज़रूरत रक्खी गई। इस संबंध में जर्मनी की राज-व्यवस्था सिर्फ़ स्विटज़रलैंड से मिलती-जुलती है।

प्रियस कमीशन के मसविदे में प्रशिया को सात-आठ रियासतों में बाँट देने और शेष छोटी-छोटी रियासतों को भी इतनी ही रियासतों में बाँट कर, इस प्रकार क़रीब पंद्रह रियासतों के नए जर्मनी को दो सभा की व्यवस्थापक-सभा के एक प्रजातंत्र राष्ट्र में संगठित करने की व्यवस्था की गई थी। परंतु व्यवस्थापक-सम्मेलन ने, संधि की शर्तों को पूरा करने के लिए जो सीमाओं में फेरफार करने पड़े उन को छोड़ कर, सब रियासतों की सीमाएँ जैसी की तैसी क़ायम रक्खीं। साम्राज्य की तरह इन रियासतों को कोई स्वतंत्रता नहीं दी गई। सारी रियासतों में सार्वजनिक मतानुसार निर्वाचित प्रजातंत्र सरकार और जबाबदार मंत्रि-मंडल होने की क़ैद रक्खी गई। रियासतों की बिना इच्छा उन की सीमाओं में फेरफार करने और नई रियासतें क़ायम करने का अधिकार राष्ट्रीय जर्मन सरकार के हाथ में रक्खा गया। पुराने जर्मन साम्राज्य की तरह जो ताक़तें जर्मन प्रजातंत्र की सरकार को नहीं दी गईं वे रियासतों में बाक़ी मानी गई हैं। मगर नई राष्ट्रीय सरकार को इतनी ज्यादा ताक़तें दी गईं कि इस राज-व्यवस्था केंद्रीय सरकार को ही ज़ोरदार बनाने के रुझान का साफ़ पता लगता है। अंतर्राष्ट्रीय में औपनिवेशिक, नागरिकता, परदेशियों के देश में आ कर बसने, देशीयकरण,[1] निर्वासन राष्ट्रीय रक्षा, मुद्रण, व्यापारी चुंगी कर, डाक तार और टेलीफ़ोन के संबंध के सारे अधिकार सिर्फ़ राष्ट्रीय सरकार को दिए गए। राष्ट्र के सारे करों पर भी राष्ट्रीय सरकार ही का अधिकार रक्खा गया। सिर्फ़ एक शर्त यह रक्खी गई कि अगर राष्ट्रीय सरकार किसी ऐसे कर को लेना चाहे जो पहले कोई रियासत लेती थी तो उस को उस रियासत के खर्च का खयाल ज़रूर रखना चाहिए। अपनी आमदनी की नुक़सान से रक्षा करने, दुबारा करों, करों का अधिक बोझ, एक रियासत

[1] नेचरलाइज़ेशन।

के दूसरे रियासत के खिलाफ़ करों, तथा व्यापारी माल पर रियायती करों को रोकने के लिए रियासती करो को जायज़ ठहराने और उन को इकट्ठा करने के नियम बनाने का अधिकार भी राष्ट्रीय सरकार को दिया गया। माल और फ़ौजदारी के क़ानून, ज़ाप्ता क़ानून, अखबार, ग़रीबों को मदद, सार्वजनिक स्वास्थ्य, सब प्रकार का बीमा, मज़दूरी के क़ानून, पेंशन, तोल और माप, काग़ज़ी मुद्रा, सराफ़ी उद्योग, खानों, रेलों और सड़कों, जल-पर्यटन और मच्छीमारी के स्थानों के संबंध में सब अधिकार और प्राकृतिक संपत्ति और व्यापार-धंधों में सामाजिक प्रबंध क़ायम करने के सारे अधिकार भी राष्ट्रीय सरकार को दिए गए। जहाँ तक राष्ट्रीय सरकार हस्ताक्षेप न करे, वहाँ तक और सब बातों में रियासतों का अधिकार माना गया।

राष्ट्रीय सरकार के क़ानूनों को रियासती कानूनो के ऊपर माना गया और किसी रियासती क़ानून और राष्ट्रीय सरकार के कानून में विरोध होने पर न्याय का अधिकार बड़ी राष्ट्रीय अदालत को दिया गया। राष्ट्रीय कानूनों का अगर कोई रियासत पालन न करे तो प्रजातंत्र के प्रमुख को तलवार के ज़ोर से उस रियासत से कानूनों के पालन कराने का अधिकार भी दिया गया। इस राज व्यवस्था के अनुसार 'सारा राजनैतिक अधिकार, राष्ट्रीय मामलो में राष्ट्रीय राज-व्यवस्था की शर्तों के अनुसार राष्ट्रीय सरकार का, और रियासतों के मामलो में रियासतों की व्यवस्थाओं के अनुसार रियासतो का' माना गया। रियासतों को राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा में अपने एलची भेज कर अपने मंत्रि-मंडलों की राय पेश करने का अधिकार दिया गया। व्यवस्थापक-सभा की दूसरी सभा में रियासतों का प्रतिनिधित्व उसी प्रकार कायम रक्खा गया जिस प्रकार पुरानी बंडसराथ में था। सारे संघीय राष्ट्रों में प्रभुता राष्ट्रीय सरकार और राष्ट्र के विभिन्न भागों में, राज-व्यवस्था के अनुसार, बाँट दी जाती है और एक अंग को बिना दूसरे की मर्ज़ी के इस प्रभुता की रूप-रेखा में परिवर्तन करने का अधिकार नहीं होता है। इस सिद्धात की कसौटी पर कसने से जर्मन प्रजातत्र की इस राज-व्यवस्था को संघीय नहीं कहा जा सकता।

८—व्यवस्थापक-सभा : (१) रीशटाग

साम्राज्य की सरकारी संस्थाओं में रीशटाग ही सिर्फ़ एक ऐसी संस्था थी जिस में कुछ प्रजा की आवाज़ थी। अतएव प्रजातंत्र की सरकार में रीशटाग को क़ायम रक्खा गया। उस के चुनाव के ढंग और उस की सत्ता में ज़रूर बहुत फेरफार हो गया। बीस बर्ष के ऊपर के सब स्त्री-पुरुषों को अनुपात-निर्वाचन के अनुसार रीशटाग के चुनाव में मत देने का अधिकार दे दिया गया। रीशटाग का जीवन चार साल का नियत किया गया। परंतु समय पूरा होने से पहले भी प्रजातंत्र के प्रमुख को रीशटाग भंग कर देने का अधिकार रक्खा गया। मगर एक ही कारण पर एक बार से अधिक वह रीशटाग को भंग नहीं कर सकता था। रीशटाग के चुनाव-संबंधी झगड़े तय करने के लिए एक 'चुनाव कमीशन' रक्खा गया जिस में कुछ रीशटाग द्वारा निर्वाचित रीशटाग के सदस्य और कुछ प्रजातंत्र के प्रमुख द्वारा नियत किए हुए शासकी अदालत के सदस्य रक्खे गए। सभा को अपने अधिकारियों

को चुनने और अपने काम-काज के नियम ख़ुद बनाने का अधिकार दिया गया और सभासदों को अन्य धारा-सभाओं के सदस्यों की-सी सुविधाएं दी गईं। रीशटाग को शासन के क़ानून बनाने और कार्यकारिणी पर नियंत्रण रखने के अधिकार दिए गए। राज-व्यवस्था में संशोधन भी रीशटाग स्वीकार कर सकती थी। मगर उस की स्वीकृति को प्रजा के मत से बदला और संशोधनो को प्रजा की ओर से भी पेश और मंज़ूर किया जा सकता था। क़ानून बनाने का भी रीशटाग को इन्हीं शर्तों में अधिकार दिया गया।

रीशटाग की सभा में मसविदे मंत्रि-मंडल अथवा सभा के सदस्यों की ओर से पेश किए जा सकते थे। रीशटाग में मसविदे पास हो जाने के चौदह दिन बाद, व्यवस्थापक-सभा की दूसरी सभा के विरोध न करने पर, क़ानून बन जाने से या दूसरी सभा के किसी मसविदे का विरोध करने पर अगर रीशटाग उस पर पुनः विचार कर के उसे दो तिहाई संख्या से फिर स्वीकार करने पर और प्रजातंत्र के प्रमुख का ऐसी हालत में प्रजा का मत लेने के अपने अधिकार का उपयोग न करने पर मसविदे का राष्ट्रीय क़ानून हो जाने की शर्त रक्खी गई। जिन मसविदों पर व्यवस्थापक-सभा की दोनो शाखाओं का मत न मिले उन पर प्रजा का मत लेने का प्रजातंत्र के प्रमुख को अधिकार दिया गया। किसी स्वीकृत क़ानून का, रीशटाग के एक तिहाई सदस्यों की प्रार्थना पर, अमल के लिए एलान रोक देने और उस के बाद राष्ट्र के मतदारों के बीसवें भाग की अर्ज़ी आने पर उस पर प्रजा के मत लेने का अधिकार भी प्रमुख को दिया गया। परंतु रीशटाग से स्वीकृत क़ानून प्रजा के मत से उसी हालत में रद्द हो सकता था जब कि राष्ट्र भर के रजिस्टरशुदा मतदारों की बहुसंख्या मत देने में भाग ले और मतदेनेवालो की बहुसख्या उस को अस्वीकार करने के लिए मत दे। प्रजा की तरफ़ से भी मसविदे पेश और मंज़ूर हो सकते थे। देश के मतदारों के दसवें भाग के हस्ताक्षरों से कोई क़ानूनी मसविदा पेश होने पर मंत्रि-मंडल को वह मसविदा अपनी राय के साथ रीशटाग के सामने रखने की शर्त रक्खी गई। अगर रीशटाग उस को स्वीकार करे तो वह मसविदा क़ानून बन जायगा और अगर रीशटाग उस को स्वीकार न करे तो उस पर प्रजा के मत लिए जायँगे।

(२) रीशराथ

जर्मन प्रजातंत्र की व्यवस्थापक-सभा की दूसरी सभा का नाम रीशराथ था। पुरानी बंडसराथ की तरह इस सभा में भी प्रजा के प्रतिनिधि नहीं, रियासतों के प्रतिनिधि आते थे। रियासतें जितने प्रतिनिधि चाहें भेज सकती थीं। मगर उन के मत पहले की तरह निश्चित होते थे। दस लाख से कम आबादी की हर रियासत का रीशराथ में एक मत होता था और इस से अधिक आबादी की रियासतों का, हर अधिक दस लाख या उस के भाग के लिए, अगर यह भाग सब से छोटी रियासत के बराबर हो तो रीशराथ में एक प्रतिनिधि होता था। मगर किसी एक रियासत को सब मतों के दो-तिहाई से अधिक मत रखने का हक़ नहीं था। यह आखिरी शर्त प्रशिया का असर कम करने के लिए रक्खी गई थी, क्योंकि उसी एक रियासत पर इस शर्त का असर पड़ता था। हर

मर्दुमशुमारी के बाद रीशराथ मतों का रियासतों में नए सिरे से बटवारा करती थी। रीश-राथ में प्रतिनिधि बन कर आमतौर पर रियासतों के मंत्रि-मंडल जाते थे।

रीशराथ को राज-व्यवस्था में संशोधन और क़ानून बनाने की सत्ता थी। रीशटाग में स्वीकृत संशोधनों को एक दम नामंज़ूर कर देने का अधिकार रीशराथ को नहीं था। रीशराथ को राज व्यवस्था में किए हुए रीशटाग के संशोधन पसंद न हों तो वह सिर्फ़ उन को प्रजा का मत लेने के लिए लौटा सकती थी। क़ानूनी मसविदों पर रीशराथ मंत्रि-मंडल के साथ विचार करती थी। जिन मसविदों को मंत्रि-मंडल रीशटाग के आगे विचार के लिए रखना चाहता था, उन को पहले उसे रीशराथ के सामने विचार के लिए रखना ज़रूरी होता था, चाहे रीशराथ के विचारों पर बाद में मंत्रि मंडल अमल न करे। रीशराथ अपने मसविदे भी मंत्रि-मंडल के पास भेज सकती थी और मंत्रि-मंडल को उन्हें रीशटाग के सामने पेश करना पड़ता था चाहे वह मसविदे मंत्रि-मंडल को पसंद हों या न हों।

रीशटाग के किसी मसविदे को पास कर देने के बाद रीशराथ उस को फिर रीशटाग के पास विचार के लिए भेज सकती थी। अगर दोनों सभाओं की राय मिल जाती थी तो मसविदा क़ानून बन जाता था। अगर दोनों सभाओं की राय नहीं मिलती थी और रीशटाग में रीशराथ के खिलाफ़ दो-तिहाई मत होते थे तो भी यदि प्रजातंत्र का प्रमुख अपने अधिकार का प्रयोग कर के मसविदा प्रजा के मत के लिए न भेजे और प्रजा उसे अस्वीकार न कर दे, तो वह मसविदा क़ानून बन जाता था। मगर रीशटाग के रीशराथ से लौट कर आनेवाले अपने संशोधित मसविदे को फिर दो-तिहाई से कम मतों से अस्वीकार न करने पर जब तक प्रमुख उस मसविदे पर प्रजा की राय न ले और प्रजा उस को स्वीकार न करे, तब तक वह मसविदा क़ानून नहीं बनता था। अस्तु रीशराथ को मसविदे पेश करने और उन का पास होना कुछ दिन के लिए सिर्फ़ रोक देने के अधिकार थे। रीशटाग से मज़ूर मसविदो को नामंज़ूर कर देने की रीशराथ की सत्ता नहीं थी। रीशराथ दूसरे देशों की व्यवस्थापक-सभा की ऊपरी सभा की तरह रोक और निगरानी का आम काम करती थी। वह रीशटाग के बराबर की धारा-सभा नहीं थी।

६—प्रमुख और मंत्रि-मंडल

जर्मन प्रजातंत्र का प्रमुख राष्ट्रीय कार्यकारिणी का सिरताज माना गया था। मगर सरकार का सारा काम एक मंत्रि-मंडल करता था, जिस को प्रमुख नियुक्त करता था और जो रीशटाग को सरकार के सारे काम के लिए जवाबदार होता था। प्रमुख का चुनाव प्रजा के मतदार फ्रांस की तरह सात वर्ष के लिए करते थे और वह जितनी बार चाहे उतनी बार चुनाव के लिए खड़ा हो सकता था। प्रजातंत्र का कोई उपप्रमुख नहीं चुना जाता था। अगर समय पूरा होने से पहले प्रमुख की जगह खाली हो जाती थी, तो सात साल के लिए दूसरा प्रमुख चुन लिया जाता था। रीशटाग को दो-तिहाई मतों और प्रजा के मतदारों को सारे नागरिकों के सिर्फ़ बहुमत से प्रजातंत्र के प्रमुख को मुअत्तल कर देने का अधिकार दिया गया था। प्रमुख, चांसलर और मंत्रियों पर, रीशटाग, सत्ता का दुरुपयोग करने के लिए,

राष्ट्र की सब से बड़ी अदालत के सामने मुक़दमा चला सकती थी। प्रमुख से प्रजा इस्तीफ़ा भी रखा सकती थी। प्रमुख को अन्य देशों के प्रजातंत्र के प्रमुख की तरह बहुत-से अधिकार दिए गए थे। उस को राष्ट्र के सब अधिकारियों को नियुक्त करने और निकालने, क़ानूनों का पालन कराने और अमन क़ायम रखने, एलचियों को भेजने और लेने, रीशटाग की मंज़ूरी से संधियाँ करने, सेनाओं का संचालन करने, अपराधियों को क्षमा करने और खास हालतों में रीशटाग के फ़ैसलों पर प्रजा का मत लेने के अधिकार दिए गए थे। परंतु प्रजातंत्र के प्रमुख का कोई हुक्म तब तक बाक़ायदा न होने की क़ैद रक्खी गई थी जब तक उस पर चांसलर या उचित मंत्री के हस्ताक्षर न हों। मंत्रियो के हस्ताक्षर हो जाने से जवाबदारी मंत्रियों की हो जाती थी।

मंत्रि-मंडल का प्रधान चांसलर होता था। परंतु जर्मन प्रजातंत्र का चांसलर जर्मन-साम्राज्य के चांसलर की तरह मंत्रियों के दर्जे से भिन्न नहीं होता था। दूसरे देशों के मंत्रि-मंडलों के प्रधान-मंत्री की-सी हैसियत उस की भी होती थी। चांसलर को प्रमुख नियत करता था। चांसलर अपने मंत्रि-मंडल के मंत्रियों को चुनता था और उन की नियुक्ति प्रमुख करता था। प्रधान-मंत्री और मंत्रि-मंडल के अधिकार में रहने की राज-व्यवस्था में यह शर्त रक्खी गई थी कि उन पर रीशटाग का विश्वास रहना चाहिए। जब रीशटाग उन में अविश्वास का प्रस्ताव पास करे उसी समय सब मंत्रियो को तुरंत इस्तीफ़ा दे देना चाहिए। इंगलैंड, फ्रांस और इटली इत्यादि में इस शर्त का पालन रिवाज और सहूलियत पर होता है। मगर यूरोप भर में जर्मनी ही एक ऐसा देश है, जहाँ की लिखित राज-व्यवस्था में यह शर्त रक्खी गई है। चांसलर और मंत्रियों को रीशटाग के सदस्यों में से ही नियुक्त किया जाना चाहिए या बाहर से भी वह चुने जा सकते हैं, इस संबंध में यूरोप की और राज-व्यवस्थाओं की तरह जर्मनी की राज-व्यवस्था में भी कोई ज़िक्र नहीं है। मगर जिस तरह उन देशों में यह रिवाज पड़ गया है कि मंत्री या तो व्यवस्थापक-सभा के मंत्री चुने जाने के समय सदस्य होते हैं या चुन जाने के बाद जल्दी से जल्दी सदस्य बन जाते हैं, उसी प्रकार जर्मनी में भी यह रिवाज ज़रूर हो जायगा। राज-व्यवस्था के अनुसार चांसलर और मंत्रियों को रीशटाग की सभा की बैठकों और कमेटियो की बैठको में भाग लेने और मसविदे पेश करने तथा रीशराथ की सभा और कमेटियो की बैठकों में भाग लेने और प्रस्ताव रखने का अधिकार होता था।

कार्यकारिणी पर रीशटाग का अंकुश रखने के लिए मंत्रियों पर क़ानून के विरुद्ध काम करने पर अभियोग चलाने का अधिकार भी रीशटाग को दिया गया था। रीशटाग के सदस्यों के पाँचवें भाग की माँग पर कार्यकारिणी की कार्रवाइयों की जाँच करने के लिए एक कमेटी बनाई जा सकती थी, जिस के सामने ज़रूरत के मुताबिक़ सब अधिकारी गवाही देने और सारे काग़ज़ात रखने के लिए मजबूर होते थे। रीशटाग के सौ सदस्य प्रजातंत्र के प्रमुख, चांसलर या किसी मंत्री पर मुक़दमा चलाने का सवाल उठा सकते थे और रीशटाग के दो-तिहाई मत उस के पक्ष में होने पर राष्ट्र की सब से बड़ी अदालत के सामने मुक़दमा चलाया जा सकता था।

१०—नई दलबंदी

प्रजातंत्र राज-व्यवस्था के अमल में आने के बाद नई जर्मन सरकार को लड़ाई के हार के नतीजों का सामना करना था। सब से कठिन समस्या सरकार के सामने मित्र-राष्ट्रों से संधि की थी। मित्र-राष्ट्र—खास कर फ्रांस और बेलजियम—जर्मनी की ताक़त को सदा के लिए कम करने और उस से जितना बने उतना लड़ाई का मुआवज़ा लेने पर तुले हुए थे। हारे हुए देश के लिए विजेता राष्ट्रों से संधि में ऐसी शर्तें प्राप्त कर लेना जिस से जर्मनी तबाही से बच कर जल्द से जल्द फिर एक बड़ी शक्ति बन जाय कोई हँसी खेल का काम नहीं था। नई प्रजातंत्र सरकार के सामने सब से पहली समस्या यह थी।

शीडमैन की अस्थायी संधि की शर्तें मंज़ूर न होने से उस ने इस्तीफ़ा दे दिया था और उस के स्थान में बौअर नाम का दूसरा समाजवादी नेता चांसलर के स्थान पर आ गया था। बौअर की सरकार के संधि पर हस्ताक्षर करने पर ज़मींदारों और पूँजीपतियों के पुराने अनुदार-दल ने फिर सिर उठा कर प्रजातंत्र सरकार के विरुद्ध शोर मचाना शुरू कर दिया। एक मज़दूर का प्रजातंत्र के प्रमुख[1] पद और मज़दूर संघ के एक अधिकारी का चांसलर की गद्दी पर होना इन अभिमानियो की आँखो में खलता था। सेना से निकले हुए हज़ारों अफ़सर बेकार इधर-उधर मारे-मारे फिर रहे थे। उन्हों ने ल्यूडेंडौर्फ़ से मिल कर और बर्लिन के कमांडर लुटविज़ से षड्यंत्र रच कर डाक्टर कैप नाम के मनुष्य की अध्यक्षता में 'जंकर' दल के धन की सहायता से सरकार के खिलाफ़ विद्रोह की तैयारी शुरू कर दी थी। संधि की शर्तों के कारण मज़दूरों की गाँठ कटती थी और उद्योग-धंध पर सामाजिक नियंत्रण करने का वादा पूरा न करने से श्रमजीवियों की नज़रों में भी समाजवादी सरकार गिर गई थी। अस्तु विद्रोहियों का खयाल था कि श्रमजीवी भी विद्रोह में उन का साथ देंगे। सरकार को इस विद्रोह की तैयारी की खबर लगते ही युद्ध-सचिव नोस्के ने लुटविज़ को एकदम बर्खास्त कर दिया और कैप की गिरफ़्तारी का वारंट निकाल दिया। मगर पुलिस के अधिकारियों ने कैप को गिरफ़्तार नहीं किया और लुटविज़ ने अपना पद नहीं छोड़ा। तब, सरकार को मालूम हुआ कि विद्रोह की तैयारी कहाँ तक हो चुकी है। बर्लिन में रहना सुरक्षित न समझ कर सरकार एक मंत्री को खबर भेजने के लिए राजधानी में छोड़ कर, दूसरे नगर में चली गई। कैप ने बर्लिन में घुस कर अपने आप को चांसलर और लुटविज़ को युद्ध-सचिव एलान कर दिया। सरकार की सेना और पुलिस ने किसी का साथ नहीं दिया। समाजवादी ईबर्ट की सरकार ने मज़दूर-संघों के द्वारा बर्लिन में आम हड़ताल का एलान करा दिया। पानी, गैस, बिजली, रेल, ट्राम सब एकदम बंद हो गईं। प्रजा ने भी कैप का साथ नहीं दिया। हार कर विद्रोही बर्लिन छोड़ कर चले गए। मगर सरकार को मालूम हो गया कि उस से काफ़ी लोग असंतुष्ट हैं। अस्तु, बर्लिन में लौट कर बौअर की सरकार ने इस्तीफ़ा दे दिया और कुछ दिन काम चलाने के लिए एक दूसरे समाजवादी नेता हरमैन मुलर ने २७ मार्च सन् १६२० को नया

[1] ईबर्ट ज़ीन बनाने का काम करता था।

मंत्रि-मंडल क़ायम किया।

ईबर्ट ने सोचा कि पुरानी व्यवस्थापक-सभा का, नई राज-व्यवस्था बना चुकने के बाद भी बहुत दिनों तक क़ायम रहना ठीक नहीं है। इस लिए उस ने ६ जून सन् १६२० को नया चुनाव मुक़र्रर कर दिया था। इस चुनाव में 'बहुसंख्या समाजवादी दल' के पिछले १६५ सदस्यों के स्थान में सिर्फ़ ११२ ही सदस्य चुने गए। 'स्वतंत्र समाजवादियों' के २२ से बढ़ कर ८१ सदस्य चुने गए। 'अनुदार-दल' के ४२ से बढ़ कर ६६ सदस्य और 'जर्मन लोकदल' के २३ से बढ़ कर ६२ सदस्य। 'मध्यदल' के ६० से घट कर ६८ और 'प्रजा-सत्तात्मक दल' के ७५ से घट कर ४५ सदस्य रह गए। २० जून को फ़ेहरेनबाख़ ने 'प्रजा-सत्तात्मक दल,' 'मध्य-दल' और 'लोक दल' में से मिला कर एक नया मंत्रि-मंडल तैयार किया। मित्र-राष्ट्रों की बनाई हुई संधि पर आख़िरी हस्ताक्षर करने से इस मंत्रि-मंडल ने इन्कार कर दिया। अस्तु इस मंत्रि-मंडल को भी इस्तीफ़ा दे देना पड़ा और डाक्टर विर्थ ने प्रजा-सत्तात्मक दल, मध्य-दल और समाजवादी दल में से मिला कर ४ मई १६२१ ई० सन् को एक नया मंत्रि-मंडल तैयार किया।

मित्र राष्ट्रों ने जर्मन सरकार के संधि पर आख़िरी हस्ताक्षर न करने पर जर्मनी को अल्टीमेटम दे दिया था, और वे रूह पर क़ब्ज़ा कर लेने की धमकियाँ दे रहे थे। अस्तु विर्थ सरकार ने अल्टीमेटम की मियाद ख़तम होने से पहले ही ११ मई को संधि पर हस्ताक्षर कर दिए। डाक्टर विर्थ का विश्वास था कि संधि की शर्तें इतनी कड़ी हैं कि वे पूरी न की जा सकेंगी। मगर संधि पर सही करने से इन्कार कर देने के बजाय वह शर्तें पूरी करने का पूरा प्रयत्न कर के मित्र राष्ट्रों को यह विश्वास दिलाना चाहता था कि जर्मन सरकार मित्र-राष्ट्रों को धोखा नहीं देना चाहती है, बल्कि संधि की शर्तें वाक़ई ऐसी हैं कि उन का जर्मनी से पूरा होना असंभव है। सरकार के संधि पर हस्ताक्षर करते ही सरकार के विरोधियों ने फिर सिर उठाया और बवेरिया और सैक्सनी की रियासतें सरकार के विरुद्ध आंदोलन का केंद्र बन गईं। कैप के पक्ष के लोग दब तो गए थे परंतु भीतर ही भीतर वह सरकार के विरुद्ध प्रयत्न कर रहे थे। 'अनुदार-दल' को भी अभी तक प्रजातंत्र को उखाड़ कर राजाशाही स्थापन करने की आशा थी और इस विचार के लोगों की बहुत-सी गुप्त संस्थाएँ क़ायम हो गई थीं। इन गुप्त संस्थाओं की ओर से राजनैतिक नेताओं की हत्याएँ शुरू कर दी गईं। मध्य-दल का अत्यंत क़ाबिल नेता अर्ज़बर्जर, जिस का शुरू से आख़िर तक संधि में बड़ा हाथ रहा था, मार डाला गया। इस पर प्रजा में सरकार के विरोधियों के ख़िलाफ़ बड़ा रोष फैला और रीशटाग ने सरकार को उन को दबाने के लिए विशेष अधिकार सौंप दिए। इतने में मंत्रि-मंडल के एक सदस्य राथनाउ की हत्या भी कर डाली गई और विर्थ सरकार ने भी १६ नवंबर सन् १६२२ ई० को इस्तीफ़ा दे दिया।

अब की बार 'लोकदल' के एक अमीर व्यापारी सदस्य क्यूनो ने लोकदल, मध्यदल और प्रजासत्तात्मक दल को मिला कर एक मंत्रि-मंडल तैयार किया। उधर मुआवज़े की किश्त वक़्त पूरा हो जाने पर भी न पहुँचने से फ़्रांस ने रूह पर क़ब्ज़ा कर लिया। अस्तु, सब दलों ने भेद-भाव भूल कर क्यूनो की सरकार का साथ दिया और जर्मन सरकार ने रूह

में फ्रांसीसियों के खिलाफ़ जर्मनों का सत्याग्रह शुरू करा दिया। परंतु प्रजातंत्र के विरोधियों ने इस मौक़े ।को अच्छा समझ कर फिर कान खड़े किए। डाक्टर काहर ने बवेरिया के ज़र्मींदारों के रुपए की सहायता से प्रजातंत्र को उखाड़ फेंकने के लिए एक खुला आंदोलन खड़ा कर दिया। हिटलर नाम के एक दूसरे प्रजातंत्र के विरोधी ने बवेरिया में इटली के फ़ेसिज़्म के ढंग का, 'राष्ट्रीय समाजवाद' का आंदोलन उठाया। क्यूनो सरकार को भी आखिरकार कुछ ही दिन में इस्तीफ़ा दे देना पड़ा और उस की जगह पर लोकदल के नेता डाक्टर स्ट्रेस्मैन ने समाजवादियों की सहायता से १२ अगस्त सन् १६२३ ई० को नया मंत्रि-मंडल बनाया।

डाक्टर स्ट्रेस्मैन बड़ा योग्य पुरुष था। परंतु उस के सामने काम भी बड़ा कठिन था। रूर्ह में मित्र-राष्ट्रों से झगड़ा निबटाना था, घर का कलह और विद्रोह—खास कर बवेरिया और सेक्सनी का विद्रोह—दूर कर के जर्मनी के सिक्के मार्क की मिट्टी पलीत होने से बचानी थी। काहर ने बवेरिया में प्रजातंत्र शासन उखाड़ कर एक त्रिमूर्ति का शासन कायम करने का प्रयत्न शुरू कर दिया था। उस का खयाल था कि बवेरिया में सफलता हो जाने पर दूसरे स्थानों पर लोग आप से आप बवेरिया का अनुकरण कर लेंगे। हिटलर सन् १६२१ से 'राष्ट्रीय समाजवादी दल' का नेता था। उस ने नौजवानों में उत्साह भर दिया था और 'बंडओबरलेंड' नाम का स्वयंसेवकों का एक दल भी उस के पास था। उस ने भी इसी समय मुसोलनी की रोम पर कूच की तरह 'बर्लिन पर कूच' की तैयारी शुरू की। हिटलर को फ़िक्र हुई कि कहीं काहर आगे न निकल जाय। अस्तु उस ने काहर को एक जगह पर पकड़ कर, पिस्तौल दिखा कर ल्यूडैनडौर्फ़ की सहायता से, एक ऐसे एलान पर दस्तखत करा लिए जिस में काहर के नाम से हिटलर की मदद करने के लिए जनता से अपील की गई थी। उस के बाद हिटलर ने फ़ौरन अपने सैनिक इकट्ठे करके, अपने आप को बवेरिया का प्रमुख एलान कर दिया और बवेरिया के सारे मंत्रियों को गिरफ़्तार कर लिया। दूसरे दिन सबेरे ल्यूडेनडौर्फ़ और हिटलर अपनी सेना का एक जलूस बना कर राजधानी में से निकले। मगर सरकारी फ़ौज से मुकाबला होते ही हिटलर के सैनिकों में भगदड़ पड़ गई। ल्यूडेनडौर्फ़ घोड़ा बढ़ा कर एक तरफ़ चला गया और हिटलर भाग गया।

डाक्टर स्ट्रेस्मैन ने आए दिन के उपद्रवों को दबाने और सरकार को मज़बूत करने के लिए रीशटाग से सरकार के लिए खास अधिकारों की प्रार्थना की और रीशटाग ने उस की प्रार्थना मंज़ूर की। सेनाधिपति जेनरल स्टीक्ट को जो 'लोहे का मौन मनुष्य' कर के प्रख्यात था नए अधिकारों के अनुसार सरकार की तरफ़ से सारे जर्मनी का 'स्वाधीन सैनिक शासक[1]' बना दिया गया। उस ने अधिकार हाथ में आते ही कम्यूनिस्ट और फ़ेसिस्ट दलों को ग़ैर-क़ानूनी ठहरा दिया। मगर इसी बीच में समाजवादियों ने सरकार में अविश्वास का प्रस्ताव पास कर दिया जिस से डाक्टर स्टैस्मैन को इस्तीफ़ा दे देना पड़ा। डाक्टर मार्क्स ने, समाजवादियों को छोड़ कर, नवंबर सन् १६२३ ई० में एक नया मंत्रि-मंडल

[1] डिक्टेटर।

बनाया जिस में उस ने स्ट्रैस्मैन के परराष्ट्र-सचिव और लूथर को अर्थ-सचिव रक्खा। बवेरिया का विद्रोह दबा दिया गया था। काहर अपने सरकारी पद से इस्तीफ़ा दे कर हट गया था। ल्यूडैनडौर्फ़ और हिटलर पर बवेरिया की अदालत में मुक़दमा चलाया गया जिस में ल्यूडैनडौर्फ़ के तो उस की पुरानी सेवाओं का खयाल कर के छोड़ दिया गया मगर हिटलर के पाँच वर्ष तक क़िले में नज़रबंदी की सज़ा हुई। मगर उस से वह सज़ा भुगवाई नहीं गई। सब जगह शांति स्थापित हो गई थी। अस्तु, १५ फरवरी सन् १९२४ ई में विशेष अधिकारों के क़ानून की मियाद खत्म होने पर फिर से उस के नया नहीं किया गया। इधर रूह का सत्याग्रह और जर्मनी से किश्तें वसूल करने का तरीक़ा तय करने के लिए 'डॉज कमीशन' नियुक्त हो गया था। अस्तु रूह का सत्याग्रह भी बंद कर दिया गया।

डॉज कमीशन ने जर्मनी की आर्थिक दशा का ध्यान रखते हुए मुआवज़ा अदा करने के लिए सहूलियतें दीं और जर्मनी के पैदावार के ज़रियों—अर्थात् रूह जैसे स्थानों पर—मित्र राष्ट्रो का हाथ न रखने का फ़र्ज़ बताया। इंगलंड में इस समय पर समाजवादी नेता रैमसे मैकडानेल्ड प्रधान-मंत्री था और फ्रांस में समाजवादी नेता हैरियट प्रधान-मंत्री था। जर्मन सरकार के लिए मित्र राष्ट्रों से मुआवज़े के विषय पर समझौता करने के लिए यह अच्छा वक्त था। मगर डॉज कमीशन की रिपोर्ट निकलने से पहिले ही रीशटाग के भीतर और बाहर राष्ट्रवादियों ने शोर मचाना शुरू कर दिया जिस से चांसलर को सरकार के लिए बहु-संख्या का भरोसा नहीं रहा। अस्तु उस से रीशटाग को भंग करा के नए चुनाव का एलान करा दिया। इसी चुनाव के तूफ़ान में 'डॉज रिपोर्ट' प्रगट हुई। चुनाव के बाद भी रीशटाग में मित्र-राष्ट्रों से समझौते के पक्षपातियों की बहुसंख्या क़ायम रही। मगर उन की संख्या पहले से घट गई और राष्ट्रवादियों की संख्या बहुत बढ़ गई। डॉज रिपोर्ट पर अमल करने के लिए प्रजातंत्र की राज-व्यवस्था की शर्तों का संशोधन करने के लिए जिन दो-तिहाई मतों की रीशटाग में सरकार को ज़रूरत थी वह सरकार के पक्ष में नहीं थे। अस्तु, बड़ी मुश्किल से मंत्रि-मंडल ने डॉज रिपोर्ट पर अमल करने के लिए आवश्यक क़ानूनों को रीशटाग में स्वीकार कराया।

डॉज रिपोर्ट की शर्तों पर अमल करने के संबंध में मित्रराष्ट्रों के प्रतिनिधियों और जर्मन सरकार के प्रतिनिधियों का लंदन में समझौता हुआ। इस समझौते के ही पहली सच्ची संधि समझना चाहिए। इस समझौते के परिणामस्वरूप रूह से फ्रांस की सेनाएँ हटा ली गई जिस से जर्मनी के राजनैतिक और आर्थिक जीवन में कुछ स्थिरता आना शुरू हुई। सब प्रकार के तूफ़ानों को झेल कर अब जर्मन प्रजातंत्र भी इतना मज़बूत हो चुका था कि उस के विरोधियों के, प्रजातंत्र को उखाड़ कर फेंक देने के विचार धीरे-धीरे बदल कर, सरकार के काम में भाग लेना ही उचित लगने लगा था। फिर भी रीशटाग में पुराने असंतोषियों की अभीतक भरमार थी। जर्मनी को अपने भविष्य की सुचारु पुनर्घटना करने के लिए सरकार की जी-जान से मिल कर सहायता करनेवाली रीशटाग की ज़रूरत थी। डाक्टर मार्क्स को पुरानी रीशटाग की सहायता पर अधिक भरोसा नहीं रहा था। अस्तु उस ने प्रमुख ईबर्ट को सलाह दे कर २० अक्टूबर सन् १९२४ ई० से रीशटाग भंग करा के ७

दिसंबर को नए चुनाव की तारीख नियत करा दी। मार्क्स को जैसी आशा थी नए चुनाव का नतीजा वैसा ही आया। सरकार के विरोधियों की कड़ी हार हुई। कम्यूनिस्ट दल के ६२ से घट कर ४५ और 'राष्ट्रीय समाजवादियों' के ३२ से घट कर सिर्फ़ १४ सदस्य रीशटाग में रह गए। ठंडे विचार के सदस्यों की संख्या बहुत बढ़ गई। फिर भी समाजवादियों को सत्रह लाख और सब प्रकार के दूसरे राष्ट्रवादियों को पाँच लाख मत पिछले चुनाव से देश भर में अधिक मिले। परंतु इन दलों ने सरकार का विरोध करना छोड़ कर सरकार में अब भाग लेना निश्चय कर लिया था।

इसी बीच में प्रमुख ईबर्ट का देहांत हो गया। उस के मर जाने पर पहली बार राज-व्यवस्था की शर्त के अनुसार प्रजा के मतों से प्रजातंत्र के प्रमुख के चुनने का अवसर आया। अस्तु, सारे देश में हलचल मच गई। मगर जर्मनी के एक अत्यंत महान् पुरुष के प्रमुख-पद के लिए उम्मीदवार होने पर सब को दिलासा हो गया। हिंडनबर्ग को बहुत से लोग ल्यूडेंडौर्फ़ की तरह पुरानी राजाशाही का पक्षपाती समझते थे और इसी लिए उस के उम्मीदवार बनने पर समाजवादी-दल, मध्य-दल और दूसरे मध्यवर्ग के दलों ने उस का विरोध भी किया। मगर हिंडनबर्ग ने ल्यूडेनडौर्फ़ की तरह किसी षडयंत्र इत्यादि में कभी कोई भाग नहीं लिया था। प्रमुख चुने जाने के बाद भी उस ने प्रजातंत्र के प्रति वफ़ादार रहने की शपथ ले कर, हमेशा शपथ का ईमानदारी से पालन किया, और राजाशाही में विश्वास रखनेवालों को प्रजातंत्रवादियों से मिलाने का सदा प्रयत्न किया। मगर मार्क्स नए चुनाव के बाद मंत्रिमंडल न बना सका और मध्यवर्ग के दलों की सहायता से लूथर चांसलर बना। राष्ट्रवादियों का सरकार में भाग लेना और हिंडनबर्ग का प्रमुख होना सब के लिए जर्मनी में शांति और स्थिरता के चिह्न थे। कैप और काह्र विद्रोहों को रचनेवाले केप्टन एरहार्ट तक ने देश-भक्तों की संस्थाओं से व्यर्थ का विरोध बंद कर के सरकार का साथ देने की प्रार्थना की। क़ैसरवाद के अखंड पुजारियों की प्रवृत्ति में यह परिवर्तन भी बड़े मार्के का था। जर्मनी के भविष्य में, देश के भीतर और बाहर, सब का विश्वास बढ़ने लगा था। लूथर और स्ट्रेस्मैन के प्रयत्नों से जर्मनी की लोकार्नो में मित्र-राष्ट्रों से संधि के हो जाने के बाद, जर्मनी लीग ऑव् नेशंस में भी शामिल हो गया। मगर इस संधि के परिणामस्वरूप लूथर के मंत्रि-मंडल का सहायक 'जर्मन राष्ट्रीय लोकदल' सरकार का साथी नहीं रहा और मंत्रि-मंडल को 'मध्यदलों' का बनाने के लिए मंत्रि-मंडल में फेरफार करना पड़ा। परंतु मई, सन् १९२६ ई० में लूथर को इस्तीफ़ा दे देना पड़ा और 'मध्यदल,' 'बवेरियन लोकदल,' 'राष्ट्रीय जर्मन लोकदल' और 'प्रजा-सत्तात्मक दल' की सहायता से फिर मार्क्स ने नया मंत्रि-मंडल बनाया जिस में डाक्टर स्ट्रेस्मैन परराष्ट्र-सचिव के स्थान पर रहा। यह मंत्रि-मंडल भी दिसंबर सन् १९२६ से अधिक न चला। दूसरा मंत्रि-मंडल 'प्रजा-सत्तात्मक दल' को छोड़ देने वाले नेता गेस्लर ने बनाया और वह जनवरी सन् १९१८ तक क़ायम रहा। उस के बाद कई मास तक किसी भी मंत्रि-मंडल को व्यवस्थापक-सभा में बहुसंख्या मिलना दुश्वार हो गया, और उसे ११ मार्च सन् १९२८ को भंग कर के नए चुनाव का एलान कर दिया गया। बीस मई को होने वाले इस चुनाव में सरकार-

पक्षी दलों की बुरी तरह से हार हुई और 'समाजी प्रजा-सत्तात्मक दल' के सदस्य सब से अधिक संख्या में चुन कर आए। 'समष्टिवादी दल' की भी ताक़त बढ़ गई।

समाजी प्रजासत्तात्मक दल के नेता हरमैन मुलर ने नया मंत्रि-मंडल 'प्रजा-सत्तात्मक दल' और बवेरियन लोक-दल की सहायता से बनाया। इस में भी पर-राष्ट्र-सचिव डाक्टर स्ट्रेस्मैन ही रहा। इस मंत्रि-मंडल ने, 'यंग प्लान' की योजना के अनुसार जर्मनी की मित्र-राष्ट्रों को मुआवज़ा अदा करने की बातचीत चला कर, सन् १६२६ की पेरिस कान्फ्रेंस और सन् १६२६-३० ई० की दो हेग कान्फ्रेंसों में मित्र-राष्ट्रों से एक नया समझौता किया। मगर अक्तूबर सन् १६२६ ई० में ही स्ट्रेस्मैन का स्वर्गवास हो गया और उस के स्थान पर, लोकदल का एक दूसरा सदस्य डाक्टर करटियस परराष्ट्र-सचिव के स्थान पर आ गया। 'जर्मन राष्ट्रीय दल' के नेता डाक्टर ह्यूजेनबर्ग ने 'राष्ट्रीय समाज-वादी दल' के नेता हिटलर से मिल कर 'यंग प्लान' की योजना को नामंज़ूर कर देने के लिए जर्मनी में घोर आंदोलन उठाया। फिर भी कुछ बहुसंख्या से 'यंग प्लान' की योजना व्यवस्थापक-सभा में मंज़ूर हुई। पर जर्मनी में आर्थिक संकट न घटा और देश में बेकारी बढ़ती ही गई। इस सरकार को भी इस्तीफ़ा देना पड़ा और 'मध्यदल' के नेता ब्रूनिंग ने मार्च सन् १६३० में नया मंत्रि मंडल बनाया। इस मंत्रि-मंडल के सहायकों की भी व्यवस्थापक-सभा में बहुसंख्या न थी। मगर 'राष्ट्रीय लोकदल' के विरोध न करने से यह मंत्रि-मंडल फ़ौरन ही नहीं निकाला गया। ब्रूनिंग ने अपने आर्थिक सुधारों को व्यस्थापक-सभा के सामने न रख कर उन को जर्मन राज-व्यवस्था में दिए हुए संकट के समय प्रमुख के फ़रमानी क़ानून जारी करने के विशेष अधिकार का प्रयोग कर के जारी कर दिया। व्यवस्थापक-सभा में 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' 'और समष्टिवादी दल' ने मिल कर इस बात पर सरकार का विरोध किया। अस्तु, ब्रूनिंग ने व्यवस्थापक-सभा भंग करा दी और ३० सितंबर सन् १६३० नए चुनाव के लिए निश्चित कर दी। इस चुनाव में नरम और गरम दलों ने मिल कर सरकार की नीति की बड़ी निंदा की। इस चुनाव के बाद हिटलर के 'राष्ट्रीय समाजवादी दल' की, जो नाज़ी कहलाने लगे थे, यकायक ताक़त बढ़ गई। 'समष्टिवादी-दल' की ताक़त भी बढ़ी। बहुत-से पुराने दल मिट गए थे और कई नए दल अखाड़े में आगए थे। मगर 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' की सहायता से ब्रूनिंग ने ही फिर भी मंत्रि-मंडल बनाया और प्रजातंत्र के प्रमुख के विशेष अधिकारों की सहायता से उस ने जर्मनी की आर्थिक स्थिति सुधारने और मित्र-राष्ट्रों को खुश कर के उन से जर्मनी का 'मुआवज़ों का बोझ कम कराने के प्रयत्नों की' नीति जारी रक्खी।

सन् १६३० ई० के चुनाव के बाद से सरकार-पक्षी संजीदा और नरम विचारों के दलों की शक्ति कम होने लगी और गरम और सरकारी नीति के विरोधी दलों का प्रभाव बढ़ने लगा। राजाशाही के पक्षपातियों में प्रजातंत्र के सब से कट्टर दुश्मन मिलते थे, जो मौक़े के विचार से प्रजातंत्र के साथी थे। उन का अभी तक सेना और राजा की बुद्धिमत्ता में विश्वास था। मगर उन के हाथ में प्रजातंत्र को उखाड़ कर फेंक देने के लिए ताक़त नहीं थी। प्रजातंत्र के विरोधियों की ताक़त उन के आपस के झगड़ों के कारण भी कम थी।

'राष्ट्रीय समाजवादी दल' और राजाशाही के पक्षपाती दोनों अपनी अलग-अलग बाँसुरियां बजाते थे। फिर भी प्रजातंत्र के विरोधियों का सब से बड़ा दल 'राष्ट्रीय समाजवादी दल' ही था। रोम पर मसोलनी की कूच की तरह 'राष्ट्रीय समाजवादियों' की बर्लिन पर सफल कूच की कोई बहुत संभावना तो नहीं दिखाई देती थी। मगर इतिहास में बहुत-सी असंभव लगने वाली बातें संभव हो चुकी हैं। जिन राष्ट्रीय समाजवादियों की सन् १९२४ के चुनाव में बिल्कुल ही सख्या कम हो गई थी, उन की सन् १९३० ई० से यकायक बहुत ताक़त बढ़ गई। प्रमुख हिंडनबर्ग का सन् १९३२ ई० में अधिकार-समय पूरा होने पर जब चांसलर ब्रूनिंग ने रीशटाग में क़ानून पास कर के हिंडनबर्ग का अधिकार-समय कुछ दिन के लिए बढ़ाने की बात चलाई, जिस से कि ब्रूनिंग की जर्मनी के मुआवज़ा अदा करने की असंभावना पर मित्र-राष्ट्रों से चलाई हुई बातचीत में अच्छी सफलता मिल सके, तो हिटलर ने उस के प्रस्ताव को रीशटाग में स्वीकार नहीं होने दिया। बाद में प्रमुख के चुनाव में हिंडनबर्ग के मुक़ाबले में हिटलर स्वय खड़ा हुआ। उस का कहना था कि "जर्मनी को मित्र राष्ट्रों से मिल कर काम करने से कुछ फ़ायदा नहीं हुआ। लीग ऑव् नेशंस का सदस्य हो जाने पर भी जर्मनी को अन्य राष्ट्रों के बराबरी का स्थान नहीं दिया गया। स्ट्रेस्मैन ने मित्र-राष्ट्रों से मिल कर काम करने से जर्मनी को आर्थिक लाभ होने का विश्वास दिला कर सन् १९२३ से जर्मन सरकार को जिस नीति के मार्ग पर रक्खा उस से जर्मनी को कुछ फ़ायदा नहीं हुआ। उल्टा जर्मनी आर्थिक संकट में पड़ गया।"

इसी चुनाव के ज़माने में पूँजीपतियों को अपने पक्ष में मिलाने की ग़रज़ से हिटलर ने डुसेलडौर्फ़ नगर में ६०० बड़े-बड़े कारख़ाने वालों को एक दावत में ढाई घंटे तक अपना कार्यक्रम समझाया। मगर आर्थिक और परराष्ट्र नीति पर उस के विचित्र विचार सुन कर पूँजीपतियों को उस की बातों में अधिक श्रद्धा नहीं हुई। उस के दल के एक दूसरे नेता ने दल का कार्यक्रम इस प्रकार बताया, "हिटलर दल प्रजातंत्र का प्रमुख 'मार्शल आव् दि रीश' नाम के एक अधिकारी को नियुक्त करेगा जिस की अध्यक्षता में एक जनदल का संगठन किया जायगा जिस में लोग सैनिक सेवा करने के कर्तव्य के सिद्धांत के बजाय 'अधिकार' के सिद्धांत पर शामिल होंगे। ईसाई धर्म के सिवाय और किसी धर्म को नहीं माना जायगा। रोमन क़ानून और 'सुवर्ण-कक्षा मुद्रण' (ओल्ड स्टैंडर्ड केरेंसी) ख़त्म कर दिए जायँगे। 'मेहनत की योग्यता' के सिद्धांत पर एक नया मुद्रण चलाया जायगा। विदेशी व्यापार पर कड़ी चुंगी लगाई जायगी, जिस से सरकार को ३०,००,००,००० मार्क का कर मिलेगा और इस कर की सहायता से जर्मनी का सारा क़र्ज़ा बहुत शीघ्र पटा दिया जायगा। लड़ाई से अब तक जर्मन सरकार की नीति निश्चय करनेवालों पर मुक़दमा चलाया जायगा और जो अपराधी ठहरेंगे उन को फाँसी दी जायगी।" एक स्थान पर व्याख्यान देते हुए हिटलर ने कहा कि, "आजकल जर्मनी पर राज करनेवाले दल चाहे अपनी गद्दी छोड़ने को तैयार हों अथवा न हों 'राष्ट्रीय समाज-वादी दल' जर्मनी के अन्य सब राजनैतिक दलों को मिट्टी में मिला देगा और उन की मिट्टी से एक नए जर्मन राष्ट्र की मीनार तैयार करेगा। जर्मनी की क्रांति से ही जर्मनी की सारी आपत्तियां शुरू हुई हैं। जो

राजनैतिक दल आजकल जर्मनी के भाग्य-विधाता बन रहे हैं, इन सब का उस क्रांति में भाग था। अस्तु उन सब को ख़ाक में मिला देने की ज़रूरत है। चांसलर ब्रूनिंग कहता है कि आनेवाली लूज़ान कान्फ्रेंस में जर्मनी को मुआवज़े में रियासतें मिलेंगी। मैं कहता हूं कि अगर ब्रूनिंग का यह विचार है तो लूज़ान कान्फ्रेंस होवेगी ही नहीं। अगर ब्रूनिंग की सरकार ख़ुद निकलने को राज़ी नहीं होगी तो हम उसे उठा कर फेंक देंगे। मैं जो कहता हूं उस में आप को ज़रा भी संदेह नहीं करना चाहिए, जैसा कि मेरे यहां खड़ा होने में आप को ज़रा भी संदेह नहीं होना चाहिए।"

हिंडनबर्ग को प्रमुख-पद के लिए फिर खड़ा होने की बीस लाख हस्ताक्षरों की एक अर्ज़ी के द्वारा प्रजा की तरफ़ से प्रार्थना की गई थी, और उस ने अपनी ८५ वर्ष की अवस्था का ख़याल छोड़ कर देश को बचाने के लिए फिर प्रमुख-पद के लिए खड़ा होना स्वीकार कर लिया था। हिंडनबर्ग पर देश और विदेश में सब को बहुत विश्वास था। चांसलर ब्रूनिंग के, जो स्ट्रेस्मैन की नीति का मज़बूती से पालन कर रहा था, उकता कर कई बार इस्तीफ़ा रख देने पर हिंडनबर्ग ने ही उसे रोक रक्खा था। हिटलर के इलज़ामों के उत्तर में ब्रूनिंग ने कहा कि "जर्मनी और दुनिया के आर्थिक कष्टों का एक कारण वारसेल्ज़ की संधि की शर्तें हैं। इन शर्तों के कारण पाँच वर्ष तक जर्मनी में आर्थिक-जीवन की पुनर्घटना करने के सारे प्रयत्न असफल गए। जर्मनी की मुद्रा की जो अधोगति हुई, वह सभी को मालूम है। जर्मन प्रजातंत्र की सरकार का इस में कोई दोष नहीं था। बकवाद करना, इलज़ाम लगाना बहुत आसान है। मगर जो ज़िम्मेदार शख़्स हैं वे जानते हैं कि जर्मनी का भीतरी आपत्तियों से छुटकारा सफल पर-राष्ट्रनीति पर निर्भर है। जिस समय अन्य राष्ट्रों से अच्छा फ़ैसला करने के लिए सारे जर्मनी को मिल कर ज़ोर लगाने की ज़रूरत है, उस समय दुर्भाग्य से हिटलर ने वितंडावाद खड़ा कर के देश के भीतर ही झगड़ा शुरू कर दिया है।" ब्रूनिंग का कहना शायद सच था। इस ने हमलों और गालियों की परवाह न कर के जर्मन सरकार की नाव इस होशियारी से चलाई थी कि अब अन्य राष्ट्र भी मानने लगे थे कि अगर जर्मनी के सिर पर से मुआवज़ों का बोझा कम नहीं किया जायगा तो उस की नाव डूब जायगी। दुनिया भर में सब से बड़े हवाई जहाज़ ग्राफ़ ज़ेपलिन के कमांडर डाक्टर ह्यूगो ऐक्नर ने, जिस की अपने हुनर में सफलता, हारे हुए जर्मनी के नाज़ की एक चीज़ थी, रेडियो पर जर्मनी से हिंडनबर्ग और ब्रूनिंग को सहायता करने की प्रार्थना करते हुए कहा, "क्या हम जर्मनों की राजनैतिक बुद्धि का बिल्कुल दिवाला पिट गया है कि जिस मुआवज़े के सफल समझौते पर जर्मनी का भविष्य और भाग्य निर्भर है, उसी समझौते की चर्चा के समय सरकार की पूरी तरह सहायता करके उसे मज़बूत करने के बजाय सरकार पर हमले कर रहे हैं। जर्मनी के लिए बड़े दुर्भाग्य की बात है कि दलबंदी के जोश में हम देश का हित भूले जा रहे हैं।" इस प्रबल अपील का प्रजा पर असर पाठक सोच सकते हैं। हिटलर-आंदोलन का मुक़ाबला करने के लिए बहुत-से दलों, मज़दूर संघों, अखाड़ों, प्रजा-तंत्र और अन्य संस्थाओं ने मिल कर 'फ़ौलादी मुक़ाबला' नाम का एक संगठन तैयार किया और २१ फ़रवरी सन् १६३२ ई० को जर्मनी

भर में प्रजातंत्र सरकार के पक्ष में हज़ारों सभाएं की गईं और जलूस निकाले गए। प्रमुख के चुनाव में हिंडनबर्ग को सब से अधिक मत मिले। मगर चुनाव में पड़नेवाले सारे मतों के आधे से अधिक मत हिंडनबर्ग को न मिलने से राज-व्यवस्था की शर्त के कारण उस का चुनाव नहीं हो सका। दूसरे चुनाव में हिंडनबर्ग को १,६३,६७,६८८ मत मिले, हिटलर को १,३४,१६,६०३ मत मिले, और समष्टिवादी उम्मीदवार थैलमान को ३,४८,६०० मत। हिंडनबर्ग का चुनाव हो गया। मगर धार्मिकता के मज़बूत धागे में बँधे हुए 'कैथोलिक मध्यदल' और मज़दूर संघों के कारण मज़बूत 'समाजी प्रजासत्तात्मक-दल' को छोड़ कर हिटलर के नाज़ीदल और 'समष्टिवादी-दल' की क्रांति की चुनौती के मुक़ाबले में सारे दूसरे दल इस चुनाव में लुप्त हो गए। 'कैथौलिक मध्यदल' और 'समाजी प्रजासत्तात्मक-दल' की सहायता से हिंडनबर्ग चुन अवश्य लिया गया मगर उस के लिए मत डाल कर 'प्रजातंत्र को क़ायम रखने और संजीदा पर-राष्ट्रनीति क़ायम रखने के लिए मत देनेवालों से, इतने प्रयत्नों के बाद भी, इस नीति के विरुद्ध क्रांति में श्रद्धा रखनेवाले नाज़ी और समष्टि-वादी' दलों के दोनों सदस्यों को मत देनेवालों की संख्या अधिक रही। ब्रूनिंग के हिंडन-बर्ग से विशेष अधिकारों का प्रयोग करने की फिर प्रार्थना करने पर हिंडनबर्ग ने वैसा करने से इन्कार कर दिया और ब्रूनिंग मंत्रि-मंडल ने इस्तीफ़ा दे दिया। हिटलर ने एलान किया कि जब तक उस के दल की व्यवस्थापक-सभा में बहुसंख्या न होगी, तब तक न तो वह स्वयं चांसलर बनेगा और न किसी दूसरे मंत्रि-मंडल में मंत्रि-पद ग्रहण करेगा। समाज-वादी-दल के व्यवस्थापक-सभा में सब से अधिक सदस्य थे। मगर किसी भी दल की सरकार न बनाई जा सकी। हिंडनबर्ग ने अपने 'आपत्ति-काल के विशेष अधिकारों' का प्रयोग कर के तीन मंत्रियों का एक अस्थायी मंत्रि-मंडल, व्यवस्थापक-सभा का नया चुनाव होने तक, काम चलाने के लिए रख दिया। फिर प्रशिया रियासत के चुनाव में भी जिस को जर्मन राजनीति की कुंजी माना जाता है, नाज़ियों की जीत हुई। देश भर में नाज़ियों और समष्टिवादियों की जगह-जगह पर, उसी प्रकार मार-काट छिड़ गई जिस प्रकार लड़ाई के बाद इटली में फ़ेसिस्टों और समष्टिवादियों या समाजवादियों में होती रहती थी।

सन् १६३३ ई० के चुनाव में नाज़ीदल की ज़ोरदार जीत हुई और उस ने सरकार की बागडोर अपने हाथ में आते ही साफ़ एलान कर दिया कि दूसरे किसी दल को ज़िंदा नहीं रहने दिया जायगा। कम्यूनिस्ट दल को ग़ैरक़ानूनी ठहरा दिया गया और उस दल के जो ८१ प्रतिनिधि रीशटाग में चुन कर आए थे उन को रीशटाग में बैठने नहीं दिया गया। इस के कुछ ही दिन बाद समाजवादी दल को भी ग़ैरक़ानूनी ठहरा दिया गया और उस के तमाम प्रतिनिधियों को सरकारी धारा-सभाओं और चुंगियों इत्यादि से हटा दिया गया और इस दल के सारे अख़बार बंद कर दिए गए और उन की सारी जायदाद भी ज़ब्त कर ली गई। इस के बाद रहे-सहे राजनैतिक दल कुछ ही हफ़्ते में अपने आप लुप्त हो गए। जुलाई १६३३ में एक क़ानून पास कर के नाज़ी दल के सिवाय दूसरे दलों का बनना ग़ैरक़ानूनी ठहरा दिया गया। इस के बाद जो चुनाव हुए उस में सिर्फ़ नाज़ी दल के उम्मीदवारों की ही सूचियों के लिए मत दिए जा सकते थे। विरोध

ज़ाहिर करने का सिर्फ़ एक ज़रिया था कि मत डालते वक़्त पर्चा ख़राब कर दिया जाय।

वीमार राज-व्यवस्था को क़ानून बना कर रद्द तो नहीं किया गया; मगर वह मृतप्राय कर दी गई। ४ मार्च १६३३ ई० को राज-व्यवस्था के लिए ज़रूरी तीन-चौथाई सदस्यों के मतों से रीशटाग में एक राष्ट्र और जनता की बीमारियां दूर करने के लिए क़ानून 'पास किया गया' जिस में सरकार को राज-व्यवस्था की दूसरी सारी संस्थाओं के ऊपर पूरी सत्ता दे दी गई। इस क़ानून की पहली धारा के अनुसार सरकार को राज-व्यवस्था की दूसरी संस्थाओं के बिना सहकार के हर क़िस्म के क़ानून बनाने का अधिकार है। यहां तक कि सरकार राजव्यवस्था के विरुद्ध भी क़ानून बना सकती है। इस क़ानून की ज़िंदगी १ अप्रेल सन् १६३७ ई० तक रक्खी गई, और इस का उपयोग केवल हिटलर मंत्रि-मंडल ही कर सकता था। वीमार राज-व्यवस्था की धारा ४८ के अनुसार प्रजातंत्र के प्रमुख को अपने हुक्म से आपत्ति के समय क़ानून जारी करने की शर्त क़ायम रही। मगर उस का कुछ अर्थ नहीं रहा; क्योंकि प्रजातंत्र के प्रमुख के हस्ताक्षरों के साथ चांसलर के हुक्म की शर्त उस में जोड़ दी गई। रीशटाग का भी पहले की तरह क़ानून बनाने का अधिकार क़ायम रहा मगर यह मान लिया गया कि वह अपने इस अधिकार का उपयोग सरकार की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ नहीं करेगी। इस क़ानून के अनुसार सरकार का कोई भी काम जिस से वीमार राज-व्यवस्था के अनुसार निश्चित प्रजा के अधिकारों या किसी दूसरे प्रकार के राजनैतिक अथवा सामाजिक संगठन पर असर पड़ता हो क़ानूनी ठहरा दिया गया। अस्तु, वीमार राजव्यवस्था अब सिर्फ़ वहीं तक क़ायम है जहां तक कि सरकारी हुक्मों और अमलों से उस की धाराओं पर असर नहीं पड़ा है।

वीमार राज-व्यवस्था में किसी से जिस के माता-पिता जर्मन जाति के हों या जो जर्मनी में बस गया हो जर्मन नागरिकता का अधिकार नहीं छीना जा सकता था। मगर सन् १६३३ ई० के एक क़ानून से सन् १६१८ ई० के बाद जर्मन नागरिक बननेवाले 'तमाम राजनैतिक दृष्टि से अनुचित लोगों और उन लोगों के जो 'देश के प्रति अपना कर्तव्य न कर के दूसरे देशों को चले गए' नागरिकता के अधिकार छीन लेने की इजाज़त भी सरकार को दे दी गई। दूसरे कई क़ानूनों से विदेशी जातियों के जर्मनी में रहनेवाले लोगों के जर्मनी के राष्ट्रीय जीवन में भाग लेने की भी रोकथाम कर दी गई। यह भी कहा जाता था कि आगे चल कर नागरिकता के अधिकार सिर्फ़ उन्हीं को रहेंगे जो कुछ ख़ास राज-नैतिक कर्त्तव्यों को पूरा करेंगे, जैसे कि मेहनत-मज़दूरी करने का कर्तव्य।

जैसा कहा जा चुका है, समष्टिवादी अर्थात् कम्यूनिस्ट दल, समाजवादी अर्थात् सोशलिस्ट दल तो ग़ैरक़ानूनी ठहरा कर बंद कर दिए गए और दूसरे रहे-सहे दल या तो लुप्त हो गए या नाज़ी दल में मिल गए। 'राष्ट्र और प्रजा की बीमारियां दूर करने के लिए जो 'क़ानून' बनाया गया उस में प्रजा के प्रतिनिधियों के लिए रीशटाग क़ायम तो रक्खी गई, मगर रीशटाग की बिना सलाह लिए ही सरकारी क़ानून जारी हो जाने को जायज़ मान कर रीशटाग के सामने सरकार सिर्फ़ अपनी नीति की रिपोर्टें रखने लगी। सरकार की तरफ़ से जो एलान हुए उन में कहा गया कि प्रजातंत्र की नीति क़ायम रखने के लिए

सरकार आप खास कामों पर प्रजा की राय लेगी। बाद में एक क़ानून बना कर सरकार को किसी भी विषय पर सीधा प्रजा से राय लेने के लिए हवाले का अधिकार भी दे दिया गया। ७ अप्रैल सन् १६३३ ई० को तमाम जर्मन रियासतो को राष्ट्र से एक करने के लिए एक क़ानून बनाया गया जिस से बिस्मार्क के समय से रायज राज-व्यवस्था के मूल फ़ेडरल सिद्धांत पर ही कुठाराघात कर दिया गया। इस क़ानून के अनुसार रियासतों में प्रतिनिधि सरकार की संस्थाएं तोड़ दी गईं और राष्ट्रीय रीश सरकार की तरफ़ से हर रियासत में एक रीश कमिश्नर नियत कर दिया गया जिस को सब तरह के पूरे अधिकार दे दिए गए। इन रीश कमिश्नरों का काम रियासतों में चांसलर की नीति के अनुसार सारा सरकारी काम चलाना है, और प्रशिया रियासत का रीश कमिश्नर स्वयं चांसलर है। वीमार राज-व्यवस्था के अनुसार रीशराट सभा में विभिन्न रियासतों के प्रतिनिधि आते थे जो रीशटाग के फ़ैसलों के विरुद्ध राय दे कर उन फ़ैसलों को रद्द कर सकते थे और इस प्रकार रीशटाग के फ़ैसले रद्द हो जाने पर वह फिर क़ानून तभी बन सकते थे जब उन पर रीशटाग पुनः विचार कर के उन को फिर से दो-तिहाई सदस्यों के मतों से स्वीकार करती थी। मगर नाज़ी राज-व्यवस्था में रीशटाग को क़ायम रख कर भी रियासतों में प्रतिनिधि राज रद्द कर देने से रीशटाग बिल्कुल एक बेकाम संस्था हो गई है। इसी प्रकार वीमार राजव्यवस्था में दस विभिन्न व्यापार और उद्योग की शाखाओं के ३२६ प्रतिनिधियों की जो एक अर्थ-समिति बनाई गई थी, उस के सदस्य भी एक क़ानून बना कर घटा कर अधिक से अधिक साठ कर दिए गए और उन को नियुक्त करने का अधिकार सरकार की राय से प्रमुख को दे दिया गया। नित्य जर्मन सरकार में इसी प्रकार की तबदीलियां की जा रही हैं, जिस से ज़ाहिर है कि नाज़ी दल भी फ़ेसिस्ट सरकार का रंग पकड़ रहा है।

परंतु नाज़ी सरकार और फ़ेसिस्ट सरकार में अंतर है। नाज़ी सरकार में व्यक्तियों के नेतृत्व पर ज़ोर दिया जाता है और फ़ेसिस्ट सरकार में सामूहिक अधिकार पर। जर्मनी में राष्ट्र का नेता हिटलर को माना जाता है और उस के नीचे बहुत-से छोटे-छोटे हिटलर राष्ट्रीय जीवन के विभिन्न अंगों के नेता हैं। परंतु इटली में राष्ट्रीय जीवन के विभिन्न अंगों पर सामूहिक नियंत्रण रहता है। हां, इस तमाम राष्ट्रीय नियंत्रण के ऊपर मसोलनी का अधिकार अवश्य माना जाता है। वह जिस काम में चाहे दखल दे सकता है। नाज़ी और फ़ेसिस्ट सरकार में यह बहुत बड़ा अंतर है। यह ज़रूर सच है कि सन् १६३४ ई० तक भी इटली में सामूहिक नियत्रण पूरी तरह अमल में नहीं आ सका था और सरकार का संबंध मज़दूरों के मुक़ाबले में मालिकों से ही अधिक रहता था। जर्मनी में भी उसी तरह ताक़त मालिकों के हाथों में रही। मगर जर्मनी की सरकार में फ़ौजी गुट्ट का बहुत हाथ रहा जिस की इच्छा के अनुसार ही उद्योग-धंधों के मालिक चल सकते हैं। इटली में फ़ेसिस्ट दल फ़ौजी गुट्ट और उद्योग-धंधों के मालिक दोनों के मेल से शासन चलाता है। मगर जर्मनी में फ़ौजी गुट्ट का उद्योग-धंधों के ऊपर पूरा अधिकार है और उस की मर्ज़ी के अनुसार ही उद्योग-धंधों को चलना पड़ता है।

जर्मनी के फ़ौजी गुट्ट का कहना है कि पिछली यूरोप की लड़ाई में जर्मनी की

लड़ाई के मैदान में हार नहीं हुई। खाने-पीने और लड़ाई के सामान की कमी की वजह से जर्मनी को हथियार रख देने पड़े। अस्तु, वह जर्मनी में यह चीज़ें पैदा करना चाहते हैं जिस से दूसरी लड़ाई में जर्मनी को इस सामान के लिए किसी दूसरे देश पर निर्भर न रहना पड़े। देश के भीतर ही पैदा होनेवाली चीज़ों से सारे ज़रूरत के सामान बनाने के लिए जैसे कि कोयले से पेट्रोल और चूने से रबर बनाने के लिए खर्च का कुछ भी खयाल न कर के बेहद कोशिश की जा रही है। उद्योग-धंधों के मालिकों को इस प्रकार के उद्योगों में अपना रुपया लगाने के लिए अधिक मुनाफ़े का लालच देने के लिए ज़्यादा रुपया गढ़ कर चीज़ों की क़ीमतें तेज़ की जा रही हैं; मज़दूरों की मजदूरी घटाई जा रही है; रहन-सहन नीचा किया जा रहा है। देश के बाहर से कोई माल जर्मनी में बिना सरकार की इजाज़त के नहीं घुस सकता। जहां तक बनता है बाहर का माल देश में नहीं आने दिया जाता और सरकार दूसरे देशों से व्यापारी संधियों के द्वारा माल का तबादला करती है। देश के भीतर मज़दूरी का दर कम होने और रहन-सहन नीचा होने से भी बाहरी माल की माँग कम रहती है और देशी व्यापारियों को उद्योग में अधिक मुनाफ़े का लालच रहता है। परंतु साथ ही जर्मन सरकार ने हिस्सेदारों को एक खास हद से ज़्यादा मुनाफ़ा बाँटना क़ानूनन नाजायज़ कर दिया है और इस खास मुनाफ़े से ऊपर जो कुछ रुपया बचता है वह व्यापारी पेटियों को सरकार को क़र्ज़ दे देना होता है, जिसे सरकार सड़कों इत्यादि तथा इमारती कामों में लगाती है, जिस से लोगों में बेकारी न बढ़े।

परंतु नाज़ी सरकार की यह नीति उन तमाम वादों और प्रोग्राम से बहुत भिन्न है जो नाज़ी दल के ताक़त में आने से पहले इस दल की तरफ़ से उस के नेताओं ने किए थे। राष्ट्रीय समाजवादी कहलानेवाले नाज़ी दल के कामों में राष्ट्रीयता और साम्राज्यशाही तो दीखती है; परंतु उस में समाजवाद की कहीं झलक भी नहीं दीखती। ताक़त में आने से पहले नाज़ी दल अपने को समाजवादी और बड़े व्यापारियों का दुश्मन कहता था। परंतु अब बड़े व्यापारी और उन की व्यापारिक संघों का ही नाज़ी दल अपनी नीति को पूरा करने के लिए सब से बड़ा हथियार समझता है। मज़दूरी या रहन-सहन ऊँचा करने और मुनाफ़ा कम करने के बजाय नाज़ी दल मज़दूरी और रहन-सहन को नीचा रख कर उद्योग-धंधों के मालिकों को अधिक मुनाफ़े का लालच दे कर उद्योग-धंधे बढ़ाने के लिए उत्साहित करता है। जनता के हाथों में खरीदने की ताक़त न बाँट कर यह दल इस ताक़त को बड़े व्यापारियों और सरकार के हाथों में इकट्ठी कर रहा है। सरकार के द्वारा बड़े-बड़े व्यापारों का सामाजिक हित में संगठन न कर के नाज़ी सरकार निजी व्यापार को फिर से ज़िंदा करने की कोशिश कर रही है, और उन तमाम जायदादों और व्यापारों को जो देवालिया हो कर पिछली आपत्ति में सरकार के हाथों में आ गए थे फिर व्यापारियों को वापस कर रही है।

नोट—हिटलर ने अब आस्ट्रिया को भी जर्मन रीश में शामिल कर लिया है। अतएव अब वहां की सरकार भी इसी ढंग की हो जायगी।

स्विट्ज़रलैंड की सरकार

१—राज-व्यवस्था

जर्मनी और इटली के बीच में बसे हुए देश स्विट्ज़रलैंड की सरकार राजनीति-शास्त्र का अध्ययन करनेवालों के लिए सदियों से ज्ञान का कुंड रही है। भारतवर्ष के राजनैतिक भविष्य की चिंता करनेवाले भी स्विट्ज़रलैंड से बहुत कुछ सीख सकते हैं। यूरोप में सब से पहले स्विट्ज़रलैंड की ज़मीन पर ही संघीय सरकार [1] का प्रयोग अच्छी तरह आज़माया गया। इसी देश में सार्वजनिक 'प्रस्तावना' [2] और सार्वजनिक 'हवाले' [3] की अद्वितीय प्रजा-सत्तात्मक संस्थाओं का जन्म हुआ तथा स्विट्ज़रलैंड में ही अनुपात-निर्वाचन की पद्धति को पहली सफलता मिली। सार्वजनिक पंचायतों के द्वारा सरकार का काम अभी तक इस देश में बहुत जगह पर चलाया जाता है। संघीय राष्ट्र, प्रत्यक्ष सरकार [4] और अनुपात-निर्वाचन इत्यादि को अब तो यूरोप में सभी समझते हैं। मगर एक समय था जब कि यह संस्थाएँ स्विट्ज़रलैंड की ही विशेषता थीं। बहुत-से राजनीति के विद्वानों और लेखकों का कहना है कि प्रजासत्ता को स्विट्ज़रलैंड के बराबर कहीं विकास और कार्य का क्षेत्र नहीं मिला। इस का मुख्य कारण स्विट्ज़रलैंड की प्राकृतिक दशा को भी कहा जा सकता है। एक तो स्विट्ज़रलैंड १५,९७६ वर्ग मील का छोटा-सा देश है अर्थात् लगभग जयपुर रियासत के बराबर, यानी हमारे संयुक्त प्रांत के सिर्फ़ सातवें भाग के बराबर है। दूसरे यह देश पहाड़ी प्रदेश होने से छोटे-छोटे भागों में बटा हुआ है जिस से स्थानिक भेदों के कारण देश की सरकार ने स्वभावतः संघीय रूप धारण कर लिया।

---

[1] फ़ेडरल गवर्नमेन्ट। [2] इनीशियेटिव।

[3] रेफ़रेन्डम। [4] डायरेक्ट गवर्नमेन्ट।

छोटे-छोटे भागों में तरह-तरह के राजनैतिक प्रयोग करना आसान होने की वजह से स्विट्ज़रलैंड बहुत-सी नई राजनैतिक संस्थाओं का जन्मदाता बन गया। पहाड़ी प्रदेशों का कठोर जीवन हमेशा से स्वतंत्रता, समता और प्रजासत्ता के भावों और विचारों का उत्तेजक रहा है। अस्तु स्विट्ज़रलैंड में बहुत पहले ही प्रजातंत्र राज्य का क़ायम हो जाना एक प्रकार से आश्चर्य की बात नहीं कही जा सकती।

भारतवर्ष की बहुत-सी भाषाओं, धर्म और जातियों की समस्या का मन में हिमालय खड़ा करके जो लोग हमारे देश के भविष्य के विषय में निराश हो उठते हैं वे स्विट्ज़रलैंड से इस विषय में पाठ ले सकते हैं। भारतवर्ष के १/९२ भाग के बराबर सिर्फ़ ३७५३२९३ की आबादी के इस देश में सन् १९१० ई० की मर्दुमशुमारी के अनुसार ६९ फ़ी सदी लोग जर्मन-भाषा-भाषी थे, २१.१ फ़ी सदी फ्रेंच-भाषा-भाषी, ८ फ़ी सदी इटैलियन भाषा-भाषी और एक फ़ी सदी सिंधी और कच्छी की तरह एक प्रकार की स्थानिक भाषा रोमांश बोलनेवाले थे। स्विट्ज़रलैंड के मध्यवर्ती और पश्चिमी पंद्रह कैंटनों[1] में अधिकतर जर्मन भाषा बोली जाती थी। छोर के पाँच पश्चिमी कैंटनों में फ्रेंच और दक्षिण के सिर्फ़ एक कैंटन में इटैलियन का ज़ोर था। यही हाल धर्मों का भी था। देश भर में ५६.७ फ़ी सदी प्रोटेस्टेंट संप्रदाय के लोग थे, ४२.८ फ़ी सदी रोमन कैथोलिक संप्रदाय के थे और .५ सदी यहूदी थे। इटैलियन क़रीब-क़रीब सभी रोमन कैथोलिक पंथ के थे। परंतु फ़्रांसीसी और जर्मनों में जाति और धर्म के एक ही भाग नहीं थे। जिस प्रकार बंगाली, पंजाबी, सिंधी और तामिल भाषा-भाषी हिंदू, मुसलमान, सिक्ख और ईसाई सभी होते हैं उसी प्रकार स्विट्ज़रलैंड की जर्मन और फ़्रांसीसी जातियों में प्रोटेस्टेंट, कैथोलिक, और यहूदी सब थे। दस कैंटनों में प्रोटेस्टेंटों की संख्या अधिक थी और बारह कैंटनों में कैथोलिकों की अधिक थी। परंतु यह सब लोग आपस में मिल कर स्विट्ज़रलैंड के नागरिक बन कर रहते हैं और जाति और धर्म का भेद उन की राजनीति में समस्याओं के पहाड़ नहीं खड़े करता। इसी प्रकार आर्थिक भेद भी हैं। सारा देश कृषि और पशु-पालन पर निर्भर रहता है। मगर उत्तर और पश्चिम के कई प्रांतों में उद्योग-धंधों का बहुत ज़ोर है। कृषि और उद्योग के अलग-अलग हित अक्सर स्विट्ज़रलैंड की राजनैतिक समस्याओं का कारण बन जाते हैं। मगर उद्योग के कारखाने अधिकतर छोटे-छोटे होने और औसतन बीस एकड़ ज़मीन से अधिक के स्विट्ज़रलैंड में मालिक न होने से लोगों में स्वतंत्रता और प्रजासत्ता की भक्ति अधिक है।

लूज़र्न झील के दक्षिण और दक्षिण-पूर्व की ओर की निर्जन तराइयों में बसी हुई तीन ट्यूटानिक जातियों ने तेरहवीं सदी के अंत के क़रीब हैप्सबर्ग के सरदारों की लूट से अपनी रक्षा करने के लिए आपस में एक क़ौल किया था। इस 'क़ौल' के शुरू के शब्द इस प्रकार थे, "ईश्वर के नाम में जरूरी अमन चैन क़ायम करने के लिए क़ौल क़रार कर से इज्ज़त आबरू और प्रजा के सुख की वृद्धि होती है। अस्तु, सब आदमियों को मालूम हो कि उरी की तराई के लोगों ने, स्वीज़ की तराई की प्रजासत्ता, और निडवाल्डन तराई की पहाड़ी जाति ने, बुरे समय को देख कर, अपनी और अपने सगों की अच्छी तरह रक्षा कर

---

[1] प्रांत की तरह देश का भाग।

सकने के लिए, एक दूसरे की आपस में हाथ पैर से सहायता, सलाह और हर प्रकार से, जान और माल से, तराइयों के भीतर और बाहर, पूरी ताक़त और प्रयत्न से, अपने में से किसी पर अत्याचार करनेवाले या किसी का नुक़सान या अपमान करनेवाले के मुक़ाबले में मदद करने की श्रद्धा के साथ शपथ खाई है। और हर एक जाति ने हर प्रकार से, अपने खर्चे पर, जब दूसरे पर संकट पड़े तब उस की मदद के लिए दौड़ने और नुक़सान करनेवालों के हमलों से उस की रक्षा करने और नुक़सान का बदला लेने का वादा किया है।" स्विट्ज़रलैंड राष्ट्र की प्रजासत्ता का यह 'क़ौल-क़रार' श्रीगणेश कहा जा सकता है। बाद में धीरे-धीरे तीन जातियों की इस संघ में और भी ग्रामीण जातियाँ और शहर शामिल होते गए। सन् १३५३ ई० में तीन से बढ़ कर आठ कैंटनों की यह संघ हो गई थी और सन् १५१३ ई० में इस संघ में तेरह कैंटन थे। पंद्रहवीं सदी में यह संघ मध्य-यूरोप में एक शक्ति हो गई थी। उस काल के प्रोटेस्टेंट और रोमन कैथौलिकों के झगड़ों का संघ पर असर होने का बड़ा भय था क्योंकि आधे कैंटन प्रोटेस्टेंट संप्रदाय के और आधे रोमन कैथौलिक पंथ के थे। परंतु अपनी-अपनी रक्षा के हित के विचार ने संघ को क़ायम रक्खा। सन् १६४८ ई० में वेस्टफेलिया की संधि में इस संघ को यूरोप का एक स्वतंत्र राष्ट्र स्वीकार कर लिया गया। संघ के भीतर की जातियों की राजनैतिक संस्थाएँ आपस में एक दूसरे से बहुत भिन्न थीं। ग्रामीण कैंटनो में ख़ालिस प्रजासत्ता थी। प्रजा की सार्वजनिक सभाओं के द्वारा सरकार का काम चलाया जाता था। कुछ नगरों में थोड़े से अमीर-उमरावों के हाथ में सरकार थी और कुछ नगरों में अमीरों के साथ प्रजा का भी हाथ सरकार में रहता था। चूँकि संघ सिर्फ़ आक्रमण और रक्षा के लिए बनी थी, भीतरी मामलों में कैंटनों को अपना-अपना कामकाज करने की पूरी आज़ादी होती थी। संघ की सभा सिर्फ़ बाहरी बातों और उन बातों पर विचार करने के लिए होती थी जिन बातों का सब कैंटनों से संबंध होता था। कैंटनो से सभा मे आनेवाले प्रतिनिधि अपने-अपने कैंटनों की हिदायतों के अनुसार कार्रवाई में भाग लेते थे। संघ की कोई केंद्रीय कार्यकारिणी नहीं थी। कुछ कैंटनों के पास लड़ाई में जीती हुई जागीरें भी थीं। इन जागीरों के लोगों पर यह कैंटन राज्य करते थे और उन की प्रजा को वे वही स्वतंत्रता देने को तैयार नहीं थे जिस को वे अपना अधिकार समझते थे।

फ्रांस की राजक्रांति से स्विट्ज़रलैंड में भी उथल-पुथल हुई। सन् १७९८ ई० में फ्रांस की सेना ने स्विट्ज़रलैंड में घुस कर मारकाट की और स्विट्ज़रलैंड की इस पुरानी राज व्यवस्था को भंग कर दिया। स्विट्ज़रलैंड को सभ्य बनाने के लिए उत्सुक नेपोलियन ने संघ के ढीले बंधनों के स्थान में फ्रांस के ढंग की स्विट्ज़रलैंड में एक कड़ी केंद्रीय नौकरशाही राज-व्यवस्था क़ायम कर दी। जिस का नाम उस ने 'हेल्वेटिक प्रजातंत्र' रक्खा। इस प्रजातंत्र की लिखित राज-व्यवस्था में दो-सभा की व्यवस्थापक-सभा की एक केंद्रीय सरकार, कैंटनों की आबादी के अनुसार अप्रत्यक्ष ढंग पर चुने हुए प्रतिनिधियों की एक 'ग्रांड कौंसिल' और हर कैंटन से चार-चार सदस्यों की एक सिनेट, कौंसिल और सिनेट के द्वारा निर्वाचित डाइरेक्टरी नामक फ्रांस की तरह एक कार्यकारिणी और डाइरेक्टरी के पाँच सदस्यों के साथ मिल कर काम करने के लिए चार नियुक्त विभाग-पतियों की योजना की गई थी। स्थानिक शासन के

लिए फ्रांस के डिपार्टमेंटों की तरह देश को तेईस कैंटनों में बाँटा गया था। हर कैंटन के लिए एक निर्वाचित धारा-सभा और केंद्रीय सरकार की ओर से शासन चलाने के लिए नियुक्त एक प्रीफ़ेक्ट की योजना की गई थी। सर्वदेशीय नागरिकता, सार्वजनिक मताधिकार, बोल और लेख की स्वतंत्रता, सर्वदेशीय फ़ौजदारी के क़ानून, सिक्कों और डाक इत्यादि के बहुत से ज़रूरी सुधार भी किए गए। मगर फ़्रांसीसियों का शासन स्वतंत्रता प्रेमी स्विट्ज़रलैंड के लोगों को पसंद नहीं था। अस्तु इस राज-व्यवस्था के विरुद्ध चारों तरफ़ विद्रोह और बखेड़े होने लगे। लाचार हो कर नेपोलियन ने बर्न में बड़े लोगों की एक सभा बुलाई और उस की राय से सन् १८०२ ई० में एक दूसरी राज-व्यवस्था स्थापित की। मगर प्रजा ने बीस हज़ार वोट से इस नई राज-व्यवस्था को भी नामंज़ूर किया। फिर भी नेपोलियन की शक्ति का नाश होने तक अर्थात् सन् १८१५ ई० तक यही राज-व्यवस्था कायम रही। नेपोलियन के बाद सन् १८१५ ई० में सारे कैंटनो ने आपस में मिल कर एक 'संघीय क़रार' किया जिस के अनुसार सन् १७९८ की राज-व्यवस्था पुनः स्थापित की गई पुरानी संघीय सभा जिस में हर कैंटन का एक मत होता था फिर क़ायम हो गई। परंतु इस सभा को अब की बार किसी भी ज़िले में बखेड़ा होने पर सेना में भेजने का अधिकार भी दिया गया और तीन-चौथाई कैंटनों की मर्ज़ी से सभा युद्ध और संधि भी कर सकती थी। ज्यूरिच, लूज़र्न और बर्न की कैंटनों की कार्य-कारिणियों को दो-दो वर्ष के लिए बारी-बारी से संघ की कार्य-कारिणी का काम सौंपा गया।

सन् १८३० ई० के बाद से यूरोप में उठनेवाली क्रांतिकारी लहर ने स्विट्ज़रलैंड में भी विघ्न किया था। सन् १८४३ ई० में कैथोलिक-पंथी स्विट्ज़रलैंड के सात कैंटनों ने अपने हितों की रक्षा करने और संघ की इस प्रकार पुनर्घटना का विरोध करने के लिए, जिस से कैथोलिक प्रभाव और अधिकार कम हों, आपस में 'सोंडरबंड' नाम की एक मैत्री स्थापित कर ली थी। सन् १८४७ ई० में बर्न में होने वाली 'संघीय सभा' ने इस मैत्री को अस्वीकार किया। परतु मैत्री बनाने वाले कैंटनों ने सभा की बात नहीं मानी। अस्तु, उन्नीस दिन तक प्रोटेस्टेंट और कैथौलिक कैंटनों का आपस में घनघोर संग्राम हुआ और इस मैत्री को भंग कर के नष्ट कर दिया गया। फ्रांस के राजा लूई को गद्दी से उतार कर फेंकने के एक हफ़्ता पहले स्विट्ज़रलैंड की 'संघीय सभा' ने एक नई राज-व्यवस्था स्वीकार की और सन् १८७४ ई० में स्विट्ज़रलैंड की संघीय सरकार को और भी मज़बूत बनाने के लिए इस राज-व्यवस्था को बदल कर एक नई राज-व्यवस्था रची गई, जो आज तक स्विट्ज़रलैंड में क़ायम है।

स्विट्ज़रलैंड की सरकार संघीय [1] है। प्रभुता [2] राष्ट्र के समुचित मतदारों की है। राष्ट्रीय सरकार और कैंटनों की सरकार में राष्ट्र के मतदारों ने सत्ता बाँट दी है, अर्थात् संघीय और कैंटन—दोनों सरकारों—का आधार प्रजा ही है। यह सच है कि जो सत्ता संघीय सरकार को क़ानूनों में नहीं दी गई है, उस का कैंटनों की सरकारों में समावेश माना गया है। परंतु प्रभुता न संघीय सरकार की है और न कैंटनों की सरकार की, बल्कि राष्ट्र के मतदारों की मानी गई है। स्विट्ज़रलैंड की राज-व्यवस्था में कैंटनों की भूमि और प्रभुता

[1] फ़ेडरल। [2] सोवेरिंटी।

की रक्षा का---जहाँ तक संघीय सरकार की प्रभुता के अलावा उन को प्रभुता है---संघीय सरकार को ज़िम्मेदार माना गया है। कैंटनों को अपनी राज-व्यवस्थाओं की रक्षा के लिए सरकार से मदद माँगने का हक़ है, और अगर उन की राज-व्यवस्था में संघीय राज-व्यवस्था की शर्तों के ख़िलाफ़ कोई शर्तें न हों और उन में प्रजातंत्र-शासन के अनुसार लोगों को अधिकार प्राप्त हों और उन की राज-व्यवस्थाओं को प्रजा ने स्वीकार किया हो, और प्रजा के बहुमत को उन राज-व्यवस्थाओं के बदलने का अधिकार हो, तो संघीय सरकार को कैंटनों को उनकी राज-व्यवस्था की रक्षा के लिए मदद करना फ़र्ज़ माना गया है। अस्तु कैंटनों की राज-व्यवस्थाएं अमल में आने से पहले उन की सारी शर्तें और उन में संशोधन संघीय व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं में भी स्वीकार होने की राष्ट्रीय राज व्यवस्था में शर्त्त रक्खी गई है। राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा कैंटन की राज-व्यवस्था की किसी भी शर्त को रद्द कर सकती है। कैंटनों को आपस में किसी प्रकार की राजनैतिक संधियाँ करने का अधिकार प्राप्त नहीं है। मगर वे क़ानून, शासन और न्याय के आपस में रिवाज क़ायम कर सकते हैं, बशर्ते कि संघीय अधिकारियों की राय में उन में कोई बात संघीय राज-व्यवस्था के विरुद्ध अथवा और किसी कैंटन के हित के प्रतिकूल न हो। कैंटनों के आपस के झगड़े न्याय के लिए संघीय सरकार के पास जाते हैं, और कैंटनों को एक दूसरे पर चढ़ दौड़ने का अधिकार नहीं है। संघीय सरकार को अपनी इच्छा से किसी भी कैंटन में शांति स्थापित करने के लिए हस्तक्षेप करने का अधिकार है, चाहे कैंटन के अधिकारी संघीय सरकार से इस प्रकार के हस्तक्षेप के लिए प्रार्थना करें अथवा न करें।

संघीय सरकार को पाँच विषयों में ख़ास कर पूरी सत्ता दी गई है---पर-राष्ट्रनीति, सेना, अर्थ, सार्वजनिक उपयोगी सेवाएँ[1] और दूसरी देश की आंतरिक सेवाएँ[2]। सीमा, पुलिस के व्यवहार, और सार्वजनिक मिलकियत के प्रबंध के विषयों में, ख़ास हालतों में, कैंटनों को भी दूसरे राष्ट्रों से संधियाँ करने की इजाज़त है। अन्यथा परराष्ट्र-विषयों पर पूरा अधिकार संघीय सरकार का ही रहता है। उसी को दूसरे राष्ट्रों को एलची भेजने और दूसरे राष्ट्रों से एलची लेने, युद्ध छेड़ने, संधि करने और चुंगी, व्यापार और दूसरे विषयों की संधियाँ करने का हक़ है। शांति के समय में स्विट्ज़रलैंड में न तो कोई सेना रहती है और न कोई सेनाधिपति। लड़ाई के समय में सब नागरिकों का सैनिक-सेवा करने का फ़र्ज़ माना गया है। राज-व्यवस्था में स्थायी सेना न रखने की शर्त रक्खी गई है। परंतु दस वर्ष की उम्र से उन्नीस वर्ष की उम्र तक स्विट्ज़रलैंड के स्कूलों में सब नौजवानों को सैनिक शिक्षा दी जाती है। उस के बाद जो सेना के काम के योग्य होते हैं, उन सब को बीस वर्ष की उम्र से अड़तालीस वर्ष की उम्र तक, ज़रूरत पड़ने पर, जब चाहे तब सरकार सैनिक-सेवा के लिए बुला सकती है। परतु शांति-काल में आम तौर पर किसी को पैंसठ दिन से अधिक लगातार अपने घर से दूर नहीं रक्खा जाता है। सारा समय सैनिक-सेवा में बितानेवालों की देश भर में दो-तीन सौ से अधिक संख्या नहीं होती है। संसार के अन्य राष्ट्र भी अगर स्विट्ज़रलैंड की तरह ही अपनी सेनाओं का प्रबंध रक्खें तो दुनिया से

[1]पबलिक यूटिलिटी सर्विसेज़। [2]इंटरनेल सर्विसेज़।

मुमकिन है लड़ाई का नाम मिट जाय।

आर्थिक अधिकारों में संघीय सरकार का मुद्रा गढ़ने और नोट निकालने का इजारा माना गया है। कुछ दिनों से समाजशाही की तरफ़ प्रवृत्ति बढ़ने से सरकार ने बहुत-से सार्वजनिक उपयोग के धंधों और जरूरियातों पर भी अधिकार कर लिया है। डाक, तार, टेलीफ़ोन और रेलें सब सरकारी हैं। बारूद और शराब के बनाने का इजारा भी सिर्फ़ सरकार को है। व्यापार-संबंधी सब प्रकार के क़ानून और नियम बनाने का अधिकार संघीय सरकार को दिया गया है। मगर करों के संबध में एक जरूरी कैद रक्खी गई है। स्विट्ज़रलैंड की आर्थिक नीति इस सिद्धांत पर रची गई है कि संघीय सरकार का खर्च अप्रत्यक्ष करों की आमदनी से चलाया जायगा और कैंटनों की सरकारों का प्रत्यक्ष करो की आमदनी से। प्रारभ में संघीय सरकार को सिर्फ़ देश के भीतर आनेवाले और देश से बाहर जानेवाले माल पर चुंगी कर लगाने का अधिकार दिया गया था और उस में भी यह शर्त रक्खी गई थी कि देश के कृषि और उद्योग-व्यवसाय के लिए और प्रजा की ज़िंदगी के लिए आवश्यक बाहर से आनेवाली चीज़ों और देश से बाहर जानेवाले माल पर कम से कम कर सरकार को लगाना चाहिए। इन चुंगी-करों की आमदनी, सार्वजनिक मिलकियत की आमदनी, डाक, तार और बारूद के इजारे का मुनाफ़ा और सैनिक सेवा से बरी होने के, कैंटनों द्वारा लगाए हुए, कर की आधी आमदनी संघीय सरकार के खर्च के लिए रक्खी गई थी। अगर इस से सरकार का खर्च न चल सके तो सरकार को कैंटनो की संपत्ति और उन की कर भरने की योग्यता के अनुसार उन से चौथ लेने का अधिकार भी था। चुंगी कर से काफ़ी आय हो जाने से सरकार को आज तक कभी कैंटनों से चौथ लेने की जरूरत नहीं पड़ी है। पिछली लड़ाई के ज़माने में अधिक खर्च की जरूरत पड़ने पर राज-व्यवस्था में संशोधन कर के संघीय सरकार को, सिर्फ़ एक बार आमदनी और मिलकियत पर कर लगाने और जब तक चाहे तब तक व्यापारी काग़जो पर स्टांप लगा कर कर वसूल करने, मगर स्टांप के कर का पाँचवाँ भाग कैंटनो को लौटा देने—का अधिकार दिया गया था। चुंगी, डाक, तार, टेलीफोन, बारूद के इजारे का शासन संघीय सरकार अपने अधिकारियों और अपने विभागों के द्वारा करती है। मगर रेल, जलशक्ति, तोल और माप, शिक्षा, सेना से मुक्ति[१], और संघीय बैंक का शासन जर्मन साम्राज्य की तरह स्विट्ज़रलैंड की संघीय सरकार कैंटनों के अधिकारियों के मेल से करती है। एक तो इस ढग से खर्च में कमी होती है, और दूसरे संघीय सरकार को अपने क़ानून बनाने के बहुत-से अधिकार सौंप देनेवाले कैंटनो को क़ानूनों को अमल में लाने का अधिकार मिल जाने से उन को संतोष रहता है।

स्विट्ज़रलैंड की राज-व्यवस्था के अनुसार कैंटन का हर एक नागरिक स्विट्ज़रलैंड का नागरिक होता है। भिन्न-भिन्न कैंटनो में नागरिक बनने के लिए भिन्न-भिन्न शर्तें हैं। कैंटन की सरकारों को किसी नागरिक को देश-निकाला करने या उस के अधिकार छीन लेने का हक़ नहीं है। एक कैंटन दूसरे कैंटन के नागरिक के साथ क़ानून

[१] मिलिटरी एक्ज़ेम्पशन।

और न्याय के विषय में वैसा ही व्यवहार करता है, जैसा कि अपने नागरिक के साथ करता है। राज-व्यवस्था मे सब नागरिकों को क़ानून की नजर में एक, स्विट्ज़रलैंड की जागीर में कहीं भी बसने का हक़, सरकार से प्रार्थना करने का हक़, ग़ैरक़ानूनी और सरकार के लिए खतरनाक संस्थाओं के सिवाय संस्थाएँ संगठित करने का हक़, लेख-स्वतंत्रता, खतों और तारों को गुप्त भेजने का हक़ और कर्ज़े के लिए गिरफ़्तार न किए जा सकने का हक़ माना गया है। धार्मिक मामलों में सब को पूरी स्वतत्रता है। किसी को उस के धार्मिक विश्वास के कारण किसी प्रकार का दंड नहीं दिया जा सकता है और न उस को किसी खास संस्था का सदस्य होने, धार्मिक शिक्षा लेने, और धार्मिक काम करने के लिए मजबूर किया जा सकता है। किसी नागरिक से सरकार कोई ऐसे कर नहीं वसूल कर सकती है जो किसी ऐसे धर्म के काम में आते हों जिस को वह नागरिक न मानता हो।

२—स्थानिक सरकार

(१) शासन क्षेत्र

स्विट्ज़रलैंड की सरकार का ढाँचा स्थानिक राजनैतिक संस्थाओं, सिद्धांतों और रिवाजों पर बना है। अस्तु संघीय संस्थाओं को अच्छी तरह समझने के लिए उन के अध्ययन से पहले स्थानिक संस्थाओं का अध्ययन करना उचित होगा। हिंदुस्तान के गाँवों की तरह स्विट्ज़रलैंड में सार्वजनिक जीवन की इकाई 'कम्यून'[1] कही जा सकती है। जिस प्रकार किसी जमाने में हिंदुस्तान में ग्राम की पंचायतों के द्वारा ग्राम-निवासी अपना सार्वजनिक जीवन नियंत्रित करते थे, उसी प्रकार स्विट्ज़रलैंड में बहुत प्राचीन काल से कम्यून में रहनेवाले सब नागरिक एक दूसरे के बराबर समझे जाते हैं, और सब सार्वजनिक जीवन में भाग लेते हैं। भारतवर्ष का ग्राम-जीवन तो आज-कल दुर्भाग्य से हमारी राजनीति में उतने महत्त्व का नहीं रहा है। मगर स्विट्ज़रलैंड में कम्यून राजनैतिक जीवन की इकाई और स्थानिक राजनीति का केंद्र अभी तक है। स्विट्ज़रलैंड में छोटी-बड़ी क़रीब ३१६४ कम्यून हैं। स्विट्ज़रलैंड का नागरिक बनने के लिए किसी एक कम्यून का सदस्य बनना जरूरी होता है। किसी भी कम्यून के सदस्य को कैंटन की सरकार की इजाज़त से कैंटन और संघ दोनों की नागरिकता के अधिकार एक साथ मिल जाते हैं। शिक्षा, पुलिस, ग़रीबों को सहायता और पानी का प्रबंध इत्यादि स्थानिक काम-काज का बहुत-सा भाग कम्यून करती हैं। मगर कभी-कभी यह काम कम्यून कैंटन के अधिकारियों की सहायता से भी चलाती हैं। आम-तौर पर कम्यूनों के पास मिलकियत भी होती है और गाँव की कम्यूनें सार्वजनिक जंगलों और चरागाहों की देख-भाल करती हैं। जर्मन-भाषा-भाषी गाँवों और छोटे-छोटे नगरों की कम्यूनों में नागरिकों की एक सार्वजनिक सभा के द्वारा सारा प्रबंध चलता है। फ़्रांसीसी-भाषा-भाषी बड़ी कम्यूनों में सार्वजनिक सभा एक पंचायत चुनने और छोटे अधिकारियों को नियुक्त करने का काम करती है। शासन चलाने का काम पंचायत के लिए छोड़ दिया

[1] गाँव या क़स्बे की तरह देश का छोटा भाग।

जाता है। पंचायत के प्रधान को खास अधिकार और एक हद तक शासन का काम चलाने की स्वतंत्रता होती है।

अठारहवीं सदी के आखिर तक कई कम्यून एक प्रकार की छोटी-छोटी ख़ुदमुख्तार रियासतों की तरह थीं। बाद में वे मिल कर नया कैंटन बन गई थीं। शहरों में कम्यून चुंगी का रूप धारण कर लेती है। चुंगियों की सभाएँ आम तौर पर तीन साल के लिए चुनी जाती हैं और शहरों का सारा काम-काज वही चलाती हैं। स्विट्ज़रलैंड में चुंगियों के अधिकारियों के वेतन कम होते हैं, काम-काज की देखभाल अच्छी और किफ़ायत से की जाती है, और प्रजा से कर भी यह चुंगियाँ अधिक नहीं लेती हैं। इन चुंगियों के खिलाफ़ नए-नए कार्यक्रम बहुत-से बनाने और कभी-कभी नौकरियाँ देने में रियायतें करने की शिकायतें तो सुनी जाती हैं; मगर बड़े से बड़े शहरों की चुंगियों तक के अधिकारियों या सदस्यों के खिलाफ़ स्विट्ज़रलैंड में कभी बेईमानी की शिकायत सुनने में नहीं आती है। चुंगियों में और उन से भी अधिक गाँव की कम्यूनों में खर्च बहुत हाथ दबा कर किया जाता है। पाठशालाओं के शिक्षकों का चुनाव भी प्रजा ही करती है। मगर वे थोड़े ही समय के लिए चुने जाते हैं। शहरों की चुंगियों के चुनाव में दलबंदी ज़रूर होती है। मगर अकसर सभी दलों के सदस्य चुन लिए जाते हैं जिस से झगड़े टल जाते हैं। गाँव की कम्यूनों के चुनाव में राजनैतिक दलबंदी नहीं होती है। स्विट्ज़रलैंड में स्थानिक स्वराज्य की बड़ी महत्ता मानी गई है क्योंकि वहाँ की सरकार की नींव इस स्थानिक स्वराज्य पर होने के साथ-साथ स्थानिक स्वराज्य में प्रजा को जो राजनैतिक काम-काज की शिक्षा मिलती है उस से प्रजातंत्र-संस्थाओं को सफलता से चलाने में बड़ी सहायता मिलती है। स्विट्ज़रलैंड के लोग स्थानिक स्वराज्य पर बहुत ज़ोर देते हैं क्योंकि उन का विश्वास है कि स्थानिक स्वराज्य के ज़रिए से ही प्रजा को सार्वजनिक काम की शिक्षा मिलती है, लोगों में नागरिकता के कर्तव्यों का प्रचार होता है, और स्थानिक प्रजा को प्रस्तावना[१] की सत्ता रहने से केंद्रीय सरकार में ही सत्ता केंद्रीभूत नहीं हो जाती है, जिस से सरकारी संस्थाओं को समाज के हित के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

कम्यून के ऊपर स्थानिक शासन में 'कैंटन'[२] का दर्जा माना गया है। स्विट्ज़रलैंड के पच्चीस कैंटनों में मुख़्तलिफ़ भाषा, रिवाज, आबादी और लंबाई-चौड़ाई के कारण कई तरह का शासन चलता है। कैंटनों को शासन की सहूलियत के लिए 'बेज़िर्क' नाम के ज़िलों में बाँटा गया है। सब कैंटनों की अलग-अलग राज-व्यवस्थाएं हैं। स्विट्ज़रलैंड की सरकार संघीय होने से संघीय सरकार की शेष सत्ता संघ के सदस्यों अर्थात् कैंटनों में मानी गई है, और संघीय सरकार की राज-व्यवस्था में कैंटनों की विभिन्न व्यवस्थाओं को सुरक्षित रखने की शर्त रक्खी गई है। फिर भी कैंटनों की राज-व्यवथाएं धीरे-धीरे एक-सी होती जाती हैं। संघीय सरकार की देख-रेख में सारे कैंटनों में एक आम शिक्षा-प्रणाली क़ायम हो गई है। इस शिक्षा-प्रणाली का संचालन, धार्मिक संस्थाओं और सरकार का रिश्ता ठीक रखने, व्यापार और तिजारत की शर्तें तय करने, बच्चों की मज़दूरी और मज़दूरों को मुआवज़े,

---

१ इनीशिएटिव। २ कम्यून से बड़ा देश का भाग।

वग़ैरह से संबंध रखनेवाले संघीय सरकार के क़ानूनों को बढ़ाने और विस्तृत करने, सड़कें, रेलें और बैंकों को बनाने और सहायता देने, अस्पताल, पागलखाने, स्वास्थ्यगृह और जेलखाने बनाने और चलाने, शराब की तिजारत का इंतज़ाम करने, ग़रीबों की मदद और स्वास्थ्य के क़ानून बनाने, क़ानून बना कर और खास खेती के उपयोगी कामों को माली सहायता दे कर खेती की उन्नति करने, बहुत-से कर लगाने, पुलिस रखने और अपनी अदालतों और जजों के द्वारा न्याय-शासन करने, विदेशियों को नागरिकता के अधिकार देने, आपस के कैंटनों से क़ानून, शासन और न्याय-संबंधी क़रार करने, और पड़ोसी रियासतों से सीमा और पुलिस-संबंधी व्यवहार के लिए समझौते करने इत्यादि का काम कैंटन की सरकारें करती हैं। कैंटन के क़ानूनों के सिवाय संघीय सरकार के क़ानूनों के एक बड़े भाग का संचालन भी कैंटन ही करते हैं। पहले सामाजिक और आर्थिक क़ानूनों को भी अधिकतर कैंटनों की सरकारें ही बनातीं थीं। अब संघीय सरकार ने इस संबंध में देश भर में एक-सा अमल करने के लिए अपने हाथ में सत्ता ले ली है।

(२) क़ानून-रचना

कैंटनों में सारे मताधिकार प्राप्त नागरिकों की सार्वजनिक सभाएँ क़ानून बनाने, कर लगाने और खर्च करने और अधिकारियों को चुनने का काम करती हैं। ग्यारह कैंटनों में कुछ खास क़िस्म के क़ानूनों को, कैंटनों की धारा-सभा में मंज़ूर हो जाने के बाद और उन पर अमल होने से पहले, मताधिकारी प्रजा के मतों के 'हवाले' के लिए भेजा जाता है। सिर्फ़ फ़्रीबर्ग नाम के एक कैंटन में यूरोप के दूसरे देशों की तरह प्रतिनिधि-सभा क़ानून बनाती है।

मताधिकारी नागरिकों की सार्वजनिक-सभा के द्वारा क़ानून बनाने और शासन चलाने की पद्धति स्विट्ज़रलैंड की एक अनोखी चीज़ है। इस पद्धति के कारण इस देश में खालिस और प्रत्यक्ष प्रजासत्ता क़ायम हो गई है। स्विट्ज़रलैंड के मन को लुभानेवाले प्राकृतिक दृश्यों में 'खालिस' और 'प्रत्यक्ष प्रजासत्ता' का यह दृश्य सोने में सुहागे की तरह है। स्विट्ज़रलैंड में नागरिकों की क़ानून बनानेवाली सार्वजनिक सभा को 'लांदस्गेमींद' कहते हैं। इस की ऐतिहासिक उत्पत्ति का बिल्कुल ठीक इतिहास नहीं बताया जा सकता। तेरहवीं सदी के मध्य भाग में उरी नाम के कैंटन में पहले-पहल एक ऐसी सभा का ज़िक्र मिलता है। सन् १२६४ ई० में श्वइज़ नाम के कैंटन में एक ऐसी सभा के ज़रूरी क़ानूनों को बनाने का हाल मिलता है। नेपोलियन की स्विट्ज़रलैंड में दस्तंदाज़ी के समय को छोड़ कर उरी और अंटर-वाल्डन में सन् १३०६, ग्लैरस में सन् १३८७ और ऐपेंजेल में सन् १४०३ ई० से बराबर ऐसी सभाएँ क़ायम थीं। सत्रहवीं सदी के प्रारंभ में देश भर में इस प्रकार की ग्यारह सभाएँ काम करती थीं, और उन्नीसवीं सदी के शुरू में ऐसी आठ सभाएँ रह गई थीं। सन् १८४८ ई० में दो और कैंटनों में यह पद्धति बंद हो गई, और तब से छः कैंटनों में यह सभाएँ रह गई हैं। जिन कैंटनों में यह पद्धति उठ गई उन का क्षेत्रफल और आबादी इतनी बड़ी थी कि लोगों को एक स्थान पर एकत्र हो कर सभा का काम सहूलियत से चलाना मुश्किल होता था। जिन कैंटनों में यह प्रथा अभी तक क़ायम है, उन का क्षेत्रफल इतना छोटा

है कि सभा में आने के लिए किसी को दस-पंद्रह मील से अधिक नहीं चलना पड़ता है, और उन की आबादी भी कम है। मगर सार्वजनिक सभा के द्वारा शासन चलाने की इस पद्धति का कारण सिर्फ़ एक क्षेत्रफल और आबादी ही नहीं कहा जा सकता क्योंकि जिन कैंटनों में यह प्रथा जारी है, उन से बहुत छोटी-छोटी यूरोपीय रियासतों में कोई ऐसी सभाएँ नहीं हैं और प्रतिनिधि-शासन की पद्धति चलती है।

'लांदस्गेमींद' की सभा में सारे मताधिकारी मर्दों का आना क़ानूनन फ़र्ज़ माना जाता है। कहीं-कहीं तो बिना किसी ख़ास वजह के सभा में न आनेवालों को जुर्माना भी देना पड़ता है। मगर फिर भी आमतौर पर वही लोग आते हैं, जिन की आने की तबियत होती है। मुख़्तलिफ़ कैंटनों में मुख़्तलिफ़, २६ फ़ी सदी से ७५ फ़ी सदी तक हाज़िरी का औसत रहता है।

साल में एक बार—ज़रूरत पड़ने पर अधिक बार भी—आम तौर पर अप्रैल या मई मास के किसी इतवार के दिन किसी खुले मैदान या चरागाह में, जहाँ छाया और पानी का सुभीता होता है, कैंटन के नागरिकों की सार्वजनिक सभा जुड़ती है। यह सभा दूसरी सार्वजनिक सभाओं से इस बात में भिन्न होती है कि दूसरी सभाएँ सिर्फ़ किसी विषय पर अपना मत प्रगट करती हैं और यह सभा जो मत प्रगट करती है उस पर अमल भी कराती है। इस सभा में जो कुछ बहुसंख्या पास करती है वह किसी क़ानून को पास करने के लिए सिफ़ारिश या माँग नहीं होती है, बल्कि वही क़ानून हो जाता है। सभा-स्थल के बीच में एक स्थायी मंच बनाया जाता है। जिस पर कैंटन का मुख्य अधिकारी, जिस को लेंदमान कहते हैं, चढ़ कर बैठता है। वही सभा का प्रधान होता है और उस के सामने कैंटन के मर्द, स्त्री और बच्चे काले कपड़े पहिन कर इकट्ठे होते हैं। मताधिकार प्राप्त मर्द सभा के अंदर बैठते और स्त्री-बच्चे उन के चारों ओर रहते हैं। किसी-किसी जगह बच्चों को बचपन ही से राजनीति का ज्ञान देने के लिए उन के बैठने के लिए सब से आगे स्थान रक्खा जाता है। किसी ज़माने में मतदारों का तलवारें बाँध कर आने का रिवाज भी था। मगर अब सिर्फ़ सभा का प्रधान तलवार बाँध कर आता है। सभा में आनेवाले एक दूसरे को अच्छी तरह पहचानते हैं। अस्तु, किसी ऐसे मनुष्य को, जिस को मताधिकार न हो, मत देना मुश्किल होता है। सभा के प्रारंभ में ईश्वर-प्रार्थना के बाद प्रधान का व्याख्यान होता है और उस के बाद दूसरी कार्रवाई होती है। मुख़्तलिफ़ कैंटनों में इन सार्वजनिक सभाओं को मुख़्तलिफ़ अधिकार हैं। मगर आम तौर पर कैंटन की राजव्यवस्था में संशोधन या बिल्कुल परिवर्तन करने, सब प्रकार के क़ानून बनाने, प्रत्यक्ष कर लगाने, सार्वजनिक क़र्ज़ा लेने, सार्वजनिक जागीर देने, सार्वजनिक रियायतें देने, विदेशियों को नागरिक बनाने, कैंटन के अधिकारियों को चुनने, नए पद बनाने और पदाधिकारियों का वेतन तय करने के अधिकार इन सभाओं को होते हैं। सूक्ष्म में यह सभा स्विट्ज़रलैंड में आम क़ानून की जन्मदायिनी और शासन का प्रबंध और देख-रेख करनेवाली होती है। सभा का कामकाज बड़ी गंभीरता से किया जाता है, यद्यपि बीच-बीच में चुटकुले और हँसी-मज़ाक होते

रहते हैं। मगर जोशीली से जोशीली चर्चा चलने पर भी कभी इन सभाओं में शोर गुल नहीं मचता है।

सभा पाँच या अधिक सदस्यों की एक कार्यकारिणी और उस का प्रधान लैंदमान चुनती है। एक सलाहकार समिति भी चुनी जाती है जिस में कार्यकारिणी के सदस्यों के अलावा कम्यूनों अथवा अन्य स्थानिक ज़िलों की प्रजा के प्रतिनिधि लिए जाते हैं। इस सलाहकार समिति को 'लैंद्रात' या 'कैंतरत्रात' के नाम से पुकारते हैं। इस समिति का मुख्य काम उन प्रस्तावों पर विचार करना होता है। जो या तो लैंद्रात के स्वयं होते हैं या लैंद्रात के पास नागरिकों के द्वारा सभा के सामने पेश होने के लिए भेजे जाते हैं। पाँच कैंटनों में किसी भी एक मताधिकारी को किसी क़ानून का प्रस्ताव भेजने का हक़ होता है। एक कैंटन—बाहरी ऐपेंजेल—में क़ानूनी प्रस्ताव भेजने के लिए ६५ मतदारों के दस्तखतों की ज़रूरत होती है। ग्लेरस और भीतरी ऐपेंजेल में कैंटन की राज-व्यवस्था के संशोधन का प्रस्ताव तक एक मतदार ही भेज सकता है। दूसरे कैंटनों में राज-व्यवस्था के संशोधन का प्रस्ताव भेजने के लिए पचास से पाँच सौ तक हस्ताक्षरों की ज़रूरत होती है। सारे प्रस्ताव लिख कर लैंद्रात के पास आना और सार्वजनिक सभा होने से पहले लैंद्रात का उन पर विचार कर लेना ज़रूरी होता है क्योंकि सभा के सामने उन प्रस्तावों को स्वीकार, संशोधन या अस्वीकार करने के लिए लैंद्रात को सिफ़ारिश करनी होती है। उरी और ग्लेरस में सार्वजनिक सभा में भी प्रस्ताव और संशोधन पेश किए जा सकते हैं। सभा में बहुसंख्या के मत से सब प्रस्ताव पास होते हैं, और जब तक पर्चों[1] की माँग नहीं होती है तब तक हाथ उठा कर ही मत प्रगट किए जाते हैं। सारे कैंटनों की सार्वजनिक सभाओं में हर विषय पर बहस की पूरी आज़ादी होती है। मगर एक सब से बड़े कैंटन—बाहरी ऐपेंजेल—की सार्वजनिक-सभा में चुनाव के सिवाय और किसी विषय पर चर्चा नहीं होती है। सार्वजनिक सभाओं को कैंटन के शासन में लगभग सभी कुछ सियाह-सफ़ेद करने का हक़ होता है। देखने में यह खालिस प्रजा-सत्ता का शासन बड़ा सुंदर लगता है। बहुत से लोग इस शासन-पद्धति को आदर्श-पद्धति मानते हैं। मगर इस शासन-पद्धति पर वहाँ ही अच्छी तरह अमल हो सकता है, जहाँ का क्षेत्रफल छोटा हो, आबादी कम हो, हितों का अधिक संघर्ष न हो, सरकार का काम-काज सादा हो, और लोगों में काफ़ी राजनैतिक जागृति हो। इस पद्धति के खिलाफ़ एक आक्षेप यह हो सकता है कि एक ही संस्था को सरकार की सारी सत्ता सौंप देने से बहुसंख्या के अत्याचार का डर रहता है। परंतु स्विट्ज़रलैंड के जिन कैंटनों में यह पद्धति अभी तक क़ायम है, वहाँ बड़ी सफलता से काम-काज चलता है और उस के मिटाने के लिए कोई प्रयत्न नहीं करता। फिर भी दो सौ वर्ष पहले जितना स्विट्ज़रलैंड में इस पद्धति का प्रचार था उस से अब क़रीब आधा रह गया है। राजनीति-शास्त्रियों की राय में स्विट्ज़रलैंड के अनुभव से सिर्फ़ यही बात सिद्ध होती है कि खालिस प्रजासत्ता की शासन-पद्धति सफलतापूर्वक स्थानिक-शासन में चल

---

[1] बैलट।

सकती है। स्विट्ज़रलैंड में भी अब दिन-दिन शासन पद्धति का झुकाव प्रतिनिधि-शासन या मिश्रित 'प्रजा-प्रतिनिधिशासन' की ओर ही अधिक होता जाता है।

जिन कैंटनों में मतदारों की सार्वजनिक सभाएँ क़ानून नहीं बनाती हैं उन में चुने हुए प्रतिनिधियों की धारा-सभाएँ होती हैं। इन धारा-सभाओं को बड़ी सभा के नाम से पुकारते हैं और इन के सदस्यों का चुनाव २० वर्ष की उमर के ऊपर के मर्द नागरिकों के मतों से सीधा होता है। मुख्तलिफ़ कैंटनों में ३५० से लेकर १००० की आबादी तक के लिए एक-एक प्रतिनिधि चुना जाता है। अतएव कैंटनों की धारा-सभाएँ काफ़ी बड़ी होती हैं। कुछ ही धारा-सभाएँ ऐसी हैं जिन के सदस्यों की संख्या सौ से कम हो; कई की संख्या तो दो सौ से अधिक तक है—ज्यूरिख़ की धारा-सभा में २२३ सदस्य हैं। इन धारा-सभाओं की ज़िंदगी एक साल से लेकर छः साल तक होती है। अधिकतर कैंटनों में धारा-सभाओं की ज़िंदगी तीन-चार साल की होती है और यह धारा-सभाएँ आम तौर पर साल भर में दो बार बैठती हैं। कहीं-कहीं धारा-सभाओं की अधिक बैठकें भी होती हैं। सार्वजनिक 'प्रस्तावना' और 'हवाले' की शर्तों के अंदर काम करने के सिवा यह सभाएँ दुनिया की दूसरी धारा-सभाओं की तरह ही काम करती हैं। उन की बहसें और फ़ैसले बड़े गंभीर होते हैं, और कई तो आन-बान में स्विट्ज़रलैंड की राष्ट्रीय धारा-सभा का मुक़ाबला करती हैं। उन की बहस और मुबाहिसे विस्तार से स्विट्ज़रलैंड के अख़बारों में छपते हैं, जिस से पता चलता है कि प्रजा उन के काम में काफ़ी दिलचस्पी लेती है। कैंटनों की धारा-सभाओं की जल्दबाज़ी रोकने के लिए किसी कैंटन में दो सभा की धारा-सभा की ज़रूरत नहीं होती, क्योंकि ज़रूरत के अनुसार उन के फ़ैसलों पर प्रजा ख़ुद विचार करती है। बहुत से कैंटनों में चुनाव अनुपात-निर्वाचन की पद्धति से होता है। मगर फ़्रांस और बेलजियम में जिस अनुपात-निर्वाचन की पद्धति का प्रचार है, उस में और स्विट्ज़रलैंड की पद्धति में इतना फ़र्क़ है कि स्विट्ज़रलैंड में मतदार अपने सारे मत एक ही उम्मीदवार को दे सकता है। जहाँ लांदसगेमींद नाम की सार्वजनिक सभाएँ नहीं हैं, वहाँ भी 'हवाले' और 'प्रस्तावना' की संस्थाओं के ज़रिए से स्विट्ज़रलैंड की प्रजा का क़ानून बनाने में हाथ रहता है। इस विषय में स्विट्ज़रलैंड दुनिया के दूसरे देशों से भिन्न है। अस्तु इन संस्थाओं को भी अच्छी तरह समझने की ज़रूरत है। प्रजासत्ता का अध्ययन करनेवालों को, स्विट्ज़रलैंड में प्रजा को क़ानून बनाने का काम करते देख कर, जन-बुद्धि, जन-हृदय और जन-आत्मा को पहिचानने का अच्छा मौक़ा मिलता है। सब से पहले स्विट्ज़रलैंड के इतिहास में सोलहवीं सदी में ग्राबंडन और वालिस की तराइयों में सार्वजनिक मत के संबंध में 'हवाले' शब्द के प्रयोग का ज़िक्र मिलता है। इन तराइयों में गाँवों और समुदायों की छोटी-छोटी संघे क़ायम थीं, जिन में सार्वजनिक हित के काम गाँवों के प्रतिनिधि सभाओं में मिल कर चलाते थे। परंतु इन सभाओं को किसी ज़रूरी विषय पर आख़िरी निश्चय करने का अधिकार नहीं होता था। अस्तु सारे ज़रूरी प्रश्नों को प्रतिनिधि अपने चुननेवाली प्रजा के सामने विचार के लिए पेश करते थे, और मतदारों की बहुसंख्या जिस बात को स्वीकार करती थी वही प्रतिनिधियों की दूसरी सभा में मंज़ूर की जा सकती थी। सन् १७६८ ई० के

फ्रांसीसी आक्रमण तक यह प्रथा चालू थी। बाद में भी सन् १८१५ ई० में फिर आर्वंडन में इस प्रथा का पुनर्जीवन हुआ।

आजकल स्विट्ज़रलैंड में 'हवाले' की संस्था जिस रूप में क़ायम है उस का जन्म उन्नीसवीं सदी में ही हुआ। सन् १८३० ई० में सेंट गालेन की राज-व्यवस्था की पुनर्घटना के समय 'ख़ालिस प्रजासत्ता' और 'प्रतिनिधि सरकार' के पक्षपातियों में एक समझौते के तौर पर यह फ़ैसला किया गया था कि मतदारों की एक काफ़ी संख्या की तरफ़ से माँग आने पर सारे क़ानूनों पर प्रजा का मत लिया जा सकता है। परंतु फिर धीरे-धीरे इस प्रथा का प्रचार बढ़ा और सन् १८४८ ई० में स्विट्ज़रलैंड की संघ क़ायम होने पर पाँच जर्मन-भाषा-भाषी कैंटनों में 'इख़्तियारी हवाले' का रिवाज हो गया। आजकल सात कैंटनों में 'इख़्तियारी हवाला' चलता है अर्थात उन कैंटनों में मतदारों की एक विशेष संख्या को किसी क़ानून पर सरकार को मतदारों के मत लेने के लिए मजबूर करने का इख़्तयार होता है। ग्यारह कैंटनों में 'लाचारी हवाला' चलता है अर्थात् सभी क़ानूनों पर प्रजा का मत लेने के लिए सरकार लाचार मानी गई है।

प्रजा की तरफ़ से हवाले की माँग धारा-सभा से क़ानून पास होने के आमतौर पर तीस दिन के अंदर पेश होनी चाहिए। माँग की अर्ज़ी कैंटन की कार्यकारिणी सभा के पास भेजी जाती है और अर्ज़ी पहुँचने के तीस दिन के भीतर कार्यकारिणी को उस प्रश्न पर प्रजा के मत पड़ने के लिए तारीख़ निश्चित कर देनी होती है। अर्ज़ी पर ५०० से ले कर ६००० मतदारों के अर्थात् मुख़्तलिफ़ कैंटनों में सारे मतदारों के बारहवें भाग से पाँचवें भाग तक के हस्ताक्षर होने की क़ैद रक्खी गई है। धारा-सभा से मंज़ूर क़ानूनों को अस्वीकार करने के लिए भी भिन्न-भिन्न कैंटनों में मतों की भिन्न-भिन्न संख्या की ज़रूरत होती है। कहीं मत देनेवालों की बहु-संख्या काफ़ी होती है; कहीं सारे मताधिकारी नागरिकों की बहु-संख्या की ज़रूरत होती है। प्रजा का मत क़ानून के ख़िलाफ़ होने पर कार्यकारिणी उस को धारा-सभा के पास वापस भेज देती है और धारा-सभा मतों को जाँच कर अपने क़ानून को रद्द ठहरा देती है।

'प्रस्तावना' के लिए इस का उल्टा अमल करना पड़ता है। सार्वजनिक प्रस्तावना की पद्धति में धारा-सभाओं से पास हो कर ऊपर से ही क़ानून प्रजा के ऊपर नहीं लगाए जाते हैं। नीचे से प्रजा को भी क़ानूनों के मसविदों की प्रस्तावना करने का अधिकार होता है। जिन नागरिकों को कोई नया क़ानून बनाने में दिलचस्पी होती है, वह उस क़ानून का मसविदा तैयार कर के या एक अर्ज़ी में वे सारी बातें लिख कर जो वह उस क़ानून में चाहते हैं, और उस क़ानून को मंज़ूर करने की ज़रूरत के कारण लिख कर, प्रजा के पास हस्ताक्षरों के लिए ले जाते हैं। दूसरे नागरिक उस मसविदे की ताईद अर्ज़ी पर अपने दस्तख़त कर के या ज़बानी भी कर सकते हैं। ज़बानी ताईद कम्यूनों की सभाओं में एकत्र हो कर या अर्ज़ी लेनेवाले सरकारी अधिकारी के पास जा कर ज़बानी एलान कर के की जा सकती है। अगर कई कम्यूनों की सभाओं में मिला कर मसविदे की ताईद के लिए ज़रूरी संख्या मतों की पड़ जाती है तो यह संख्या अर्ज़ी पर उतने दस्तख़तों के बराबर ही समझी

जाती है। दस्तखतों का तरीक़ा अख़्तियार किया जाने पर सारे ताईद करनेवालों को, एक सरकारी अफ़सर के पास जा कर अपना दस्तख़त करने का हक़ दूसरे चुनावों में मताधिकार के हक़ की तरह साबित करना होता है। इस के लिए उन से किसी प्रकार की फ़ीस नहीं ली जाती है। इख़्तियारी हवाले के लिए जितने मतों की ज़रूरत होती है उतने ही मतों की ज़रूरत 'सार्वजनिक प्रस्तावना' के लिए भी होती है। आवश्यक दस्तख़त हो जाने पर अर्ज़ी कैंटन की धारा-सभा के पास जाती है और एक निश्चित समय के अंदर धारा-सभा उस पर विचार कर के प्रार्थना के अनुसार पूरा मसविदा तैयार करती है। धारासभा उसी विषय पर अपने विचारों के अनुसार, दूसरा मसविदा तैयार कर के भी साथ-साथ प्रजा के मतों के लिए पेश कर सकती है। मसविदे की आवश्यकता और अनावश्यकता के विषय में भी प्रजा के सामने धारासभा अपना मत रख देती है, जिस से मतदारों को राय देने में आसानी हो जाती है। इस के बाद मसविदे पर प्रजा के मत लिए जाते हैं। बहुसंख्या के मतों से मसविदा मंज़ूर हो जाने और कार्यकारिणी के एलान कर देने पर क़ानून बन जाता है। कैंटनों की राज-व्यवस्था में संशोधन भी इसी प्रकार किया जा सकता है। जब किसी कैंटन की राज-व्यवस्था की बिल्कुल पुनर्घटना की जाती है तो पहले इस बात पर प्रजा का मत लिया जाता है कि पुनर्घटना की आवश्यकता है या नहीं; और अगर है तो उस को धारासभा करे या इस काम के लिए एक नया 'प्रतिनिधि-सम्मेलन' बुलाया जाय। अगर पुनर्घटना का काम धारासभा पर ही छोड़ने का निश्चय होता है तो अक्सर धारासभा का नया चुनाव किया जाता है, जिस से इस काम में नए लोग भी शामिल हो सकें। धारासभा या व्यवस्थापक-सम्मेलन के निश्चयों पर अमल करने के लिए मतदारों की बहुसंख्या की मंज़ूरी की ज़रूरत होती है।

जहाँ 'लाचारी हवाला' चालू है वहाँ भी प्रजा ने—जैसा कि कुछ लोग डरते हैं—इस सत्ता का दुरुपयोग नहीं किया है। न जिन कैंटनों में 'इख़्तियारी हवाला' चालू है वहाँ ही दलबंदी या छेड़खानी के लिए हवाले की माँगें की जाती हैं। यह भी हो सकता है कि इन कैंटनों की धारासभाओं का दिल और दिमाग़ प्रजा से इतना मिला रहता है कि प्रजा से अपील करने की आम तौर पर ज़रूरत ही नहीं होती। जहाँ सारे क़ानूनों पर प्रजा का मत लेने के लिए सरकार लाचार मानी गई है, वहाँ भी सारे क़ानूनों पर प्रजा का मत शायद प्रजासत्ता के सिद्धांतों की पूर्ति के लिए ही लिया जाता है, न कि इस लिए कि उन कैंटनों की प्रजा बनिस्बत और कैंटनों की प्रजा के अपनी धारासभा पर कम विश्वास रखती है। संघीय हवालों से कैंटनों के हवालों में भाग लेनेवाली प्रजा का औसत कम रहता है—ख़ास कर उन कैंटनों में जहाँ सब क़ानूनों पर हवाला लिया जाता है। धार्मिक प्रश्न पर लोग दूसरे प्रश्नों से अधिक संख्या में मत देने आते हैं और अधिकतर सरकारी ख़र्च बढ़ानेवाले क़ानूनों को ही प्रजा हवालों में नामंज़ूर करती है।

इस संस्था की जड़ एक तो 'प्रजा की प्रभुता'[1] के राजनैतिक सिद्धांत को कहा जा

---

[1] सावरेंटी ऑव् दि पीपुल।

सकता है जिस सिद्धांत का पहले-पहल जन्म स्विट्ज़रलैंड में नहीं बल्कि फ़्रांस में हुआ था। दूसरी इस संस्था की जड़ स्विट्ज़रलैंड की पहाड़ी जातियों की उस प्रथा को कह सकते हैं जिस के अनुसार गाँव के सब लोग जुट कर सार्वजनिक सभाओं में सारे क़ानूनों को मंजूर करते थे, जिस का ज़िक्र पहले किया जा चुका है। गाँवों की आबादी बढ़ जाने पर जब लोगों का एक जगह जुट कर मत देना कठिन होने लगा होगा तब सुभीते के लिए इस प्रथा का प्रचार हुआ होगा। प्रजा क़ानूनों को बनाने में ख़ुद भाग लेने से क़ानूनों को अपने क़ानून समझती है और उन पर अमल अधिक ख़ुशी से करती है। स्विट्ज़रलैंड में तो नहीं मगर संयुक्त-राज्य अमेरिका में इस संस्था के प्रचार के लिए इस कारण भी ज़ोर दिया जाता है कि उस देश के कुछ लोगों की राय में प्रतिनिधि-संस्थाएँ प्रजा की ठीक-ठीक इच्छा प्रकट नहीं करती हैं। परंतु स्विटज़रलैंड की धारा-सभाओं के बारे में ऐसा नहीं कहा जाता है। हाँ, इस बात पर ज़ोर अवश्य दिया जाता है कि प्रतिनिधियों से ख़ुद प्रजा अपने हितों को अच्छी तरह समझती है, और अपने हाथ से बनाए हुए क़ानूनों पर लोग ख़ुशी से अमल करते हैं। संघीय सरकार की सत्ता के बेजा फैलाव और सरकार के पूँजीपतियों के चंगुल में पड़ कर बिगड़ जाने की दवा भी प्रजा के हाथ में इस संस्था से रहती है। इस संस्था के कारण प्रजा में राजनैतिक ज्ञान और ज़िम्मेदारी भी बढ़ती है, क्योंकि क़ानून बनाने का सर्वसाधारण को अधिकार होने से सभी राजनैतिक प्रश्नों को समझने की कोशिश करते हैं, और जो काम पहले सिर्फ़ वकीलों और राजनीतिज्ञों की एक पढ़ी-लिखी टोली पर छोड़ दिया जाता था उस में साधारण आदमी भी भाग लेते हैं। संस्था के हवाले के कारण राजनैतिक दलबंदी का भी ज़ोर कम रहता है। आम लोग किसी दल या नेता के विचार से ही मत न दे कर मसविदे की भलाई-बुराई पर विचार कर के भी मत देते हैं क्योंकि धारासभा के सदस्यों को अपने दल के साथ मत देने में जिन व्यक्तिगत फ़ायदों का लोभ रहता है वह लोभ आम लोगों को नहीं रह सकता है। सर्वसाधारण को जो कुछ भी फ़ायदा और नुक़सान हो सकता है, वह सिर्फ़ उस क़ानून की भलाई और बुराई से हो सकता है। इस लिए वे सिर्फ़ क़ानून की भलाई और बुराई पर ही विचार कर के मत देते हैं। वैसे भी स्विट्ज़रलैंड में दलबंदी का ज़ोर कम है, जिस से आम लोगों की आदत स्वतंत्रता से मत देने की हो गई है। इंग्लैंड, फ़्रांस या अमेरिका में इस प्रकार का सार्वजनिक मत बिना दलबंदी के प्रगट ही नहीं किया जा सकता है। अन्य देशों में धारासभा के क़ानूनों को अस्वीकार करने का जो अधिकार राजछत्र या प्रमुख के हाथों में रक्खा जाता है, वही स्विट्ज़रलैंड में सीधा प्रजा के हाथ में रक्खा गया है। प्रजा-सत्तात्मक राज्य में आख़िरी फ़ैसला, राष्ट्र की प्रभुता और राष्ट्र की सारी सत्ता की जन्मदात्री, प्रजा के हाथ में रहना उचित भी है।

मगर 'हवाले' के विरोधियों का कहना है कि इस पद्धति से धारासभा की हैसियत और अधिकार कम होता है, क्योंकि धारासभा का मंज़ूर किया हुआ क़ानून प्रजा के मतों से नामंज़ूर हो जाने पर प्रजा के दिल में धारासभा के लिए सम्मान नहीं रहता है जिस से धारासभा को भी अपनी ज़िम्मेदारी का ख़याल कम हो जाता है। धारासभा जिन क़ानूनों

को ग़ैरज़रूरी समझती है उन के विरोध की भी उसे फ़िक्र नहीं रहती, क्योंकि वह समझती है कि प्रजा उन को नामंज़ूर कर ही देगी। उसी प्रकार बहुत-से ऐसे क़ानूनों को जिन को वह आवश्यक भी समझती है, प्रजा को नाराज़ कर देने के डर से पेश नहीं करती। दूसरा कारण विरोधी यह देते हैं कि जो साधारण लोग हवालों में मत देने आते हैं वे हर एक उस प्रश्न को जिस पर वह मत देते हैं समझने के नाक़ाबिल होते हैं। तीसरे, हवालों में मतदारों की अधिक संख्या के भाग न लेने से भी मालूम होता है कि या तो अधिकतर नागरिकों को इन अधिकारों की ज़रूरत नहीं मालूम होती है, या वह अपने आप को इस फ़र्ज़ के नाक़ाबिल समझते हैं। न आनेवालों की तादाद दिन-ब-दिन घटती भी नहीं है, जिस से यह साबित होता है कि इस संस्था से राजनैतिक ज्ञान की भी वृद्धि नहीं होती है। एक तो साधारण मनुष्य क़ानून की तमाम बारीकियाँ नहीं समझता है। उस के दिमाग़ में एक आध बात जम जाती है और वह इधर-उधर की बातों में चकरा कर किसी भी क़ानून की एक आध बुराई के कारण उस सारे क़ानून के ख़िलाफ़ मत दे देता है, जिस में अगर वह समझ और सोच सकता तो उसे बहुत-सी अच्छाइयाँ नज़र आतीं और उस ने उसे नामंज़ूर न किया होता। दूसरे यह भी देखा गया है कि एक मसविदे को नामंज़ूर कर देने के बाद साधारण मनुष्य की फिर दूसरे सामने आनेवाले सभी मसविदा को नामंज़ूर कर देने की बुद्धि हो जाती है। यह भी कि मतदारों को 'हाँ' या 'ना' में ही निश्चय करने का मौक़ा होने से अक्सर ख़राब मसविदों के साथ पेश होने वाले अच्छे मसविदे भी भेड़चाल में नामंज़ूर हो जाते हैं। एक दलील हवाले के विरोधी यह भी देते हैं कि साधारण नागरिक को राजनीति के अलावा और भी बहुत-सा काम रहता है। उस को आए दिन की हवाले और चुनाव की छेड़खानी अच्छी नहीं लगती। बार-बार के हवालों से उसे बहुत ख़र्च और परेशानी उठानी पड़ती है। अस्तु जल्दबाज़ी और लापरवाही में वह बे समझे-बूझे मत डाल आता है। जहाँ ग़ैरहाज़िरी के लिए ज़ुर्माना देना होता है, वहाँ बहुत-से मतदार आ कर चुनाव के बक्स में कोरा पर्चा ही डाल जाते हैं, क्योंकि उन का कोई मत ही नहीं होता है, जो वे दें। हवाले के विरोधियों का कहना कि धारासभा में कोई क़ानून सिर्फ़ थोड़ी-सी बहुसंख्या से पास होने पर साधारण मनुष्य यह तलाश नहीं करते हैं कि कितने मत क़ानून के पक्ष में थे और कितने विपक्ष में। वे उस को धारा-सभा से मंजूर मान कर संतोष से मंज़ूर कर लेते हैं। परंतु जनसाधारण के ख़ुद मत देने पर अगर कोई क़ानून सिर्फ़ थोड़ी-सी बहुसंख्या से ही पास होता है तो विरुद्ध पक्ष में मत देनेवालों के सिर्फ़ थोड़े-से मतों से हार जाने के कारण चिढ़ कर क़ानून के विरोधी बन जाने की संभावना रहती है। मगर स्विट्ज़रलैंड में अभी तक कभी ऐसा सुनने में नहीं आया है। वहाँ हमेशा अल्पसंख्या बहुसंख्या का निश्चय ख़ुशी से मानती है क्योंकि शायद वह समझती है कि स्वतंत्र सरकार इसी नियम पर चल सकती है। हवाले के इन विरोधियों की और भी कई बातें इसी प्रकार स्विट्ज़रलैंड के अनुभव से ठीक नहीं जँचती। उन की बहुत-सी शिकायतें सत्य भी हैं, मगर वही शिकायतें प्रतिनिधि पद्धति के ख़िलाफ़ भी की जा सकती है।

हवाले की पद्धति से धारासभा और कार्यकारिणी का काम भी पृथक् रहता है।

कार्यकारिणी और धारासभा के बनाए हुए क़ानून 'हवाले' में नामंज़ूर हो जाने पर भी स्विट्ज़रलैंड में धारासभा और कार्यकारिणी अपना-अपना काम करती रहती हैं। इंगलैंड या फ्रांस में कार्यकारिणी का कोई ज़रूरी क़ानून धारासभा में नामंज़ूर हो जाने पर कार्यकारिणी इस्तीफ़ा दे देती है। मगर स्विट्ज़रलैंड में क़ानून बनाने की सत्ता प्रजा के हाथ में होने से धारासभा का काम सिर्फ़ क़ानून तैयार करना समझा जाता है, और प्रजा कार्यकारिणी अथवा धारा-सभा के मसविदों को ज़रूरत पड़ने पर उसी प्रकार नामंज़ूर कर देती है जैसे कोई व्यापारी अपने मुनीम की बनाई हुई योजना को नामंज़ूर कर देता है। मालिक के योजना नामंज़ूर कर देने पर जिस प्रकार मुनीम को इस्तीफ़ा दे कर भाग जाने की जरूरत नहीं होती है, उसी प्रकार अपने मसविदे नामंजूर हो जाने पर स्विट्ज़रलैंड में कार्यकारिणी या धारासभा को इस्तीफ़ा देने की ज़रूरत नहीं समझी जाती है। स्विट्ज़रलैंड में जिस कार्यकारिणी और धारासभा के कानूनों को प्रजा नामंज़ूर करती है उसी को चुनाव होने पर फिर चुन लेती है। जब तक किसी कार्यकारिणी या धारासभा के सदस्यों की ईमानदारी और काम में लोगों को भरोसा रहता है तब तक स्विट्ज़रलैंड में उन को बदला नहीं जाता है। इंगलैंड या अमेरिका में ऐसा नहीं हो सकता। वहां जिस कार्यकारिणी या धारासभा के बहुत-से कानून लोगों को पसंद नहीं होते हैं उस का दूसरे चुनाव में चुना जाना असम्भव होता है। स्विट्ज़रलैंड में किसी कानून के पास होने या न होने पर राजनैतिक दलों का भाग्य निर्भर न रहने से दलबंदी को उत्तेजना कम रहती है। धारासभा को प्रजा के भावों का ध्यान रख कर चलना होता है और प्रजा की मर्ज़ी से ही सरकार का बहुत कुछ काम होता है। स्विट्ज़रलैंड में कहीं इस पद्धति को उठा देने का ज़िक्र या माँग नहीं है। प्रजा अपने इस अधिकार की क़दर करती है। अधिकतर कैंटनों में 'लाचारी हवाला' होने पर भी कुछ विद्वानों की राय 'इख्तियारी हवाले' के ही पक्ष में है, क्योंकि उन की राय में आए दिन के जबरदस्ती हवालों में मत देने से लोग तंग आ जाते हैं और सोच-विचार कर ठीक ठीक मत नहीं देते हैं। हवाले की सफलता का कारण स्विट्ज़रलैंड की प्राकृतिक दशा भी कही जा सकती है क्योंकि छोटी-छोटी आबादी के स्थानों में, जहां दलबंदी का बहुत जोर नहीं होता है, यह पद्धति खास तौर पर सफल हो सकती है।

'हवाले' से प्रजा को सिर्फ़ किसी नापसंद कानून को नामंज़ूर करने का अधिकार रहता है। किसी नई ज़रूरत के लिए नए क़ानून बनाने की इच्छा प्रकट करने का अधिकार प्रजा को 'प्रस्तावना' से रक्खा गया है। 'हवाला' प्रजा के हाथ में अपनी प्रतिनिधि-सभा के काम का इलाज है, तो प्रस्तावना प्रतिनिधि-सभा की नाकामी का इलाज है। हवाले से धारासभा की ग़लतियों को प्रजा सँभाल सकती है और प्रस्तावना से धारासभा के किसी प्रश्न पर चुप रहने से प्रजा खुद उस प्रश्न को उठा सकती है। प्रजा द्वारा क़ानून बनाने के सिद्धांत का 'प्रस्तावना' पद्धति एक स्वाभाविक फल है। अगर प्रजा के हाथ में 'प्रस्तावना' की ताक़त न हो तो किसी ऐसे प्रश्न पर क़ानून बनाने के लिए जो धारासभा को पसंद न हो, अखबारों और सार्वजनिक सभाओं में कितना ही शोर मचने पर भी, धारासभा कुछ

प्रयत्न न करके बेफिक्री से कानों में तेल डाल कर बैठ सकती है। प्रस्तावना की पद्धति से प्रजा, धारासभा पर ही निर्भर न रह कर, ख़ुद उस प्रश्न को उठा सकती है। ग़ैर-ज़रूरी या महज़ छेड़खानी के लिए किसी मसविदे की प्रस्तावना होने पर स्विट्ज़रलैंड में प्रजा उस को आमतौर पर नामंज़ूर कर देती है। मगर कभी-कभी बहुत ज़रूरी विषयों पर, धारा-सभा का कट्टर विरोध होने पर भी, प्रजा की तरफ़ से मसविदों की प्रस्तावना होती है, और प्रजा उन को स्वीकार करती है। कुछ राजनीतिज्ञों का 'हवाले' से अधिक 'प्रस्तावना' के ख़िलाफ़ विरोध है। उन का कहना है कि 'हवाले' के लिए जो क़ानून भेजे जाते हैं उन पर तो धारासभा विचार भी कर चुकी होती है और वे 'कार्यकारिणी समिति' के दक्ष मनुष्यों के गढ़े हुए भी होते हैं। मगर जो क़ानून 'प्रस्तावना' में प्रजा की तरफ़ से आते हैं उन पर कहीं पहले अच्छी तरह न तो विचार ही हो चुका होता है, और न वे होशियार और अनुभवी मनुष्यों के द्वारा गढ़े ही गए होते हैं। ऐसे क़ानूनों के मंज़ूर हो जाने पर उन पर अमल में दिक्कतें खड़ी हो सकती हैं, क्योंकि उन के गढ़नेवालों को कार्यकारिणी या धारासभा के सदस्यों की तरह अमली दिक्कतों का ज्ञान न रहने से उन क़ानूनों में अमली कमियां रह जाती हैं। दूसरे मौजूदा क़ानूनों के क्षेत्र में दखल देनेवाले क़ानून भी प्रजा के अज्ञान से प्रस्तावना के द्वारा पेश हो कर पास हो सकते हैं। मगर पहले जितना 'प्रस्तावना' का विरोध किया जाता था अब उतना नहीं होता है। स्विट्ज़रलैंड का इतिहास, स्विट्ज़रलैंड की प्रजा की देशभक्ति और स्थानिक स्वराज्य की पुरानी आदत के कारण और स्वीट्ज़रलैंड के लोगों की आर्थिक स्थिति में एक दूसरे से बहुत फ़र्क़ न होने से यहां की भूमि ख़ालिस प्रजासत्ता के पौदों के लिए आज तक तो बड़ी उपजाऊ साबित हुई है। आगे का हाल कहना बड़ा मुश्किल है। दुनिया में हितों का संघर्ष बढ़ रहा है। कौन कह सकता है कि इटली या जर्मनी की तरह स्विट्ज़रलैंड में हित संघर्ष का घटाटोप संग्राम छिड़ जाने पर यह संस्थाएं उस नई कसौटी पर कैसी उतरेंगी?

(३) कार्यकारिणी

कैंटनों की कार्यकारिणी-सत्ता एक समिति के हाथ में होती है। मुख़्तलिफ़ कैंटनों में पाँच से तेरह तक, मुख़्तलिफ़ संख्या की, यह समिति होती है। इस समिति को 'शासन-समिति' या 'छोटी कौंसिल' या 'स्टेट कौंसिल' के नाम से पुकारते हैं। इस समिति के सदस्यों का चुनाव दो कैंटनों को छोड़ कर और सब कैंटनों में अपनी-अपनी व्यवस्था के अनुसार एक से ले कर पांच बरस तक के लिए प्रजा ख़ुद करती है। फ्रीबर्ग और वेले नाम के दो कैंटनों में उन का चुनाव वहां की धारासभाएं करती हैं। कार्यकारिणी समिति का एक प्रधान चुना जाता है जिस को आम तौर पर 'लैंदमान' कहते हैं। लैंदमान हर रस्मोरिवाज के काम में कैंटन की सरकार का सिरमौर और कैंटन का प्रतिनिधि समझा जाता है। मगर उस को समिति के दूसरे सदस्यों से न तो कोई अधिक अधिकार ही प्राप्त होते हैं, और न और किसी बात में वह उन से भिन्न समझा जाता है। 'कार्यकारिणी समिति' या 'शासन-समिति' का काम क़ानूनों को अमल में लाना, शांति

और सुव्यवस्था क़ायम रखना, क़ानूनी मसविदे तैयार करना, कम्यूनों के शासन की देख-रेख करना और हर प्रकार से कैंटनों के हितों की रक्षा करना होता है । शासन का काम चलाने के लिए अर्थ, शिक्षा, न्याय, पुलिस, स्वास्थ्य, व्यापार, उद्योग, कृषि इत्यादि के विभाग कार्यकारिणी के सदस्यों में बाँट दिए जाते हैं। 'कार्यकारिणी समिति' का मुख्य काम धारासभा अथवा प्रजा के बनाए हुए क़ानूनों और उन के हुक्मों पर अमल करना होता है। समिति के सदस्यों को कैंटन की धारासभा में जा कर चर्चा में भाग लेने का अधिकार होता है। मगर उन को वहां मत देने का अधिकार नहीं होता है। कुछ छोटे अधिकारियों को नियुक्त करने और एक हद तक अपनी मर्ज़ी के अनुसार ख़ज़ाने का रुपया खर्च करने का भी अधिकार समिति को कई कैंटनों में है। क़ानूनों की व्याख्या करने और कहीं-कहीं सार्वजनिक कर और आर्थिक प्रश्नों पर अपील सुनने का काम भी यह समिति करती है।

शासन का काम चलाने के लिए सब से छोटे कैंटनों को छोड़ कर और सब कैंटन जिलों में बटे हुए हैं, जिन को बेट्सिर्क कहते हैं। हर बेट्सिर्क में एक बेट्सिर्क मान या प्रीफेक्ट होता है। इस अधिकारी को मुख़तलिफ़ कैंटनों में कार्यकारिणी समिति या धारासभा या प्रजा चुनती है। परंतु हर हालत में वह कैंटन की सरकार का ही प्रतिनिधि माना जाता है। किसी-किसी कैंटन में बेटसिर्कमान की शासन-कार्य में सहायता करने के लिए प्रजा की चुनी हुई सभाएं भी होती हैं। श्वेज़ कैंटन के छः के छः जिलों में इस प्रकार की सभाएं हैं। इस कैंटन में सन् १७६८ ई० के पूर्व एक सार्वजनिक सभा के द्वारा शासन चलता था। बाद में यहां वह प्रथा बंद हो गई या शायद उसी पद्धति ने यह दूसरा रूप धारण कर लिया जिस से इस कैंटन की पुरानी एक सार्वजनिक सभा के स्थान में हर ज़िले में ६ सभाएं बन गईं। मगर इस एक कैंटन के ही सारे ज़िलों में इस प्रकार की सभाएं हैं। दूसरे कैंटनों में नहीं है। बेटसिर्कमान के अधिकार का काल भी उतना ही होता है जितना उस कैंटन के लैंदमान का होता है। मगर समय पूरा हो जाने के बाद वह फिर चुना जा सकता है। उस का काम भी क़ानूनों, कार्यकारिणी समिति के आदेशों और न्यायाधीशों के फ़ैसलों को अमल में लाना, सार्वजनिक शांति और सुव्यवस्था क़ायम रखना, और कम्यूनों के शासन और अपने मातहत अधिकारियों और गावों के मुखियों की कार्रवाई की देख-रेख करना होता है। श्वेज़ कैंटन के बेटसिर्क की सभाओं में सब बालिग़ नागरिक मर्द भाग लेते हैं। यह सभाएं ज़िले के अधिकारियों और कुछ न्यायाधीशों को चुनती है और कैंटन की सभाओं की तरह अपने ज़िलों में कर लगाने और उन के खर्च करने, का काम भी करती हैं। स्विट्ज़रलैंड में स्थानिक-शासन की सब से छोटी इकाई कम्यून है जिस का ज़िक्र इस अध्याय के शुरू में ही हो चुका है।

(४) न्याय-शासन

हर कैंटन का अपना-अपना न्यायशासन भी अलग होता है। न्यायाधीशों को सीधा प्रजा या धारासभाएं चुनती हैं। दीवानी के लिए हर कम्यून में एक 'जस्टिस ऑव्

दि पीस' की अदालत होती है जिस के न्यायाधीश को अक्सर बिचवई भी कहते हैं क्योंकि हर मुक़दमे में उस का पहला फ़र्ज़ बीच में पड़ कर लड़नेवालों में आपस में बीच-बिचाव कर देने की कोशिश करना होता है। जब इस प्रकार झगड़ा नहीं पटता है तब वह उस पर न्यायाधीश की तरह अपनी अदालत में विचार करता है। उस को छोटे-छोटे मुक़दमों पर ही विचार करने का अधिकार होता है।

इस अदालत के ऊपर ज़िले की अर्थात् बेट्सिर्क़ की अदालत होती है। उस में पाँच से सात तक प्रजा के चुने हुए न्यायाधीश होते हैं। ज़िले की अदालतों के ऊपर कैंटन की अदालतें होती है। जिन में सात से तेरह तक आम तौर पर धारा-सभा के चुने हुए न्यायाधीश होते हैं। ज़िले की अदालतों की अपीलें कैंटन की अदालतों में जा सकती हैं। मगर इन अदालतों को किसी क़ानून को राज-व्यवस्था के ख़िलाफ़ ठहराने का हक़ नहीं होता है। फ़ौजदारी के मुक़दमों के लिए हर ज़िले में अलग अदालतें होती हैं जिन में वाक़यात पर राय देने के लिए न्यायाधीशों के साथ प्रजा की चुनी हुई आम तौर पर छः से नौ आदमियों तक की जूरी भी बैठती हैं। वाक़यात पर फ़ैसला हो जाने के बाद इन अदालतों की अपीलें भी कैंटन की अदालतों के पास जा सकती हैं। तीन कैंटनों में व्यापारिक झगड़ों का फ़ैसला करने के लिए ख़ास व्यापारी अदालतें हैं। इन में एक दो न्यायाधीश और दो से पाँच तक व्यापारी मामलों को अच्छी तरह समझनेवाली व्यापारी न्याय करने के लिए बैठते हैं। ख़ास हालतों में इन अदालतों की अपीलें भी साधारण अदालतों में जा सकती हैं। नौ कैंटनों में मालिकों और मज़दूरों के झगड़ों का फ़ैसला करने के लिए उद्योगी अदालतें भी हैं। इन में दोनों पक्ष के आदमी न्यायाधीश का काम करते हैं। इस प्रकार की अदालतों में झगड़े बड़ी जल्दी और अक्सर बिना किसी ख़र्च के पट जाते हैं।

३—संघीय सरकार

(१) व्यवस्थापक-सभा

(१) नेशनल राथ—स्विट्ज़रलैंड की व्यवस्थापक सभा को 'नेशनल एसेंबली' अर्थात् 'राष्ट्रीय सभा' कहते हैं। दुनिया की दूसरी संघीय सरकारों की तरह इस देश की व्यवस्थापक-सभा की भी दो शाखाएं हैं। एक को 'नेशनल राथ' या 'नेशनल कौंसिल' कहते हैं और दूसरी को 'स्टांडराथ' या 'कौंसिल ऑव् स्टेटस्'। संघीय सरकार की सारी सत्ता नेशनल एसेंबली में मानी गई है। कार्यकारिणी और न्याय-विभाग को भी व्यवस्थापक-सभा ही के आधीन माना गया है।

'नेशनल कौंसिल' का मुक़ाबला इंगलैंड के 'हाउस ऑव् कॉमंस्' से किया जा सकता है। 'नेशनल कौंसिल' के सदस्य प्रजा के सीधे और गुप्त[1] मतों से तीन साल के

[1] डायरेक्ट एंड सीक्रेट बैलट।

लिए चुने जाते हैं। हर कैंटन से बीस हज़ार आबादी या उस के अधिक भाग के लिए एक सदस्य चुना जाता है। मगर हर हालत में कम से कम हर कैंटन से एक सदस्य अवश्य चुने जाने की क़ैद रक्खी गई है। हर मर्दुमशुमारी के बाद संघीय सरकार चुनाव के नए ज़िले बनाती है और आबादी के अनुसार कैंटनों के प्रतिनिधियों की संख्या घटाई-बढ़ाई जाती है। प्रारंभ में 'नेशनल कौंसिल' में १२० प्रतिनिधि थे; सन् १६१० ई० की मर्दुमशुमारी के बाद उन की संख्या बढ़ कर १८६ हो गई थी। बर्न के नेशनल कौंसिल में ३२ प्रतिनिधि थे, ज्यूरिच के २५ प्रतिनिधि, वाड के १६ और उरी और ज़ग जैसे छोटे-छोटे कैंटनों के सिर्फ़ एक-एक ही प्रतिनिधि थे। आम तौर पर चुनाव के एक ज़िले से दो या तीन या चार प्रतिनिधि चुने जाते हैं। बीस वर्ष के ऊपर के सब मर्द नागरिक—जिन के नागरिकता के अधिकार कैंटनों ने छीन न लिए हों—'नेशनल कौंसिल' के चुनाव में भाग ले सकते हैं। अक्टूबर के आखिरी रविवार के दिन, सारे स्विट्ज़रलैंड में जगह-जगह पर 'नेशनल कौंसिल' के प्रतिनिधियों का चुनाव होता है। चुनाव में सफलता के लिए हर उम्मीदवार को मतों की बहुसंख्या अर्थात् सारे मतों की आधी से अधिक संख्या की ज़रूरत होती है। परंतु पहली बार पर्चे पड़ने पर अगर किसी उम्मेदवार को इतने मत नहीं मिलते हैं, तो दो तीन हफ़्ते बाद फिर दूसरी बार चुनाव होता है। और इस दूसरे पर्चे पर जिस को सब से अधिक मत मिलते हैं उस को चुन लिया जाता है। सिर्फ़ एक पादरी लोग उम्मीदवार नहीं हो सकते हैं। दूसरे मतदारों में से कोई भी कौंसिल की मेंबरी के लिए खड़ा हो सकता है।

'नेशनल कौंसिल' के सदस्यों को सभा में हाज़िर रहने के दिनों के लिए फ़ी दिन के लिए बीस फ्राक भत्ता और आने-जाने का सफ़र ख़र्च मिलता है। सभा में देर से आनेवालों का भत्ता काट लिया जाता है। 'नेशनल कौंसिल' की हर एक साधारण और असाधारण बैठक शुरू होने पर सभा अपने सदस्यों में से एक सभा का अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष और चार मंत्री चुन लेती है। मगर यह शर्त रक्खी गई है कि जो चुनाव की सभा के अध्यक्ष के स्थान पर बैठता है उस को उसी सभा की बैठक के लिए अध्यक्ष या उपाध्यक्ष नहीं चुना जा सकता है; न उपाध्यक्ष को लगातार दो बैठकों में उपाध्यक्ष चुना जा सकता है। इस शर्त को रखनेवालों ने शायद यह सोचा होगा कि साल भर में नेशनल कौंसिल की एक ही बैठक हुआ करेगी। मगर काम बढ़ जाने से अब साल भर में सभा की दो बार बैठकें होती हैं। एक बार बैठकें जून के पहले सोमवार और दूसरी बार दिसंबर के पहले सोमवार से शुरू होती हैं। परंतु इन दोनों सालाना बैठकों को व्यवस्थापक कल्पना में एक ही बैठक मान लिया गया है, और साल भर तक एक ही अधिकारी सभा का काम चलाते हैं। उपाध्यक्ष और मंत्रियों के चुनाव में अध्यक्ष अन्य साधारण सदस्यों की तरह भाग लेता है। परंतु प्रस्तावों और मसविदों पर जब सभा के सदस्य बराबर-बराबर दोनों तरफ़ बँट जाते हैं, तभी गाँठ पड़ जाने पर, वह अपना मत देता है, आम तौर पर नहीं। अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और मंत्रियों को मिला कर एक ब्यूरो बन जाता है, जो सभा की कमेटियों को चुनता, मत गिनता और सभा का सारा काम-काज चलाता है।

(२) स्टेंडराथ—'स्टेंडराथ' या 'कौंसिल आॅव् स्टेटस्' में ४४ सदस्य होते हैं।

हर एक छोटे-बड़े कैंटन से इस सभा के लिए दो-दो सदस्य चुने जाते हैं[1]। सदस्यों के चुनाव की शर्तें, ढंग, और उन के सदस्य रहने का काल और भत्ता मुख़तलिफ़ कैंटन अपनी-अपनी इच्छानुसार तय करते हैं। अधिकतर कैंटनों में सदस्यों को सारी मताधिकारी प्रजा चुनती है। मगर सात कैंटनों में उन को कैंटनों की धारासभाएं चुनती हैं। पाँच पूरे कैंटन और सारे आधे कैंटन सदस्यों को सिर्फ़ एक साल के लिए चुनते हैं। एक कैंटन दो साल के लिए चुनता है, एक चार साल के लिए और बाक़ी तीन साल के लिए। अस्तु इस विषय में कैंटनों की कार्रवाई में समता नहीं होती है। स्टेंडराथ के सदस्यों का भत्ता भी कैंटनों के ख़ज़ानों से दिया जाता है। आम तौर पर यह भत्ता उतना ही होता है जितना कि संघीय ख़ज़ाने से नेशनलराथ के सदस्यों को मिलता है। मगर इस में भी मुख़तलिफ़ कैंटनों में कुछ न कुछ भेद रहता है। अस्तु स्टेंडराथ सिद्धांत के सिवाय चाल-ढाल में भी बिल्कुल संघीय संस्था है।

संयुक्त राज्य अमेरिका की सिनेट के ढंग पर, संघ के सदस्य प्रांतों से दो-दो प्रतिनिधि ले कर, स्विट्ज़रलेंड की स्टेंडराथ बनाई गई है। मगर अमेरिका की सिनेट की तरह महत्त्व का स्थान देश की राजनीति में स्टेंडराथ को नहीं है। फिर भी 'हाउस ऑव् लार्ड्स' की तरह बिल्कुल कमज़ोर संस्था भी वह नहीं है। स्टेंडराथ का संगठन नेशनल राथ का-सा ही है। पहले इस संस्था का अधिक महत्त्व था। परंतु धीरे-धीरे वह नष्ट हो गया है। चतुर और महत्त्वाकांक्षी लोग स्टेंडराथ की बजाय नेशनलराथ में ही जाना अधिक पसंद करते हैं। क़ानूनन स्टेंडराथ को नेशनलराथ के बराबर सत्ता होती है। अकसर नेशनलराथ के भेजे हुए मसविदों को स्टेंडराथ नामंज़ूर कर देती है। मगर प्रस्तावना और स्वतंत्रता में वह नेशनलराथ का मुक़ाबला नहीं कर सकती है।

(३) काम-काज—नेशनल एसेंबली को संघीय सरकार की सब प्रकार की सत्ता का पूरा उपयोग करने का अधिकार है। क़ानून बनाने के साथ-साथ शासन और न्याय-संबंधी काम भी व्यवस्थापक-सभा करती है। संघीय मंत्रि-मंडल, राष्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीशों, चांसलर और राष्ट्रीय सेना के कमांडर इन् चीफ़ को व्यवस्थापक-सभा चुनती है। संघीय कार्यकारिणी के ख़िलाफ़ शिकायतों और संघीय सरकार के मुख़तलिफ़ विभागों के आपस के झगड़ों का न्याय करने में व्यवस्थापक-सभा अदालत का काम करती है।

क़ानून बनाने और ख़ास तौर पर संघीय सरकार के अधिकारियों को चुनने और संगठित करने, उन का वेतन निश्चित करने, दूसरे देशों से संधियां और कैंटनों के आपस के समझौतों को मंज़ूर करने, सालाना राष्ट्रीय आय-व्यय तय करने, और ज़रूरत पड़ने पर व्यवस्थापक-सम्मेलन का रूप धारण करके राज-व्यवस्था के संशोधन करने का काम भी

---

[1]पूरे कैंटन स्विट्ज़रलैंड में २२ ही हैं। मगर तीन कैंटनों के दो-दो कैंटन करके २५ बना दिए गए हैं। मगर स्टेंडराथ के चुनाव में उन के दोनों भागों को मिला कर एक कैंटन माना जाता है और इस लिए चुनाव के लिए २२ ही कैंटन माने जाते हैं।

नेशनल ऐसेंबली ही करती है। कानून पास करने का काम व्यवस्थापक-सभा की दोनों शाखाएं अपनी अलग-अलग बैठकों में करती हैं और किसी क़ानून को पास होने के लिए दोनों सभाओं में अलग-अलग बहुमत मिलने की ज़रूरत होती है। संघीय सरकार के अधिकारियों को चुनने के लिए और झगड़ों का न्याय करने के लिए न्यायालय की तरह जब व्यवस्थापक-सभा की बैठक होती है, तब नेशनलराथ और स्टेंडराथ दोनों के सदस्य मिल कर एक सभा में बैठते हैं और इस सभा में हर एक बात-की मंज़ूरी के लिए सब के मिल कर बहुमतों की ज़रूरत होती है। सभाओं में भाषण और इच्छानुसार मत देने की सब सदस्यों को पूरी स्वतंत्रता होती है। दोनो सभाओं के किसी प्रतिनिधि के निर्वाचन-क्षेत्र के मतदार अपनी हिदायतों के अनुसार उस प्रतिनिधि को मत देने के लिए मजबूर नहीं कर सकते हैं। व्यवस्थापक-सभा के किसी सदस्य को, जब तक वह सदस्य रहता है तब तक, किसी सख्त अपराध के सिवाय गिरफ़्तार नहीं किया जा सकता है।

संघीय सरकार की 'कार्यकारिणी' समिति, जिस को 'फेडरल कौंसिल' कहते हैं, व्यवस्थापक-सभा की बैठके शुरू होने पर, दोनों सभाओं के अध्यक्षों के पास उन सारे प्रश्नों की एक सूची बना कर, जो उस के पास व्यवस्थापक सभा के सामने रखने के लिए आते हैं और उन प्रश्नों पर अपनी मीमांसा लिख कर भेज देती है। इस सूची में वे सारे प्रश्न आ जाते हैं जो फेडरल कौंसिल के पास उस की राय के लिए भेजे जाते हैं, या जिन नए प्रश्नों को किसी कैंटन की सरकार या कोई व्यक्ति नेशनल एसेंबली के सामने लाना चाहते-हैं। दोनो अध्यक्ष मिल कर आपस में तय करते हैं कि कौन-सी सभा किस प्रश्न पर विचार करेगी और इस फैसले को वह दोनों अपनी-अपनी सभाओं के सामने पहले या दूसरे दिन की बैठक में रख देते हैं। नेशनलराथ का अध्यक्ष सभा की बैठक होने से पहले सभा की एक दो कमटियों को भी बुला लेता है जिस से कि उन कमेटियों की रिपोर्ट सभा के बैठते ही बहस शुरू करने के लिए तैयार रहे। मसविदों पर चर्चा के समय कोरम के लिए सभा की बहुसंख्या की हाज़िरी की ज़रूरत होती है; मगर उन के मंज़ूर होने के लिए, जितने मत पड़े उन की बहुसंख्या की ज़रूरत होती है। एक सभा में मसविदा पास हो जाने पर उस सभा के अध्यक्ष और मंत्री उस पर दस्तखत कर के दूसरी सभा के पास विचार के लिए भेज देते हैं। दूसरी सभा के उस को जैसा का तैसा पास करने पर वह मसविदा फिर पहली सभा के पास आता है और वह सभा उस को क़ानून एलान करने के लिए फ़ेडरल कौंसिल के पास भेज देती है। अगर दूसरी सभा उस में संशोधन करती है तो वह फिर विचार के लिए पहली सभा के पास आता है और पहली से फिर दूसरी के पास जाता है और इसी प्रकार दोनों सभाओं के पास आता-जाता रहता है जब तक कि दोनों सभाओं की राय एक नहीं हो जाती है, या मतभेद की बात मसविदे में से निकाल नहीं दी जाती है। मतभेद होने पर जब मसविदे पुनः विचार के लिए सभाओं के पास जाते है तब उन की सिर्फ़ उन बातों पर ही बहस होती हैं जिन पर दोनों सभाओं का मतभेद होता है—दूसरी बातों पर नहीं।

'फेडरल कौंसिल' अर्थात् स्विट्ज़रलैंड के मंत्रि-मंडल के सदस्यों को दोनों

सभाओं में जा कर बोलने और जिस विषय पर चर्चा चल रही हो उस पर अपने प्रस्ताव पेश करने का हक़ होता है। उन से शासन के काम-काज के बारे में सदस्य सवाल भी पूछ सकते हैं जिस का उन को उसी दिन या दूसरे दिन की बैठक में जवाब देना पड़ता है। गर्मियों में रोज़ सुबह आठ बजे और जाड़ों में नौ बजे सभाओं की बैठकें शुरू हो जाती हैं। आम तौर पर रोज़ पाँच घंटे उन की बैठकें होती हैं। सदस्यों को काली पोशाक पहन कर सभाओं में आना होता है और हाज़िरी के वक्त अपने नाम की पुकार होने पर जवाब देना या अध्यक्ष के सामने गैरहाज़िरी की वजह पेश करनी होती है। गैरहाज़िर सदस्यों के नाम कार्रवाई की किताब में लिख लिए जाते हैं, और अगर हाज़िरी होने के एक घंटे के अंदर नहीं आते है, तो उन का उस दिन का भत्ता ज़ब्त हो जाता है।

सभाओं का काम 'फ़ेडरल कौंसिल के भेजे हुए किसी प्रस्ताव, मसविदे, या रिपोर्ट, दूसरी सभा से आए हुए किसी काग़ज, किसी कमेटी की रिपोर्ट, किसी सदस्य के प्रस्ताव, या किसी अर्ज़ी पर चर्चा से शुरू हो सकता है। अध्यक्ष हर रोज़ सभा का कार्यक्रम पहले से बना लेते हैं और उसी के अनुसार काम शुरू होता है। हर एक प्रस्ताव और रिपोर्ट सभा के सामने जर्मन और फ्रेंच दो भाषाओं में पढ़ी जाती है। रिपोर्ट देनेवाली कमेटी के सदस्य उस के बाद उठ कर अपनी राय विस्तार से समझा सकते हैं और फिर उस पर बहस शुरू होती है। सभा के सदस्य अपनी जगहों से बोलते हैं। एक प्रश्न पर एक सदस्य तीन बार से अधिक नहीं बोल सकता है। किसी सदस्य को लिखा हुआ व्याख्यान पढ़ने की इजाज़त नहीं होती है। चर्चा शुरू हो जाने के बाद जिन सदस्यों को चर्चा में भाग लेना होता है वह सभा के अध्यक्ष के पास अपने नाम लिख कर भेजते जाते हैं और जिस क्रम में उस के पास नाम पहुँचते हैं, उसी क्रम में वह सदस्यों को बोलने का मौक़ा देता है। सदस्य फ्रेंच, जर्मन, या इटालियन भाषा में बोल सकते हैं। आम तौर पर स्विट्ज़रलैंड के पढ़े-लिखे लोग कम से कम इन में से दो भाषाएं ज़रूर जानते हैं। मगर किसी सदस्य की माँग पर सभा का अनुवादक व्याख्यान का सार इन में से किसी भाषा में समझा सकता है।

हर मसविदा पेश होने पर पहले केवल इस बात पर मत लिए जाते हैं कि उस विषय पर विचार किया जायगा या नहीं। विचार करने का निश्चय हो जाने पर फिर इस बात पर विचार किया जाता है कि उस मसविदे पर फ़ौरन ही विचार किया जायगा, कुल मसविदे पर इकट्ठा विचार किया जायगा, या उस के अलग-अलग भागों पर विचार किया जायगा। किसी प्रश्न पर विचार करने का निश्चय करने के बाद उस संबंध के प्रस्ताव को 'फ़ेडरल कौंसिल' के पास भेज दिया जाता है और 'फ़ेडरल कौंसिल' दूसरे मौजूदा क़ानूनों का लिहाज़ रखते हुए उस विषय पर उचित मसविदा बना देती है। इस प्रकार जो बातें जल्दी में सदस्यों की आँख से बच जाती हैं उन को सब प्रकार के क़ानूनों को अमल में लानेवाले अनुभवी और चतुर लोगों की यह कमेटी ठीक कर के व्यवस्थापक-सभा की इच्छानुसार क्रमबद्ध ढंग में रख देती है। सब प्रकार के काम-काज पर विचार करने के लिए सभाओं की कमेटियां भी

आवश्यकतानुसार बनाई जाती हैं। मगर किसी मसविदे को किसी कमेटी के विचार के लिए सभा की राय ही से भेजा जाता है। कमेटियों का चुनाव सभा के सदस्यों के खुले या गुप्त मतों से होता है अथवा अध्यक्ष और मंत्रियों का ब्युरो उन को नियुक्त कर देता है। 'स्टेंडराथ' की रेलें और सेना इत्यादि कुछ खास विषयों की स्थायी कमेटियां हर साल नई चुनी जाती जाती हैं। सभाओं की बैठकों का समय कम होता है और काम की भरमार अधिक होती है, इस लिए वक्त का बहुत ख्याल रख कर काम चलाना पड़ता है। दोनों सभाओं के काम-काज के नियम लगभग एक ही से होते हैं। उन में हर मामले की अच्छी तरह जाँच पड़ताल करने और उस पर अच्छी तरह बहस का मौक़ा देने का खास ख्याल रक्खा जाता है।

किसी मसविदे या प्रस्ताव पर होती हुई चर्चा को बंद करने के लिए सभा में हाजिर सदस्यों के दो-तिहाई मतों की ज़रूरत होती है। मगर जब तक कोई ऐसा सदस्य जिस ने चर्चा में भाग न लिया हो कोई संशोधन पेश करने और उस को समझाने की इच्छा ज़ाहिर करता है तब तक चर्चा बंद करने का प्रश्न नहीं उठाया जा सकता है। आम तौर पर सभाओं की बैठकें दर्शकों के लिए खुली होती हैं। मगर 'फ़ेडरल कौंसिल' अथवा दस सदस्यों के प्रस्ताव पर सभाओं की बैठकें बंद भी हो सकती हैं। व्यवस्थापक सभा की कार्रवाई के सब कागज़ात एक फेडरल चांसलर नाम का अधिकारी अर्थात् संघीय सरिश्तेदार या मुहाफ़िज दफ़्तर रखता है जिस को व्यवस्थापक-सभा 'फेडरल कौंसिल' के चुनाव के समय चुनती है। यह अधिकारी 'फ़ेडरल कौंसिल' अर्थात् मंत्रि-मंडल का सदस्य नहीं होता है। एक नायब सरिश्तेदार या मुहाफ़िज दफ़्तर की नियुक्ति भी फ़ेडरल कौंसिल करती है। मुहाफिज़ दफ़्तर के नेशनलराथ के काम-काज में मशगूल रहने पर स्टेंडराथ का काम सँभालने का भार नायब पर रहता है। मगर नायब की जिम्मेदारी दोनों सभाओं के काम के लिए होती है। व्यवस्थापक-सभा की जिन दिनों बैठकें नहीं होती हैं, उन दिनों चांसलर 'फेडरल कौंसिल' के मंत्री की तरह काम करता है; कौंसिल की बैठकों में आता है और कागज़ात और आदेश तैयार करता है। क़ानूनों के एलानों पर फ़ेडरल कौंसिल के मंत्री की हैसियत से चांसलर के दस्तखत भी रहते हैं।

कैंटनों की तरह संघ में भी लाचारी और इख्तियारी हवाले का प्रयोग होता है। संघीय राज-व्यवस्था के संशोधन के लिए लाचारी हवाले का प्रयोग होता है। इख्तियारी हवाला साधारण क़ानूनों के लिए काम में आता है। संघीय व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाएं अगर संघीय राज-व्यवस्था की बिल्कुल पुनर्घटना करने के लिए सहमत होती हैं, तो वे नई राज-व्यवस्था को गढ़ कर उसी तरह पास कर लेती हैं, जिस तरह वे किसी और साधारण क़ानून को बना कर पास करती हैं। नई राज-व्यवस्था के इस प्रकार व्यवस्थापक सभा से पास हो जाने के बाद आखिरी मंज़ूरी के लिए उस पर प्रजा के मत ज़रूर लिए जाते हैं। अगर दोनों सभाएं राज-व्यवस्था की पुनर्घटना के प्रश्न पर सहमत नहीं होती हैं या पचास हज़ार मतदारों की तरफ़ से पुनर्घटना की माँग आती है तो पहले इस प्रश्न पर प्रजा के मत लिए जाते हैं कि पुनर्घटना की ज़रूरत है या नहीं। अगर प्रजा पुनर्घटना के पक्ष में मत देती है तो व्यवस्थापक-सभा का नया चुनाव होता है, और नई चुनी हुई व्यवस्थापक-सभा

पुनर्घटना का काम हाथ में लेती है। राज-व्यवस्था के किसी अंग का संशोधन व्यवस्थापक-सभा उसी प्रकार कर सकती है जिस प्रकार वह साधारण क़ानून बनाने का काम करती है। मगर उस पर भी प्रजा का मत लिया जाता है। अथवा संशोधन के प्रस्ताव पर पचास हज़ार मतदारों की अर्ज़ी आने पर व्यवस्थापक-सभा विचार करती है, और अगर वह उस से सहमत होती है, तो उस पर प्रजा का मत लेती है। अगर प्रस्तावना का कोई निश्चित रूप न हो कर अर्ज़ी में महज़ आम बातें होती हैं, तो धारा-सभाएं ख़ुद प्रस्ताव का निश्चित रूप बना लेती है। अगर व्यवस्थापक-सभा संशोधन के प्रस्ताव के विरुद्ध होती है तो वह उस प्रस्ताव को अपनी नामंज़ूरी की सिफ़ारिश या उसी विषय पर उस की बजाय अपने दूसरे प्रस्ताव के साथ प्रजा के मतों के लिए भेज देती है। हर हालत में राज-व्यवस्था के हर प्रकार के संशोधन के लिए मत देनेवाले नागरिकों की बहुसंख्या के साथ-साथ कैंटनों की बहुसंख्या की भी मंज़ूरी की ज़रूरत होती है। सन् १८७४ ई० से सन् १६१७ ई० तक स्विट्ज़रलैंड की व्यवस्थापक-सभा ने अपनी राज-व्यवस्था में इक्कीस संशोधन किए थे, और पाँच संशोधनों को छोड़ कर और सब प्रजा और कैंटनों की बहुसंख्या से मंज़ूर हुए थे।

साधारण क़ानूनों पर इख़्तियारी हवाला लिया जाता है। ज़रूरी और व्यक्तिगत क़ानूनों को छोड़ कर और सब क़ानून और प्रस्ताव व्यवस्थापक-सभा में पास होने के बाद ६० दिन तक मुलतवी रक्खे जाते हैं, जिस से कि प्रजा को अगर वह चाहे तो हवाले की अर्ज़ी भेजने का मौक़ा रहता है। इस दर्मियान में अगर तीस हज़ार मतदारों के हस्ताक्षरों की एक अर्ज़ी में या आठ कैंटनों की धारासभाओं की ओर से किसी क़ानून के विषय में फ़ेडरल कौंसिल के पास हवाले की माँग पेश हो जाती है, तो फ़ेडरल कौंसिल को माँग का बाक़ायदा एलान होने के चार हफ़्ते के अंदर उस क़ानून पर प्रजा का मत लेना होता है। अगर सारे कैंटनों से मत डालनेवालों की संख्या की बहुसंख्या उस क़ानून के पक्ष में मत देती है तो फ़ेडरल कौंसिल उस क़ानून को अमल के लिए एलान कर देती है। अगर मत देनेवालों की बहुसंख्या उस के ख़िलाफ़ होती है तो वह क़ानून रद्द क़रार दे दिया जाता है। अगर हवाले की माँग नहीं की जाती है, तो ६० दिन का अर्सा ख़त्म होने पर आप से आप क़ानून अमल में आ जाता है। कैंटनों की तरह संघ में भी प्रजा अपने इस अधिकार का गाहे-बगाहे ही उपयोग करती है। सन् १८७४ ई० से सन् १६०८ ई० तक व्यवस्थापक-सभा से २६१ ऐसे प्रश्न मंज़ूर हुए थे जिन पर अख़्तियारी हवाला लिया जा सकता था। मगर सिर्फ़ तीस प्रश्नों पर हवाले की माँग हुई थी, और तीस में से सिर्फ़ उन्नीस को प्रजा ने नामंज़ूर किया था।

सन् १८४८ ई० की स्विट्ज़रलैंड की राज-व्यवस्था में यह योजना थी कि राज-व्यवस्था की बिल्कुल पुनर्घटना की प्रस्तावना पचास हज़ार मतदार कर सकते थे। राज-व्यवस्था में एक-दो कोई ख़ास संशोधन करने का अधिकार प्रजा को नहीं था। सन् १८६१ ई० से ख़ास संशोधनों की प्रस्तावना करने का अधिकार भी प्रजा को दे दिया गया था। अब पचास हज़ार मतदार, जब चाहें तब व्यवस्थापक-सभा को उस की मर्ज़ी हो या न हो, राज-व्यवस्था में प्रस्तावित संशोधनों पर प्रजा का मत लेने के लिए मजबूर कर सकते

है। व्यवस्थापक-सभा उन संशोधनों के विरुद्ध होने पर अधिक से अधिक उन को नामंज़ूर करने की प्रजा से सिफ़ारिश कर सकती है या उन संशोधनों के स्थान पर अपने संशोधन पेश कर सकती है। जब प्रस्तावना का अधिकार प्रजा को दिया गया था, तब कुछ लोगों का ख़्याल था कि प्रजा के हाथ में राज-व्यवस्था के संशोधन की सत्ता चले जाने से ऊटपटाँग संशोधन पेश होने लगेंगे और राज-व्यवस्था ख़तरे में पड़ जायगी। मगर यह डर व्यर्थ साबित हुआ है, क्योंकि तीस वर्ष के अंदर सिर्फ़ दस राज-व्यवस्था के संशोधन प्रजा की तरफ़ से आए और उन में से भी सिर्फ़ चार ही को प्रजा ने मंज़ूर किया। स्विट्ज़रलैंड में प्रजा के राज-काज में हिस्सा लेने के अनुभव से यह कहा जा सकता है कि साधारण लोग इतने ग़ैरज़िम्मेदार नहीं होते जितना कि आमतौर पर उन को समझा जाता है।

शुरू-शुरू में एक संशोधन ज़रूर ऐसा प्रजा ने पास कर दिया था, जिस को इस सत्ता का दुरुपयोग कह सकते हैं। यह सन् १८९३ ई० का एक राज व्यवस्था में संशोधन था जिस के अनुसार राज-व्यवस्था में यह शर्त रख दी गई थी कि 'स्विट्ज़रलैंड में पशुओं को बिना पहले बेहोश किए उन की, यहूदियों के ढंग से गला काट कर ख़ून बहा कर, हत्या नहीं की जा सकती है।' यह संशोधन पेश हुआ तो पशु-संकट-हरण सभा के आंदोलन के कारण था, मगर अधिकतर उस के पीछे यहूदियों के ख़िलाफ़ लोगों का आम बुग़्ज़ और व्यापारी जलन थी। अन्यथा क़स्साबख़ानों के नियम को राज-व्यवस्था में घुसने की कोई ज़रूरत नहीं थी। मगर इस संशोधन पर अमल करने के लिए क़ानून नहीं बनाए गए और अधिकतर कैंटनों में यह संशोधन मुर्दा ही रहा है। हवाला और प्रस्तावना दोनों ही स्विट्-ज़रलैंड की संघीय सरकार के अमल में उपयोगी साबित हुए हैं। अभी तक दोनों का उप-योग सिर्फ़ राज व्यवस्था की शर्तों का संशोधन करने के लिए ही होता है। सन् १९०६ ई० में 'फ़ेडरल कौंसिल' ने सारे क़ानून और प्रस्तावों की प्रस्तावना और हवाले का अधिकार पचास हज़ार मतदारों को दे देने की एक आयोजना रक्खी थी। मगर वह योजना व्यवस्था-पक-सभा में स्वीकार नहीं हुई थी। प्रस्तावना और हवाले का क्षेत्र बढ़ा देने की बातें बहुत दिनों से स्विट्ज़रलैंड के सुधार में चलती हैं, और मुमकिन है कि उस का क्षेत्र शीघ्र ही बढ़ा दिया जाय, क्योंकि उस में दिक़्क़त और ख़र्च इतना नहीं होता है जितना उस से फ़ायदा होता है।

(२) कार्यकारिणी

फ़ेडरल कौंसिल और प्रमुख—स्विट्ज़रलैंड की राज-व्यवस्था में राष्ट्र की कार्य-कारिणी सत्ता सात आदमियों की एक 'संघीय समिति'—फ़ेडरल कौंसिल—में रक्खी गई है। इस समिति के सदस्यों को हर नई नेशनलराथ के चुनाव के बाद व्यवस्थापक-सभा की दोनों शाखाओं के सदस्य एक सभा में इकट्ठे बैठ कर तीन वर्ष के लिए चुनते हैं। नेशनलराथ की उम्मीदवारी का अधिकारी हर एक स्विट्ज़रलैंड का नागरिक फ़ेडरल कौंसिल के लिए खड़ा हो सकता है। मगर एक कैंटन से दो सदस्यों का अथवा एक ही कुटुंब या नज़दीक

के रिश्तेदारों का एक साथ फ़ेडरल कौंसिल के लिए चुनाव नहीं किया जा सकता है। इंग्लैंड के मंत्रि-मंडल में आस्टिन चेंबरलेन और नेविल चेंबरलेन[1] एक ही खानदान के दो मनुष्य मंत्रि-पद पर बैठ कर खानदानी नीति की सफलता पर गर्व कर सकते हैं, परंतु स्विट्ज़रलैंड में ऐसा होना सर्वथा असभव है। फ़ेडरल कौंसिल का सदस्य चुन जाने पर कोई सदस्य दूसरे किसी संघीय या कैंटन पद पर रह या दूसरा कोई व्यापार और धंधा कर नहीं सकता है। यहां तक कि अगर वह व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों में से चुने जाते हैं—जैसा कि आम तौर पर होता है—तो उन को अपनी व्यवस्थापक-सभा की जगहों से इस्तीफ़ा दे देना होता है। उन को अठारह हज़ार फ़्रांक[2] सालाना का राष्ट्रीय खज़ाने से वेतन मिलता है। 'फ़ेडरल कौंसिल' का प्रमुख संघ का प्रमुख कहलाता है। उस को और उस के नायब को—जिस का खिताब फ़ेडरल कौंसिल का उपप्रमुख होता है—नेशनल ऐसेंबली हर साल फ़ेडरल कौंसिल के सात सदस्यों में से चुनती है। प्रमुख का एक काल खत्म हो जाने पर दूसरे चुनाव में वह फिर प्रमुख या उपप्रमुख भी नहीं बन सकता है। एक ही सदस्य लगातार दो बार उपप्रमुख भी नहीं बन सकता है। मगर एक साल के उपप्रमुख को दूसरे साल प्रमुख चुनने का रिवाज सा हो गया है।

स्विट्ज़रलैंड के मंत्रि-मंडल के सदस्यों की बराबरी इंग्लैंड या फ़्रांस की कैबिनेट के सदस्यों से न करके एक प्रकार से उन देशों के राष्ट्रीय विभागों के सेक्रेटरियों से ही करना अधिक उचित होगा, क्योंकि स्विट्ज़रलैंड के मंत्रि-मंडल के सदस्यों को विभागों की नीति तय करने से अधिक विभागों का कामकाज चलाने का काम ही अधिक करना होता है। राजनीतिक बातों में सूझ रखने के साथ-साथ उन्हें शासन की छोटी-छोटी बातों की भी सूझ रखनी होती है। उन का काम हलका करने के लिए उन को प्राइवेट सेक्रेटरी तक नहीं दिए जाते हैं। स्विट्ज़रलैंड के मंत्रि-मंडल के सदस्यों का कोई खास निवास-स्थान, पहरेदार या और कोई शान-शौकत भी नहीं होती है। वह अन्य साधारण नागरिकों की तरह रहते हैं। फिर भी लोग उन को बड़ी इज्जत की नजर से देखते हैं जिस से स्विट्ज़रलैंड में बड़े-बड़े महत्वाकांक्षियों को 'फ़ेडरल कौंसिल' का सदस्य बनने की इच्छा रहती है। फ़ेडरल कौंसिल का शासन हमेशा बहुत ऊँचे दर्जे का रहा है।

स्विट्ज़रलैंड की संघ के प्रमुख को फ़्रांस प्रजातंत्र या जर्मन प्रजातंत्र की तरह कोई खास कार्यकारिणी के अधिकार नहीं होते हैं। उस का काम सिर्फ़ 'फ़ेडरल कौंसिल' के अध्यक्ष स्थान पर बैठ कर कौंसिल की कार्रवाई चलाना, शासन की देख-रेख रखना और खास मौक़ों पर आवश्यकतानुसार देश के भीतर और देश के बाहर स्विट्ज़रलैंड प्रजातंत्र के प्रतिनिधि की हैसियत से कुछ कामों में भाग लेना होता है। संघीय सरकार के शासन का काम सहूलियत से चलाने के लिए प्रजातंत्र की राज-व्यवस्था के अनुसार सात विभागों

[1] सन् १९३२ ई० के राष्ट्रीय मंत्रि-मंडल में आस्टिन चेंबरलेन जलसेना सचिव और नेविल चेंबरलेन अर्थसचिव थे।

[2] स्विट्ज़रलैंड का सिक्का।

में बाँट दिया जाता है। एक 'राजनीतिक विभाग' होता है जिस में परराष्ट्र विषय और नागरिकता, संघीय चुनाव और प्रवास के क़ानून बनाने का काम भी आ जाता है। गृह-विभाग, न्याय और पुलिस-विभाग, सेना-विभाग, कर और अर्थ-विभाग, डाक और रेल-विभाग, व्यापार-विभाग, उद्योग-विभाग, और कृषि-विभाग छः दूसरे शासन-विभाग होते हैं। इन विभागों के प्रमुख 'फ़ेडरल कौंसिल' के सात सदस्यों में बाँट देता है। राज-व्यवस्था में साफ़-साफ़ लिखा है कि, "विभागों का बाँट सिर्फ़ शासन की सहूलियत के लिए किया जाता है और शासन के हर प्रश्न का फ़ैसला फ़ेडरल कौंसिल मिल कर करेगी।" आमतौर पर 'फ़ेडरल कौंसिल' के वही सदस्य, जब तक उन की काम करने की इच्छा रहती है, बार-बार चुन लिए जाते हैं। सरकार का काम बढ़ जाने से आज कल विभागों की देख-रेख रखनेवाले सदस्यों को पहले से कुछ अधिक निश्चय की स्वतंत्रता रहती है। कौंसिल का कोरम चार सदस्यों का होता है और कोई सदस्य बिना वजह बतलाए कौंसिल की किसी बैठक से ग़ैरहाज़िर नहीं हो सकता है। पदों पर अधिकारियों को नियुक्त करने के प्रश्नों को छोड़ कर और सब प्रश्नों पर फ़ेडरल कौंसिल में ज़बानी मत लिए जाते हैं। सभा की बैठकों की कार्रवाई का सार प्रजातंत्र के सरकारी गज़ट में बराबर छपता है।

स्विट्ज़रलैंड की फ़ेडरल कौंसिल देखने में इंग्लैंड या फ़्रांस के मंत्रि-मंडल की तरह लगती है, परंतु उस को वास्तव में उस तरह का मंत्रि-मंडल नहीं कह सकते हैं। स्विट्ज़रलैंड में मंत्रि-मंडल की सरकार नहीं होती है क्योंकि यद्यपि कौंसिल मसविदे तैयार कर के व्यवस्थापक-सभा के सामने रखती है, और कौंसिल के सदस्य व्यवस्थापक-सभा में जा कर बहस में भाग लेते हैं—फिर भी, वह व्यवस्थापक-सभा के न तो सदस्य होते हैं, न वे किसी एक दल के सदस्य या एक नीति या एक विश्वास के माननेवाले होते हैं; न उन सब का ज़रूरी तौर पर हर प्रश्न या मसविदे पर एक मत होता है; और न उन के मसविदे व्यवस्थापक-सभा में नामंज़ूर हो जाने पर वह अपने पदों से इस्तीफ़ा देते हैं। एक बार फ़ेडरल कौंसिल के एक पुराने सदस्य ने अपने मसविदे के प्रजा के नामंज़ूर कर देने पर इस्तीफ़ा दे दिया था तो स्विट्ज़रलैंड भर में इस बात पर बड़ा आश्चर्य प्रकट किया गया था। स्विट्ज़रलैंड की फ़ेडरल कौंसिल अमल में वहां की व्यवस्थापक सभा की एक कार्य-वाहक समिति होती है, फ़्रांस और इंगलैंड में कार्यकारिणी की सत्ता प्रमुख और राजछत्र को होती है, और मंत्रि-मंडल के सदस्यों को कार्यकारिणी का यह सिरताज नियुक्त करता है। मगर स्विट्ज़रलैंड की कार्यकारिणी समिति को वहां की व्यवस्थापक-सभा नियुक्त करती है और कार्यकारिणी का हर एक सदस्य अलग-अलग नियुक्त किया जाता है। मगर समिति के सदस्य अपने मत भेदों को समिति के अंदर ही तय करके हमेशा बाहर एक मत से काम करने की कोशिश करते हैं। अस्तु, फ़ेडरल कौंसिल की राय को सब वज़न देते हैं।

सिर्फ़ रोज़मर्रह का ज़ाब्ते का शासनकार्य ही 'फ़ेडरल कौंसिल' को करना होता है। दूसरे देशों के मंत्रि-मंडलों की तरह व्यवस्थापक-सभा को नाक पकड़ कर चलानेवाली यह समिति नहीं होती है। उस के सिर पर बैठनेवाली नेशनल ऐसेंबली उस के मामूली

शासन के कामों में भी हस्तक्षेप कर के उन को रद्द कर सकती है, और 'फ़ेडरल कौंसिल' कुछ नहीं कर सकती। सारी सत्ता ऐसेंबली में ही होती है; और फ़ेडरल कौंसिल और नेशनल ऐसेंबली में किसी विषय पर मतभेद होने पर जिस नीति का ऐसेंबली आदेश करती है, उसी पर कौंसिल चलती है। स्विट्ज़रलैंड में कार्यकारिणी और धारासभा में संबंध तो उतना ही निकट का रहता है जितना कि मंत्रिमंडल की सरकार के देशों में रहता है। मगर स्विट्ज़रलैंड के इस संबंध और उन देशों के ऐसे ही संबंध में बहुत अंतर होता है। फ़ेडरल कौंसिल को कार्यकारिणी, क़ानून बनाने और न्याय-शासन तीनों प्रकार के काम करने होते हैं। कार्य-कारिणी की हैसियत से उस को व्यवस्थापक-सभा के पास किए हुए सारे क़ानूनों और प्रस्तावों तथा संघीय अदालत के सारे फ़ैसलों को अमल में लाना होता है। उस को देश के बाहरी हितों पर नजर रखना और दूसरे राष्ट्रों से संबंध ठीक रखना होता है। देश की भीतरी बाहरी रक्षा का प्रबंध रखना, कुछ ऐसे अधिकारियों को नियुक्त करना जिन की नियुक्ति का अधिकार किसी और को नहीं होता है, राष्ट्र का आय-व्यय तय करना, बजट तैयार करना और हिसाब-किताब ठीक रखना, सारे संघीय अधिकारियों के काम की निगरानी रखना, संघीय राज-व्यवस्था और कैंटनों की राज व्यवस्थाओं को अमल में क़ायम रखना, और संघीय सेना की व्यवस्था और प्रबंध करना इत्यादि फ़ेडरल कौंसिल के शासन कार्य में आता है। क़ानूनी क्षेत्र में कौंसिल का काम ऐसेंबली में नए-नए प्रस्ताव और मसविदे रखना, कैंटनों और व्यवस्थापक-सभा की ओर से राय के लिए भेजे हुए मसविदों पर अपनी राय ज़ाहिर करना इत्यादि होता है। व्यवस्थापक-सभा की हर बैठक में फ़ेडरल कौंसिल को अपने शासन और देश की भीतरी और बाहरी स्थिति की एक रिपोर्ट भी दाखिल करनी होती है। शासन-संबंधी जो मुक़दमे संघीय अदालत के सामने नहीं दायर किए जा सकते हैं, उन को फ़ेडरल कौंसिल खुद सुनती है, और उन की अपील नेशनल ऐसेंबली के पास जाती है। सन १९१४ ई० में स्विट्ज़रलैंड की राज व्यवस्था में एक संशोधन किया गया जिस के अनुसार शासन-संबंधी मुक़दमों पर विचार करने के लिए शासकी अदालत क़ायम करने की योजना की गई।

(३) न्यायशासन

स्विट्ज़रलैंड की अन्य अनूठी बातों की तरह यहां का न्यायशासन भी एक तरह से अनूठा है। स्विट्ज़रलैंड में न्यायाधीशों को भी प्रजा के प्रतिनिधि चुनते हैं। न्याय-विभाग का संगठन तो बहुत सरल और सीधा है मगर उस का काम बड़ा कठिन और टेढ़ा है। स्विट्ज़रलैंड में सिर्फ़ एक ही राष्ट्रीय या 'संघीय अदालत' है। यह राष्ट्रीय अदालत सन् १८४८ ई में क़ायम हुई थी। इस अदालत में आजकल चौबीस न्यायाधीश और नौ एवज़ी न्यायाधीश होते हैं जिन का चुनाव छः साल के लिए संघीय व्यवस्थापक-सभा करती है। नेशनलराथ की उम्मीदवारी के लिए खड़ा हो सकनेवाला कोई भी नागरिक

राष्ट्रीय अदालत का न्यायाधीश चुना जा सकता है। मगर व्यवस्थापक-सभा को इस बात का ख़याल रखने का फ़र्ज़ माना गया है कि न्यायाधीशों में जर्मन, फ्रेंच, और इटेलियन तीनों भाषाओं के जाननेवालों की काफ़ी संख्या रहनी चाहिए। अदालत के प्रधान और उपप्रधान को भी दो वर्ष के लिए व्यवस्थापक-सभा ही नियुक्त करती है। मगर अदालत अपने दूसरे अधिकारियों को ख़ुद नियुक्त करती है। इस अदालत के न्यायाधीश व्यवस्थापक सभा के सदस्य नहीं हो सकते हैं; न वह कोई और पद ले या कोई और धंधा कर सकते हैं। उन को पंद्रह हज़ार फ्रांक सालाना का वेतन मिलता है।

राष्ट्रीय अदालत लूज़ान नगर के एक सुंदर भवन में बैठती है। दीवानी और फौजदारी के मुक़दमे, संघ और कैंटनों के बीच के मुक़दमे, किसी संस्था या व्यक्ति के मुद्दई होने पर और तीन हज़ार फ्रांक से अधिक का मुक़दमा होने पर उस संस्था या व्यक्ति और संघ के बीच के मुक़दमे, कैंटनों के एक-दूसरे से मुक़दमे, और तीन हज़ार फ्रांक से अधिक के मुक़दमे होने पर मुद्दई और मुद्दालय की मर्ज़ी से कैंटनों और किसी दूसरी संस्था या व्यक्ति के बीच के मुक़दमे, राष्ट्रीय अदालत की अधिकार सीमा में आते हैं। राज-व्यवस्था में, क़ानून बना कर, राष्ट्रीय अदालत की अधिकार सीमा को बढ़ाने का अधिकार संघ को दिया गया है। उस के अनुसार क़र्ज़ा और दिवाला इत्यादि दीवानी के मामलों में उस की अधिकार-सीमा का कई बार विस्तार भी किया गया है। कैंटनों की अदालतों से दोनों पक्षों की मर्ज़ी से आई हुई अपीलें भी यह अदालत सुनती है। दीवानी के मुक़दमों का फ़ैसला करने के लिए राष्ट्रीय अदालत अपने न्यायाधीशों में से आठ-आठ न्यायाधीशों की दो छोटी-छोटी अदालतें बना देती है। एक का अध्यक्ष राष्ट्रीय अदालत का प्रधान होता है और दूसरी का अध्यक्ष उपप्रधान होता है। राष्ट्रीय अदालत के तीन न्यायाधीशों की एक अदालत बन कर क़र्ज़े और दिवाले के मुक़दमों को सुनती है। फ़ौजदारी के संबंध में इस अदालत की अधिकार-सीमा इतनी विस्तृत नहीं है। प्रजातंत्र के प्रति राजद्रोह, अंतर्राष्ट्रीय क़ानून के ख़िलाफ़ अपराध, इस प्रकार के राजनीतिक अपराध जिन में संघ की सेना को हस्तक्षेप करने की ज़रूरत पड़े और संघीय सरकार के अधिकारियों के ख़िलाफ़ सरकार के अदालत से प्रार्थना करने पर मुक़दमे राष्ट्रीय अदालत के सामने पेश होते हैं। इन मुक़दमों में वाक़यात का फ़ैसला करने के लिए अदालत को बारह आदमियों की एक जूरी भी चुन लेनी होती है। दूसरी तरह के फ़ौजदारी के मुक़दमों को भी कैंटनों की सरकारें संघीय व्यवस्थापक-सभा की राय से संघीय अदालत के पास भेज सकती हैं। फ़ौजदारी के मुक़दमे सुनने के लिए संघीय अदालत के न्यायाधीशों में पाँच-पाँच या अधिक न्यायाधीशों और दो-दो एवज़ी न्यायाधीशों की हर साल चार अदालतें बना दी जाती हैं। स्विट्ज़रलैंड को फ़ौजदारी के मुक़दमों के न्याय के लिए चार हल्क़ों में बाँट दिया गया है। हर हल्के में इन चार में से एक अदालत उस हल्के के मुक़दमे सुनने के लिए बैठती है। संघ और कैंटनों की अधिकार-सीमा के झगड़े, कैंटनों के आपस के अधिकार-सीमा के झगड़े, नागरिकों के राज-व्यवस्था में दिए हुए अधिकारों को उल्लंघन करने की शिकायतें, कैंटनों की आपस की संधियों के तोड़ने के संबंध में व्यक्तियों

की शिकायतें 'संघीय अदालत' सार्वजनिक क़ानून-संबंधी अपनी अधिकार सीमा के अंदर सुनती है। राष्ट्रीय अदालत को कैंटन के किसी क़ानून को, स्विट्ज़रलैंड की राज-व्यवस्था के ख़िलाफ़ क़रार देने का हक़ है। मगर किसी संघीय क़ानून को वह राज-व्यवस्था के ख़िलाफ़ नहीं ठहरा सकती है। संघीय अदालत को अपने फ़ैसलों पर अमल के लिए कैंटन की सरकारों पर निर्भर रहना होता है। संघीय सरकार का देश भर के लिए एक ज़ाब्ता फ़ौजदारी और एक ज़ाब्ता दीवानी है।

(४) सेना-संगठन

अनूठी राजनीतिक संस्थाओं की खान स्विट्ज़रलैंड की सेना का संगठन भी अनूठा है। हमेशा से यूरोप के इतिहास में स्विट्ज़रलैंड के सैनिक मशहूर रहे हैं। अपने देश की सेना और विदेशों की सेवा दोनों में स्विट्ज़रलैंड के सैनिकों ने यूरोप के रणक्षेत्रों में प्रख्यात सेनाओं को पददलित करके यूरोप को युद्ध-विद्या में पाठ दिए हैं। मगर स्विट्ज़रलैंड के अंदर हमेशा से सेना-संगठन राष्ट्रीय सरकार के हाथ में न रह कर कैंटनों की सरकारों के हाथ में रहता था। हर कैंटन की सेना और पताका अलग-अलग होती थी और दस्तों में आमतौर पर रिश्तेदार और पड़ोसी होते थे। हर सेना के अपने-अपने अलग नियम होते थे और किसी सैनिक के बुज़दिली दिखाने, सेना में भागने या और कोई नियम तोड़ने पर उस के गाँववाले ही उस का फ़ैसला करते थे और अपराधी साबित होने पर उस को फाँसी पर चढ़ा देते थे और उस का माल-असबाब ज़ब्त कर लेते थे। हमेशा से कैंटन सेना को संघीय सरकार के हवाले करना नापसंद करते थे क्योंकि संघीय सरकार के हाथ में सेना की ताक़त चली जाने से उन को अपनी स्थानिक स्वाधीनता के खटाई में पड़ जाने का भय रहता था। कई बार सेना को संघीय सरकार के प्रबंध में दे देने के प्रस्ताव हुए और हर बार उन को प्रजा ने नामंज़ूर कर दिया।

हमेशा से स्विट्ज़रलैंड में स्थायी सेना नहीं रही है। नेपोलियन के अधिकार के कुछ काल के लिए अवश्य स्विट्ज़रलैंड को स्थायी सेना रखने के लिए मजबूर कर दिया गया था। अभी तक किसी कैंटन को, सरकार की ख़ास इजाज़त के सिवाय, तीन सौ से अधिक सेना रखने का अधिकार नहीं है। मगर स्विट्ज़रलैंड के हर नागरिक को सैनिक शिक्षा लेनी होती है और देश को जरूरत होने पर हर नागरिक को लड़ाई में क़ानूनन जाना पड़ता है। संघीय सरकार नागरिकों की सेना में सेवा के नियम और सेना-शिक्षा, क़वायद, वर्दी, हथियार और दस्तों के बनाने के नियम बनाती है। युद्ध-काल में देश-भर की सारी सेना पर राष्ट्रीय सरकार का क़ब्ज़ा और अधिकार हो जाता है। कैंटनों की सरकारें आमतौर पर सेनाओं को बनाने, मेजर के पद तक के अधिकारियों को नियुक्त करने और तरक़्क़ी देने और अपनी सेनाओं को, संघीय सरकार के नियमों के अनुसार, वर्दी और हथियार देने का काम करती हैं। संघीय सरकार के क़ानून के अनुसार कैंटन की सरकारें प्रजा से सेना-कर भी उगाती हैं। कारतूस, हथियार, तोप बनाने के कारख़ाने और बारूद बनाने का इजारा संघीय-सरकार के हाथ में रहता है।

देश भर के सारे नागरिकों को सैनिक शिक्षा ले लेने के बाद राष्ट्रीय-सेना के तीन भागों में उम्र के अनुसार बाँट दिया जाता है। बीस और बत्तीस वर्ष के बीच के सारे नागरिक राष्ट्र की लड़नेवाली सेना के सदस्य होते हैं। उस के बाद तैंतीस और चवालीस वर्ष की उम्र के बीच के लोगों की 'प्रथम सहायक-सेना' होती है। इन्हें छोड़ कर सत्रह और पचास वर्ष के बीच के सारे नागरिकों की 'दूसरी सहायक-सेना होती है, जिस को बिल्कुल भयंकर आपत्ति के काल मे लड़ाई के लिए बुलाया जाता है। हर नागरिक सैनिक अपने हथियार और वर्दी इत्यादि सारा सामान अपने घर में रखता है। मगर उस को हथियार और वर्दी हमेशा साफ़-सुथरे और लैस रखने पड़ते हैं। हर हफ़्ते काफ़ी निशाने लगा कर उसे अपनी निशानेबाज़ी भी ठीक रखनी होती है; वर्ना उस पर जुर्माना हो सकता है। स्विट्ज़र-लैंड के हर गाँव के बाहर निशानेबाज़ी के मैदान होते हैं, जहां हर रविवार को नागरिक सैनिक निशानेबाज़ी करते नज़र आते हैं। निशानेबाज़ी के दंगल भी होते हैं, जिन में सरकार की तरफ़ से इनाम बाँट कर निशानेबाजी की कला को उत्तेजना दी जाती है। दस वर्ष से पद्रह वर्ष की उम्र तक हर लड़के को, चाहे वह किसी स्कूल में पढ़ता हो या न पढ़ता हो, सैनिक क़वायद की शिक्षा लेनी होती है। बाद में हर सैनिक-शिक्षाप्राप्त नागरिक का पता और ठिकाना सरकारी दफ्तर में हमेशा रहता है, जिस से ज़रूरत पड़ने पर उस को फ़ौरन् बुलाया जा सके। अस्तु, स्विट्ज़रलैंड के सारे नागरिको की एक सेना ही समझना चाहिए। तीन से पाँच लाख तक आदमी स्विट्ज़रलैंड में इस प्रकार हमेशा लड़ाई के मैदान में उतर आने को तैयार रहते हैं। यह यूरोप के दूसरे राष्ट्रों के मुक़ाबले में कोई बड़ी सेना नहीं है, मगर इस छोटे से राष्ट्र के लिहाज़ से काफी बड़ी सेना है। स्विट्ज़रलैंड के इस सेना-संगठन के ढंग से देश को नौजवानों की जवानी स्थायी-सेना की बेकार और असृजक सेवा में नहीं गँवानी पड़ती है, और राष्ट्रीय खजाने का रुपया भी इस असृजक काम में नष्ट नहीं होता है। सेना-सेवा में बेकार हो जानेवालों को उन की और उन के बाल-बच्चों की गुज़र के लिए सरकार पेंशन ज़रूर देती है। मगर यह स्वाभाविक है और इस में अधिक रुपया नहीं खर्च होता है। यूरोप के कई नए राष्ट्रों ने भी स्विट्ज़रलैंड के सेना-संगठन का यह तरीक़ा अख्तियार किया है।

४—राजनैतिक-दल और सरकार

उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में स्विट्ज़रलैंड की प्रजा के सामने सब से ज़रूरी दो प्रश्न थे। एक तो कैंटनों की सरकार को प्रजा-सत्तात्मक बनाने का प्रश्न था। दूसरा उन सरकारों को मिला कर एक मज़बूत संघीय सरकार बनाने का प्रश्न था। इन दोनों बातों के पक्षपाती लोगों का दल स्विट्ज़रलैंड में 'उदारदल' कहलाता था। सन् १८४८ ई० में नए स्विट्ज़रलैंड की इन्हीं लोगों ने रचना की थी और इसी दल का उन नई राजनैतिक संस्थाओं पर अधिकार हो गया था। 'उदारदल' का स्विट्ज़रलैंड की राजनैतिक संस्थाओं पर बहुत दिन तक अधिकार रहा। अनुदार राजनैतिक विचारों के कैथोलिक-पंथी लोग एक मजबूत संघीय सरकार को नापसंद करते थे। वे इस दल के विरोधी थे। इन लोगों के दल

को 'कैथोलिक अनुदारदल' कहते थे। अस्तु, सन् १८४८ ई० के बाद कुछ वर्षों तक स्विट्ज़रलैंड में यही दो राजनैतिक दल थे और इस काल के मुख्य राजनैतिक प्रश्न कैंटन की सरकारों के अधिकारों से संबंध रखते थे।

शुरू के कुछ दिन बाद ही 'उदार-दल' में नरम और गरम प्रकृतियां दीखने लगी थीं। नई-नई सामाजिक और आर्थिक समस्याएं जैसे-जैसे सामने आने लगीं, वैसे-वैसे नरम और गरम प्रकृतियों के लोग अलग-अलग होते गए। अंत में गरम विचार के लोगों ने 'उदार-दल' से बिल्कुल अलग हो कर सन् १८७० ई० में एक नया 'गरम दल' बना लिया। इस नए 'गरम दल' ने ही सन् १८७४ ई० में स्विट्ज़रलैंड की राज-व्यवस्था में संशोधन कर के, पुराने 'उदार-दल' के बहुत विरोध करने पर भी, संघीय-शासन में 'अख्तियारी हवाले' की शर्त जोड़ दी थी। इस सफलता के बाद 'गरम दल' का तूती बोलने लगा और बाद में एक नए 'समाजवादी दल' के बन जाने के बाद भी यही दल सब से ज़ोरदार रहा। 'अनुदार-दल में किसी प्रकार का मतभेद न पड़ने से वह जैसा का तैसा क़ायम रहा।

आजकल स्विट्ज़रलंड में चार मुख्य राजनैतिक दल हैं। 'कैथोलिक अनुदार दल', 'उदार प्रजासत्तात्मक दल' या 'उदार दल', 'स्वतंत्रप्रजासत्तात्मक' या 'गरम दल', और 'समाजी प्रजासत्तात्मक' या 'समाजवादी दल',। कैथोलिक दल खास तौर पर कैथोलिक सम्प्रदाय के हितों की चिंता रखता है। कैथोलिक सम्प्रदाय के मजदूरों की संस्थाओं के ज़ोर देने पर अब यह दल मज़दूरों की समस्याओं की तरफ भी ध्यान देने लगा है। इस दल के लोगों में आपस में और सब दलों से कम मतभेद रखता है और इस दल का संगठन दूसरे सब दलों से सुसंगठित और सुदृढ़ है। जिन कैंटनों में कैथोलिक लोगों की अधिक आबादी हैं उन में तो इस दल का अखंड राज्य है ही, दूसरे बहुत से कैंटनों में भी इस का काफी ज़ोर है। 'उदार दल' में अधिकतर व्यापारी और दूसरे उदार विचारों के धनी और मानी लोग होते हैं। यह लोग अपने उदार विचारों पर गर्व करते हैं। मगर उन की बातें आजकल बहुत कम लोग सुनते हैं। उदार दल का स्वीट्ज़रलैंड में भी वही हाल है जो आजकल उदार दल का इग्लेंड में है या जो उसी नाम के दल का भारतवर्ष में हाल है।

'गरम दल' सरकारी केंद्रीकरण और प्रजा-राज का पक्षपाती और राजनीति में साम्प्रदायिकता का विरोधी है। इस दल में किसानों से ले कर धनवानों तक सब प्रकार के लोग हैं। इस दल के सदस्यों की संख्या सब दलों से अधिक है और वह सारे देश में फैले हुए हैं। 'समाजवादी दल' का ज़ोर उन नगरों में अधिक है जो उद्योग-धंधों के केंद्र हैं—जैसे कि ज्यूरिच और बर्न। यह लोग अपने दूसरे देशों के बंधुओं के पीछे चलने का प्रयत्न करते हैं और उन के, ख़ासकर जर्मनी के, असर में रहते हैं। मगर स्विट्ज़रलैंड में अमेरिका या इंगलैंड की तरह ग़रीबों की ग़रीबी और अमीरों की अमीरी में इतना ज़मीन-आसमान का फ़र्क़ नहीं होता है जिस से ईर्षा और कलह को अधिक मैदान मिल सके। छोटे-छोटे ज़मींदारों और पूँजीवालों की ही संख्या वहां अधिक है और आमतौर पर लोग खाते-पीते होते हैं। अस्तु 'समाजवादी दल' का ज़ोर वहां इतना नहीं बढ़ा है जितना कि

अड़ोस-पड़ोस के देशों में बढ़ गया है।

सन् १८७४ ई० के बाद बहुत वर्षों तक किसी भी दल की स्विट्ज़रलैंड की व्यवस्थापक-सभा में बहुसंख्या नहीं रहती थी। मगर 'गरम दल' के सदस्यों की सब से अधिक संख्या रहने से गरम दल ही की बात अधिक चलती थी। फिर भी स्टेंडराथ में आज तक गरम दल को बहुसंख्या कभी नहीं होने पाई है, क्योंकि बहुत से कैथोलिक आबादी के कैंटन सिर्फ़ कैथोलिक दल के सदस्यों को ही चुनते हैं। परंतु आजकल भी नेशनल राथ में गरम दल की ही आमतौर पर अधिक संख्या रहती है। सन १९१७ ई० के चुनाव के पहले नेशनल राथ के कुल १८९ सदस्यों में से १०८ सदस्य गरम दल के थे और स्टेंड राथ के ४४ सदस्यों में से २१ गरम दल के थे। 'कैथोलिक अनुदार दल' 'उदार दल' और 'समाजवादी दल' के नेशनल राथ में ३९, १२ और १८ सदस्य तथा स्टेंडराथ में १६, १ और १ सदस्य थे। सन् १९१९ ई० में अनुपात-निर्वाचन की पद्धति से चुनाव होने पर 'गरम दल' के नेशनल राथ में ६३ सदस्य रह गए थे और 'कैथोलिक अनुदार दल' के ४१; 'उदार दल' के सिर्फ़ ९ सदस्य और 'समाजवादी दल' के ४१ सदस्य थे। सब से अधिक सदस्य फिर भी 'गरम दल' ही के थे।

सन् १९१९ ई० के चुनाव में गरम दल के एक भाग ने अलग हो कर 'किसान, मज़दूर और मध्यमवर्ग दल' नाम का एक नया दल बना लिया था जो सरकार का पक्षपाती दल था मगर 'गरम दल' से अधिक अनुदार और कृषि-सुधार का कट्टर पक्षपाती था। इस दल का कार्य-क्रम कृषि और उद्योग के हित के लिए खास क़ानून बनाना और देश की रक्षा का मज़बूत प्रबंध करना है। इसी चुनाव के बाद से समाजवादी दल को भी असफलता मिलना प्रारंभ हुई। 'समाजवादी दल' प्रत्यक्ष करों, स्वतंत्र व्यापार और स्त्रियों के मताधिकार का पक्षपाती है। गरम दल के कुछ कट्टर समाजवादियों ने उस दल से अलग हो कर एक 'समाजवादी राजनैतिक दल' नाम का दल भी बना लिया है। यह दल केंद्रीकरण, समाजशाही और सरकार के द्वारा आर्थिक जीवन के संचालन का पक्षपाती है। एक कम्यूनिस्ट दल अर्थात् 'समष्टिवादी दल' भी उठ खड़ा हुआ है। सन् १९२५ ई० के चुनाव के बाद विभिन्न दलों के सदस्यों की नेशनल ऐसेंबली में निम्नलिखित संख्या थी:—

	स्टेंड राथ	नेशनल राथ
दल	प्रतिनिधि संख्या	प्रतिनिधि संख्या
गरम दल	२१	५९
कैथोलिक अनुदार दल	१८	४२
समाजवादी दल	२	४९
किसान, मज़दूर और मध्यमवर्ग दल	१	२०
उदार दल	१	७

दल	प्रतिनिधि-संख्या	प्रतिनिधि संख्या
समाजवादी राजनैतिक दल	१	५
कम्यूनिस्ट दल	०	२
अन्य छोटे मोटे समूह	०	३
कुल	४४	१६८

स्विट्ज़रलैंड के सारे दलों का संगठन लगभग एक-सा ही होता है। वहां के राजनैतिक दल छोटे-छोटे स्वाधीन समूहों की संघों की तरह होते हैं। स्थानिक समूहों के प्रतिनिधियों की कम से कम साल भर में एक सभा होती है। बड़े दलों की सभाओं में तीन-चार सौ तक प्रतिनिधि आ जाते हैं। यह सभा दल के अधिकारियों की रिपोर्ट सुनती है, दल के प्रतिनिधियों की व्यवस्थापक-सभा में कार्रवाई की जाँच करती है, और विभिन्न विषयों पर ख़ूब बहस कर-कराकर अपने प्रतिनिधियों की आगाही के लिए प्रस्ताव पास करती है। इस सभा को दल के संबंध में सब अधिकार होते हैं। मगर चुनावों के लिए दल के उम्मीदवारों को सभा नहीं चुनती है। मुख्तलिफ़ स्थानों पर दलों की जो टोलियां रहती हैं, वही अपने-अपने उम्मीदार चुनती हैं। साल भर का काम चलाने के लिए सभा या कैंटनों की संस्थाओं की तरफ़ से तीस या पैंतीस आदमियों की एक केंद्रीय कमेटी चुन ली जाती है। इस कमेटी का एक अध्यक्ष, एक मंत्री और एक कोषाध्यक्ष होते हैं। कमेटी का आम काम चलाने के लिए एक छोटी उप-समिति भी होती है जो अक्सर मिलती रहती है।

कहा जाता है कि स्विट्ज़रलैंड की राजनीति की अनुकूलता और दृढ़ता का कारण यह है कि वहां शुरू से एक दल का ही बोलबाला रहा है। स्विट्ज़रलैंड में जाति भेद, धर्म-भेद, भाषा-भेद और अन्य आर्थिक हितों के भेदों के कारण बहुत-से राजनैतिक दलों के बनने के लिए जितना मसाला है, उतना यूरोप के और किसी देश में नहीं मिलता। मगर आश्चर्य की बात है कि स्विट्ज़रलैंड में राजनीति की नाव जिस शांति से खेई जाती है, उतनी यूरोप के और किसी देश में नहीं चलती है। यूरोप के अन्य देशों में एक दल के नेता की चुनाव में हार हो जाने पर दूसरे दल में ख़ुशियां मनाई जाती हैं। मगर स्विट्ज़रलैंड में सब दलों को ख़्याल रहता है कि किसी भी दल के मुख्य नेता की हार न हो जाय। पिछली यूरोप की लड़ाई में कुछ क्षण के लिए फ्रांसीसी भाषा-भाषी नागरिकों ने फ्रांस के प्रति और जर्मन भाषा-भाषियों ने जर्मनी के प्रति सहानुभूति दिखाई थी। मगर फ़ौरन् ही फिर सब नागरिक अपनी परराष्ट्रनीति में पुरानी निष्पक्ष नीति का अवलम्बन करने लगे थे। परराष्ट्रनीति पर स्विट्ज़रलैंड में कभी दलबंदी सुनने में नहीं आती है, क्योंकि स्विट्ज़रलैंड का न तो कोई साम्राज्य है और न कोई उपनिवेश। उस की नीति अपने अड़ोस-पड़ोस के सब राष्ट्रों से मिल-जुल कर रहने की है। दूसरे देशों के जिन राजनीतिज्ञों पर उन के देशों में अत्याचार होता है, उन को भाग कर स्विट्ज़रलैंड में सुरक्षित रहने का बहुत दिनों से अधिकार और रिवाज चला आता है। मगर इस

प्रकार के भागे हुए लोगों में से कोई स्विट्ज़रलैंड में बैठ कर अन्य राष्ट्रों के खिलाफ़ षड्यंत्र न रच सकें, इस बात तक का स्विट्ज़रलैंड की सरकार बड़ा ख्याल रखती है। स्विट्ज़रलैंड में सारी राजनैतिक दलबंदी घरेलू प्रश्नों पर ही होती है। मगर उस में भी इतनी कड़वाहट और रार देखने में नहीं आती है, जितनी यूरोप के और देशों में। इस का मुख्य कारण शायद यह कहा जा सकता है कि स्विट्ज़रलैंड में राजनीति से किसी को किसी प्रकार के ज़ाती फ़ायदे का ख्याल नहीं रहता है।

इंग्लैंड या अमेरिका की तरह स्विट्ज़रलैंड के राजनैतिक दलों के पास चुनाव की लड़ाइयां लड़ने के लिए बड़े-बड़े कोष भी नहीं रहते हैं। वहां चुनावों में उम्मीदवारों को बहुत रुपया खर्च नहीं करना पड़ता है। सन् १९१८ ई० से पहले इंग्लैंड में क़ानून के अनुसार एक उम्मीदवार को चुनाव में जितना रुपया खर्च करने का अधिकार था, उतने रुपए में स्विट्ज़रलैंड की नेशनलराथ के सारे सदस्यों का चुनाव हो जाता है। निर्वाचनक्षेत्रों की सार्वजनिक संस्थाओं को चुनाव से कुछ पहले से दान इत्यादि दे कर, या इसी प्रकार किसी और ढंग से, उन क्षेत्रों को चुनाव के लिए उम्मीदवारों द्वारा तैयार किए जाने का रिवाज भी स्विट्ज़रलैंड में कहीं दिखाई नहीं देता है। न स्विट्ज़रलैंड में व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों को अपने निर्वाचनक्षेत्र के लोगों की उस प्रकार लगातार सेवा और सहायता करनी पड़ती है जैसी कि फ्रांस में डिपुटियों को करनी पड़ती है। मंत्रियों के लिए मत दे कर चुनावों में अपनी सहायता करनेवालों के लिए कोई सदस्य किसी प्रकार का खिताब या तमगे भी नहीं प्राप्त कर सकता है, क्योंकि स्विट्ज़रलैंड में सार्वजनिक सेवा के लिए प्रजा के हृदय में मान के सिवाय और कोई तमग़ा या खिताब मिलने की प्रथा ही नहीं है। स्विट्ज़रलैंड में सदस्यों को अपना समय देने के सिवाय राजनीति में भाग लेने के लिए और कुछ खर्च नहीं करना पड़ता है। आमतौर पर निर्वाचनक्षेत्र में रहनेवाले या वहां के किसी कुटुंब के रिश्तेदार ही को वहां से दल का उम्मीदवार चुना जाता है। बाहर के आदमी को उम्मीदवार नहीं चुना जाता है। स्विट्ज़रलैंड में दूसरे देशों से मतदार अधिक स्वाधीन होने से सारे राजनैतिक दल अच्छे और योग्य आदमियों ही को उम्मीदवार बनाते हैं। राजनैतिक मतभेद का विचार न करके मतदार उसी उम्मीदवार को अपना मत देना अधिक पसंद करते हैं जिस को वह जानते हैं, और जिस की योग्यता और कर्तव्य-बुद्धि में उन्हें विश्वास होता है। अक्सर मुख्य राजनैतिक दलों के नेता मिल कर दलों के सदस्यों की संख्या के अनुसार सब दलों से अच्छे अच्छे उम्मीदवार ले लेते हैं और इस प्रकार आपस में फ़ैसला कर लेने से बहुत से निर्वाचनक्षेत्रों में चुनाव की नौबत तक नहीं आती है। इस ढंग से बहुत-से ऐसे योग्य और सुचरित्र लोगों की सेवा का लाभ भी देश को मिल जाता है जिन का दलबंदी के झगड़े में चुनाव होना अशक्य होता है। किसी-किसी चुनाव में तो नेशनल राथ के आधे से अधिक सदस्य बिना चुनाव के झगड़े के चुन लिए जाते हैं। इसी प्रकार 'फ़ेडरल कौंसिल' के सदस्य और दूसरे मुख्य अधिकारी भी सारे मुख्य दलों के योग्य और अच्छे आदमियों में से चुन लिए जाते हैं। सन् १९२७ ई० की ही 'फ़ेडरल कौंसिल' को ले लीजिए। उस में 'गरम दल' और 'कैथोलिक अनुदार दल' दो दलों के सदस्य थे।

प्रमुख और चांसलर गरम दल के थे। स्टेंड राथ का अध्यक्ष कैथोलिक अनुदार दल का था और नेशनल राथ का अध्यक्ष 'किसान, मज़दूर और मध्यमवर्ग दल' का था।

स्विट्ज़रलैंड में दलबंदी का बहुत ज़ोर न होने के बहुत-से कारण हैं। एक तो क़रीब पचास वर्ष से वहां कोई राजनीति का ऐसा नुकीला प्रश्न नहीं उठा है—जैसा कि फ्रांस में 'राजाशाही या प्रजाशाही' का प्रश्न था—जिस पर प्रजा में घोर मतभेद होने के कारण लड़ाके राजनैतिक दल बनते। दूसरे प्रजासत्ता का स्विट्ज़रलैंड में अखंड राज्य जम चुका है और परराष्ट्रनीति या उपनिवेशनीति का वहां कोई कठिन प्रश्न नहीं है। तीसरे आम लोग खाते-पीते होने से और लोगों के आर्थिक जीवन में काफी समता होने से आर्थिक हित-संघर्ष नहीं बढ़ा है और सामाजिक कलह ने वह भयंकर रूप नहीं धारण कर लिया है, जो अड़ोस-पड़ोस के देशों में दीखता है। स्विट्ज़रलैंड में 'समाजवादी दल' में लोग ईर्ष्या चिढ़, घृणा या भूख के कारण शामिल न हो कर अधिकतर विचारों और विश्वासों के कारण ही शामिल होते हैं और इसी लिए वहां के राजनैतिक जीवन में कड़वाहट पैदा नहीं होती। स्विट्ज़रलैंड में धार्मिक और सांप्रदायिक मतभेद की भी टक्करें नहीं होती हैं:क्यों कि मुख्तलिफ कैंटनों को, अपनी-अपनी आबादी के धार्मिक विचारों के अनुसार, धार्मिक मामलों की व्यवस्था करने की इजाज़त है। स्विट्ज़रलैंड में राजनैतिक नेता भी इतनी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाएं रखनेवाले नहीं होते हैं, जितने दूसरे देशों में होते हैं। न स्विट्ज़रलैंड के लोग ही किसी नेता पर लट्टू हो कर उसे आसमान पर चढ़ा देते हैं। अस्तु, विभिन्न नेताओं के पुजारियों की दल-बंदी और झगड़े भी वहां नहीं होते हैं। स्विट्ज़रलैंड में राजनीति को आम लोग इंग्लैंड के बहुत से लोगों की तरह केवल खिलवाड़ ही नहीं समझते बल्कि उस में गंभीरता और विचार से काम करते हैं। दल के सदस्यों को दल के नेताओं का साथ देने से स्विट्ज़रलैंड में जाती फ़ायदों का मौका नहीं रहता है: क्योंकि न तो वहां इतनी बहुत-सी सरकारी नौकरियां ही होती हैं और न उन में अधिक वेतन ही मिलता है। बड़े-बड़े प्रश्नों का फैसला 'हवाले' और 'प्रस्तावना' द्वारा प्रजा खुद कर सकती है जिस से किसी राजनैतिक-दल को व्यवस्थापक-सभा या फेडरल कौंसिल में अधिकार जमाने की इतनी ख्वाहिश नहीं रहती है, जितनी दूसरे देशों में क्योंकि किसी एक दल का सरकार पर अधिकार जम जाने पर राष्ट्र का कोई बड़ा हानि या लाभ नहीं निर्भर रहता है। अस्तु, क़रीब पचास वर्ष तक सघ में एक ही दल का सरकार पर असर रहा और दूसरे दलों ने उस दल का ज़ोर तोड़ने का प्रयत्न न करके, हमेशा उस पर कड़ी नजर रख कर उस की उन बातों को ही नामंज़ूर कराने की कोशिश की, जिन को वह हानिकारक समझते थे। उस दल ने भी कभी अपनी ताक़त का दुरुपयोग करके दूसरे दलों को विरोध के लिए नहीं उभाड़ा। स्विट्ज़रलैंड के चारों ओर ज़बरदस्त सैनिक राष्ट्र होने के कारण भी स्विट्ज़रलैंड के लोग आपस में फूट करके, अपनी शक्ति कम करने से डरते हैं और उन में एक इस प्रकार की स्वदेश-भक्ति पैदा हो गई है, जिस के कारण देश-हित के ध्यान से वह छोटी-छोटी बातों पर कलह और रार मचाना पसंद नहीं करते हैं। इन्हीं सब विभिन्न कारणों से स्विट्ज़रलैंड में राजनैतिक दलबंदी का बहुत ज़ोर नहीं है।

स्विट्ज़रलैंड में दूसरे बहुत से यूरोपीय देशों की तरह बहुत से ऐसे आदमी भी नहीं होते हैं जो सिर्फ़ राजनीति को ही अपना पेशा बना लेते हैं। राजनीति में भाग लेने-वाले अपना काम-धंधा करने के साथ-साथ राजनीति में दिलचस्पी होने के कारण ही राज-नीति में भाग लेते हैं, वरना जितना भत्ता व्यवस्थापक-सभा के सदस्य को मिलता है; उस से कहीं अधिक हर सदस्य मज़े से किसी और धंधे में कमाने की योग्यता रखता है। किसी वकील, डाक्टर या व्यापारी का राजनीति में नाम और इज़्ज़त हो जाने से धंधा भले ही बढ़ जाय, मगर उस विचार से शायद ही कोई स्विट्ज़रलैंड में राजनीति के मैदान में उतरता है। दिलचस्पी, सेवाभाव और प्रजा का सम्मान प्राप्त करने की लालसा ही अधिकतर लोगों को राजनीति के मैदान में लाती है। व्यवस्थापक-सभा में आमतौर सभी वर्गों के लोग होते हैं, मगर अधिकतर पढ़े लिखे विद्वान, वकील या पुराने सरकारी अफ़सर होते हैं। सदस्यों को आम लोग इज़्ज़त की नजर से देखते हैं, बेईमानी या रिश्वत-खोरी की शिकायत बिल्कुल ही कम सुनने में आता है। व्यवस्थापक-सभा की बैठकें बड़ी सादी होती हैं। इंग्लैंड या फ्रांस की व्यवस्थापक-सभाओं की शान स्विट्ज़रलैंड में देखने को नहीं मिलती, न स्विट्ज़रलैंड की व्यवस्थापक-सभा की चर्चाओं में एक दूसरे दल के सदस्यों या फेडरल कौंसिल के सदस्यों के खिलाफ़ उतनी कड़वाहट और आक्षेप सुनने को मिलेंगे। सब सदस्य गंभीरता, विचार और शांतिपूर्वक देश के हित से प्रश्नों पर विचार करने की कोशिश करते हैं, एक दूसरे की टांग घसीटने का प्रयत्न कम होता है। स्विट्-ज़रलैंड के राजनैतिक जीवन की पवित्रता सचमुच अनुकरणीय है।

स्विट्ज़रलैंड के नागरिक की नस नस में स्वाधीनता के भाव भरे रहते हैं। साधारण मजदूर और किसान तक सोचने का प्रयत्न करता है। वह अंधा बन कर किसी के पीछे नहीं चल पड़ता है। अपने अधिकारों के साथ साथ उसको अपने कर्तव्य का भी ध्यान रहता है। वह दूसरे के विरुद्ध विचारों की इज़्ज़त करना और शांति से बहस और समझौता करना जानता है और ज़रा-ज़रा से मतभेद पर लड़ ले कर दूसरों का सिर तोड़ डालने को तैयार नहीं हो जाता है। दूसरी और सब बातों में एक दूसरे से बिल्कुल विभिन्न स्विट्ज़रलैंड के लोग भी राजनीति में घुल-मिल कर काम करते हैं। अधिकतर लोगों का पेशा खेती-बारी होने से उन में किसानों का पुरातन प्रेम और अनुदारता ज़रूर होती है। मगर बहुत ज़माने से स्थानिक स्वशासन होने से लोगों में स्वाधीनता, विचारशीलता और कर्तव्यपरायणता के साथ-साथ किसी की बातों में न आ कर हर प्रश्न की अच्छाई-बुराई पर विचार करने की आदत हो गई है। स्विट्ज़रलैंड का इतिहास और बहुत से देशों की तरह थोड़े से महान् पुरुषों के जीवन की रामकहानी नहीं है। इस देश का इतिहास इस देश की प्रजा का इतिहास है। स्विट्ज़रलैंड में प्रजा की प्रभुता है, मगर प्रभुता के गर्व ने प्रजा का सिर नहीं फिरा दिया है—जिस का आम तौर पर साधारण मनुष्यों में भय रह सकता है। फ्रांस की तरह स्विट्ज़रलैंड की प्रजा विचारों के उभार से पागल बन जाना भी नहीं जानती है। समाजवाद की हाल में जो स्विट्ज़रलैंड में हवा उठी है, वह अधिकतर जर्मनी से आए हुए मज़दूरों की करतूत है। मगर वह भी अभी तक हवा ही रही है। आम आदमियों को स्विट्ज़रलैंड में अपने

देश की राजनीति में अन्य देशों से अधिक दिलचस्पी रहती है, क्योंकि स्थानिक स्वशासन ने उन में राजनैतिक जाग्रति पैदा कर दी है। आम तौर पर लोग सरकारी सत्ता के केंद्रीकरण और समाजशाही दोनों के पक्षपाती नहीं हैं; मगर देश को लाभ होता दीखने पर वह दोनों के लिए तैयार हैं। राजनीति में शांत और स्वच्छ जीवन को लोग बहुत पसंद करते हैं। एक कैंटन को छोड़ कर और कहीं देश भर में फाँसी की सज़ा किसी को नहीं दी जाती है। शराबखोरी के विरुद्ध बहुत से लोग होने पर भी, किसी को दुःख न देने के विचार से, शराब पीना अमेरिका की तरह जुर्म नहीं बना दिया गया है। अँगरेज़ों तक को यह देख कर आश्चर्य होता है कि खालिस प्रजासत्ता की हामी स्विट्ज़रलैंड की प्रजा अपनी कार्यकारिणी पर इतना विश्वास करने को तैयार रहती है कि उस को इंग्लैंड की कार्यकारिणी से भी अधिक सत्ता देती है।

स्विट्ज़रलैंड के आम लोग चतुर और आम तौर पर सच्चे और ईमानदार होते हैं, न तो वे किसी पर जल्दी से विश्वास ही कर लेते हैं और न अविश्वास ही। वे अपने राजनीतिज्ञों में गंभीरता, धीरता, दृढ़ता और सचाई देखने की कोशिश करते हैं। देश के मशहूर अखबारों में किसान दल के २, समावादी दल के ६, उदार दल के ३, गरमदल के ८, कम्यूनिस्ट दल के २, कैथोलिक अनुदार दल के ७ और ४ स्वतंत्र अखबार हैं। मगर कम्यूनिस्ट अखबारों को छोड़ कर और किसी दल के अखबार में दूसरे दलों या उन के नेताओं पर अनुचित आक्षेप नहीं किए जाते हैं। स्विट्ज़रलैंड के कई अखबारों[1] की राय का तो यूरोप भर में बड़ा मान होता है और वह हर जगह पढ़े जाते हैं। आबादी के लिहाज़ से यूरोप के और किसी देश में इतने अखबार नहीं हैं, जितने स्विट्ज़रलैंड में। मगर शायद हालैंड और नार्वे को छोड़ कर और किसी यूरोपीय देश के अखबारों में इतनी गंभीर टीका-टिप्पणी नहीं होती है। इस देश के अखबार किसी को डरा कर चौथ वसूल या किसी पर व्यक्तिगत विचारों से आक्षेप कभी नहीं करते हैं। अस्तु, स्विट्ज़रलैंड की राजनैतिक संस्थाओं का संचालन बड़ी सहूलियत से होता है। इस का मुख्य कारण दलबंदी का न होना और स्थानिक स्वशासन में उत्पन्न हुई प्रजा की जाग्रति ही है, नहीं तो स्विट्ज़रलैंड की राजनैतिक संस्थाओं से सिर्फ़ उन के संगठन के कारण यह फल नहीं मिल सकते थे। आम तौर पर संघीय-राजव्यवस्थाओं में संघीय सरकार और संघ की सदस्य सरकारों के अधिकारों का जितना खुलासा किया जाता है उतना स्विट्ज़रलैंड की राजव्यवस्था में खुलासा नहीं किया गया है। बहुत-सी बातों में संघ और कैंटनों को एक से अधिकार दिए गए हैं और संघ को कैंटनों के क़ानूनों को राज-व्यवस्था के खिलाफ़ ठहरा देने का भी अधिकार दिया गया है। दूसरे देशों में इस प्रकार की राज-व्यवस्था से आए दिन झगड़े हो सकते थे। मगर स्विट्ज़रलैंड में जब संघ या कैंटनों के अधिकार के विषय में शंका खड़ी होती है तो आपस में सहूलियत से विचार और समझौता कर के काम निकाल लिया जाता है। हमेशा से इसी प्रकार काम होता आया है। संघ और कैंटनों में हर जगह सत्ता किसी एक आदमी के हाथ में न दे कर कई आदमियों की समितियों के हाथ में रक्खी गई

---

[1] जैसे कि 'जरनल दे जेनेव'।

है दूसरे देशों से स्विट्ज़रलैंड की सरकार में यह भी एक और ख़ास फ़र्क़ है। स्विट्ज़रलैंड में व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों और सरकारी अधिकारियों को हमेशा प्रजा की कड़ी नज़र में काम करना होता है। वहां सब पर जनमत का एक-सा अंकुश रहता है। अस्तु धारा-सभा पर अन्य देशों की तरह रोक-थाम रखने की स्विट्ज़रलैंड की राज-व्यवस्था में योजना नहीं की गई है क्योंकि 'हवाले' और 'प्रस्तावना' के द्वारा प्रजा जब चाहे तब धारा-सभा के फ़ैसलों को उलट-पलट सकती है।

स्विट्ज़रलैंड की सरकार और उस की नीति में आश्चर्यजनक स्थिरता और दृढ़ता देखने में आती है। वहां क़ानून भी वही बनाए जाते हैं जिन को प्रजा चाहती है और जो आमतौर पर लाभदायक होते हैं। शासन बहुत सस्ता है क्योंकि ख़र्च में बड़ी मितव्ययता की जाती है। हमेशा इस बात का ख़याल रक्खा जाता है कि जो रुपया ख़र्च होता है उस का अधिक से अधिक लाभ मिलना चाहिए। सब प्रकार की शिक्षा का अच्छा प्रबंध है। न्याय-शासन भी बहुत सीधा और सस्ता है। पहाड़ी प्रदेश होते हुए भी स्विट्ज़रलैंड में सड़कों इत्यादि की और दूसरे सार्वजनिक कार्यों की व्यवस्था बड़ी सुंदर है। चुंगियों का काम भी वहां शुद्धता और योग्यता से चलता है। स्थानिक-शासन का बहुत-सा काम लोग मुफ़्त में करते हैं। देश की रक्षा का भी काफ़ी प्रबंध है। प्रजा हमेशा देश के लिए तलवार बाँध कर मैदान में उतर आने को तैयार रहती है। एक दूसरे की व्यक्तिगत स्वतंत्रता का सब आदर करते हैं। सार्वजनिक जीवन ऊँचे दर्जे का होता है और राजनीति को शतरंज का खेल नहीं समझा जाता है। अस्तु, यह सब स्विट्ज़रलैंड की सरकार की ख़ास ख़ूबियां कही जा सकती हैं।

स्विट्ज़रलैंड की कई संस्थाएं दूसरे देशों के लिए आदर्श बन सकती हैं। एक तो सरकार की कार्यकारिणी सत्ता को एक आदमी के हाथ में न रख कर कई आदमियों की कमेटी में रखना, दूसरी हवाला और प्रस्तावना की संस्था। मुमकिन है स्विट्ज़रलैंड में एक दिन दलबंदी का ज़ोर बढ़ जाने पर 'फ़ेडरल कौंसिल' का काम कठिन बन जाय और वह भी दूसरे देशों के मंत्रि-मंडल की तरह एक दल की समिति हो जाय। फिर भी स्विट्ज़रलैंड की 'फ़ेडरल कौंसिल' के काम-काज से बहुत कुछ शिक्षा ली जा सकती है। 'हवाले' और 'प्रस्तावना' के बारे में तो अधिक कहना ही व्यर्थ है। प्रजा के हाथ में सत्ता रखने के लिए इस से बढ़ कर अभी तक दूसरी संस्था दुनिया में देखने में नहीं आई है। छोटे-छोटे ज़मीन के मालिकों और स्थानिक स्वशासन के प्रचार से भी स्विट्ज़रलैंड की सरकार अच्छी बन गई है।

स्विट्ज़रलैंड की सरकार में सब मीठा ही मीठा नहीं है। दोष भी हैं; मगर दूसरे देशों की सरकारों के वैसे ही दोषों के सामने स्विट्ज़रलैंड की सरकार के दोष बिल्कुल फीके पड़ जाते हैं। एक मनोरंजक उदाहरण से यह बात और भी स्पष्ट हो जायगी। राज-नीति का प्रख्यात लेखक लार्ड ब्राइस एक स्थान पर लिखता है कि, "एकबार मैं ने स्विट्-ज़रलैंड के एक सच्चे विद्वान् से पूछा, 'आप के देश की सरकार में दोष भी अवश्य ही होंगे। क्या आप मुझे दोष बताने की कृपा करेंगे?' कुछ विचार के बाद वह विद्वान् बोला—'हमारे देश में आप के देश के शाही कमीशनों और पार्लीमेंट की कमेटियों की तरह बहुत

से कठिन प्रश्नों पर विचार कर के अपना मत देने के लिए कमेटियां नियुक्त की जाती हैं। यह कमेटियां अक्सर गर्मियों में पहाड़ पर किसी सुंदर होटल में जा बैठती हैं और वहां बैठ कर अपना काम करती हैं। ऐसा बहुत ज्यादह तो नहीं होता है। फिर भी हम लोग समझते हैं कि यह कमेटियां सार्वजनिक खर्चे पर ज़रूरत से अधिक दिन तक मज़े उड़ाती हैं। यह निंदनीय बात है।"

लार्ड ब्राइस लिखता है कि, "मैंने आश्चर्य-चकित हो कर उस विद्वान् से कहा कि, 'जनाब, अगर मज़ाक नहीं कर रहे हैं और अपनी सरकार का काला से काला काम आप इसी को कह सकते हैं तो मैं आप के देश को मस्तक नवाता हूं और आप धन्य हैं जो उस में पैदा हुए।" चाहे और कितने ही दोष स्विट्ज़रलैंड की सरकार में हों मगर उस का एक सब से बड़ा गुण उस को संसार की आँखों में ऊँचा उठाने के लिए काफ़ी है। स्विट्ज़रलैंड ने यह बात प्रत्यक्ष कर के दिखला दी है कि, 'प्रजा अपना शासन अपने हित में अपने हाथों से चला सकती है।' स्विट्ज़रलैंड की सरकार चाहे कुछ हो या न हो मगर प्रजा की प्रभुता, प्रजासत्ता और प्रजा की सरकार की ज़िंदा तस्वीर है।

सोवियट सरकार

राज-व्यवस्था

प्रजासत्ता की खान स्विट्ज़रलैंड की सरकार का परिचय हो जाने के बाद हम अब एक ऐसे दूसरे देश की सरकार का परिचय देते हैं जहां प्रजा-सत्ता क़ायम करने का एक नया ही रास्ता निकाला गया है। बोल्शेविज़्म के भूत को खड़ा करनेवाले रूस के बारे में आप ने तरह-तरह की बातें सुनी होंगी। चारों ओर उस की चर्चा सुनाई देती है। यह देश यूरोप से ले कर एशिया तक, दोनों महाद्वीपों में दुनिया के लगभग सातवें हिस्से पर फैला हुआ है। ठंडे से ठंडे और गर्म से गर्म, ज़रख़ेज़ और बंजर सब तरह के भाग और नाना प्रकार की भाषा, संस्कृत और धर्मवाली जातियां इस विशाल देश में मिलती हैं। हमारे देश की विभिन्नताएं और भेद इस देश की विभिन्नताओं और भेदों के मुक़ाबले में कुछ भी नहीं हैं। यूरोप और एशिया की दुनियाओं के बीच में रूस की अपनी एक अलग दुनिया है। इस देश में पहले निरी निरंकुश राज-शाही थी। मास्को की नवाबी ने, अपनी तलवार के ज़ोर से मंगोलों को रूस से निकाल कर, अपना अधिकार, हमारी शेख़चिल्ली की कहानियों के परियों के पहाड़ कोह काफ़ और यूराल पर्वत तक, जमा लिया था। चौदहवीं सदी से बीसवीं सदी तक, छः सौ वर्ष तक, मास्को के ज़ारों का निरंकुश राज्य रूस पर रहा। इस बीच में प्रतिनिधि-शासन चलाने के कई बार प्रयत्न हुए। पहले-पहल ज़ार आइवन चतुर्थ ने सोलहवीं सदी में ज़ेमस्को सोबोर नाम की एक राष्ट्रीय प्रतिनिधि व्यवस्थापक-सभा बुलाई थी। इस में प्रजा के प्रतिनिधि नहीं अमीर उमराव ही अधिक होते थे। मगर सत्रहवीं सदी में ज़ार पीटर महान ने ज़ेमस्को सोबोर को बंद कर दिया। अठारहवीं सदी में केथरीन द्वितीय ने ५६४ प्रतिनिधियों का क़ानून बनाने के लिए 'ग्रांड

कमीशन' बनाया था। मगर वह कोई व्यवस्थापक-सभा नहीं थी और उस का काम पूरा होने से पहले ही उस को बंद कर दिया गया। बाद में ऐलेक्जेंडर द्वितीय ने उन्नीसवीं सदी में एक व्यवस्थापक-सभा क़ायम करने का इरादा ज़ाहिर किया था। मगर उस राज-व्यवस्था का एलान निकालने के निश्चित समय से २४ घंटे पहले ही उस का ख़ून कर डाला गया। सिर्फ़ स्थानिक-शासन में जो कुछ प्रतिनिधिसत्ता थी वह थी। केथरीन द्वितीय ने प्रतिनिधियों की डूमा अर्थात् चुंगियों को क़ायम किया था जिन में सब वर्गों के प्रतिनिधि होते थे। ऐलेक्जेंडर द्वितीय ने न्याय-शासन को ठीक किया और चुंगी शासन को मज़बूत किया था और ज़िले और प्रांत में ज़ेमस्टवोज़ नाम की प्रतिनिधि-सभाओं की स्थापना की थी जिन को क़ानून बनाने और आय-व्यय के काफ़ी अधिकार थे। बाक़ी सभी प्रकार से बीसवीं सदी के प्रारंभ तक रूस में निरंकुश ज़ारशाही ही थी।

मगर ज़ारशाही पर चारों तरफ़ से हमले हो चले थे। सरकार का व्यापारियों की तरफ़ झुकाव होने से ज़मींदार और किसानों का दिल सरकार की तरफ़ से हट गया था। ज़ेमस्टवोज़ें भी जहां-तहां सरकार में सुधार और राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा की माँगें कर रही थीं। उद्योग-धंधों में काम करनेवाले मज़दूर समाजवाद की तरफ़ जा रहे थे। सन् १८९८ ई० में उन का दूसरे पश्चिमी देशों की तरह एक 'समाजी प्रजासत्तात्मक मज़दूरदल' भी क़ायम हो गया। मध्यम श्रेणी के पढ़े-लिखे लोग और उद्योग-धंधों से संबंध रखनेवाले लोग भी यूरोप के दूसरे प्रजासत्तात्मक देशों की तरह रूस की सरकार का संगठन चाहते थे और इस प्रकार के कुछ लोगों ने मिल कर 'मुक्तिकारी संघ' नाम का एक राजनैतिक दल भी बना लिया था। रूसी सरकार के अधीन फ़िनलैंड और पोलैंड इत्यादि जैसे देशों के ग़ैर-रूसी लोग भी अपना किसी प्रकार रूस की सरकार से पिंड छुड़ा लेना चाहते थे।

रूस और जापान के युद्ध में पुराने महारथी रूस के जब नए जापान ने दाँत खट्टे कर दिए, तब एशिया की दबी हुई जातियों के मन ही में आनंद और आशा की हिलोर नहीं आई थी बल्कि रूस की सीमा के अंदर रहनेवाले रूसी सरकार के सारे विरोधियों के घरों में भी अपनी सरकार की कमज़ोरी जान कर जश्न होने लगा था। सारी ज़ेमस्टवोज़ों और डूमाओं के प्रतिनिधियों के एक सम्मेलन ने इस मौक़े को अच्छा समझ कर ज़ार से एक अर्ज़ी में एक व्यवस्थापक-सम्मेलन बुलाने और एक राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा स्थापित करने की प्रार्थना की थी। सरकार के टाल-मटोल करने पर देश में उत्पात और दंगे खड़े होने लगे। अस्तु सन् १९०५ ई० में रूस की सरकार ने एक शाही डूमा[1] नाम की राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा स्थापित कर दी थी, जिस की बिना अनुमति के कोई क़ानून अमल में नहीं आ सकता था। सब बालिग़ मर्दों को मताधिकार दे दिया गया था।

मगर कठिनाइयों से सरकार के हाथ ख़ाली होते ही रूस की सरकार ने फिर रंग बदला। सुधार और प्रतिनिधि-सरकार के पक्षपातियों के, बहुत से दल बन जाने और आपस के मतभेदों और झगड़ों के कारण शक्ति कम हो गई थी। बड़े-बड़े ज़मींदारों और

---

[1] इंपीरियल डूमा।

और उल्टी बुद्धिवालों ने पुरानी ढंग की सरकार के लिए हाय-हाय मचा दी थी। अस्तु; सरकार ने १६०६ ई० ही में 'शाही डूमा' को व्यवस्थापक-सभा की निचली सभा का स्थान दे दिया और उस के साथ 'साम्राज्य कौंसिल' नाम की एक दूसरी सभा को जोड़ दिया जिस के आधे सदस्य ज़ार स्वयं नियुक्त करता था और आधे अप्रत्यक्ष ढंग से कुछ खास वर्ग चुनते थे। साम्राज्य के मूल क़ानूनों, धारासभाओं के संगठन, सेना और परराष्ट्र विषय पर व्यवस्थापक-सभा के चर्चा करने की मनाही कर दी गई। पहली डूमा के बैठने पर जब उस ने व्यवस्थापकी सरकार क़ायम करने के इरादे से कुछ प्रश्न उठाए तो फ़ौरन् उस को भंग कर दिया गया। नए चुनाव के बाद दूसरी डूमा का भी यही हाल हुआ। तीसरा चुनाव होने से पहले सरकार ने बहुत से लोगों से मताधिकार छीन लिए और चुनाव में दिन-दहाड़े दस्तंदाज़ी कर के सरकार के पिट्ठुओं को चुनवा लिया। अतएव तीसरी डूमा सरकार की तरफ़दार थी। यूरोप की पिछली लड़ाई शुरू होने पर चौथी डूमा चल रही थी और रूस में निरंकुश ज़ारशाही और नौकरशाही का राज्य क़ायम था।

लड़ाई छिड़ने पर 'समाजी प्रजासत्तावादियों' को छोड़ कर अन्य सब राजनैतिक-दलों ने रूस में सरकार का साथ देने का निश्चय किया था। मगर ज़ार निरा बेवक़ूफ़ था। वह अपनी स्त्री की उँगलियों पर नाचता था और उस की स्त्री रासपुटिन नाम के एक भयंकर मुल्ले के इशारों पर काम करती थी। मंत्री और सरकार के दूसरे दरबारी सलाहकार भी बेवक़ूफ़, उल्टी बुद्धि के और बेईमान थे। यहां तक कि वे रूस के दुश्मनों से रूस के ख़िलाफ़ षड्यंत्र रच कर अपनी जेबें भर रहे थे। नतीजा यह हुआ कि लड़ाई के पहले ही वर्ष में सरकार के निकम्मे इनतज़ाम और जानी-बूझी लापरवाही से रूस के असंख्य सैनिक लड़ाई के मैदान में खप गए, देश के हर भाग में प्रजा संकट में पड़ गई और पोलंड पर जर्मनी ने क़ब्ज़ा जमा लिया। राजनैतिक दलों ने यह भयंकर हालत देख कर ज़ार से फ़ौरन् सरकार में सुधार करने की माँग की। मगर सरकार ने अपनी पुरानी आदत के अनुसार किसी की कोई बात सुनना पसंद नहीं किया। उल्टा सब प्रकार की माँगें करनेवालों को कुचल डालने का निश्चय कर लिया।

सरकार की इस अंधी ज़िद का परिणाम वही हुआ जो सार्वजनिक आंदोलन के ख़िलाफ़ सरकार की हठ का परिणाम हमेशा से इतिहास में होता चला आया है। सन् १६१७ ई० की फ़रवरी में शाही डूमा की बैठक हुई। सरकार ने डूमा की माँगों के उत्तर में दो हफ़्ते बाद डूमा की बैठक स्थगित करने का एलान कर दिया। डूमा ने अपनी बैठक बंद करने से इन्कार कर दिया और अपने आप को देश की सर्वोपरि और एकमात्र व्यवस्थापक-सभा एलान कर दिया। विद्रोह की आग भड़क कर राजधानी की सेना और मज़दूरों में फैल गई। डूमा के नेता अधिकतर उद्योग-धंधों के लोग थे। वे मज़दूरों और सैनिकों की क्रांति के विरुद्ध थे और सरकार में सुधार कर के आनेवाली क्रांति को रोक देना चाहते थे। मगर सरकार किसी की क्यों सुनती है? क्रांति की ज्वालाएं चारों तरफ़ फैल गईं। राजधानी के सैनिक भी क्रांतिकारियों से जा मिले जेलख़ाने तोड़ डाले गए और क़ैदियों को रिहा कर दिया गया। सरकारी अफ़सर जहां हाथ में पड़े मार डाले गए या क़ैद करके जेल में डाल

दिए गए। लड़ाई के मैदान से रूसी सेना ने निकम्मी ज़ारशाही के अंत पर बधाई का संदेशा भेजा। ज़ारशाही का क़िला प्रजा के रोष की आँधी में बालू के महल की तरह देखते-देखते उड़ गया। ज़ार ने अपने ख़ानदान का राज बचाने के विचार से ख़ुद राजगद्दी से उतर कर राजगद्दी अपने भाई ग्रांडड्यूक माइकेल को दे दी। मगर माइकेल ने प्रजा की खुली प्रार्थना के बिना राजगद्दी पर बैठने से इन्कार कर दिया। डूमा के चुने हुए और डूमा के प्रति जवाबदार मंत्रि-मंडल की, वैध प्रजासत्तावादी शाहज़ादा ल्वोव की अध्यक्षता में, एक अस्थायी सरकार क़ायम हो गई और माइकेल ने देश से इसी सरकार को सहायता करने की प्रार्थना की। ज़ार को मय उस के बाल-बच्चों के बुरी तरह बाद में क़त्ल कर दिया गया और ज़ारशाही और ज़ार के चक्रवर्ती राज्य को हमेशा के लिए दुनिया से जड़ खोद कर फेंक दी गई। क्रांति की लहूलुहान की दुःखप्रद कहानी से हमारे इस ग्रंथ का अधिक संबंध नहीं है। दुनिया को हिला डालनेवाले क्रांति के दस दिनों में रूस की दुनिया ही उलट गई थी। मगर नई राज-व्यवस्था को समझने के लिए उन दलों के सिद्धांतों और कुछ हाल को जान लेना ज़रूरी है जिन की नई राज-व्यवस्था के गढ़ने में हाथ था।

अस्थायी सरकार अधिकतर मध्यमश्रेणी के लोगों की सरकार थी। वह यूरोप के अन्य देशों की तरह रूस की सरकार की भी व्यवस्था करना चाहती थी। मगर मज़दूरों और सैनिकों में समाजवादी विचार फैल चुके थे और वे 'मजदूरों, किसानों और सैनिकों' की सरकार चाहते थे। समाजवादियों में भी दो दल थे। एक 'समाजी क्रांतिकारी' कहलाता था और दूसरा 'प्रजासमाजी प्रजासत्तात्मक दल'[1] कहलाता था। 'समाजी क्रांतिकारी दल' ज़मीदारी को नष्ट कर के ज़मीन पर छोटे-छोटे किसानों का क़ब्ज़ा और सरकार के सिद्धांतों पर कृषि का हामी था। इस में अधिकतर किसान लोग थे। 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' शहरों के मज़दूरों का दल था और वह यूरोप के दूसरे समाजवादी दलों की तरह मार्क्स के सिद्धांतों के अनुसार वर्ग संघर्ष का माननेवाला था। दोनों दलों में गरम और नरम लोग थे। 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' में नरम लोग 'मेंशेविकी' और गरम लोग 'बोल्शेविकी' कहलाते थे। मेंशेविकी लोगों का विचार था कि समाजशाही धीरे-धीरे ही स्थापित हो सकती है और उस के बनाने के लिए दूसरे प्रगतिशील दलों से मिल कर चलना चाहिए। बोल्शेविकी कम्यूनिस्ट थे अर्थात् एक दम क्रांति कर के समाजशाही स्थापित कर देने के पक्षपाती थे।

'बोल्शेविकी' का रूसी भाषा में वास्तव में अर्थ 'बहुसंख्या' है और 'मेंशेविकी' का अर्थ 'अल्प-संख्या' है। शुरू से समाजवादियों में मेंशेविकी विचार के ही लोग हमेशा अधिक संख्या में थे। और मज़दूरों की सोवियटों[2] तक में कम्यूनिस्टों का बहुत कम असर

[1] इन दलों का पूरा हाल आगे बताया जायगा।

[2] रूस देश में सोवियट मज़दूरों, किसानों और सैनिकों इत्यादि की संघों अर्थात् पंचायतों को कहते हैं।

था। मगर कम्यूनिस्ट समूह के नेता लेनिन और ट्रोटस्की बड़े होशियार थे। अस्थायी सरकार में भाग न लेने से उन के सिर पर कोई ज़िम्मेदारी भी नहीं थी। अस्तु, उन्हों ने एक बड़ा लुभानेवाला कार्य-क्रम जनता के सामने रख कर बाद में प्रजा के दिल और दिमाग़ पर शीघ्र ही क़ब्ज़ा जमा लिया था। उन के कार्य-क्रम में फ़ौरन् लड़ाई बंद कर के 'मज़दूरों और किसानों' के प्रतिनिधियों के द्वारा सन्धि करना, राष्ट्रीय क़र्ज़े के साफ़ नामंज़ूर करना, ज़मींदारों से ज़मीन छीन कर उस पर किसानों की पंचायतों का अधिकार करना, कारखानों और खानों पर फ़ौरन् मजदूरों की पंचायतों का क़ब्ज़ा करना, सारे इजारों पर राष्ट्र का क़ब्ज़ा, सारी पैदावार और बँटाव पर सरकार का नियंत्रण और एकमात्र उद्योगीवर्ग या मज़दूरपेशा लोगों की पंचायतों के हाथ में सरकार की लगाम इत्यादि की ऐसी बात थीं, जो रूस के लड़ाई, ग़रीबी, निरंकुशता और कुशासन से थके हुए आम लोगों को लुभानेवाली थीं। बोल्शेविकों ने धीरे-धीरे बड़ी होशियारी से इस कार्य-क्रम का प्रचार कर के सोवियटों पर अपना अधिकार जमा लिया था। नवंबर सन् १९०७ ई० में तीसरी सोवियटों की कांग्रेस में बोल्शेविकी विचारवालों को मेंशेविकी विचारवालों से सात सौ अधिक मत मिले और उन्हों ने तभी से वे बोल्शेविकी अर्थात् बहुसंख्या और दूसरा दल मेंशेविकी अर्थात् अल्प-संख्या कहलाने लगा। चुनाव की रात को ही बोल्शेविकों ने 'अस्थायी सरकार' पर अपना अधिकार कर लिया। उन की लाल पलटन ने जा कर सरकारी इमारतों पर क़ब्ज़ा कर लिया और अस्थायी सरकार के सदस्यों के क़ैद कर लिया। सरकार का प्रधान केरेंसकी किसी तरह बच कर भाग गया। दूसरे दिन की 'तीसरी अखिल रूसी सोवियट कांग्रेस' में रूस में 'रूसी समाजशाही संघीय सोवियट प्रजातंत्र' स्थापित हो जाने की घोषणा कर दी गई और सरकार का सारा काम-काज प्रजा के नियुक्त किए हुए कमिश्नरों की एक समिति के हाथ में सौंप दिया गया। लेनिन इस समिति का प्रधानमंत्री और ट्रोट्स्की परराष्ट्र-विभाग का कमिश्नर बनाया गया था। बोल्शेविकों ने कूटनीति और डंडे के ज़ोर से 'अस्थायी सरकार' पर अपना अधिकार कर लिया था। पहली अस्थायी सरकार ने रूस की नई राज-व्यवस्था बनाने के लिए सारे रूस के प्रतिनिधियों का एक व्यवस्थापक-सम्मेलन बुलाया। मगर इस सम्मेलन की तारीख़ के पहले ही बोलशेविकों ने अपना अधिकार जमा लिया और सम्मेलन मिलने पर उस में बहुसंख्या अपने पक्ष में न देख कर लेनिन ने उसे भंग कर दिया था।

बोल्शेविकों अर्थात कम्यूनिस्टों का जिन को हिंदी में समष्टिवादी कहना उचित होगा, विश्वास है कि "जहां समाजशाही क़ायम करने का प्रयत्न किया जायगा वहां तलवार के जोर से अधिकार प्राप्त कर के मज़दूर-पेशा लोगों का एकमात्र निरंकुश अधिकार क़ायम करने की ज़रूरत होगी।" उन का ख़्याल है कि आजकल की पूँजीशाही देशों की सरकारें प्रजासत्ता की दुहाई देती हैं। मगर सिर्फ़ अमीर वर्ग के हितों का ख़्याल रखती हैं। प्रजा भुलावे में पड़ी रहती है कि सत्ता उस के हाथ में है और वास्तव में सत्ता ज़मीदारों और कारखानों और बैंकों के मालिकों के हाथ में रहती है। पैदावार के ज़रियों पर इन लोगों का अधिकार होने से यह लोग मज़दूर-पेशा की कमाई के अर्थात् उन की ज़िंदगी

को ही अपने हाथ में रखते हैं। शिक्षा इत्यादि पर उन का बिल्कुल इजारा न होने पर धन-संपत्ति के कारण उन को साधारण प्रजा के मुक़ाबले में शिक्षा का भी अधिक सुभीता और मौक़ा रहता है। धनवान वर्ग की हुक्म चलाने की आदत उन की विद्वत्ता और उन के रहन-सहन को देखकर साधारण मज़दूर-पेशा लोग चौंधिया जाते हैं। धनवान लोगों के हाथों में स्कूल होने से यह वर्ग उन में जीवन, समाज और धन-धाम के संबंध में अपने विचारों का प्रचार करके साधारण लोगों के दिमाग़ में बचपन ही से उन विचारों को भर देता है। सरकार का काम-काज चलानेवाला अधिकारी वर्ग भी आमतौर पर इसी वर्ग का होता है। अख़बारों पर भी पूँजीपतियों का कब्ज़ा होने से अख़बार अधिकतर धनवानों के हित की ही बातें करते हैं और ख़बरों को तोड़ और विचारों को मोड़ कर साधारण आदमियों के विचार ख़राब करते और उन की राजनैतिक राय का रूप बदल देते हैं। अस्तु प्रजासत्ता में सर्वसाधारण को मताधिकार होने पर भी बहु-संख्या की राय को धनवान वर्ग ही जैसा चाहता है वैसा नचाता है।"

अपने इस विश्वास के कारण समष्टिवादी, पूँजीशाही राष्ट्रों की प्रजासत्तात्मक संस्थाओं के द्वारा, समाजशाही की स्थापना करना मृगतृष्णा के समान मानते हैं। वह मानते हैं कि प्रजा की बहुसंख्या के हाथ में सत्ता उसी हालत में आ सकती है अर्थात् प्रजासत्ता उसी समय क़ायम हो सकती है, जब कि पैदावार के ज़रियों पर मज़दूर और किसानों का, जिन की हर जगह बहु संख्या होती है, कब्ज़ा हो जाय। अतएव वह धनवानों के हाथ से लड़ कर ज़बरदस्ती पैदावार के ज़रियों[1] को छीन लेना और उन पर मज़दूर पेशा का कब्ज़ा जमा कर निरंकुश मज़दूर पेशाशाही[2] क़ायम करना और धनवान-वर्ग को मज़दूर पेशावर्ग का जाति-वैरी मान कर उन को कुछ भी अधिकार और सत्ता में हिस्सा न दे कर तब तक कुचलते चले जाना ही प्रजासत्ता स्थापित करने का एकमात्र ज़रिया मानते हैं जब तक कि पूँजीशाही बिलकुल नेस्तनाबूद हो कर मिट्टी में न मिल जाय और एक सिर्फ़ हाथ पैर या दिमाग़ से मिहनत कर के रोटी कमाने वाला मज़दूर पेशावर्ग ही दुनिया में न रह जाय। समष्टिवादी यह भी मानते हैं कि मज़दूर पेशाशाही क़ायम करने और पूँजीशाही को ध्वंस करने के लिए तलवार का या आजकल की भाषा में बंब और बंदूक़ का सहारा अवश्य लेना पड़ेगा; क्योंकि धनवान-वर्ग आख़िर दम तक अपने अधिकार के लिए जी तोड़ कर लड़ेगा और अपनी सेना और हथियारों का मज़दूर पेशावर्ग के ख़िलाफ़ उपयोग करेगा। बोल्शेविक रूस का प्रख्यात लेखक बुख़ारिन अपनी 'समष्टिवाद की वर्णमाला'[3] नाम की पुस्तक में साफ़-साफ़ लिखता है कि "आजकल का समाज ऐसे दो वर्गों का बना है जिन के हित एक दूसरे के विरुद्ध हैं—धनवान और मज़दूर पेशावर्ग। अगर भेड़िये और भेड़ें मिल कर रह सकते हैं, तो यह दोनों वर्ग भी मिल कर रह सकते हैं।

[1] कारख़ाने, बैंक और ज़मीन।
[2] डिक्टेटरशिप अव् दि प्रोलिटेरियट।
[3] 'ए० बी० सी अव् कम्यूनिज़्म'।

भेड़ियों को भेड़ें हड़पने में मज़ा आता है इस लिए भेड़ों को अपनी रक्षा का प्रबंध करना चाहिए। भेड़ियों और भेड़ों के मेल का स्वप्न देखना मूर्खता है। यह दोनों वर्ग कभी एक न होंगे।'

इस प्रकार के सिद्धांत और विचार रखने वाले लेनिन के 'समष्टिवादी दल' के हाथ में रूस की सरकार आ जाने पर स्वभावतः उन के नेतृत्व में रूस की जो नई राज-व्यवस्था बाद में तैयार की गई वह वर्गयुद्ध के विचार अर्थात् भेड़ियों की जाति को नष्ट करने के विचार से बनाई गई है। प्रजासत्ता के सिद्धांत के अनुसार सब नागरिकों को एक से अधिकार न दे कर इस राज-व्यवस्था में सिर्फ़ मज़दूर-पेशा वर्ग के अधिकार माने गए हैं। सब नागरिकों के एक से अधिकार होने का एलान भी है, इस राज-व्यवस्था में ज़रूर, मगर वह सिर्फ़ जाति और राष्ट्रीय भेदों को न मानने के लिए है। नागरिकता के अधिकार अर्थात् चुनावों में मत देने और चुनाव में उम्मीदवार होने और पदों पर नियुक्त होने का अधिकार सिर्फ़ समाज को लाभकारी मज़दूरी या पेशों के द्वारा रोटी कमाने वालों, इस प्रकार के मज़दूर पेशा लोगों की घर-गृहस्थी ठीक रख कर उन के काम में मदद करने वालों, किसान और खेती-बारी का काम करनेवाले उन लोगों को जो नफ़ा पैदा करने के लिए मज़दूर नहीं रखते हैं, रूस सरकार की जल और थल सेना में काम करने वालों और इन्हीं श्रेणियों के उन लोगों को, जो किसी तरह मेहनत करने के नाक़ाबिल हो गए हों, उन्हीं को दिया गया है। इन श्रेणियों के परदेशी लोगों को भी रूस में मेहनत मज़दूरी करने पर यही अधिकार होते हैं। मगर जो लोग मज़दूरों को रख कर मुनाफ़ा पैदा करते हैं, या जो सूद और किराए पर गुज़र करते हैं, या जो व्यापारी, सौदागर और दलाल होते, या साधू और पुजारी होते हैं अथवा जो ज़ार की पुरानी पुलिस के नौकर या आयुर्वेद थे, उन लोगों को कोई मताधिकार राज-व्यवस्था में नहीं दिया गया है। अस्तु, पुराने धनिक-वर्ग और मध्यम-वर्ग को रूस की राज-व्यवस्था में कोई राजनैतिक अधिकार नहीं दिए गए हैं।

दसवीं जुलाई सन् १६१८ ई० को 'पाँचवीं अखिल रूसी सोवियटों की कांग्रेस' में जो रूस की 'अस्थायी राज-व्यवस्था' मंज़ूर हुई थी उस के पहले अध्याय में रूस को 'मज़दूरों, सैनिकों और किसानों के प्रतिनिधियों की सोवियटों का प्रजातंत्र' और इन्हीं सोवियटों में राष्ट्र की सारी केंद्रीय और स्थानिक सत्ता होने तथा रूसी सोवियट प्रजातंत्र को बराबर की हैसियत की आज़ाद क़ौमों के राष्ट्रीय सोवियट प्रजातंत्रों की एक संघ एलान किया गया था। दूसरे अध्याय में भेड़ियों की जाति को ध्वंस कर के संसार में समाजशाही की ध्वजा फहराने के इरादे को पूरा करने के लिए राष्ट्र की ज़मीन, जंगलों, खानों, रेलों, बैंकों और तमाम 'पैदावार और बटाव के ज़रियों' पर मज़दूर पेशा लोगों की सोवियट सरकार का बिना मुआवज़े के क़ब्ज़ा हो जाने का एलान था। 'दूसरे देशों की पूंजीशाही को धक्का पहुँचाने के लिए ज़ारशाही ने रूस के नाम पर जो क़र्ज़े दूसरे देशों से लिए थे उन को भी इस अध्याय में नामंज़ूर किया गया था। इसी अध्याय में 'समाज को उपयोगी काम-धंधा करना' सब नागरिकों का फ़र्ज़ तथा मज़दूर पेशाशाही की अखंड सत्ता

क़ायम करने और धनिकवर्ग के हमलों से उस की रक्षा करने के लिए सब मज़दूर और किसानों का हथियार बाँधना फ़र्ज़ माना गया था और धनिकवर्ग को हथियार रखने का अधिकार नहीं दिया गया था। 'मज़दूर और किसानों की एक समाजवादी लाल पल्टन' क़ायम करने की योजना भी इस अध्याय में रक्खी गई थी। तीसरे अध्याय में, 'संसार को पूंजीशाही के उन झगड़ों और लड़ाइयों से सदा के लिए मुक्त करने के विचार से, जिन्हों ने पृथ्वी को मनुष्य के ख़ून से लाल कर दिया है', ज़ारशाही की सारी गुप्त संधियों का भंडाफोड़ कर के रद्द माना गया था और दुनिया के सारे राष्ट्रों से बराबरी की संधियां और मैत्री करने के इरादे का एलान था। एशिया और दूसरे उपनिवेशों के मज़दूर-पेशा वर्ग पर यूरोप की पूंजीशाही के राज का विरोध किया गया था और फ़िनलैंड इत्यादि रूसी साम्राज्य के अधीन देशों की स्वाधीनता का एलान किया गया था। चौथे अध्याय में धनिकवर्ग को ध्वंस करने के उद्देश से, मज़दूर पेशा वर्ग की रूस में उन पर चढ़ाई के समय, सोवियट सरकार की सारी सत्ता सिर्फ़ मज़दूर पेशा वर्ग की सच्ची प्रतिनिधि-संस्थाओं—मज़दूरों, सैनिकों और किसानों की सोवियटों के ही हाथ में रखने तथा रूस के अंदर रहनेवाली सारी विभिन्न जातियों की, स्वतंत्रता और स्वेच्छा की बुनियाद पर, एक सच्ची और टिकाऊ संघ बनाने के उद्देश से, रूस के 'सोवियट प्रजातंत्रों की संघ' के सिर्फ़ मूल सिद्धांतों को रचने और विभिन्न जातियों के इस संघ में शरीक होने की शर्तों का निश्चय उन जातियों की 'मज़दूर और किसानों की सोवियटों की कांग्रेसों' पर छोड़ देने के निश्चय का एलान था। पाँचवें अध्याय में, सोवियट राज-व्यवस्था के मूल सिद्धांत और पहले चार अध्यायों की तरह बहुत-सी आम प्रचार के मतलब की बातें थीं। खास बातों में एक तो रूस की विभिन्न जातियों को अपनी *'स्थानिक सोवियटों की कांग्रेसों और उन 'कांग्रेसों की कार्यकारिणी'* की सरकारें क़ायम करने का अधिकार माना गया था। दूसरे रूसी समाजशाही संघीय सोवियट प्रजातंत्र' की सारी सत्ता 'अखिल रूसी सोवियटों की कांग्रेस' और कांग्रेस की बैठकों के बीच में, 'अखिल रूसी सोवियटों की कांग्रेस की केंद्रीय कार्य-वाहक-समिति' में मानी गई थी। मज़दूर और किसानों को अख़बारों, रिसालों और किताबों द्वारा स्वतंत्रता से अपने विचार प्रकट करने के लिए सरकार की तरफ़ से प्रेस और छापने का सामान मुफ़्त देने और उन की सभाओं के लिए सारे सभा करने लायक़ स्थान, मेज़, कुर्सियां, रोशनी और गर्मी का इंतज़ाम कर देने की भी योजना कर दी गई थी।

इस 'अस्थायी राज-व्यवस्था' के सिद्धांतों और स्वरूप पर, रूस देश के विभिन्न भागों की सोवियटों की कांग्रेसों में विचार हो जाने के बाद, ३० दिसंबर सन् १९२२ ई० को मोस्को में ट्रांस-काकेशिया प्रजातंत्र, युक्रेन प्रजातंत्र और रूसी-समाजशाही-संघीय-सोवियट प्रजातंत्र की संघ की कांग्रेस की बैठक में सब सोवियट प्रजातंत्रों की एक 'समाजशाही सोवियट प्रजातंत्रों की संघ' क़ायम करने का निश्चय कर के एलान किया गया था कि, 'सोवियट प्रजातंत्रों के क़ायम होने के समय से दुनिया, पूंजीशाही और समाजशाही की, दो दुनियाओं में बँट गई है। पूंजीशाही की दुनिया में राष्ट्रीय असमानता और

बैर-भाव, उपनिवेशों की गुलामी, राष्ट्रीय अत्याचार और लड़ाइयां देखने को मिलती हैं, समाजशाही की दुनिया में एक-दूसरे का विश्वास और शांति, राष्ट्रीय स्वाधीनता और समानता और विभिन्न जातियों के भ्रातृभाव से आपस में मिल कर शांति से रहने का दृश्य मिलता है। पूंजीशाही दुनिया को अपनी आर्थिक लूट की पद्धति को जारी रखते हुए मुख्तलिफ़ जातियों की स्वाधीनता का प्रश्न सुलझाना असंभव हो गया है। और विभिन्न राष्ट्रों का बैर-भाव इतना बढ़ गया है कि पूंजीशाही दुनिया की हस्ती खतरे में है। सिर्फ़ सोवियट सरकारों में, मज़दूरपेशा-शाही की पद्धति पर, जिस से राष्ट्रीय अत्याचारों की जड़ ही कट जाती है। विभिन्न जातियों में परस्पर विश्वास और भ्रातृ-भाव क़ायम करना मुमकिन साबित हुआ है। इस भ्रातृ-भाव और परस्पर विश्वास के कारण ही सोवियट प्रजातंत्र आज तक, भीतरी और बाहरी साम्राज्यशाही हमलों की टक्करों को सहते हुए, गृह-युद्ध को मिटा कर अपनी हस्ती क़ायम रख और शांतिमय आर्थिक रचना प्रारंभ कर सके हैं। मगर यूरोपीय युद्ध के बाद की बिगड़ी हुई दशा[1] फिर से बनाने के लिए विभिन्न प्रजातंत्रों के अलग-अलग प्रयत्न काफ़ी न होने और बाहरी पूंजीशाही हमलों का मिल कर मुक़ाबला करने और मजदूरपेशा-वर्ग का खानदान दुनिया भर में फैला होने से, सारे सोवियट प्रजातंत्रों के मज़दूरपेशा लोग एक समाजशाही खानदान में मिल जाने के लिए मजबूर होते हैं। अस्तु; सारे सोवियट प्रजातंत्र मिल कर एक 'संयुक्त समाज शाही सोवियट संघ' नाम का राष्ट्र बनाते हैं जिस से बाहरी और भीतरी उन्नति के साथ ही विभिन्न जातियों को अपने राष्ट्रीय विकास की स्वतंत्रता भी रहे। समाजशाही प्रजातंत्रों की यह संघ सब सदस्यों की मर्जी से बनती है। इस संघ के सब सदस्य बराबर हैं और हर एक सदस्य को जब चाहे तब, संघ से अलग हो जाने और दूसरे समाजशाही सोवियट प्रजातंत्रों को इस संघ में शामिल होने की स्वतन्त्रता है।

इस एलान या प्रस्तावना के बाद 'समाजशाही' 'सोवियट प्रजातंत्रों की संघ' की जो राज-व्यवस्था बनी उस को ग्यारह अध्यायों में बाँटा गया है। पहले अध्याय में संघ की 'सर्वोपरि अधिकार संस्थाओं' के अधिकार-क्षेत्र का वर्णन है। दूसरे अध्याय में 'संयुक्त प्रजातंत्रों' और 'संघ' के नागरिकों के अधिकार दिए गए हैं। तीसरे अध्याय में 'संघ की सोवियटों की कांग्रेस' का संगठन, सत्ता और काम, चौथे अध्याय में 'संघ की केंद्रीय कार्य-वाहक समिति' का संगठन, सत्ता और काम का बयान है। पाँचवें अध्याय में 'कार्यवाहक समिति' के 'प्रेसीडीयम' और छठे में संघ की 'जनसंचालकों की समिति'[2] की योजना है। सातवें अध्याय में संघ की अदालत, आठवें अध्याय में 'जन-संचालकों'[3] नवें में 'संयुक्त-

---

[1]लड़ाई में हज़ारों आदमी काम आ जाने और चले जाने से बहुत-से खेत उजाड़ हो गए और कारख़ाने इत्यादि बंद हो गए थे। सारा देश का आर्थिक जीवन ही उजड़-पुजड़ हो गया था।

[2]काउंसिल आफ़ दि पीपुल्स कमीसरीज़।

[3]पीपुल्स कमीसरीज़ ऐंड युनाइटेड स्टेट्स पोलिटिकल डिपार्टमेंट।

राज्य राजनैतिक विभाग', दसवें अध्याय में 'संयुक्त प्रजातंत्रों' और ग्यारहवें अध्याय में संघ के चिह्न, झंडे और राजधानी का ज़िक्र है।

संघीय सरकार की अधिकार सीमा में परराष्ट्रों से संबंध, संघ की सीमाओं में फेर-फार नए प्रजातंत्रों का संघ में दाखिला, युद्ध और संधि, परदेशों से क़र्ज़ लेना, अंतर-राष्ट्रीय संधियों को मंज़ूर करना, देश के भीतर और बाहर के व्यापार का नियंत्रण, डाक, तार, सड़कें, संघ का बजट और 'मुद्रा और साख'[1] की पद्धतियों की स्थापना के विषय रक्खे गए हैं। बाहरी देशों से सारा व्यापार सोवियट सरकार ख़ुद या उस से अधिकार प्राप्त संस्थाएं ही करती हैं। यहां तक सोवियट संघ की राज-व्यवस्था में और दूसरी संघीय राज-व्यवस्थाओं में बहुत कम फ़र्क़ मालूम होता है। फिर भी दो ख़ास बातें मिलती हैं। एक तो संघ के भीतर की सारी तिजारत और व्यापार का अर्थात् सारे संयुक्त प्रजातंत्रों की तिजारत और व्यापार का नियंत्रण संघ के हाथ में होना और दूसरी लगभग सारे करों पर संघ का कब्ज़ा होना। संयुक्त प्रजातंत्रों और उन के प्रांतों को भी थोड़े से कर लगाने का अधिकार है। मगर वे अमल में उस अधिकार का बहुत कम प्रयोग करते हैं। अधिकतर उन का ख़र्च संघ के करों के भेजे हुए भाग ही से चलता है। कृषि, व्यापार, आमदनी, व्यापारी, चुंगी इत्यादि के सारे मुख्य कर संघ के होते हैं। परंतु उन की आय संघ और प्रजातंत्रों में बँट जाती है। संघीय राज-व्यवस्थाओं में कुछ ऐसी आम शर्तें रक्खी जाती हैं जिन से सारी संघ में एक प्रकार की समता दीखती है। आमतौर पर संघीय राज-व्यवस्थाओं में नागरिकों के अधिकारों इत्यादि का भी वर्णन होता है। अस्तु, 'सोवियट संघ' की राज-व्यवस्था में 'संघ' को कुछ ऐसे सिद्धांत क़ायम करने का अधिकार दिया गया है, जिन पर संघ के सार्वजनिक जीवन के विभिन्न विभागों को एक-सा अमल करना चाहिए। संघ के आर्थिक जीवन का तरीक़ा और चलन, और इस संबंध में रियायतें देने का हक़ संघी सरकार को दिया गया है। ज़मीन के बाँट और इस्तेमाल, खानों, जंगलों, और संघ के सारे जलमार्गों के इस्तेमाल के उसूलों, न्यायालयों की स्थापना और संचालन और दीवानी और फ़ौजदारी के संघीय क़ानूनों के उसूलों, मज़दूरी के तात्विक क़ानूनों के उसूलों, राष्ट्रीय शिक्षा के आम उसूलों, राष्ट्रीय स्वास्थ्य की रक्षा के उसूलों को बनाने का अधिकार भी संघ को दिया गया है। संघ की तरफ़ से इन उसूलों को संयुक्त प्रजातंत्रों में क़ायम करने की, सौभाग्य से, ज़रूरत नहीं पड़ी, क्योंकि विभिन्न सोवियट प्रजातंत्र एक ही समाजशाही के सिद्धांतों पर बने थे। अस्तु, उन का ढाँचा भी एक ही सा था। राज-व्यवस्था में संघ को इन उसूलों को बनाने का अधिकार रखने का केवल इतना ही अर्थ है कि इन उसूलों को, सारी संघ की बिना अनुमति के, नष्ट नहीं किया जा सकता है: मगर इस प्रबंध से संघ के विभिन्न संयुक्त प्रजातंत्रों की 'इच्छा होने पर संघ से अलग हो जाने की स्वतंत्रता' राज-व्यवस्था में दे कर जो प्रजातंत्रों की स्वाधीनता पर ज़ोर दिया गया है, वह एक प्रकार से मिटती जाती है, क्योंकि वास्तव में प्रजातंत्रों को किसी विभाग में किसी प्रकार की स्वतंत्रता नहीं रहती है। सब को संघ के सिद्धांतों के एक नमूने पर चलना होता है। अस्तु, सोवियट

---

[1] करेंसी।

संघ को दुनिया के सब संघीय राष्ट्रों से अधिक 'केंद्रीय संघ' कहा जा सकता है।

संघ की अधिकार-सीमा में आनेवाली दूसरी बातें साधारण हैं। 'प्रवास और निवास,'[1] तोल और माप, अंक,[2] विदिशियों की नागरिकता के अधिकारों के क़ानून और अपराधियों को आम माफ़ी के अधिकार का अमल दूसरी केंद्रीय सरकारों की तरह संघ के अधिकार में रक्खा गया है। संघ को 'प्रजातंत्रों की कांग्रेसों', 'कार्यवाहक समितियों अथवा 'जन संचालकों की समितियों' के उन सारे निश्चयों को रद्द कर देने का अधिकार भी दिया गया है, जिन को संघ अपनी राज-व्यवस्था के प्रतिकूल मानती हो।

संघ की सदस्य सरकारों को बराबरी का स्थान देने के लिए संघ की संस्थाओं में एक 'जातियों की सभा'[3] रक्खी गई है। इस सभा में सारे संयुक्त 'प्रजातंत्रों' के पाँच-पाँच प्रतिनिधि और 'स्वतंत्र क्षेत्रों'[4] के एक-एक प्रतिनिधि होते हैं। इस सभा का काम विभिन्न जातियों के राष्ट्रीय अधिकारों की रक्षा करना है। रूसी 'सोवियट संघ' में, सारी 'सोवियट संघ' की ७४ फ़ीसदी आबादी होने से, उस का ही सोवियट संघ पर अधिकार हो जाने की शंका दूर करने के लिए यह सभा रक्खी गई है। दूसरी 'संघ-सभा'[5] में सब आबादी के अनुसार प्रतिनिधि होते हैं और वह सारी संघ की सम्मिलित प्रजा की प्रतिनिधि होती है। इन दोनों सभाओं को बराबर के अधिकार होते हैं; क्योंकि संघ के क़ानूनों को बनाने के लिए दोनों की मंज़ूरी ज़रूरी होती है। संयुक्त प्रजातंत्रों को अपने-अपने बजट पर अधिकार होता है; मगर यह सारे विभिन्न बजट संघ के बजट का ही भाग माने जाते हैं और उन के लिए संघीय कार्यकारिणी की मंज़ूरी की ज़रूरत होती है। मगर अमल में यह मंज़ूरी सिर्फ़ नाम की होती है। फिर भी इन बजटों पर बहस होती है और इस संबंध में भी प्रजातंत्रों को पूरी स्वतंत्रता नहीं होती है। प्रजातंत्रों को सिर्फ़ एक शासन-कार्य में अवश्य स्वतंत्रता होती है। वर्ना संघ के बनाए हुए उसूलों की हद के अंदर ही प्रजातंत्रों को क़ानून बनाने का अधिकार होता है और सारे बड़े मामलों में क़ानून बनाना संघ का काम माना गया है। परराष्ट्र-विभाग, युद्ध, विदेशी व्यापार, डाक, तार और मार्ग के संघीय विभागों और मंत्रियों को छोड़ कर दूसरे सब विभाग और उन के मंत्री संयुक्त प्रजातंत्रों में भी होते हैं। कृषि, गृह, न्याय, शिक्षा, स्वास्थ्य और सार्वजनिक-हितकार्य के विभाग सिर्फ़ शासन-विभाग होने से संयुक्त प्रजातंत्रों में ही होते हैं और बराबरी उन के सानी विभाग संघ में नहीं होते हैं। संयुक्त प्रजातंत्रों को अपनी संस्कृति के विकास में पूर्ण स्वतंत्रता और शासन में बहुत कुछ स्वतंत्रता तथा क़ानून बनाने में एक हद तक स्वतंत्रता दी गई है। सरकार की आम नीति और परराष्ट्रों से संबंध इत्यादि संघ का काम है। 'रूसी समाजशाही संघीय सोवियट प्रजातंत्र' के स्थान में रूस की स्थायी राज-व्यवस्था में 'समाजशाही सोवियट प्रजातंत्रों की संघ' बनाई गई है, क्योंकि रूस की समष्टिवादी सरकार 'दुनिया के मज़दूरपेशा लोगों के एक खानदान' में विश्वास रखती है और मानती है

[1] माइग्रेशन एंड सेटिलमेंट। [2] स्टेटिस्टिक्स।
[3] ऑटोनोमस टेरीटरीज़। [4] कौंसिल आफ़ नेशनलटीज़।
[5] यूनियन कौंसिल।

कि धीरे-धीरे, एक के बाद दूसरे राष्ट्रों में जैसे-जैसे मज़दूरशाही स्थापित होती जायगी वैसे-वैसे, वे सोवियट-पद्धति को क़बूल कर के 'समाजशाही सोवियट प्रजातंत्रों की संघ' में शामिल होते जायँगे जिस से आख़िरकार एक दिन दुनिया में मज़दूरशाही अर्थात् समाजशाही या सच्ची प्रजासत्ता का अधिकार स्थापित हो जायगा और पूँजीशाही अर्थात् थोड़े-से धनवानों की भेड़ियाशाही का दुनिया से हमेशा के लिए नाम-निशान मिट जायगा। रूस की इस राज-व्यवस्था के मूलतंत्रों को मानने या बदलने का अधिकार सिर्फ़ संघ की सोवियटों की कांग्रेस को है। संयुक्त प्रजातंत्रों के अधिकारों की हिफ़ाज़त संघ करती है। सारी संघ में सब को एक से नागरिकता के अधिकार हैं और जिन संयुक्त प्रजातंत्रों की राज-व्यवस्था संघ की राज-व्यवस्था से भिन्न है उन को अपनी राज-व्यवस्था में तबदीली कर के संघ के अनुसार बना लेने की शर्त रक्खी गई है। संघ की सरकार का संगठन नीचे से ऊपर को पिरामिड[1] के ढंग पर है। उस की बुनियाद गाँवों और शहरों की सोवियटों पर है। गाँव पहले अपनी सोवियट चुनता है। गांव की सोवियट वोलोस्ट[2] अर्थात् ताल्लुक़ा सोवियटों की कांग्रेस के लिए प्रतिनिधि चुनती है। गाँव की सोवियटें यूएज़्ड अर्थात् ज़िला सोवियट कांग्रेस के लिए भी, अपने हर दस सदस्यों के लिए एक के हिसाब से, प्रतिनिधि चुनती हैं। सब से जरूरी ग्यूबरनिया[3] अर्थात प्रांतिक सोवियट कांग्रेस होती है जिस को उस क्षेत्र की शहरों की सोवियटें और ताल्लुक़ा सोवियट कांग्रेसें चुनती हैं।

शहरी और देहाती सोवियटें

हम कह चुके हैं कि 'समाजशाही सोवियट संघ' की राजनैतिक इमारत का चुनाव पिरामिड की तरह नीचे से ऊपर की तरफ़ ढलता चला गया है। उस की बुनियाद शहरों और गाँवो की सोवियटों की दो ईंटों से बनी है। अस्तु, सोवियट संघ की केंद्रीय संस्थाओं के अध्ययन के पहले उस की बुनियादी संस्थाओं शहर और गाँव की सोवियटों का अध्ययन कर लेने से हम को सोवियट संघ के राजनैतिक संगठन को अच्छी तरह समझने में भी वही सहूलियत हो जायगी जो स्विट्ज़रलैंड की सरकार के अध्याय में केंद्रीय शासन के अध्ययन से पहले स्थानिक शासन के अध्ययन से हो गई थी।

शहरों की सोवियटों में अधिकतर कारख़ानों और दूसरे मुख़्तलिफ़ उद्योगों और धंधों की सोवियटें होती हैं। क्रांति के पहले रूस में कारख़ानों का भी वैसा ही बुरा हाल था जैसा रूस की सरकार का था। उन में भी वैसी ही नादिरशाही चलती थी। कारख़ाने के मालिक कारख़ानों पर कज़्ज़ाकों का हमेशा पहरा रखते थे। कोई मज़दूर कभी शराब पी लेता था या किसी दिन काम पर देर से आता था या ग़ैरहाज़िर हो जाता था तो कज़्ज़ाकों के कोड़ों से उस की चमड़ी उधेड़ दी जाती थी। अब रूस के कारख़ानों में काम करने-

[1] पिरामिड मिस्र में बनी हुई एक ख़ास तरह की क़बें हैं, जो नीचे बुनियाद पर फैली हुई और ऊपर को ढलती हुई एक नोक में इस प्रकार ख़त्म होती हैं।

[2]...

[3] ग्यूबरनिया।

वालों की हुकूमत चलती है, क्योंकि सोवियट संघ के शहरों में प्रजाशाही कारखानों से शुरू होती है। हर कारखाने में एक चुनी हुई कमेटी या कौंसिल होती है, जिस को 'काम कमेटी'[1] कहते हैं। इन कमेटियों के तीन काम होते हैं। एक तो मज़दूरों की तरफ़ से यह कमेटियां कारखाने के प्रबंधकों से सारी बात-चीत करती हैं। दूसरे ये कारखाने की सामाजिक संस्थाओं पालनाघर, औषधालय स्कूलों इत्यादि का प्रबंध करती हैं। तीसरे सोवियटों के चुनावों में इन कमेटियों का निश्चय महत्व का होता है। पहले सोवियट सिर्फ़ 'हड़ताल कमेटियों' को कहते थे। मगर इन हड़ताल कमेटियों ने रूस की क्रांति में प्रजा की सेना का काम दिया था। अस्तु, बाद में 'कारखाने की सोवियटों' का रूस की सरकार में बड़ा ज़रूरी स्थान बन गया।

'काम कमेटी' के चुनाव के मुख्तलिफ़ कारखानो में मुख्तलिफ़ तरीक़े होते हैं। बड़े कारखानों में दस-दस पाँच-पाँच मज़दूर मिल कर अपना एक प्रतिनिधि चुन लेते हैं और इन प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन होता है, जिस में 'काम कमेटी' का चुनाव होता है। छोटे कारखानों में सारे मज़दूरों की सभा 'काम कमेटी' को चुनती हैं। सभा में कारखानों के विभिन्न विभागों के मज़दूरों को अपने-अपने विभागों से उम्मीदवारों के नाम पेश करने का हक़ होता है। उदाहरणार्थ कपड़े के कारखाने में सूत कातनेवाले विभाग के आदमी अपने उम्मीदवार और कपड़ा बुननेवाले विभाग के आदमी अपने उम्मीदवारों के नाम पेश कर सकते हैं। सभा में हाथ उठा कर मत लिए जाते हैं। और आधे से कम मत मिलनेवालों उम्मीदवारों को चुना नहीं जाता है 'काम कमेटी' के प्रधान मंत्री और कुछ सदस्यों को कारखाने में मज़दूरी के काम से बरी कर दिया जाता है। और वह सारा समय कारखाने में काम करनेवालों की सेवा और हित रक्षा के कामों में बिताते हैं। मगर उन को कारखाने से वेतन बराबर मिलता रहता है। कमेटी के दूसरे सदस्य कारखाने में काम करते रहते हैं और कमेटी की बैठकों में भी भाग लेते हैं। मुख्तलिफ़ कारखानों की 'काम कमेटियों' में मज़दूरों की संख्या के अनुसार सदस्यों की मुख्तलिफ़ संख्या होती है। 'काम कमेटी' का दफ़्तर कारखाने की इमारत में ही होता है और उस का सारा काम-काज कई छोटी-छोटी कमेटियों में बाँट दिया जाता है। 'काम कमेटी' के कुछ सदस्यों की एक कमेटी और उतने ही कारखानों का प्रबंध करनेवाले अधिकारियों की एक कमेटी को मिला कर एक 'झगड़ों का कमीशन'[2] बनाया जाता है। मज़दूरों की सारी शिकायतों के पहले इस कमीशन पर उन के जो सदस्य होते हैं, वे जांच करते हैं और जाँच के बाद जिन शिकायतों को वे वाजिब समझते हैं उन को ही इस कमीशन के सामने रखते हैं। ग़ैर-वाजबी तरीक़े पर मज़दूरों से बर्ख़ास्त करने तरक़्क़ी ठीक तरह पर न करने या काफ़ी मज़दूरी न देने इत्यादि की हर क़िस्म की व्यक्तिगत और सामूहिक, शिकायतें कमीशन के सामने आती हैं। जिन शिकायतों का फ़ैसला इस कमीशन में मज़दूरों की दृष्टि से संतोषजनक नहीं होता है उन की मज़दूरों की तरफ़ से 'मज़दूर संघ' के पास अपील होती है। 'मज़दूर संघ' उन शिकायतों को अपने ज़िले की 'फ़ैसला पंचायत'[3] के सामने

[1]वर्क्स कौंसिल। [2]डिस्प्यूट्स कमीशन। [3]ट्रेडयूनियन।

रखती है। वहां भी संतोषजनक फ़ैसला न होने पर एक 'राष्ट्रीय फ़ैसला पंचायत'[1] के सामने उन शिकायतों की अपील आ सकती है।

'काम कमेटी' की एक 'उपसमिति' मज़दूरों की योग्यता[2] बढ़ाने का काम भी करती है। इस उपसमिति को कारख़ाने के प्रबंध की काहिली और ग़लतियां बतलाने, कारख़ाने के मज़दूरों की तरफ़ से आनेवाली नई सूझों और प्रस्तावों को अमल में लाने, ज़रूरत पड़ने पर प्रबंध संचालकों के साथ बैठ कर विचार करने और प्रबंध चलाने वाले अधिकारियों की बदइंतज़ामी या बदसलूकी की समालोचना करने का हक़ होता है। सोवियट संघ के कारख़ानों और सेना में नम्र व्यवहार पर बड़ा ज़ोर दिया जाता है। ज़ार-शाही के ज़माने के बे बात या ज़रा-ज़रा-सी बात पर लात और घूंसे अब रूस के कारख़ानों में इतिहास की बात हो गई है। जहां अभी तक यह बातें थोड़ी बहुत चलती हैं वहां मज़-दूरों का ही दोष मानना चाहिए; क्योंकि वे अपनी ही कमज़ोरी और कायरता के कारण शिकायत करने से डरते हैं। कुछ लेखकों का कहना है कि रूस के कारख़ानों में आजकल भी मज़दूर कड़ी व्यवस्था पसंद करते हैं; मगर अधिकारी कारख़ाने में कड़ी व्यवस्था रखने के साथ ही मज़दूरों से अब नम्र व्यवहार करते हैं। 'काम कमेटी' के सरकार से कारख़ानों के सुप्रबंध और सुसंचालन में भी बड़ा फ़ायदा होता है; क्योंकि सोवियट कारख़ानों के मैनेजरों को सस्ता और अच्छा माल निकालने के साथ-साथ मज़दूरों को हमेशा संतुष्ट रखने का ख़याल रखना पड़ता है। कारख़ानों के मैनेजरों की नियुक्ति तक सरकार 'मज़दूर संघों' की सलाह से करती है। मज़दूर संघ कारख़ानों की 'काम कमेटियों' की सलाह पर अमल करती हैं। अस्तु, मैनेजर की गर्दन पर हमेशा से मज़दूरों का हाथ रहता है और उस को मज़दूरों के साथ सँभाल कर चलना होता है।

'काम कमेटियां' अपनी सामाजिक संस्थाओं के काम पर अभिमान करती हैं। इन 'सामाजिक संस्थाओं' का काम चलाने के लिए मज़दूर अपने वेतन का एक अच्छा भाग देते हैं, क्योंकि वे समझते हैं कि इन्हीं संस्थाओं के द्वारा उन का जीवन फलता-फूलता और हरा-भरा होता है। उदाहरणार्थ गर्भवती स्त्रियों को बच्चा पैदा होने से दो मास पहले से काम पर से छुट्टी मिल जाती है और बच्चा पैदा होने के दो मास बाद तक वे काम पर नहीं जाती हैं। इस सारे समय में उन्हें बराबर कारख़ाने से पूरी तनख़्वाह तो मिलती ही रहती है, मगर दूसरा महीना ख़त्म होते ही वे बच्चे को मज़े से कारख़ाने के 'पालनाघर'[3] में रख कर रोज़ कारख़ाने में अपना काम कर सकती हैं। 'पालनाघर' में बच्चों के लालन-पालन के लिए होशियार दाइयां रहती हैं, और एक डाक्टर भी रोज़ बच्चों को देखने के लिए आता है। जब तक बच्चा मां का दूध पीता है, तब तक मां को बीच-बीच में दूध पिलाने के लिए आध-आध घंटे की छुट्टी मिलती है। 'पालनाघर' के बाद बच्चा कारख़ाने के किंडरगार्टन स्कूल में शिक्षा पाता है। किंडरगार्टन स्कूल के बाद बच्चे राष्ट्रीय स्कूल में जाते हैं। सोलह वर्ष की उम्र से लड़के कारख़ाने में काम कर सकते हैं। मगर सोलह से अठारह वर्ष की उम्र तक उन को सिर्फ़ छः घंटा काम करना होता है। ख़ास हुनरों के

---

[1] नेशनल आरबिट्रेशन बोर्ड। [2] स्किल्स। [3] बेबी होम।

लिए जवान उम्मीदवारों को साढ़े तीन साल 'कलाभवन'[1] में गुज़ारने पड़ते हैं। साल में दो बार नौजवानों का अच्छी तरह डाक्टरी मुआयना भी होता है। जिन की तंदुरुस्ती ठीक नहीं होती है उन को सहल काम दे दिया जाता है या किसी 'स्वास्थ्यगृह'[2] में स्वस्थ जीवन पालन की शिक्षा लेने के लिए भेज दिया जाता है। कारख़ाने का डाक्टर मज़दूरों के घरों का भी मुआयना करता है।

हर कारख़ाने में व्यायाम-शाला, दौड़ने, खेलने-कूदने के मैदान कुश्ती के लिए अखाड़े और निशानेबाज़ी सीखने के लिए स्थान होते हैं। सैकड़ों युवक और युवतियां इन स्थानों में खेल-कूद में रोज़ भाग लेते हैं। दिमाग़ी विषयों में शौक़ रखनेवाले जिन मज़दूरों की इच्छा 'मज़दूरों के महाविद्यालय'[3] में जाने की होती है उन के लिए आठ महीने की पढ़ाई-लिखाई का एक ख़ास पाठ्यक्रम रक्खा गया है। इस पाठ्य-क्रम को ख़त्म कर लेने के बाद वह महाविद्यालय मं जा सकते हैं। इस महाविद्यालय में सिर्फ़ प्राथमिक शिक्षा प्राप्त, होनहार मज़दूर नौजवानों को, तीन-चार साल शिक्षा दे कर विश्वविद्यालयों में भर्ती होने के क़ाबिल कर दिया जाता है। अस्तु, कारख़ाने से सीधा विश्वविद्यालय में चले जाने का मज़दूरों के लिए रास्ता खुला रहता है। वय-प्राप्त मज़दूरों का भी डाक्टरी मुआयना जब-तब होता है। उन को आवश्यकतानुसार 'काम-कमेटी' दवादारू की सहायता पहुँचाती है। उन के लिए भी पढ़ने-लिखने के लिए ख़ास पाठ-शालाएं होती हैं, जिन में निरक्षरों को पचीस पचीस के हर दर्जे में अंकगणित इत्यादि साधारण बातें सिखाई जाती हैं और कारीगरों को उन की कारीगरी से संबंध रखनेवाले प्राथमिक विज्ञान का ज्ञान कराया जाता है। हर साधारण मज़दूर को साल भर में पंद्रह दिन और जोखिम का काम करनेवालों को एक मास की पूरी मज़दूरी पर छुट्टी मिलती है। इन छुट्टियों में सैर-सपाटे के लिए रेलों इत्यादि—पर ख़ास रियायतें दी जाती हैं। हर कारख़ाने में अस्पताल भी होता है। बीमारी और कमज़ोर आदमियों को पहाड़ों इत्यादि स्वास्थ्य प्राप्त करने के स्थानों में भी ज़रूरत के अनुसार भेज दिया जाता है। कारख़ाने के सामाजिक जीवन का केंद्र प्रायः कारख़ाने का क्लबघर होता है। यहां रोज़ शाम को बहुत-से मज़दूर—अधिकतर नौजवान—एकत्र होते हैं। कोई बैठ कर चाय पीता और गप्पें लड़ाता है; कोई गान के कमरे में बैठ कर पियानो बजाता या गाता है; कोई पढ़ने के कमरे में बैठ कर अख़बार या किताब पढ़ता है; कोई अपनी पढ़ाई की दिक्क़तों को जानकारों से बैठ कर समझता है। रविवार को अक्सर क्लबघर की नाट्यशाला में मज़दूरों के अलग-अलग समूह नाटक रचते या गायन-वादन का कार्य-क्रम रखते हैं। कारख़ाने के एक भाग में मज़दूरों को हवाई जहाज़ों पर उड़ने और लड़ाई में विषैली गैस इत्यादि भयंकर अस्त्रों का प्रयोग करना भी सिखाया जाता है, क्योंकि रूस की सरकार अपनी सारी मज़दूर पेशा जन-संख्या को, पूंजीशाही दुश्मनों के मुक़ाबले के लिए, हमेशा तैयार रखना चाहती है। इसी प्रकार रहने के घरों की समस्या हल करने के लिए 'काम-कमेटी' की एक अलग समिति होती है। 'काम-कमेटी' के सारे कामों का अहवाल सोवियट

---

[1]टेकनिकल स्कूल। [2]सैनाटोरियम। [3]रैब्फ़ाक।

सरकार की सारी कारंवाई का लंबा चिट्ठा हो जायगा। सोवियट रूस में प्रजासत्ता का रूप और अमल समझाने के लिए इतना हाल काफ़ी है। कारखानों में जिस प्रकार प्रजासत्ता का अमल चल सकता है, उसी प्रकार शहर की दूसरी सारी सोवियटों में चलता है।

रूस की क्रांति के पहले जिस प्रकार क़ज्ज़ाकों का कारख़ानों में डंडा चलता था, उसी प्रकार गाँवों में पुलिस के चौकीदारों का राज होता था। परंतु अब, कारख़ानों की तरह गाँव भी अपनी सोवियटों के द्वारा ही अपना सारा प्रबंध और शासन चलाते हैं। गाँव के लोगों की एक सार्वजनिक सभा में गाँव 'सोवियट' के सदस्य, सौ की आबादी के लिए एक सदस्य के हिसाब से, चुन लिए जाते हैं। अमीर और ग़रीब किसानों में अभी तक रूस में झगड़ा चला आता है। इस लिए कारख़ानों की सोवियटों से गाँवों की सोवियटों के चुनावों में अधिक मारा-मारी रहती है। समष्टिवादी दल गाँवों की सोवियटों में अपने उम्मीदवारों का चुनाव कराने की बहुत कोशिश करता है। क्योंकि कारख़ानों की तरह गाँवों में 'समष्टिवादी दल' का इतना ज़ोर नहीं है। अकसर गाँवों की सोवियटों में समष्टिवादी दल के अधिक सदस्य नहीं चुने जाते हैं। फिर भी सोवियटों में चुने जाने वाले लोग आम तौर पर इस दल से सहानुभूति रखने वाले होते हैं। गाँव की स्त्रियों और मर्दों में कारखानों की स्त्रियों और मर्दों से जागृति कम होती है।

गाँव की सोवियट का प्रधान ग्राम सोवियट का सब से बड़ा कारगुज़ार हाकिम[1] होता है, उस को वेतन भी दिया जाता है। 'गाँव सोवियट' के दो ही मुख्य काम होते हैं। एक तो ताल्लुक़ा या 'तहसील सोवियट' के लिए प्रतिनिधियों को चुनना और दूसरा गाँव की 'सामाजिक संस्थाओं' का सचालन और प्रबंध करना कारखानों की तरह गाँवों में भी स्कूल, क्लब, अखाड़े और खेल-कूद के स्थान इत्यादि होते हैं, जिन का सारा काम-काज गाँव की सोवियट चलाती है। मगर गाँव की ज़रूरी समस्याओं को सोवियट गाँव की सार्वजनिक सभा के सामने तय होने के लिए रखती है। उदाहरणार्थ गाँव के लिए आवश्यक ईंधन गाँववाले अपने घोड़ों को ले जा कर खुद जंगल से लावें या एक सहकारी संस्था को ठेका दे कर यह काम इकट्ठा सारे गाँव के लिए करा लिया जाय, इस बात का निश्चय करने के लिए गाँव की सार्वजनिक सभा बुलाई जावेगी।

शहर की सोवियटों में एक हज़ार आबादी के लिए एक प्रतिनिधि चुना जाता है और उन में आम तौर पर कम से कम पचास और अधिक से अधिक एक हज़ार सदस्य होते हैं। कारख़ानों, व्यापारी संस्थाओं, शिक्षालयों और उन सारी संस्थाओं, जहां मज़दूरी पर लोग काम करते हैं, शहरों की सोवियटों के लिए प्रतिनिधि चुने जाते हैं। जिन संस्थाओं में सौ से कम मज़दूर-पेशा लोग काम करनेवाले होते हैं वे दूसरी वैसी ही छोटी संस्थाओं के साथ मिल कर चुनाव में भाग लेती हैं, क्योंकि कम से कम पाँच सौ काम करनेवालों के लिए ही एक प्रतिनिधि चुना जा सकता है। गाँव सोवियटों के सदस्यों को गाँव और अड़ोस-पड़ोस के नगरों की दस हज़ार से कम आबादी के क़स्बों की प्रजा हर सौ आदमियों की आबादी के लिए एक प्रतिनिधि के हिसाब से चुनती है। ग्राम-सोवियटों

[1] एग्ज़िक्यूटिव आफ़िसर।

में आम तौर पर कम से कम तीन और अधिक से अधिक पचास प्रतिनिधि होते हैं। प्रतिनिधियों का चुनाव तीन मास के लिए होता। जिन गाँवों में प्रजा की सार्वजनिक सभा गाँव के शासन की समस्याओं पर विचार और निश्चय करती हैं वहां स्वीट्ज़रलेंड के गाँवों की तरह ख़ालिस प्रजाशाही चलती है। रोज़मर्रा का काम-काज चलाने के लिए गाँव की सोवियटें अधिक से अधिक पाँच और शहरों की सोवियटें कम से कम तीन और अधिक से अधिक पंद्रह सदस्यों की एक कार्यकारिणी समिति चुन लेती हैं। परंतु लेनिनग्राड और मास्को की सोवियटों की कार्यकारिणी समितियों में चालीस सदस्य तक चुने जा सकते हैं। कार्यकारिणी समिति पूरे तौर पर उसी सोवियट को जवाबदार होती है, जो उस को चुनती है। हर सोवियट को या जिन गाँवों में सार्वजनिक सभा की ख़ालिस प्रजाशाही होनी है वहां उस सभा को अपने क्षेत्र में शासन की सारी सत्ता होती है। सोवियटों की बैठकें 'कार्यकारिणी-समिति' की ओर से या सोवियट के आधे सदस्यों की माँग पर कम से कम शहरों में हफ़्ते में एक बार और देहात में हफ़्ते में दो बार आमतौर पर बुलाई जाती हैं। हर सोवियट के काम-काज के विभिन्न विभाग होते हैं और उन की देख-भाल उसी सोवियट की उप-समितियां और अधिकारी करते हैं। गाँव और शहर की सोवियटों की 'कार्यकारिणी-समित' का कर्तव्य अपनी ऊपरी सोवियट संस्थाओं के आदेशों पर चलना अपने क्षेत्र की उन्नति के उपाय करना और स्थानिक समस्याओं को हल करना होता है।

स्थानिक सोवियट कांग्रेसें

वोलोस्ट कांग्रेस, गाँवों और शहरों की सोवियटों के ऊपर की सारी सोवियटें 'सोवियट कांग्रेसें' होती हैं, क्योंकि उन में प्रजा के सीधे चुने हुए प्रतिनिधि नहीं होते हैं। प्रजा गाँव और शहर की सोवियटों के प्रतिनिधियों को चुनती है और गाँव और शहर की सोवियटें ऊपर की दूसरी सोवियटों के सदस्यों को चुनती है। सारी सोवियट काँग्रेसों में शहरों के मज़दूरों को गाँव के किसानों से क़रीब तिगुने प्रतिनिधि भेजने का हक़ होता है। रूस की समष्टिवादी राज-व्यवस्था में मज़दूरों को सामाजिक क्रांति का पक्षपाती माना गया है इसलिए उन को किसानों से तिगुने प्रतिनिधि भेजने का हक़ दिया गया है। गाँवों की सोवियटों के ऊपर सोवियटों की वोलोस्ट अर्थात् ताल्लुक़ा या 'तहसील सोवियट' कांग्रेसें होती है। हर देहाती सोवियट के दस सदस्यों के लिए वोलोस्ट कांग्रेस में एक प्रतिनिधि लिया जाता है। दस सदस्यों से कम सदस्यों की देहाती सोवियटों का एक-एक प्रतिनिधि लिया जाता है।

यूऐज़्द कांग्रेस—यूऐज़्द या 'ज़िला सोवियट' कांग्रेसों में देहाती सोवियटों से, एक हज़ार की आबादी के लिए एक के हिसाब से मगर सारे ज़िले के लिए तीन सौ से अधिक नहीं चुन कर प्रतिनिधि आते हैं। दस हज़ार से कम की आबादी के कस्बों की सोवियटों से भी प्रतिनिधि चुन कर 'ज़िला सोवियट कांग्रेसों' में आते हैं। एक हज़ार से कम आबादी की छोटी-छोटी देहाती सोवियटें मिल कर एक हज़ार के लिए एक के हिसाब से

प्रतिनिधि चुन लेती हैं। मगर क़स्बों, कारख़ाने और व्यापारी संस्थाओं की सोवियटों को दो सौ मतदारों के लिए एक प्रतिनिधि ज़िला कांग्रेस में भेजने का अधिकार होता है।

प्रांतिक कांग्रेस—'प्रांतिक सोवियट कांग्रेसों' में शहरों की सोवियटों के प्रतिनिधि, पाँच हज़ार से अधिक आबादी की कारख़ाने के मज़दूरों की बस्तियों के प्रतिनिधि और ताल्लुक़ा 'सोवियट कांग्रेसों' के प्रतिनिधि होते हैं। 'ताल्लुक़ा कांग्रेसों' से दस हज़ार की आबादी के लिए एक प्रतिनिधि के हिसाब से, शहरों, मज़दूरों की बस्तियों और बस्तियों के बाहर के कारख़ानों और व्यापारी संस्थाओं से दो हज़ार मतदारों के लिए एक प्रतिनिधि के हिसाब से प्रांतिक कांग्रेसों में चुन कर प्रतिनिधि आते हैं। मगर सारे प्रांत से तीन सौ से अधिक प्रतिनिधि किसी हालत में नहीं लिए जाते हैं। 'प्रांतिक कांग्रेस' सोवियट की बैठक के पहले ही 'ज़िला कांग्रेस' की बैठक होने पर, ताल्लुक़ा कांग्रेस के बजाय, ज़िला कांग्रेस ही ताल्लुकों की ओर से 'प्रांतिक कांग्रेस' के लिए प्रतिनिधि चुन सकती है। जिन प्रांतीय नगरों में सोवियटें नहीं होती हैं उन के भी दस हज़ार की आबादी के लिए एक के हिसाब से, 'प्रांतिक कांग्रेस' में प्रतिनिधि आते हैं।

प्रादेशिक कांग्रेस—'प्रादेशिक सोवियट कांग्रेसों' में, शहरी सोवियटों, से पाँच हज़ार की आबादी के लिए एक प्रतिनिधि के हिसाब से और ज़िला कांग्रेसों के पचीस हजार की आबादी के लिए एक के हिसाब से चुन कर सोवियट प्रतिनिधि आते हैं। मगर एक 'प्रादेशिक सोवियट कांग्रेस' में पाँच सौ से अधिक प्रतिनिधि नहीं आ सकते हैं। किसी 'प्रांतीय सोवियट कांग्रेस' से फ़ौरन पहले होने पर, शहरों और ज़िला सोवियटों की बजाय, प्रांतिक कांग्रेस से भी उसी हिसाब से 'प्रादेशिक सोवियट कांग्रेस' में प्रतिनिधि आ सकते हैं। अगर प्रजातंत्र की कांग्रेस से पहले किसी 'प्रादेशिक सोवियट कांग्रेस की बैठक होती है तो 'प्रादेशिक सोवियट कांग्रेस' ही प्रजातंत्र की कांग्रेस के लिए प्रतिनिधि चुन सकती है।

हर एक 'सोवियट कांग्रेस' अपनी एक कार्यकारिणी कमेटी चुन लेती है जो कांग्रेसों की बैठकों के दर्मियान के समय में काम चलाती हैं। कार्यकारिणी के प्रधान और मंत्री और कभी-कभी एक और सदस्य को वेतन भी मिलता है। 'प्रांतिक सोवियट कांग्रेस' की कार्यकारिणी में राज-व्यवस्था के अनुसार २५ सदस्य तक चुने जा सकते हैं। मगर कांग्रेस को हर एक यूऐज़द और उद्योगी ज़िले से कम से कम एक-एक प्रतिनिधि ले कर राज-व्यवस्था में दी हुई संख्या से अधिक संख्या कार्यकारिणी में रखने का भी अधिकार होता है। अक्सर प्रांतिक कांग्रेसों की कार्यकारिणी में पचास तक सदस्य हो जाते हैं। इन में से हर एक सदस्य शासन के किसी न किसी विभाग का ख़ास-तौर पर ज्ञान प्राप्त कर के उस विभाग में काम करता है। प्रजातंत्र के शासन विभागों के ही मुक़ाबले के प्रांतिक कांग्रेसों के शासन विभाग होते हैं जिन में शासन का सारा काम बाँट दिया जाता है। शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि इत्यादि की शासन-नीति प्रांतिक सरकारों के यह विभाग

स्थानिक हालतों के अनुसार निश्चित करते हैं। हर विभाग की मूलनीति तो राष्ट्रीय सरकार ही निश्चित करती है, मगर स्थानिक ज़रूरतों के मुताबिक़ उस के अमल में थोड़ा बहुत फेरफार करने का मौक़ा प्रांतिक सरकारों को रहता है। प्रांतिक सरकारों को अपना अधिकतर खर्च अपने उन उद्योगों के मुनाफ़े से चलाना होता है जो उन के अमल में होते हैं और जिन का प्रबंध वह चलाती हैं। कभी-कभी किन्हीं खास स्थानिक ज़रूरतों के लिए उन्हें कुछ कर लगाने का भी अधिकार होता है। राष्ट्रीय कोष से प्रांतिक सरकारों को जो खर्च की सालाना इमदाद मिलती है, उस पर उन का बहुत कुछ सहारा रहता है। बहुत-सी प्रांतीय सरकारों की सारी आमदनी का लगभग आधा भाग आजकल शिक्षा और स्वास्थ्य में खर्च कर दिया जाता है। मगर गाँवों और कारखानों की सोवियटों तथा और सब सोवियटों की तरह प्रांतिक सोवियटों का शासन-कार्य दूसरे यूरोप के देशों की तरह सरकारी नौकरों पर नहीं छोड़ दिया जाता है। जिस प्रकार गाँव में सोवियट का चुना हुआ प्रधान आजकल सब से बड़ा अधिकारी होता है उसी प्रकार 'प्रांतिक सोवियटों' में कार्यकारिणी के सदस्यों ने ज़ारशाही की पुरानी नौकरशाही का स्थान ले लिया है। बहुत-सी खास बातों के विशेषज्ञ जानकारों और दफ़्तरों में काम करने के लिए क्लर्कों इत्यादि को तो रक्खा ही जाता है। मगर सोवियटों के चुने हुए सदस्य भी शासन का काम बड़ी मेहनत से करते हैं। चुनाव के समय इन प्रतिनिधियों को अपने काम का चिट्ठा मतदारों के सामने रखना होता है। रूस में सोवियटों के लिए व्याख्यानदाताओं, बुद्धिमानों या बड़े आदमियों को चुनने की किसी को फ़िक्र नहीं होती है। जो सदस्य मेहनती होते हैं और अच्छे-अच्छे और अधिक संख्या में सार्वजनिक हित के काम कर के दिखाते हैं उन को ही प्रजा चुनती है।

सोवियटें बहुत-सी उप-समितियों में बाँट दी जाती हैं और हर एक उप समिति को किसी न किसी विभाग के शासन का भार दे दिया जाता है। सोवियट के बाहर से भी कुछ सदस्य इन समितियों में लिए जा सकते हैं। हर एक सदस्य पर किसी न किसी काम का भार रहने से सब अपने को ज़िम्मेदार समझते हैं। किसी प्रतिनिधि को अस्पतालों को की देख-रेख, किसी को स्कूलों और किसी को मज़दूरी के घंटों इत्यादि के नियमों के पालन की देखरेख का काम सौंप दिया जाता है। सोवियटों की सभाएं जल्दी-जल्दी या लगातार कई दिनों तक नहीं होती हैं। अकसर मास्को से कोई न कोई बड़ा अधिकारी स्थानिक सोवियटों को राष्ट्रीय नीति समझाने के लिए आता-जाता रहता है। स्थानिक सोवियटों की बैठकों में मुख़्तलिफ़ विभागों की रिपोर्टों पर विचार होता है और बजट पास किया जाता है। मगर सोवियट के हर सदस्य का मुख्य काम अपने शासन-कार्य को करना होता है। सोवियटें धारा-सभाओं की तरह सिर्फ़ ज़बाँदारी का अखाड़ा नहीं होती है। वहां कुछ कर के दिखाना होता है। अकसर प्रांतिक सोवियटों की जगह पर बाहर के सदस्यों के लिए आकर ठहरने और जिस विभाग में उन्हें शौक़ हो उस में कुछ दिन काम कर के उस विभाग का सारा काम-काज समझ लेने के लिए प्रबंध रक्खा जाता है। हर क्षेत्र में वास्तविक सत्ता उस क्षेत्र की 'सोवियट कांग्रेस' को रहती है। साल में एक बार आम तौर पर

इन कांग्रेसों की लगभग दस दिन तक बैठकें होती हैं। कांग्रेसों में किसी प्रकार के क़ानून पास नहीं होते हैं। कांग्रेसों का वातावरण सार्वजनिक सम्मेलनों का-सा होता है और वहां सिर्फ़ शासन-नीति पर आम चर्चा होती है, तथा शासन के उसूलों के संबंध में ही प्रस्ताव पास किए जाते हैं। सोवियटों को ऊपर से आनेवाले सरकारी आदेशों का पालन, अपने क्षेत्रों की उन्नति के उपाय, स्थानिक शासन समस्याओं की पूर्ति, और अपने क्षेत्र की सारी सोवियटों के काम का ऐकीकरण करना होता है। सोवियट कांग्रेसों और उन की कार्य-कारिणी को अपने क्षेत्र की स्थानिक सोवियटों के काम-काज पर पूरा अधिकार होता है अर्थात् प्रादेशिक कांग्रेस का प्रदेश के अंदर की सारी सोवियटों पर अधिकार होता है, और प्रांतिक कांग्रेसों को प्रांत के अंदर की उन शहरी सोवियटों को छोड़ कर जो ज़िला सोवियट में नहीं जाती है और सारी सोवियटों पर अधिकार होता है। खास मामलों में केंद्रीय सरकार को ख़बर करने के बाद और आमतौर पर सब मामलों में अपने आधीन सोवियटों के सारे निश्चयों को 'सोवियट कांग्रेसें' नामंज़ूर और रद्द कर सकती हैं।

हर सोवियट का चुनाव वहां की स्थानिक सोवियट की निश्चित की हुई तारीख पर, एक 'चुनाव कमीशन' और स्थानिक सोवियट के प्रतिनिधियों के सामने किया जाता है। चुनाव के नियम और तरीक़े 'केंद्रीय कार्यकारिणी' के आदेशानुसार 'स्थानिक सोवियट' तय करती है। चुनाव का अहवाल और मतों का फल एक काग़ज पर दर्ज कर के 'चुनाव कमीशन' और स्थानिक सोवियट के प्रतिनिधियों के हस्ताक्षरों के साथ और दूसरे चुनाव के काग़ज़ातों के साथ 'स्थानिक सोवियट' के पास भेज दिया जाता है। फिर चुनाव के नतीजे की जाँच स्थानिक सोवियट की एक 'देखभाल-समिति'[1] कर के अपनी रिपोर्ट स्थानिक सोवियट को देती है। झगड़ा होने पर किसी प्रतिनिधि के चुनाव के बाक़ायदा होने न होने का फ़ैसला वही सोवियट करती है। किसी का चुनाव बाक़ायदा न ठहरने पर नया चुनाव कराती है। सारा चुनाव ही ग़ैर-क़ायदा होने पर उस सोवियट के ऊपर की सोवियट उस चुनाव को खारिज करने का हुक्म निकालती है। ज़रूरत पड़ने पर केंद्रीय कार्यकारिणी के पास तक चुनाव के झगड़ों की अपील जा सकती है। चुनने-वाले मतदारों को हमेशा अपने चुने हुए सोवियटों पर प्रतिनिधियों को वापिस बुला लेने और नया चुनाव कराने का अधिकार भी होता है।

सोवियट-पद्धति की सरकार में विश्वास रखनेवालों का कहना है कि प्रतिनिधि पद्धति की सरकारों में सोवियट-पद्धति सब से श्रेष्ठ है, क्योंकि सोवियट-पद्धति में शासकों को प्रजा के बहुत नज़दीक रहना पड़ता है। उन का यह दावा सिर्फ़ शहरों और गाँवों की सोवियटों के बारे में सच्चा हो सकता है, क्योंकि शहर की सोवियटें लगभग कारखानों के जीवन का आईना होती हैं और गाँव की सोवियट में सीधा किसान राज चलता है। मगर शहर और गाँव की सोवियटों से ऊपर की सोवियटों के विषय में उन का यह दावा ठीक नहीं कहा जा सकता है। ऊपर की संस्थाओं को सोवियट कह भी नहीं सकते हैं। वे 'सोवियट कांग्रेसें' होती हैं। रूस जैसे

---

[1] निरीक्षक कमीशन।

लंबे चौड़े देश में, जहां अभी तक सड़कों और रेलों का इतना सुभीता नहीं है—इन कांग्रेसों की अक्सर बैठकें बुलाना, कांग्रेसों में आए हुए प्रतिनिधियों को कई दिन तक लंबी बैठकों के लिए रोक रखना अशक्य होता है। अस्तु, इन 'सोवियट कांग्रेसों' का मुख्य काम मुफ़स्सिल के ज़िलों को केंद्र की खबर देते रहना होता है। कांग्रेसों में आनेवाले प्रतिनिधि बड़े ध्यान से मुख्तलिफ़ रिपोर्टों को सुनते हैं और चर्चा में भाग लेते हैं। फिर विभिन्न विषयों पर अपनी राय क़ायम कर के अपने स्थानों को चले जाते हैं। सोवियट कांग्रेसों को शासन पर लगातार कड़ी आँख रखने और शासन की अच्छी तरह से नुकताचीनी करने का मौक़ा नहीं होता है। सरकार का विरोधीदल रूस में कोई न होने से दूसरे देशों की तरह सरकारी काम की नुक्ताचीनी करने वाला विरोधीदल रूस में नहीं होता है। अस्तु, शासन, जाँच पड़ताल, नुक्ताचीनी और नियंत्रण का सारा काम 'कार्यवाहक समितियाँ' ही करती हैं। मगर उन के प्रजा के नज़दीक रहने का श्रेय सोवियट पद्धति को देना उचित न होगा। शासन से प्रजा के संतुष्ट रहने के दो कारण कहे जा सकते हैं एक तो 'कार्यवाहक समितियों' में समष्टिवादी-दल के ही सदस्य अधिक होते हैं और 'समष्टिवादी-दल' प्रजा के दिल और दिमाग़ के नज़दीक रहने की बहुत कोशिश करता है। दूसरे साधारण आदमियों को रास्ता खुला होने से जन-साधारण के मन को पहचाननेवाले बहुत से लोग 'कार्यवाहक समितियों' में आ जाते हैं।

सोवियट-पद्धति के टेढ़े चुनावों के विषय में भी शंका की जा सकती है कि पेशेवार चुनावों से लोगों को अपने पेशों की तंग बातों का ही चुनावों पर अधिक खयाल रखने का लालच रहता है, सब पेशों के लोगों का मिल कर अन्य देशों में अपने रहने के स्थानों के अनुसार मत देने से मतदारों को देश के सार्वजनिक हित का अधिक ख्याल रहता है। इस शंका में बहुत कुछ सत्य है। मगर रूस में जा कर जिन बाहर के बहुत से लोगों ने वहां की हालत का अध्ययन किया है, उन का कहना है कि वहां चुनावों में तंग खयाली का ज़ोर नहीं रहता है, इस के शायद दो कारण हो सकते हैं। एक तो पेशों की बातों के फ़ैसले के लिए मज़दूर-पेशा अपनी 'उद्योग-संघों' पर निर्भर रहते हैं, जिन का सोवियट सरकार में काफ़ी असर होता है। दूसरे चुनाव में चर्चा के प्रश्नों को चुनने और उन का वातावरण बनाने का काम एक समष्टिवादी दल ही करता है, जिस पर उस के विरोधी तंग खयाली का इलज़ाम तो दूर, उल्टा दुनिया भर की फ़िक्र की खामखयाली का इलज़ाम आम तौर पर लगाते हैं। हां, कुछ हद तक यह ज़रूर ठीक है कि इन चुनावों में राष्ट्र के के बड़े-बड़े नीति के प्रश्नों का दूसरे देशों की तरह फ़ैसला नहीं होता है। उन का फ़ैसला समष्टिवादी-दल के भीतरी दायरों में होता है। सोवियट सरकार की अधिकतर समस्याएं शासन की समस्याएं होती हैं। गाँव और शहर की सोवियट से लेकर 'संघीय कार्यवाहक समिति' तक में इन्हीं समस्याओं पर विचार होता है, कि किस प्रकार अमुक मास तक चीज़ों की आम क़ीमत घटाई जाए, किस प्रकार अमुक कारखानों की पैदावार बढ़ाई जाए, किस प्रकार अशिक्षित लोगों की संख्या कम की जाए, और स्कूलों की संख्या बढ़ाई जाए, किस प्रकार लोगों का स्वास्थ सुधारा जाए और कृषि में उन्नति की जाए

इत्यादि-इत्यादि । यह समस्यायें मतदारों के सामने समष्टिवादी दल रखता है और उन का ज्ञान इन बातों में दिन-दिन बढ़ाने का प्रयत्न करता है ।

केंद्रीय सरकार

'समाजशाही सोवियट प्रजातंत्रों की संघ की सोवियटों की कांग्रेस'—सोवियट संघ की 'सर्वोपरि सत्ताधारी संस्था 'संघ सोवियट' कांग्रेस होती है। उसी में राष्ट्र की सारी प्रभुता होती है । उस की बैठकों के बीच के काल में उस की सारी सत्ता संघ की 'केंद्रीय कार्यवाहक समिति' में रहती है । 'संघ सोवियट कांग्रेस' में शहरी सोवियटों से पचीस हज़ार मतदारों के लिए एक प्रतिनिधि और 'प्रांतिक कांग्रेसों' से सवा लाख की आबादी के लिए एक प्रतिनिधि के हिसाब से प्रतिनिधि आते हैं। प्रतिनिधियों का चुनाव आम तौर पर प्रांतिक कांग्रेसें करती हैं । मगर 'संघ कांग्रेस' से पहले 'प्रादेशिक कांग्रेस' की बैठक होने पर 'प्रादेशिक कांग्रेस' भी 'संघ कांग्रेस' के लिए प्रतिनिधि चुन सकती है । 'संघ सोवियट कांग्रेस' की आम बैठकें साल में एक बार 'कार्यवाहक समिति' बुलाती है। सालाना कांग्रेस में क़रीब डेढ़ हज़ार प्रतिनिधि आते हैं और उस की लगभग दस दिन तक मास्को की नाट्यशाला[1] में बैठक चलती है । मंच पर विभिन्न विभागों के विभागपति और नेता चढ़ कर बैठते हैं। लंबे-लंबे व्याख्यान भी झाड़े जाते हैं । 'कार्यवाहक समिति' आवश्यकता समझने पर अपनी इच्छा से, या अपनी दो शाखाओं—'संघ-सभा' और 'जातियों की सभा'—में से किसी की माँग पर, या दो संयुक्त प्रजातंत्रों की माँग पर 'संघ सोवियट कांग्रेस' की खास बैठक भी बुला सकती है । अगर कोई ऐसे कारण पैदा हो जाएं जिन से 'संघ कांग्रेस' समय पर न बुलाई जा सके तो 'कार्यवाहक समिति' को कांग्रेस की बैठक बुलाना स्थगित कर देने का हक़ भी होता है। दूसरी सोवियट कांग्रेसों की तरह संघ-कांग्रेस भी सिर्फ़ नीति के आम प्रश्नों पर चर्चा कर के प्रस्ताव पास कर देती है । क़ानून बनाने और शासन करने का मुख्य काम 'कार्यवाहक समिति' करती है ।

'केंद्रीय कार्यवाहक समिति'—समाजवादी सोवियट प्रजातंत्रों की संघ की 'केंद्रीय कार्यवाहक समिति' क़ानून बनाने, शासन चलाने और नियंत्रण का सारा काम-काज करती है । 'कार्यवाहक समिति' के दो भाग होते हैं । एक 'संघ सभा'[2] और दूसरी 'जातियों की सभा'[3] । 'संघ सोवियट कांग्रेस' प्रजातंत्रों के प्रतिनिधियों में से, हर एक प्रजातंत्र की आबादी के लिहाज़ से लगभग ३७१ सदस्यों की एक 'संघ सभा' चुनती है।। जातियों की सभा' में सारे 'संयुक्त प्रजातंत्रों'[4] से पाँच-पाँच प्रतिनिधि और स्वतंत्र क्षेत्रों[5] से एक-एक प्रतिनिधि चुन कर आते हैं । मगर 'जातियों की सभा' का चुनाव भी मंजूर सोवियट संघ कांग्रेस करती है । केंद्रीय कार्यकारिणी के प्रेसीडीयम, संघ कांग्रेस के 'जन-संचालकों की समिति'[5], संघ के विभिन्न जन-संचालक के विभागों संयुक्त प्रजातंत्रों की कार्य-

---

[1]काउंसिल ग्राफ़ दि यूनियन । [2]काउंसिल ग्राफ़ नेशनेल्टीज़ । [3,4]समाजशाही सोवियट प्रजातंत्रों की संघ में सात सोवियट प्रजातंत्र और ग्यारह स्वतंत्र क्षेत्र शामिल हैं ।

[5]पीपुल्स कमीसेरीज़ ।

कारिणी के सारे प्रस्तावों, फ़रमानों और दस्तूरुल अमलों की जाँच और देख-माल 'कार्यवाहक समिति' की दोनों सभाएं करती हैं। 'सघ सभा' और 'जातियों की सभा' में पेश होनेवाले सारे प्रश्नों पर भी दोनों सभाएं विचार करती हैं। 'संघीय कार्यवाहक समिति' ही सारे प्रस्तावों, दस्तूरुल अमलों और फ़रमानों[1] को प्रकाशित करती, 'संघ के क़ानूनी और शासन-कार्यों' का एकीकरण करती और प्रेसीडियम और जन-संचालकों का काम काज निश्चित करती है।

संघ के राजनैतिक और आर्थिक जीवन के सिद्धांतों को निश्चय करनेवाले सारे फ़रमान और प्रस्ताव तथा राष्ट्रीय संस्थाओं के चालू ज़ाब्ते में फेरफार करनेवाले प्रस्ताव और फ़रमान मंज़ूरी के लिए 'संघीय कार्यवाहक समिति' के सामने आते हैं। 'संघीय कार्यवाहक समिति' के सारे प्रस्तावों और एलानों पर संघ के सारे क्षेत्र में फ़ौरन अमल होता है।

'संघीय कार्यवाहक समिति' को प्रेसीडीयम, संयुक्त प्रजातंत्रों की सोवियट कांग्रेसों और उन की कार्यकारिणियों तथा सघ के क्षेत्र के अंदर की और सब संस्थाओं के हुक्मों और प्रस्तावों को अमल में आने से रोक देने और रद्द करने का हक़ होता है। 'संघीय-कार्यवाहक समिति' की बैठकें साल में तीन बार उस के 'प्रेसीडीयम' की ओर से बुलाई जाती हैं। संघ-सभा के प्रेसीडीयम या जातियों की सभा के प्रेसीडीयम या किसी एक प्रजातंत्र की कार्यकारिणी की माँग पर, 'संघीय कार्यवाहक समिति' का प्रेसीडीयम एक प्रस्ताव पास कर के, 'सघीय कार्यवाहक समिति' की ख़ास बैठकें भी बुला सकता है।

'सघीय कार्यवाहक समिति' के सामने जो मसविदे आते हैं वे 'संघसभा' और 'जातियों की सभा' दोनों में मंज़ूर होने पर ही संघीय कार्यवाहक समिति द्वारा मंज़ूर समझे जाते हैं। उन की मंज़ूरी का एलान 'संघीय-कार्यवाहक-समिति' के नाम में किया जाता है। अगर किसी मसविदे पर दोनों सभाओं की राय नहीं मिलती है तो 'संघ सभा' और 'जातियों की सभा' दोनों की एक सम्मिलित बैठक होती है, और उस में उस मसविदे पर विचार होता है। फिर भी अगर दोनों सभाओं की बहुसंख्या एकमत नहीं होती है तो दोनों में से किसी एक सभा की माँग पर वह प्रश्न फ़ैसले के लिए 'संघ सोवियट कांग्रेस' की साधारण सभा या एक ख़ास सभा के पास भी भेजा जा सकता है। 'संघ-सभा' और 'जातियों की सभा', दोनों, साथ-साथ सदस्यों के अपने अलग-अलग, 'प्रेसीडीयम' चुन लेती है। यह प्रेसीडीयम ही इन सभाओं की बैठकों के लिए कार्य-क्रम तैयार कर के रखते हैं और सभाओं का काम-काज चलाते हैं। इन दोनों प्रेसीडीयम के चौदह सदस्यों और दोनों सभाओं की एक सम्मिलित बैठक में सात सदस्यों को और चुन कर इक्कीस सदस्यों का मिल कर 'केंद्रीय कार्यवाहक समिति' का प्रेसीडीयम होता है। कार्यवाहक समिति की बैठकों के बीच के काल में उस के 'प्रेसीडीयम' को संघ की सारी सत्ता होती है। 'कार्यवाहक समिति' अपने प्रेसीडीयम के सदस्यों में से संयुक्त प्रजातंत्रों की संख्या के अनुसार ात प्रधान चुन लेती है। 'केंद्रीय कार्यवाहक समिति' अपने तमाम काम के लिए 'संघ

---

[1] आर्डीनेंसेज़।

सोवियट कांग्रेस' को ही जवाबदार होती है। उस की बैठक क्रेमलिन के एक पुराने दीवान में होती है, जहां ज़ारशाही के ज़माने में बड़ी अदालत बैठती थी। दर्शकों के आने का अधिकार होता है। हर सदस्य के एक भोंपे में से बोलना होता है, इस लिए तक्क़ारी के लुत्फ़ के लिए यह जगह नहीं होती है। 'सोवियट संघ कांग्रेस' और उस की 'कार्यवाहक समिति' को संघ की राज-व्यवस्था के मंज़ूर करने, बदलने, बढ़ाने, घटाने, संघ की घरेलू और बाहरी नीति का संचालन करने, संघ की सीमा निश्चित करने और बदलने अथवा संघ की किसी ज़मीन को अलग करने और उस पर से संघ का अधिकार उठा लेने, प्रादेशिक सोवियटों की संघों की सीमाओं को निश्चित करने और उन के आपस के झगड़ों का फ़ैसला करने, समाजशाही सोवियट प्रजातंत्रों की संघ में नए सदस्यों को मिलाने और संघ से अलग हो जाने वालों की जुदाई को मंज़ूर करने, शासन की सहूलियत के लिए देश को हिस्सों में बांटने और मिलाने तोल, माप और मुद्रा की पद्धतियों के तय करने, परराष्ट्रों से संबंध और युद्ध की घोषणा और संधि करने, दूसरे देशों से क़र्ज़ लेने और व्यापारी चुंगी लगाने और व्यापारी राज़ीनामे करने, संघ के आर्थिक जीवन की एक आम बुनियाद तय करने और उस की विभिन्न शाखाओं की रूप-रेखा निश्चित करने, संघ का बजट मंज़ूर करने, सार्वजनिक कर लगाने, संघ की सेना का संगठन और संचालन करने, क़ानून बनाने, न्याय शासन का प्रबंध करने, 'जन-संचालकों' और उन की पूरी कौंसिल को नियुक्त करने, हटाने और उन के प्रधान के चुनाव को मंज़ूर करने, संघ के नागरिकों और परदेशियों के नागरिकता के अधिकारों की ज़ब्ती और मिलने के संबंध में नियम प्रकाशित करने, अपराधियों को क्षमा प्रदान करने इत्यादि के बड़े अधिकार हैं। इन के अलावा भी और जिन बातों के वह अपने अधिकार में समझे, उन पर फ़ैसला करने का अधिकार भी 'संघ कांग्रेस' और 'कार्यवाहक समिति' को होता है। मगर सोवियट राज-व्यवस्था के मूल तत्वों के घटाने-बढ़ाने और बदलने तथा दूसरे देशों से संधियां मंज़ूर करने का अधिकार ख़ास तौर पर सिर्फ़ 'संघ सोवियट कांग्रेस ही के होता है। सोवियट संघ की सीमाओं में फेरफार करने उस की ज़मीन कम करने, तथा परराष्ट्रों से संबंध और युद्ध और संधि के प्रश्नों का फ़ैसला भी 'केंद्रीय कार्यवाहक समिति' उसी हालत में कर सकती है जब कि 'संघ सोवियट कांग्रेस' की बैठक बुलाना असंभव हो।

केंद्रीय कार्यवाहक समिति का प्रेसीडियम—केंद्रीय कार्यवाहक समिति की बैठकों के बीच के काल में कार्यवाहक समिति के प्रेसीडियम को सोवियट संघ की क़ानूनी, कार्यकारिणी और शासन की सर्वोपरि सत्ता होती है। सारे अधिकारियों और संस्थाओं के संघ की राजव्यवस्था पर अमल करवाने और संघ सोवियट कांग्रेस और केंद्रीय कार्यवाहक समिति के प्रस्तावों पर अमल करवाने का काम 'प्रेसीडियम' ही करता है। संघ के 'जन-संचालकों की समिति' और विभिन्न 'जन-संचालकों' तथा संयुक्त प्रजातंत्रों की केंद्रीय कार्यवाहक समितियों और जन-संचालकों की कौंसिल के प्रस्तावों को रोकने और रद्द करने का अधिकार केंद्रीय कार्यवाहक समिति के प्रेसीडियम को भी होता है। 'केंद्रीय प्रेसीडियम' अपनी ओर से प्रस्ताव पास करता और फ़रमान और आर्डीनेंस निकालता है और संघीय

जन-संचालकों की कौंसिल और उन के विभिन्न विभागों तथा संयुक्त प्रजातंत्रों की केंद्रीय कार्यवाहक समितियों, प्रेसीडीयमों और दूसरी संस्थाओं के फ़रमानों और प्रस्तावों को देखता और मंज़ूर करता है। संघ के सारे फ़रमान, एलान और प्रस्ताव संघ में प्रचलित सभी मुख्य भाषाओं (रूसी, यूक्रानी, व्हाइट रूसी, जौर्जीयन, आर्मीनीयन, तुर्की तातारी इत्यादि) में प्रकाशित होते हैं। संघीय जन-संचालकों की कौंसिल और संघीय जन-संचालकों के संयुक्त प्रजातंत्रों की कार्यवाहक समितियों और उन के प्रेसीडीयमों से संबंध और व्यवहार के प्रश्नों का फ़ैसला भी संघीय प्रेसीडीयम ही करता है। संघीय प्रेसीडीयम अपने काम के लिए केंद्रीय कार्यवाहक समिति को जवाबदार होता है।

जन-संचालकों की कौंसिल[1] — यूरोप के दूसरे प्रजा-सत्तात्मक देशों की मन्त्रियों की कौंसिल या मंत्रि-मंडल के मुक़ाबले की समाजशाही सोवियट संघ में जन-संचालकों की कौंसिल कही जा सकती है। मन्त्रियों के मुक़ाबले के अधिकारी जन-संचालकों[2] को कह सकते हैं। मगर रूस जन-सञ्चालकों की कौंसिल को दूसरे देशों के मंत्रि-मंडलों से कहीं अधिक अधिकार होते हैं। ज़रूरत पड़ने पर जन-संचालकों की कौंसिल को क़ानून बनाने और फ़रमान निकालने का अधिकार तक भी होता है जिन पर दूसरे क़ानूनों की तरह ही अमल होता है। परन्तु ख़ास ज़रूरतों को छोड़ कर इन क़ानूनों को 'केंद्रीय कार्य-वाहक समिति' के सामने मंज़ूरी के लिए अवश्य पेश किया जाता है। यूरोप के अन्य देशों के मंत्रियों से सोवियट संघ के जन-संचालक और बातों में भी भिन्न होते हैं। दूसरे देशों के मंत्रियों की तरह जन संचालक विभिन्न शासन-विभागों के अधिनायक माने जाते हैं। मगर सोवियट संघ में हर जन-संचालक वास्तव में अपने साथियों की एक छोटी-सी बोर्ड या कमेटी का प्रधान होता है जिन की सलाह उस को शासन के हर मामले में लेनी होती है। इन कमेटियों की बराबर—प्रायः रोज़-रोज़मर्रह के काम काज पर विचार करने के लिए—बैठकें होती हैं। किसी विभाग के जन संचालक से उन की सलाहकार कमेटी के किसी सदस्य का मतभेद होने पर सदस्य को जन-संचालकों की कौंसिल तक से उस जन-संचालक के निश्चय के ख़िलाफ़ अपील करने का हक़ होता है।

शासन-विभाग

सोवियट सरकार के शासन-विभागों को तीन क़िस्मों में बाँटा जा सकता है। एक तो वे शासन-विभाग हैं जो सिर्फ़ सोवियट संघ में होते हैं। दूसरे वे जो सोवियट संघ और संयुक्त प्रजातंत्रों दोनों में एक-से होते हैं। तीसरे वे जो सिर्फ़ संयुक्त प्रजातंत्रों में होते हैं। परराष्ट्र-विभाग, सेना-विभाग, परदेशी व्यापार विभाग[3] जल और थल मार्ग विभाग, डाक और तार विभाग, यह पाँच शासन-विभाग सिर्फ़ संघ में होते हैं। इन के मुक़ाबले के विभाग संयुक्त प्रजातंत्रों या स्थानिक सरकारों में नहीं होते हैं। मगर सारे संयुक्त प्रजातन्त्रों में केंद्रीय सरकार के इन विभागों के प्रतिनिधि रहते हैं।

उद्योग-विभाग, अर्थ-विभाग, मज़दूर और किसानों की जाँच का विभाग,[4] देशी

---

[1] दि काउंसिल आफ़ पीपुल्स कमीसेरीज़। [2] पीपुल्स कमीसेरीज़। [3] फ़ारेन ट्रेड। [4] वर्कर्स एंड पिज़ेंट्स इंस्पेक्शन।

व्यापार-विभाग,[1] सार्वजनिक अर्थ की सर्वोपरि समिति[2] का विभाग, यह पाँच विभाग संयुक्त कमसरियट[3] अर्थात् संयुक्त विभाग कहलाते हैं क्योंकि वे संघ की सरकार और संयुक्त प्रजातंत्रों की सरकारों दोनों में एक से होते हैं। संघीय सरकार के यह विभाग अपने विभागों की शासन-नीति के आम उसूलों को तय कर देते हैं और संयुक्त प्रजातंत्रों के इसी नाम के विभाग उन उसूलों पर शासन चलाते हैं। संयुक्त प्रजातंत्रों में भी संघ की तरह इन विभागों के अलग-अलग जन-संचालक होते हैं। फिर भी संघ के विभागों का प्रजातंत्रों के विभागों पर एक हद तक नियंत्रण रहता है। 'मज़दूर और किसानों की जाँच' का विभाग सोवियट शासन की अपनी अनोखी चीज़ है। नीचे से ऊपर तक सोवियट सरकार के शासन में इस विभाग का काम पग-पग पर मिलता है। इस विभाग का काम शासन की आम जाँच-पड़ताल होता है। सारे विभागों के हिसाब-किताब की जाँच और सार्वजनिक कामों का मुआयना यह विभाग करता है। अकसर इस विभाग की तरफ़ से विभिन्न विभागों के कामकाज के बारे में सख्त नुक्ताचीनी होती है, जिस से अधिकारियों की अक़्ल ठिकाने आ जाती है। इस विभाग को बेईमानी और लापरवाही का खोद-खोद कर पता लगाने की फ़िक्र रहती है।

मगर सब से ख़ास और सब से ज़रूरी सोवियट सरकार के विभागों में 'सार्वजनिक अर्थ सर्वोपरि-समिति' का विभाग होता है। सोवियट संघ में हर उद्योग का प्रबंध चलाने के लिए अलग-अलग संस्थाएं होती हैं जिन को 'ट्रस्ट'[4] कहते हैं। विभिन्न उद्योगों के ट्रस्टों के काम का एकीकरण और मिलान का काम 'सार्वजनिक अर्थ समिति' का विभाग करता है। यह विभाग हर उद्योग की पैदावार की मिक़दार और वक़्त तय करता है। चीज़ों की क़ीमत तय करने का काम भी इसी विभाग का होता है। पैदावार करने-वाले मज़दूरों और खरीदारों के हितों का अंतिम निपटारा करना भी इसी विभाग के हाथ में होता है। जब खेती की पैदावार और कारखानों की पैदावार के पदार्थों की क़ीमत में बहुत फ़र्क़ होता है और गाँवों या क़स्बों में असंतोष फैलने का डर होता है, तब इसी विभाग के फ़ैसले पर सारी परिस्थिति निर्भर हो जाती है। सोवियट संघ के सारे उद्योग की निर्माता और विधाता 'गोस्प्लान' नाम की संस्था होती है जो 'सार्वजनिक अर्थ विभाग' की सहकारिता में काम करती है। 'गोस्प्लान' हर उद्योग के अंकों का अध्ययन करने, उस उद्योग की पैदावार के संबंध में प्रजा की ज़रूरतों पर विचार करने, और उन ज़रूरतों के अनुसार उन उद्योगों की पैदावार की मिक़दार और वक़्त तय करने का काम करता है। वही एक उद्योग की पैदावार कम करने और दूसरे उद्योग की पैदावार बढ़ाने का निश्चय कर सकता है। कृषि, उद्योग, खानों इत्यादि के विषय में अंकों को अध्ययन कर के, हर साल दूसरे साल के लिए 'सोवियट संघ' की आर्थिक कार्रवाई का कार्य-क्रम गढ़ना

---

[1]इंटर्नल ट्रेड। [2]सुप्रीम कौंसिल आफ़ पब्लिक इकानमी। [3]कमसरियट।

[4]इन ट्रस्टों और पूँजीशाही देशों के व्यापारी ट्रस्टों में बड़ा फ़र्क़ होता है। नाम एक होने पर भी दोनों बिलकुल भिन्न हैं।

इसी विभाग का काम होता है। 'गोस्प्लान' संघीय सरकार की संस्था होती है। मगर उस की सहायता के लिए उसी तरह की स्वतंत्र संस्थाएं सारे संयुक्त प्रजातंत्रों में होती हैं। इसी संस्था के गढ़े हुए सोवियट संघ के आर्थिक जीवन के वृहत् 'पाँच वर्ष के कार्य-क्रम'[1] को मंज़ूर करके सोवियट सरकार ने जो काम कर के दिखाया है उस से दुनिया की आँखें चौंधिया उठी हैं और पूँजीशाही में विश्वास करनेवाले बहुत-से लोगों की भी रूस की तरफ़ राय बदलने लगी है। समाजवादी कहते हैं कि उद्योग धंधों और कृषि पर से व्यक्तिगत अधिकार हटा कर अगर उन को सार्वजनिक लाभ की दृष्टि से चलाया जाय तो सब को उस से लाभ और सुख होगा। सोवियट संघ इस सिद्धांत पर अमल करने और इस सिद्धांत की सचाई को साबित कर के दिखला देने की कोशिश कर रही है।

तीसरी क़िस्म के शासन-विभागों में 'कृषि विभाग', 'गृह-विभाग', 'न्याय-विभाग', 'शिक्षा-विभाग', 'स्वास्थ्य-विभाग' और 'समाज-हितकारी'[2] विभाग यह छः विभाग होते हैं। यह विभाग सिर्फ़ संयुक्त प्रजातंत्रों में होते हैं और इन के मुक़ाबले के कोई विभाग संघीय सरकार में नहीं होते हैं। संघीय सरकार इन विभागों के संचालन के सिद्धांतों को तय कर सकती है। मगर उन के संचालन की सारी ज़िम्मेदारी संयुक्त सरकारों की होती है। ठंडी साईबेरिया से गर्म तुर्किस्तान तक फैले हुए रूस में हमारे देश की तरह ही तरह-तरह की ज़मीन और आबोहवा मिलती है। अस्तु, कृषि-विभाग को संघीय सरकार की बजाय स्थानिक सरकार के विभागों में रखना उचित लगता है। उसी प्रकार शिक्षा-विभाग भी, क्योंकि समाजवादी सोवियट संघ के विभिन्न प्रजातंत्रों में बहुत-सी जातियां रहती हैं और उन की संस्कृति को सुरक्षित रखना सोवियट नीति के मूल सिद्धांत का एक अंग है। गृह-विभाग का पुलिस इत्यादि का काम, स्वास्थ्य-रक्षा का काम, न्याय का काम और 'समाज हितकारी' अर्थात् बूढ़ों और अपाहिजों इत्यादि की देख-रेख का काम भी स्वभावतः स्थानिक सरकारें ही अधिक अच्छी तरह कर सकती हैं।

संयुक्त राज्य राजनैतिक विभाग—नाम का एक विशेष विभाग सोवियट सरकार को उलट देने के प्रयत्नों, संघ के ख़िलाफ़ जासूसी करने और संघ में लूट मार मचानेवालों का सर्वनाश करने में सब संयुक्त सरकारों का काम एक करने के लिए खोला गया है। यह विभाग भी समाजशाही सोवियट संघ के जन-संचालकों की कौंसिल के अंतर्गत होता है। मगर इस विभाग का अधिपति संचालकों की कौंसिल में सिर्फ़ सलाहकार की तरह बैठता है। उसी प्रकार इस विभाग के प्रतिनिधि विभिन्न संयुक्त प्रजातंत्रों के जन-संचालकों की कौंसिलों में मिल कर काम करते हैं। केंद्रीय कार्यवाहक समिति के एक विशेष प्रस्ताव के अनुसार इस विभाग की कार्रवाई के क़ानूनी या ग़ैरक़ानूनी होने की देख-भाल बड़ी अदालत का एक अधिकारी करता है।

न्याय-विभाग—सोवियट संघ के 'सर्वोच्च न्यायालय' का काम प्रजातंत्रों की अदालतों की रहबरी के लिए संघीय क़ानूनों की व्याख्या करना, प्रजातत्रों की अदालतों के फ़ैसलों की संघीय क़ानूनों के अनुकूल न होने या किसी प्रजातंत्र के हित के विरुद्ध होने

[1] फ़ाइव इयर प्लान। [2] सोशल वेलफ़ेयर।

पर, संघीय न्यायालय के दारोगा[1] की सलाह से जाँच कर के केंद्रीय कार्यवाहक समिति को रिपोर्ट करना, कार्यवाहक समिति की माँग पर विभिन्न प्रजातंत्रों के प्रस्तावों के संघीय राज-व्यवस्था के अनुसार क़ानूनी या ग़ैरक़ानूनी होने के विषय में राय देना, प्रजातंत्रों के आपस के क़ानूनी झगड़ों का फ़ैसला करना और संघ के सब बड़े अधिकारियों के ख़िलाफ़ उन के अधिकार के संबंध में इलज़ामों के मुक़दमों की जाँच करना होता है। 'संघीय न्यायालय' की कई अदालतें होती हैं। एक तो सारे न्यायाधीशों की 'पूरी अदालत' होती है। दूसरी 'दीवानी' और 'फ़ौजदारी' की अलग-अलग थोड़े-थोड़े न्यायधीशों की अदालतें होती हैं। तीसरी 'फ़ौजी अदालतें' होती हैं। 'पूरी अदालत' में ग्यारह न्यायाधीश होते हैं, जिन में एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष, चार संयुक्त प्रजातंत्रों की बड़ी अदालतों के अध्यक्ष और एक संयुक्त राज्य राजनैतिक विभाग का प्रतिनिधि होता है। अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और शेष पाँच न्यायाधीशों को केंद्रीय कार्यवाहक समिति का प्रेसीडीयम नियुक्त करता है।

संघ के न्यायालय के दारोगा और उस के नायब को भी केंद्रीय कार्यवाहक समिति नियुक्त करती है। सरकार दारोगा की राय आम तौर पर सारे क़ानूनी मामलों पर लेती है। मगर उस की राय आख़िर में न्यायालय के फ़ैसले पर निर्भर होती है। मुक़दमों में दारोगा सरकार की तरफ़ से अपराधी के ख़िलाफ़ न्यायालय के सामने अपराध पेश करता है। न्यायालय की 'पूरी अदालतों' के किसी फ़ैसले से दारोगा की राय न मिलने पर दारोगा को केंद्रीय कार्यवाहक समिति के प्रेसीडीयम से शिकायत करने का हक़ होता है। न्यायालय की 'पूरी अदालत' की राय किसी प्रश्न पर माँगने का अधिकार सिर्फ़ केंद्रीय कार्यवाहक समिति को उस के प्रेसीडीयम को, संघीय अदालत के दारोगा को संयुक्त प्रजातंत्रों की अदालतों के दारोगों को, या संघ के संयुक्त राज्य राजनैतिक विभाग को होता है। दीवानी या फ़ौजदारी के ऐसे ज़रूरी मुक़दमों की जाँच के लिए, जिन से दो या दो से अधिक प्रजातंत्रों पर असर पड़ता हो और 'कार्यवाहक समिति' के सदस्यों और संघीय जन-संचालकों की व्यक्तिगत क़ानूनी ज़िम्मेदारी के मुक़दमों को सुनने के लिए न्यायालय की 'पूरी अदालत' ख़ास अदालतें नियुक्त करती है। मगर यह मुक़दमे संघीय न्यायालय के सामने सिर्फ़ केंद्रीय कार्यवाहक समिति या उस के प्रेसीडीयम के ख़ास प्रस्तावों से ही आ सकते हैं।

दूसरे सब विभागों की तरह न्याय का शासन भी सोवियट सरकार में समाजशाही का अटल राज्य क़ायम करने के इरादे से बनाया गया है। अपने न्यायालयों को भी सोवियट सरकार खुल्लमखुल्ला वर्ग-संघर्ष की संस्थाएं मानती है। समष्टिवादी कहते हैं कि हर देश उस देश के लोगों की नीति, माल, सज़ा और मनुष्यों के एक-दूसरे से सबंधों के बारे में जो आम सामाजिक राय होती है, उस के अनुसार ही न्यायाधीश मुक़दमों में फ़ैसला करते हैं। अस्तु, 'समाजशाही सोवियट संघ' में भी न्यायाधीशों को समाजवाद की दृष्टि से ही फ़ैसला करना चाहिए। अतएव सोवियट संघ की अदालतों को सिर्फ़ समाज की रक्षा का ही ख़याल नहीं होता है, बल्कि उन्हें समाजशाही की स्थापना करनेवाली क्रांति की रक्षा

[1] प्रोक्योरेटर।

का खयाल रखना पड़ता है। पेशावर न्यायधीशों को जहां तक हो सके कम कर के साधारण मज़दूरपेशा लोगों को न्याय का काम सुपुर्द करने की भी सोवियट सरकार बहुत कोशिश करती है। प्रांतीय न्यायालयों के अध्यक्ष न्यायाधीश को वहां की कार्यवाहक समिति एक साल के लिए नियुक्त करती है। एक साल खत्म होने पर उस की फिर नियुक्ति हो सकती है, या उस का किसी दूसरे जिले को तबादला किया जा सकता है। स्थानिक सोवियट की बनाई हुई सूची में से दो असेसर भी बारी-बारी से एक हफ़्ते के लिए चुन लिए जाते हैं। यह दोनों असेसर न्यायधीश के साथ मिल कर मुक़दमों का फ़ैसला करते हैं। हमारे देश के असेसरों की तरह वह सिर्फ़ न्यायाधीश को ऐसी सलाह देने वाले नहीं होते हैं, जिन की राय मानना न मानना न्यायाधीश की इच्छा पर होता है। सोवियट संघ के असेसरों को जूरी से भी अधिक अधिकार होता है। सोवियट शासन के मूल सिद्धांत के अनुसार असेसर और न्यायाधीश तीनों मज़दूरपेशा होते हैं। मगर न्यायाधीश बनने से पहले लोगों को कुछ समय तक एक खास शिक्षा लेनी होती है। असेसर लोग भी रात्रि-पाठशालाओं में इसी विषय का ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं। बड़ी अपील की अदालतों में खास शिक्षा और योग्यता के विशेषज्ञ ही न्यायाधीश बनाए जाते हैं।

सोवियट संघ में भी वकील-पेशा लोग होते हैं। उन का एक 'वकील संघ'[1] भी है जिस में अधिकतर पुराने ज़माने के वकील हैं। मगर सोवियट विश्वविद्यालयों में भी वकालत की शिक्षा दी जाती है। हर अपराधी को बचाव के लिए सरकार की तरफ़ से एक मुफ़्त वकील दिया जाता है। धनवान अपराधी अपने वकील खुद भी रख सकता है। मुक़दमों में आम तौर पर बहुत कम खर्च होता है और वे जल्द खत्म हो जाते हैं। सोवियट अदालतों में सिर्फ़ कानून की दृष्टि से अपराधी को सज़ा देने का खयाल नहीं रक्खा जाता है, बल्कि उन को सुधारने का खयाल रक्खा जाता है। पहली बार अपराध करने वाले को अगर उस के उसी प्रकार का अपराध दुहराने का भय नहीं होता है, सिर्फ़ लानत-मलामत कर के सज़ा की बजाय शर्म के ज़रिए से सुधारने का प्रयत्न किया जाता है। सोवियट सरकार के न्यायाधीश शानदार चुग़ा पहनकर शान-शौकत से कुर्सी पर जम कर नहीं बैठते हैं। वे मीठी मीठी बातें कर के अपराधी के दिल की बात जानने और क़ानूनी धाराओं पर ही दृष्टि न रख कर अपराधी मनुष्य को मनुष्य की तरह समझाने की कोशिश करते हैं; बराबर अपराध करने वालों को दूसरे देशों की तरह जेल में रक्खा जाता है। मगर सोवियट सरकार की जेलों में चक्की से काफ़ी आटा पिसा लेने, रामबाँस कुटाने और तरह-तरह की तकलीफ़ें दे कर क़ैदी को क़ैदी होने का दुःखदायी ज्ञान कराने से अधिक क़ैदी को एक प्रकार का बीमार समझ कर उस के साथ अस्पताल का-सा व्यवहार किया जाता है। जेलों में हर एक अपराधी को कोई न कोई एक खास उद्योग या धंधा सिखाया जाता है और कारखानों की मज़दूरी के हिसाब से, उस के घर का खर्च काट कर जो बाक़ी बचता है, उस को छूटने के समय मज़दूरी के तौर पर दे दिया जाता है।

'लालसेना'—सोवियट संघ में रूस के किसानों के प्रिय लाल रंग को क्रांति के

---

[1] यूनियन।

बाद बड़ी महत्ता मिल गई है। सोवियट संघ का झंडा लाल होता है और जिस वस्तु को अधिक से अधिक मान देना होता है, उस में 'लाल' शब्द जोड़ दिया जाता है। अस्तु, सोवियट संघ की सेना 'लाल सेना' कहलाती है। सन् १९२० में सोवियट संघ के पास हर प्रकार की मिला कर ५३ लाख स्थायी सेना थी। मगर सन् १९२६ ई० तक वह घटा कर सिर्फ़ ५ लाख ६२ हज़ार कर दी गई थी। स्थायी सेना के सिवाय रूस में 'जन-सेना' भी होती है। सब मज़दूरों और किसानों के क़ानूनन हर साल कई हफ़्ते तक सैनिक-शिक्षा लेनी होती है। रूसी सेना की दूसरी भी एक विशेषता है। सोवियट संघ के कारख़ाने उद्योग-धंधे और दूसरी राजनैतिक संस्थाएं भी स्थायी सेना की पल्टनों में अपने-अपने दस्ते चुन लेती है जिन को वह हमेशा हर प्रकार की सहायता पहुँचाती रहती हैं। उसी प्रकार पल्टनो के दस्ते अपने अपने गावों के चुन लेते हैं जिन के वे मदद पहुँचाते रहते हैं। इस सरकार की पद्धति से प्रजा और सेना में स्नेह रहता है और सेना प्रजा की रहती है। प्रजा के हितों के ख़िलाफ़ सेना का उपयोग दुर्लभ हो जाने के साथ ही इस पद्धति से सेना उपयोगी रचनात्मक काम में लगी रहती है और सैनिक भी अज्ञान और मूढ़ नहीं बन जाते हैं।

राजनैतिक दल

समाजशाही सोवियट संघ में बस एक मज़दूर पेशाशाही में मानने वाले 'समष्टि-वादी-दल' का राज है। इटली की तरह एक राजनैतिक दल ने सरकार पर अपना क़ब्ज़ा जमा कर दूसरे सारे दलों के तहस नहस कर दिया है। इस दल की सोवियट सरकार पर इतनी छाप है कि जिस प्रकार समष्टिवादी सिद्धांतों के बिना समझे सोवियट राज-व्यवस्था के मूल सिद्धांतों के समझना मुश्किल है। उसी प्रकार इस दल के काम के बिना समझे सोवियट शासन के अच्छी तरह समझना असंभव है। सोवियट राज-व्यवस्था सिर्फ़ इस दल की उद्देश्य-पूर्ति का एक हथियार है। सोवियट राज-व्यवस्था में बराबर की सत्ता रखने वाले बहुत-से अधिकारियों की योजना की गई है। ऐसी राज-व्यवस्था के चलाने का भार अगर एक ही समष्टिवादी दल की तरह सुसंगठित और मज़बूत दल पर न होता तो उस का चलना असंभव हो गया होता, रूस का 'समष्टिवादी' दल भी अपने ढंग का अनूठा राजनैतिक दल है। इस दल ने रूस में विचार और व्यवहार की क्रांति कर के सोवियट संघ में आज अपना अखंड राज अवश्य जमा लिया है। मगर रूस की राजक्रांति का अगुआ यह दल नहीं था। सब से पहला समाजवादी दल रूस में एक और ही दल था जिस का नाम 'नरोडनिकी' अर्थात् 'प्रजा-इच्छा-दल' था इस दल का ज़ोर उन्नीसवीं सदी के तीसरे भाग में था और उस में अधिकतर विश्वविद्यालयों के शिक्षित लोग थे जिन में बहुत-से धनवान भी थे। यह लोग समाजवादी सिद्धांतों को माननेवाले थे और रूस में अपने गावों की 'मीर' यानी पंचायतों की बुनियाद पर समाजशाही का अद्वितीय महल बनाने का ख़्वाब देखते थे। यह लोग किसानों को अपना आराध्यदेव समझते और उन की गिरी हुई दशा पर तरस खा कर उन की हालत सुधारने और उसी उद्देश्य से उन

को क्रांति के लिए उभाड़ने का प्रयत्न करते थे। इस दल के बहुत-से स्त्री-पुरुष दाइयां और शिक्षक बन कर गाँवों में किसानों को क्रांति के लिए उभाड़ने के इरादे से जाते थे। यह लोग बम और पिस्तौल में भी विश्वास रखते थे और अक्सर ज़ुल्म करनेवाले सरकारी अफ़सरों का ख़ून कर डालते थे। मगर ज़ार ऐलेक्जेंडर दूसरे की हत्या कर के इस दल ने अपने ऊपर सरकारी ज़ुल्म की घटाटोप आँधी बुला ली थी और इस दल को अपने उद्देश्यों में सफलता प्राप्त करने में नाकामयाबी रही थी। इस के बाद एक दूसरे 'समाजी क्रांतिकारी'[1] नाम के दल की रूस में हवा बँधी थी, जो बढ़ता-बढ़ता आखिरकार लड़ाई के ज़माने में होनेवाली मार्च और नवंबर की रूस की क्रांतियों के बीच के काल में रूस का सब से बड़ा राजनैतिक दल बन गया था। यह दल भी हमेशा से रूस में फ़ौरन समाजशाही क़ायम कर देने का पक्षपाती था। समाजी क्रांतिकारी शुरू से मानते थे कि रूस में किसान भूख से ऊब कर क्रांति कर डालेंगे। मगर समाजशाही में विश्वास रखने के साथ ही इस दल के लोग निरे 'अंतरराष्ट्रीयवादी'[2] ही नहीं थे। वे देश-भक्ति में भी विश्वास रखते थे। अस्तु, पिछली यूरोपीय लड़ाई शुरू होने पर उन्हों ने अपने देश की सरकार का साथ दिया था। इस दल में भी पहले अधिकतर शिक्षित लोग ही होते थे। मगर पीछे से बहुत-से मध्यम वर्ग के लोग और समझदार किसान भी इस दल में शामिल हो गए थे। मशहूर केरेंसकी इसी दल का नेता था।

तीसरा दल 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल'[3] था। यह दल मार्क्स[4] की वाणी और 'इतिहास की आर्थिक व्याख्या'[5] में अटल यक़ीन रखता था। मार्क्स की भविष्यवाणी के अनुसार—जिस को वह और उस के चेले विज्ञान पर निर्धारित मानते हैं—"संसार में वर्ग-संघर्ष[6] पैदावार की प्रगति के ज़रियों की उन्नति पर मुनहसिर है। जिस प्रकार पैदावार के ज़रियों की उन्नति होने और उद्योग-युग का प्रारंभ होने पर यूरोप में पुरानी नवाबशाही के मुक़ाबले में मध्यमवर्ग के पूँजीपतियों और व्यापारियों की जीत हुई और प्रजासत्तात्मक दल का विकास हुआ, उसी प्रकार उद्योग-युग के अंतिमकाल में मज़दूरपेशा लोगों की संख्या बढ़वाने और उन का ज्ञान बढ़ जाने से मज़दूरों की क्रांति होगी और समाजशाही की हुकूमत क़ायम होगी।" 'समाजी और प्रजासत्तात्मक दल' मार्क्स की इस भविष्यवाणी में वैसा ही कट्टर विश्वास रखता था, जैसा कि हमारे आर्यसमाजी 'वेदों के सब विद्याओं के भंडार' होने में विश्वास रखते हैं। मगर इस प्रकार का कट्टर विश्वास रखनेवाले व्यवहार में भी कट्टर हो जाते हैं, जिस से अक्सर, जहां बहुत करनेवाले सोचते ही रह जाते हैं, वे सफल हो जाते हैं। 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' अपने अक़ीदे के अनुसार मानता था कि रूस में समाजशाही स्थापित होने से पहले रूस को उद्योग-युग के धुएं के बादलों और मशीनों की खड़खड़ में से हो कर गुज़रना ही होगा। उन की नज़र में और कोई छोटा रास्ता नहीं था। वे बमबाज़ क्रांतिकारियों की, सरकारी अफ़सरों की व्यक्तिगत

---

[1] सोशल रिवोल्यूशनरी। [2] इंटरनेशनलिस्ट।
[3] सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी। [4] मार्क्स।
[5] एकानमिक इंटरप्रेटेशन आफ़ हिस्ट्री। [6] क्लास स्ट्रगल।

हत्याओं को लाभदायक नहीं समझते थे। क्योंकि वे जनता के सामूहिक विद्रोह में विश्वास रखते थे। यह लोग क्रांतिकारी विचारों में किसानों को पिछड़ा हुआ मानते थे और उन को क्रांति के अयोग्य मान कर शहरों के मज़दूरपेशा लोगों को ही क्रांति के लिए तैयार करने की कोशिश करते थे। यूरोपीय लड़ाई से पहले रूस में उद्योग-धंधों की उन्नति के कारण मज़दूरपेशा लोगों की दिन-दिन बढ़ रही थी। समाजी प्रजासत्तात्मक दल इन मज़दूरपेशा लोगों से ही रूस में क्रांति करा कर रूस को ज़ारशाही के पंजे से छुड़ाना और ज़ारशाही के स्थान में समाजशाही की स्थापना करना चाहता था।

'समाजी क्रांतिकारी' और 'समाजी प्रजासत्तात्मक' दलों के सदस्यों को रूस में ज़ारशाही के ज़माने में, भारतवर्ष के षड्यंत्रकारियों की तरह छिप-छिप कर रहना और काम करना होता था। एक ही दल के सदस्यों को एक दूसरे का नाम तक नहीं मालूम होता था, क्योंकि यह लोग अक्सर झूठे नाम रख लिया करते थे अथवा एक दूसरे को किसी सख्या से पुकारते थे। यह लोग अक्सर छिपी जगहों में मिला करते थे और पुलीस से आँखमिचौनी-सी खेलते हुए, हमेशा अपनी जान बचाने के लिए एक घर में आज तो कल दूसरे घर में भागे-भागे रहा करते थे। जो काम करते-करते पुलिस के हाथों में पड़ जाते थे, उन को जेल की हवा खानी पड़ती थी। एक दो बार जेल काट आने पर फिर पकड़े जाने पर यह लोग रूस के काले पानी साईबेरिया को निर्वासित कर दिए जाते थे। इन दोनों दलों के लगभग सभी अच्छे-अच्छे काम करने वाले सदस्यों को जेल की यातनाओं ने तपा कर पक्का बना दिया था। कच्चे और आरामतलब आदमियों के लिए इन दलों में जगह नहीं होती थी। ऐसे आदमियों की ख़ुद ही इन दलों में शरीक होने की हिम्मत नहीं होती थी। जो लोग जोश में आ कर धोखे या ग़लती से सदस्य बन जाते थे, वे एक-आध बार पुलिस के चक्कर में आते ही इन दलों को छोड़ कर भाग जाते थे। इन दलों के सदस्यों को मिल कर और सगठन के नियमों के अनुसार काम करना होता था। एक बार जिस बात का निश्चय हो जाता था उस पर दल के सदस्य सैनिक की तरह अमल करते थे, क्योंकि सिर्फ़ बातूनी लोगों को इन दलों में जगह न होने से सारे सदस्य छँटे-मँजे मनुष्य होते थे। सदस्य अपने दल के ऊपरी अधिकारियों के हुक्मों का मिलते ही पालन करते थे। कभी-कभी स्त्री को एक हज़ार मील पश्चिम और पति को एक हज़ार मील पूर्व के किसी स्थान में काम के लिए चौबीस घंटे में एक दूसरे से विदा हो कर चले जाने का हुक्म मिलता था—ऐसे स्थानों में जाने का जहां से फिर लौट कर आने की ज़रा भी आशा नहीं होती थी। मगर स्त्री और पुरुष दोनों एक दूसरे को आख़िरी सलाम कर के निश्चित समय के भीतर ही अपने-अपने लक्षित स्थानों को चले जाते थे। कम से कम बाद में कम्यूनिस्ट या समष्टिवादी दल के नाम से प्रख्यात होनेवाले समूह में ऐसी फ़ौलादी नियम-बद्धता अवश्य थी।

इस सुसंगठित और अपने विश्वासों के लिए मर मिटनेवाले लोगों के 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' में से लेनिन ने उन लोगों को बाद में निकाल दिया था। जो ज़ारशाही के ख़िलाफ़ ग़ैरसमाजवादी दलों से भी मिल कर क्रांति के ज़माने में

काम करना चाहते थे। क्योंकि लेनिन सिर्फ़ एक वर्ग-युद्ध में विश्वास करने वाले लोगों के नेतृत्व में ही क्रांति चाहता था। सारे दल में एक लेनिन ही ऐसा मनुष्य था जो रूस में फ़ौरन सामाजिक क्रांति कर डालने की संभावना में विश्वास रखता था। दूसरे सदस्य सामाजिक क्रांति चाहते ज़रूर थे, मगर उस की फ़ौरन संभावना में विश्वास नहीं रखते थे। मगर लेनिन की रग-रग इस विश्वास से फड़क रही थी; अस्तु, उस ने जान-बूझ कर दल में फूट डाल कर फ़ौरन क्रांति में विश्वास न रखनेवालों को दल से निकाल दिया था और खुशी से अपने साथियों की संख्या कम कर ली थी। उस का यक़ीन था कि क्रांति में थोड़े से श्रद्धावान अटल विश्वासियों के दल से जितना काम बन सकेगा, उतना ढिलमिल यक़ीनवालों के एक लंबे-चौड़े दल की सेना से नहीं बनेगा। मगर लेनिन को भी शायद इस बात का पूरा यक़ीन नहीं था कि पिछली यूरोप की लड़ाई के ज़माने में होनेवाली क्रांति में रूस में समाजशाही क़ायम हो कर बहुत काल तक टिक सकेगी। रूस में समाजशाही क़ायम कर के दुनिया के मज़दूरपेशा लोगों को इस मिसाल से संसार-व्यापी समाजशाही क्रांति का मार्ग दिखा देना ही लेनिन का उद्देश्य अधिक मालूम होता था। उस का खयाल था कि रूस की मज़दूरशाही का अनुकरण पहले जर्मनी के मजदूर करेंगे और उस के बाद सारे यूरोप में मजदूरों की क्रांति फैल जावेगी। कुछ भी हो, लेनिन में वह श्रद्धा और दृढ़ता थी, जो क्रांति का जीवन और सफलता की कुंजी होती है। उस ने श्रद्धा से 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' पर अपना क़ब्ज़ा जमा कर के उस को बाद में अपनी दृढ़ता से छटे हुए मतवालों का समष्टिवादी बोल्शेविक दल बना दिया था।

समष्टिवादी-दल के हाथ में रूस की लगाम आ जाने पर इस दल ने बड़ी श्रद्धा और दृढ़ता से काम लिया। लेनिन के हाथ में सत्ता आते ही उस ने मज़दूरपेशा लोगों को अपने साथ लेने के लिए एलान कर दिया था कि 'समष्टिवादी-दल राष्ट्र की सारी मिलकियत पर मज़दूरपेशा का अधिकार स्थापित करना चाहता है। मज़दूरपेशा लोगों को सिर्फ़ एक समष्टिवादी-दल का साथ' देना चाहिए। 'क्योंकि समष्टिवादी-दल की हुकूमत में सब कुछ मज़दूरपेशा ही का होगा। उन को डरने की कोई वजह नहीं है' क्योंकि 'हार जाने पर मज़दूरपेशा लोगों' के 'पास खोने को सिर्फ़ ज़ंजीरें हैं, और जीत जाने पर राष्ट्र की सारी मिलकियत पर उन का अधिकार होगा।' सत्ता हाथ में आते ही समष्टिवादी-दल ने ज़मीदारों और ताल्लुक़ेदारों से ज़मीन भी छीन कर किसानों को सौंप दी थी। 'समष्टिवादी-दल' के मन को लुभाने वाले इन एलानों को सुन कर और किसानों का ज़मीन पर क़ब्ज़ा उस का प्रत्यक्ष प्रमाण देख कर रूस के किसान और दूसरे मज़दूरपेशा लोग स्वभावतः समष्टिवादी-दल' के साथ हो गए थे। क्रांति के बाद दूसरे देशों के रूस में हस्तक्षेप करने से और ज़ारशाही के पुजारियों, पुराने पूँजीपतियों और ज़मीदारों के बोल्शेविक सरकार पर हमलों से मज़दूरपेशा लोगों और समष्टिवादी-दल का संबंध और भी दृढ़ हो गया था। क्रांति सफल हो जाने के बाद अटल समाजशाही क़ायम करने के इरादे से समष्टिवादी-दल ने पुरानी नौकरशाही को मानने वाले लोगों को चुन-चुन कर शासन-विभागों, सेना और

अदालतों से निकालना और उन की जगहों पर अपने दल के मज़दूरपेशा वर्ग के सदस्यों को भरना शुरू किया था। बहुत-से इन सदस्यों में अच्छी तरह पढ़ना-लिखना भी नहीं जानते थे। सब तरह के शासन-कार्य के लिए हजारों अधिकारियों की ज़रूरत थी। समष्टिवादी दल सारे अधिकारी अपने दल के सदस्यों में से ही बनाना चाहता था। दल के सदस्यों की संख्या भी बहुत नहीं थी। अस्तु, बड़ी कठिनाइयां पड़ती थीं। फिर भी 'समष्टिवादी-दल' दूसरे ढिलमिल यक़ीन वालों के हाथ में किसी प्रकार का कोई अधिकार या सत्ता देना पसंद नहीं करता था।

रूस की क्रांति को हुए अब पंद्रह वर्ष हो चुके हैं। समष्टिवादी-दल की सोवियट-संघ में अखंड सत्ता भी क़ायम हो चुकी है। मगर अभी तक रूस में समष्टिवादी-दल में शरीक होनेवाले को पहले एक उम्मीदवारी का समय काटना पड़ता है। इस उम्मीदवारी के समय में उस पर बड़ी कड़ी दृष्टि रक्खी जाती है। उस के चरित्र और बुद्धि की परीक्षा ली जाती है। उस को मार्क्स के आर्थिक सिद्धांतों का अध्ययन और दल के लिए काम करने के तरीक़ों की शिक्षा लेनी होती है। उम्मीदवारी का समय ख़त्म होने पर, उस का इन बातों में इम्तहान भी होता है, जिस में बहुत-से उम्मीदवार नाकामयाब हो जाते हैं। किसी आदमी को उम्मीदवार बनाने या पूरा सदस्य बनाने से पहले दल की कोई शाखा उस के पूर्व इतिहास, उस के विचारों, उस के चरित्र और दल के काम में उस के उत्साह आदि की अच्छी तरह जाँच कर लेती है। पूरा सदस्य बन जाने पर भी नए सदस्य पर काफ़ी समय तक कड़ी दृष्टि रक्खी जाती है। 'मध्यवर्गी बुद्धि' या 'मध्यवर्गी तर्क' की बीमारी का ज़रा भी लक्षण दीखते ही सदस्यों को समष्टिवादी-दल से निकाल दिया जाता है। बुद्धि पेशावालों को समष्टिवादी दल का विश्वासपात्र सदस्य बनना बड़ा कठिन होता है। मज़दूर-पेशा लोगों को आसान होता है। मुमकिन है इस की वजह यह हो कि सोवियट सरकार के एक ही समष्टिवादी सिद्धांत को कार्य में परिणत करने के लिए बुद्धिमान तर्कशास्त्रियों के शिक्षित वर्ग के मुक़ाबले में सीधे-सादे साधारण और असली मज़दूरपेशा वर्ग के लोग ही बेहतर साबित होते हैं। दल के आदेशों पर अक्षरशः अमल करने और सादा, एक प्रकार का ग़रीबी का, जीवन बिताना समष्टिवादी-दल के सदस्यों का फ़र्ज़ होता है। बड़े से बड़े नेता को दल की राय के ख़िलाफ़ जाने पर दल से निकाल देने में समष्टिवादी दल संकोच नहीं करता है। लेनिन की दाहिनी भुजा ट्राट्स्की और बोल्शेविक रूस के प्रचंड प्रचारक ज़िनोवोफ तक को कुछ वर्ष हुए दल की नीति का विरोध करने पर समष्टिवादी दल से निकाल कर फेंक दिया गया था। अब समष्टिवादी दल तो दूर, रूस और उस के अड़ोस-पड़ोस के देशों तक में इन नेताओं का घुसना दुर्लभ है। जब सोवियट-संघ के ब्रह्माओं की यह दशा की जा सकती है तो साधारण सदस्यों का तो पूछना ही क्या? उन को दल की नीति के विरुद्ध जाने पर दल से निकाला ही नहीं, बल्कि साइबेरिया के किसी दूरवर्ती उजाड़ ग्राम में निर्वासित तक किया जा सकता है।

समष्टिवादी दल के सभी सदस्यों को साधारण जीवन निभाना होता है और दल के

कोई सदस्य किसी सरकारी पद पर भी नियुक्त हो जाने पर अधिक से अधिक २२५ रूबल्स[1] से ज़्यादा वेतन नहीं ले सकता है। 'समष्टिवादी दल' का सदस्य संघीय सरकार-मंत्री, बैंक या कारखाने का मैनेजर, कोई भी हो, इस से अधिक वेतन नहीं ले सकता है। दल के बाहर के विशेषज्ञों को बड़ी-बड़ी तनख्वाहें भी दी जाती हैं। अक्सर ऐसा होता है कि कारखाने के समष्टिवादी दल के सदस्य मैनेजर का वेतन कम होता है और उस के नीचे काम करनेवाले विशेषज्ञ का जो समष्टिवादी नहीं होता, वेतन अधिक होता है। अस्तु, कोई योग्य और ईमानदार आदमी समष्टिवादी दल में अमीर बनने के विचार से शामिल नहीं होता है। बेईमानी के उद्देश से जो दल में शरीक हो कर और कोई पद प्राप्त कर के छिपे-छिपे जेबें गरम करते हैं, उन को पकड़ जाने पर बड़ी सख्त सजाएं दी जाती हैं। यहां तक कि गोली से मार दिया जाता है। फिर भी साधारण योग्यता के मनुष्यों को समष्टिवादी दल में शरीक हो जाने के अक्सर लाभ की संभावना रहती है, क्योंकि दल के सदस्यों को खास कर मजदूरों को हर सरकारी विभाग में तरजीह दी जाती है। बहुत-से साधारण योग्यता के लोग अब दल में नए सदस्यों को लेने के लिए बहुत कठिनाइयां न रक्खी जाने के कारण अपनी तरक्की के ख़याल से भी समष्टिवादी दल में शरीक हो जाते हैं। दल के सदस्यों से सरकारी काम के अलावा दल का इतना काम लिया जाता है कि उन को अक्सर दम मारने तक की फ़ुरसत नहीं रहती है। शाम और सुबह तक उन बेचारों को अपनी बीबी-बच्चों के साथ गुजारना मुश्किल हो जाता है। अस्तु, आराम पसंद सेवा-भाव से हीन और ढीले-ढाले लोगों को समष्टिवादी दल में शरीक होना बड़ा कठिन होता है। बेईमानी के ख्याल से जो समष्टिवादी दल में शरीक होते हैं वे सचमुच हथेली पर जान रख कर चमकीले ठीकरों से खेलने आते हैं। उन्हें हर दुर्भाग्य के लिए तैयार रहना चाहिए।

समष्टिवादी दल का रूस में अधिकार हो जाने के समय से यह दल एक नई संतान रचने का प्रयत्न भी कर रहा है। शालाओं और विश्वविद्यालयों में नौ संतान को समष्टिवादी सिद्धांतों और विचारों में रंगने के साथ-साथ 'अगुआ'[2] और 'युवक संघों'[3] के दो आंदोलनों के द्वारा भी नौजवानों को तैयार किया जाता है। 'अगुआ' आंदोलन में 'स्काउटों' की तरह सोलह वर्ष तक के बच्चे होते हैं। युवक संघों में तेइस वर्ष तक के नौजवान और युवतियां होती हैं। उन लोगों के झुंड गर्मियों की छुट्टियों में मिल कर पर्यटन करने निकलते हैं, रात को खुले खेतों में सोते हैं, साथ-साथ गाते और नाचते हैं, किसानों को नई-नई बातें बताते हैं, गांववालों को जा कर तरह-तरह की सहायता देते हैं और स्वयं मार्क्स के सिद्धांतों का अध्ययन और मनन करते हैं। इन दोनों आंदोलनों के द्वारा नौजवानों में खास कर सामाजिक बुद्धि पैदा करने की कोशिश की जाती है। इन में ही से बहुत-से नौजवान बाद में समष्टिवादी दल के सदस्य हो जाते हैं।

लेनिन के मज़बूत हाथों में रह कर, समष्टिवादी दल के तीन लक्षण बन गए थे। एक तो चुन-चुन कर इस दल में सदस्य लिए जाते थे और ढिलमिल यक़ीन वालों या अयोग्य आदमियों

[1] रूसी सिक्का। [2] पायनियर्स। [3] यूथ लीग।

को दल में भर कर संख्या बढ़ाने की कभी फ़िक्र नहीं की जाती थी। दूसरे नियमबद्धता पर सख्ती से अमल किया जाता था और सारे खास फ़ैसले दल के मुख्य केंद्र पर ही होते थे। तीसरे केंद्रीकरण के साथ-साथ दल के हर सदस्य से हमेशा अधिक से अधिक काम लिया जाता था। लेनिन के बाद भी दल की आज तक यही नीति है। मगर लेनिन के मरने पर कुछ दिन तक लेनिन-पंथी और केंद्रीय दल के देवताओं की इतनी पूजा होने लगी थी कि ट्राट्स्की इत्यादि कई प्रख्यात नेताओं को उस का खुल्लमखुल्ला विरोध करना पड़ा। उस विरोध के लिए ट्राट्स्की और उस के कुछ साथियों को तो जलावतनी हो गई, मगर तब से लेनिन-पंथी नाम दल की सभाओं में विविध प्रश्नों पर चर्चा नहीं रोकी जाती है। अस्तु, अब समष्टिवादी दल के भीतर एक छोटा-सा विरोधी दल भी है जो समष्टिवादी दल के भाग्य-विधाता देवताओं के प्रस्तावों को जैसा का तैसा निगल जाने से पहले उन पर दल में अच्छी तरह चर्चा और विचार होने पर दल को मजबूर कर देता है। मगर एक बार दल में निश्चय हो जाने पर यह विरोधी समूह भी उन बातों पर ईमानदारी से अमल करता है, जिस का वह विरोधी था। अगर विरोधियों में इतनी ईमानदारी और नियमबद्धता न हो, तो किसी दल का काम नहीं चल सकता है। समष्टिवादी सोवियट-संघ में तो ऐसे विरोधियों को टिकने को जगह नहीं मिल सकती है। बोल्शेविक क्रांति के प्रारंभ काल में समष्टिवादी दल में क़रीब दो लाख सदस्य थे। बाद में उन की संख्या बढ़ते-बढ़ते क़रीब सात लाख हो गई थी। इस संख्या पर पहुँचने के बाद दल में काट-छाँट की गई। सन् १९२६ ई० की मर्दुमशुमारी के अनुसार सोवियट-संघ में क़रीब सात लाख समष्टिवादी दल के पूरे सदस्य थे, जिन में लगभग ७५ हजार स्त्रियां थीं। उम्मीदवारों इत्यादि को मिला कर कुल दस लाख के लगभग सदस्य थे। दल की ३२,११९ शालाएं और ३,०३३ समूह सदस्यों की शिक्षा के लिए खुले हुए थे। दल के ४९,९३१ पूरे सदस्य और ३४,२२२ उम्मीदवार सिर्फ़ लाल सेना में थे। सदस्यों में अधिकतर कारखानों के मज़दूर, किसान, क्लर्क इत्यादि और युवक-संघों के लोग थे। जनवरी सन् १९२८ में फिर बढ़ कर समष्टिवादी दल में १,३०२,८५४ सदस्य हो गए थे और जनवरी सन् १९३० में उन की संख्या औ[illegible] बढ़ कर १८,५२,०९० हो गई थी। इस प्रकार कहा जा सकता है कि एक साल में [illegible] डेढ़ लाख नए सदस्य की औसत से समष्टिवादी दल की संख्या [illegible]ढ़ती है; मगर [illegible] क तरफ़ सदस्यों की बढ़ती होती है वैसी ही दूसरी तरफ़ से काट-छाँट के द्वारा [illegible] होती रहती है। सन् १९२९ के जाड़े और सन् १९३० की गर्मी के बीच के ही एक काल में १,२१,४८९ सदस्य समष्टिवादी दल से किसी न किसी वजह से निकाल दिए ग[illegible] थे। दल की केंद्रीय कार्यकारिणी की नियुक्ति की हुई एक कमेटी के सामने उन सदस्यों को जिन के निकालने का प्रस्ताव होता था, हाज़िर हो कर जवाब देना होता था कि उन को दल में से क्यों न निकाल दिया जाए। क़रीब १७.२ फ़ीसदी सदस्यों को मध्यमवर्ग-बुद्धि रखने या उस बुद्धि के लोगों से सहानुभूति रखने के लिए निकाल दिया गया था। चार हज़ार को ज़ारशाही की खुफ़िया और पुलीस में नौकरी करने की बात छिपाने के लिए निकाल दिया गया

था। लापरवाही और नौकरशाही का व्यवहार करने के लिए १६·४ फ़ी सदी को निकाला गया था। क़रीब बारह हज़ार को रिश्वत जालसाज़ी ग़बन इत्यादि के इलज़ामों के लिए निकाला गया था। नियम-बद्धता की कमी के लिए २१फ़ी सदी को निकाला गया था, जिन में समुदायी खेतों पर काम न करने के लिए पाँच हज़ार, अनाज न देने के लिए तीन हज़ार, और दल के भीतर दलबंदी करने के लिए डेढ़ हज़ार को निकाला गया था। दल का काम न करने, उदाहरणार्थ चंदा न देने और सभाओं में न आने के लिए, १६ हज़ार सदस्यों को निकाला गया था। शराबी होने और स्त्रियों और कुटुंबियों से ग़ैर-समष्टिवादी संबंध इत्यादि रखने के दूसरे कारणों के लिए २२·६ फ़ी सदी को निकाला गया था। नियम-बद्धता और समुदायी तबियत के अमल पर समष्टिवादी दल कितना अधिक ज़ोर देता है वह एक उदाहरण से साफ़ हो जायगा। एक बार सोवियट सरकार के एक प्रख्यात मंत्री की स्त्री को एक स्टेशन पर पहुँचने में ज़रा देर हो जाने से रेलगाड़ी पाँच-छः मिनट के लिए रोक ली गई थी। इस बात के लिए उस मंत्री के बड़प्पन का कुछ ख़याल न कर के, उस से दल की भरी सभा में जवाब मांगा गया था।

समष्टिवादी दल की केंद्रीय कार्यकारिणी का चुनाव सालाना कांग्रेस में होता है। इस में ७१ सदस्य और ६७ उम्मीदवार होते हैं। यूरोप के दूसरे देशों के राजनीतिक दलों की तरह इस दल का लेनिन की मृत्यु के बाद से कोई बाक़ायदा नेता या अध्यक्ष नहीं होता है। केंद्रीय कार्यकारिणी कमेटी की चुनी हुई नौ सदस्यों की एक समिति में नेतृत्व की सारी सत्ता रक्खी जाती है। दल की एक 'संगठन-समित' भी होती है जो दल के अधिकारियों की नियुक्ति की सँभाल रखती है। दूसरी एक 'केंद्रीय नियंत्रण समिति' सरकारी मज़दूर और किसानों की जाँच' के विभाग से सहकार कर के सोवियट संघ में नौकरशाही को रोकने और दल के अंदर नियम-बद्धता क़ायम रखने का प्रयत्न करती है। तीसरी एक समष्टिवादी युवक-संघों की केंद्रीय कार्यकारिणी समिति भी समष्टिवादी दल के संगठन का ही अंग होती है। साल में हज़ारों सार्वजनिक सभाएं दल की ओर से की जाती हैं, जिन में लाखों मज़दूर और किसान शरीक होते हैं।

मगर रूस के लोग अधिकतर किसान होने और सदियों तक भारतवर्ष की तरह दबे और कुचले रहने से बड़े दब्बू बन गए हैं। ज़ारशाही के ज़ुल्मों और उस काल की नौकरशाही के तरीक़ों, जिन में सहानुभूति, कल्पना और आम अक़्ल को ताक़ पर रख कर सिर्फ़ नियमों के बुद्धिहीन पालन ही का ख़याल रक्खा जाता था, वे इतने आदी हो गए हैं कि सरकार के छोटे-मोटे ज़ुल्मों के विरुद्ध आवाज़ उठाने या सरकारी अधिकारियों की ज़िम्मेदारी, सहानुभूति और पाबंदी से काम न करने की वह शिकायत करते हिचकते हैं और प्रायः भारतीयों की तरह अपने भाग्य ही को दोष देने लगते हैं। रूसी लोगों का दब्बूपना पाठकों को एक उदाहरण से स्पष्ट हो जायगा, समष्टिवादी दल का क़ब्ज़ा मास्को में हो जाने पर लेनिन ने ज़ार के महलों और अमीरों के राजभवनों को ख़ाली कर के उन में मज़दूरों को जा कर रहने का हुक्म निकाला था। मगर मज़दूरों की उन राजभवनों

के राज्य में प्रजा की आवाज़ शासन में होती थी, मगर समाजशाही सोवियट-संघ और समष्टिवादी दल दोनों ही राजनीति संसार की एक नई चीज़ हैं और उन का किसी से मुक़ाबला करना बड़ा कठिन है। दुनिया में समाजशाही सोवियट-संघ ही एक श्रमजीवियों का प्रजातंत्र है।

फ़िनलैंड की सरकार

राज-व्यवस्था

सन् १८०६ ई० में फ़िनलैंड के स्वीडन से अलग हो कर रूस साम्राज्य में मिल जाने पर रूस के शहंशाह ज़ार ने फ़िनलैंड को एक राज-व्यवस्था दी थी। इस राज व्यवस्था के अनुसार फ़िनलैंड को भीतरी शासन में पूरी स्वाधीनता दी गई थी। सिर्फ़ बाहरी देशों के लिए वह एक स्वतंत्र राष्ट्र नहीं था। सन् १८६६ ई० के एक क़ानून के अनुसार फ़िनलैंड की व्यवस्थापक-सभाओं की बैठकों का समय निश्चित किया गया था और सन् १६०६ ई० के एक दूसरे क़ानून के अनुसार सरकार की सारी सत्ता एक व्यवस्थापक-सभा को दे दी गई थी, जिस की बैठकें सालाना होतीं थीं। बाद में रूस ने फ़िनलैंड की सारी स्वाधीनता नष्ट कर के, उस को अपना निरा ग़ुलाम बना कर रखने की नीति अख़्तियार की, और फ़िनलैंड के लोगों ने अपनी स्वाधीनता की रक्षा के लिए लड़ना शुरू किया। पिछले यूरोपीय युद्ध तक यही परिस्थिति क़ायम रही। रूस में क्रांति होते ही फ़िनलैंड को अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर देने का मौक़ा मिल गया और जातीय स्वाधीनता की दुहाई देने वाले बोल्शेविक रूस ने सन् १६१८ ई० में फ़िनलैंड को एक स्वाधीन राष्ट्र मान लिया। फ़िनलैंड की व्यवस्थापक-सभा ने अस्थायी तौर पर राजा के सारे अधिकारों पर अपना क़ब्ज़ा मान कर सिनेट के अध्यक्ष को प्रभुता चलाने का अधिकार दे दिया था। १२ दिसंबर, सन् १६१८ ई० को मेनरहीम को फ़िनलैंड का राज्याधिकारी भी चुन लिया गया था। मार्च, सन् १६१६ ई० के चुनाव के बाद फ़िनलैंड को प्रजातंत्र घोषित कर के जून में प्रोफ़ेसर स्टालबर्ग को फ़िनलैंड प्रजातंत्र

का प्रमुख चुन लिया गया। इस राज-व्यवस्था में फ़िनलैंड के नागरिकों को क़ानून के सामने बराबर माना गया है और उन की ज़िंदगी, उन की आबरू, उन की व्यक्तिगत आज़ादी, उन की माल और मिलकियत, उन के धार्मिक विश्वासों, अख़बारी आज़ादी और मिलने-जुलने की आज़ादी को सुरक्षित माना गया है। फ़िनिश और स्वीडिश भाषाएं प्रजातंत्र की राष्ट्रीय भाषाएं मानी गई हैं।

प्रजातंत्र का प्रमुख—फ़िनलैंड प्रजातंत्र के प्रमुख को तीन सौ चुने हुए मतदार चुनते हैं, जिन को प्रजा उसी तरह चुनती है; जिस तरह व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों को। प्रजातंत्र का प्रमुख राजनैतिक अर्थ में व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार नहीं होता है। मगर उस को कार्यकारिणी का सारा अधिकार माना गया है। क़ानून बनाने की सत्ता व्यवस्थापक-सभा और प्रमुख दोनों में मानी गई है। दोनों को क़ानूनों का प्रस्ताव करने का हक़ होता है। व्यवस्थापक-सभा में मंज़ूर हो जाने के बाद क़ानून प्रमुख की मंज़ूरी के लिए रक्खे जाते हैं और उसे उन को नामंज़ूर कर देने का हक़ होता है। अगर तीन महीने के अंदर प्रमुख किसी क़ानून को मंज़ूर नहीं करता है तो उस क़ानून को नामंज़ूर समझा जाता है। परंतु व्यवस्थापक-सभा का नया चुनाव हो जाने के बाद भी अगर सभा उसी क़ानून को फिर जैसा का तैसा पास करती है तो प्रमुख की नामंज़ूरी होने पर भी वह क़ानून अमल में आ जाता है।

प्रमुख को ख़ास मौक़ों पर फ़रमानी क़ानून जारी करने, व्यवस्थापक-सभा की ख़ास बैठकें बुलाने, व्यवस्थापक-सभा को भंग कर के नया चुनाव कराने, अपराधियों को क्षमा करने, और विदेशियों को फ़िनलैंड का नागरिक बनाने के अधिकार भी होते हैं। प्रमुख ही फ़िनलैंड की तरफ़ से दूसरे राष्ट्रों से व्यवहार करता है और वही राष्ट्र की सारी सेनाओं का सेनाधिपति होता है। सेना-संबंधी बातों को छोड़ कर और सारे निश्चय प्रमुख कौंसिल ऑव् स्टेट की सलाह से करता है।

कौंसिल ऑव् स्टेट—सरकार का काम चलाने के लिए प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में दस मंत्रियों की एक कौंसिल ऑव् स्टेट होती है, जिस को प्रमुख नियुक्त करता है। यह मंत्री सम्मिलित रूप से मंत्रि-मंडल की आम नीति के लिए और अलग-अलग अपने विभागों के काम के लिए व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार होते हैं। उन का जीवन सभा के उन में विश्वास पर निर्भर होता है। प्रजातंत्र का प्रमुख, बिना विभाग के दो मंत्रियों को भी कौंसिल में रख सकता है। कौंसिल पर देख-रेख रखने के लिए व्यवस्थापक-सभा 'चांसलर ऑव् जस्टिस' नाम के एक अधिकारी को नियुक्त करती है, जिस का काम यह देखना होता है कि देश के क़ानूनों के अनुसार अमल होता है या नहीं। कौंसिल या किसी मंत्री का कोई काम उस की राय से ग़ैरक़ानूनी होने पर वह उस की शिकायत फ़ौरन प्रमुख और व्यवस्थापक-सभा से करता है। इस ढंग से मंत्रियों की राजनैतिक और क़ानूनी दोनों तरह से जवाबदारी रहती है।

व्यवस्थापक-सभा—फ़िनलैंड की व्यवस्थापक-सभा सिर्फ़ एक सभा की होती

है। उस में दो सौ सदस्य होते हैं, जिन को अनुपात निर्वाचन की पद्धति से चौबीस वर्ष के ऊपर के सब मताधिकार प्राप्त स्त्री और पुरुष नागरिक तीन साल के लिए चुनते हैं। बिना किसी बुलावे के अपने निश्चित समय पर हर साल सभा की बैठक जुड़ती है। आम तौर पर उस की बैठकें १२० दिन तक होती हैं। मगर सभा अपनी बैठकों के दिनों की संख्या अपनी मर्ज़ी से घटा-बढ़ा भी सकती है। सभा के एक तिहाई सदस्यों का विरोध होने पर साधारण मसविदों का विचार सभा के दूसरे चुनाव के अन्त तक के लिए स्थगित कर दिया जा सकता है। राज-व्यवस्था से संबंध रखनेवाले मसविदों पर विचार भी व्यवस्थापक सभा ही करती है। मगर उन के पास होने के लिए मतों की खास संख्याओं की ज़रूरत होती है। आय-व्यय संबंधी मसविदों का फ़ैसला भी व्यवस्थापक-सभा करती है।

सरकारी शासन की बहुत हद तक देख-रेख करने का काम सभा का होता है और सरकार अपने शासन-कार्य का सालाना चिट्ठा और ज़रूरत पड़ने पर खास कामों का चिट्ठा व्यवस्थापक-सभा के सामने पेश करती है। 'चांसलर ऑव् जस्टिस' भी सभा के सामने कौंसिल आव् स्टेट की कार्रवाई पर एक सालाना चिट्ठा पेश करता है। सभा के चुने हुए पाँच 'हिसाब-परीक्षक' सरकार के आय-व्यय का सालाना चिट्ठा सभा के सामने रखते हैं। व्यवस्थापक-सभा सालाना एक वकील को भी नियुक्त करती है, जो साधारण क़ानूनों के पालन पर नज़र रखता है और सालाना रिपोर्ट सभा के सामने रखता है। व्यवस्थापक-सभा को सरकार से उस के कामों के बारे में पूछ-ताँछ करने का हक़ होता है और वह 'कौंसिल ऑव् स्टेट' के किसी सदस्य और 'चांसलर आव् जस्टिस' पर क़ानूनों के अनुसार कर्तव्य न करने के लिए अभियोग तक चला सकती है। इस प्रकार के अभियोग बारह सदस्यों की एक 'राष्ट्रीय अदालत' के सामने आते हैं, जिस के आधे सदस्यों को तीन साल के लिए व्यवस्थापक-सभा चुनती है।

राजनैतिक दल—फ़िनलैंड के राजनैतिक दलों में एक 'कृषि और किसान दल' है जो फ़िनलैंड के कृषि और राष्ट्रीय हितों का दल है। दूसरा एक अन्य यूरोपीय देशों की तरह 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' है। तीसरा एक 'संयुक्त दल' नाम का दल है जिस में तग और नरम विचारों के लोग हैं। चौथा 'स्वीडिश लोकदल' है जो फ़िनलैंड की दस फ़ी सदी आबादी वाले स्वीडिश भाषा-भाषियों का दल है। पाँचवा उदार विचार के लोगों का एक 'प्रगतिशील दल' है। छठा एक 'समष्टिवादी दल' है जिस को ग़ैर क़ानूनी क़रार दे दिया गया है। इन दलों की फ़िनलैंड की व्यवस्थापक-सभा में सन् १६३० ई० में इस प्रकार शक्ति थी :—

दल	सदस्यों की संख्या	दल	सदस्यों की संख्या
कृषि और किसान दल	५६	स्वीडिश लोकदल	२१
समाजी प्रजासत्तात्मक दल	६६	प्रगतिशील दल	१२
सयुक्त दल	४२	समष्टिवादी दल	०

ऐस्थोनिया की सरकार

फ़िनलैंड के लोगो से मिलते-जुलते ही ऐस्थोनिया के लोग हैं और फ़िनलैंड की तरह ही ऐस्थोनिया भी रूस की क्रांति होने तक रूस के अाधीन था। तेरहवीं सदी में टियूटौनिक जाति के 'तेग़ बहादुर सरदारों के समाज'[1] का आधा ऐस्थोनिया पर अधिकार था और शेष आधे देश पर, डेन लोगों का अधिकार था। क़रीब सौ वर्ष के बाद डेन लोगों से ऐस्थोनिया का आधा उत्तरी भाग जर्मनों ने ख़रीद लिया था और उस को लिवोनिया अर्थात् आज कल के लेटविया से मिला दिया था। 'तेग़ बहादुर सरदार समाज' नष्ट हो जाने पर शेष आधा भाग भी स्वीडन और पोलैंड में बँट गया था। बाद में सन् १६३६ ई० में स्वीडन का आज कल के ऐस्थोनिया के सारे भाग पर अधिकार हो गया था। फिर सन् १७२१ ई० में स्वीडन ने ऐस्थोनिया रूस को इस शर्त पर दे दिया था कि रूस ऐस्थोनिया में एक अलग राज-व्यवस्था क़ायम करेगा। तब से रूस की राज-क्रांति तक ऐस्थोनिया रूस के अधिकार में था।

ऐस्थोनिया रूस का जल-मार्ग होने से रूस के व्यापार के लिए बड़ा ज़रूरी था। जर्मनी और रूस के व्यापार का मार्ग ऐस्थोनिया ही था। दो सौ वर्ष तक, जब तक ऐस्थोनिया रूस साम्राज्य का प्रांत रहा, ऐस्थोनिया में एक स्थानिक धारासभा रहने पर भी अधिकार और सत्ता रूसी अधिकारियों और पुराने ट्यूटानिक सरदारों के वंशज ज़मींदारों के हाथ में ही रही। देश के ६५ फ़ी सदी लोग ऐस्थोनियन होने पर भी लोगों को शिक्षा रूसी और जर्मन भाषाओं में ही लेनी पड़ती थी। सन् १६०५ में रूसी डूमा के लिए ऐस्थोनिया के लोगों ने सिर्फ़ अपनी जाति के लोगों को ही चुन कर पहले-पहल

[1] ट्यूटानिक आर्डर आफ़ दी नाइट्स आफ़ दी सोर्ड।

अपनी हस्ती पर ज़ोर दिया था। ऐस्थोनिया के इन प्रतिनिधियों ने उस समय सिर्फ़ रूसी साम्राज्य के अंतर्गत ऐस्थोनिया के लिए स्थानिक स्वाधीनता की ही ड्रमा में मांग रक्खी थी। मगर बाद में रूस में राज्यक्रांति हो जाने पर जुलाई सन् १९१७ में ऐस्थोनिया के नेताओं ने ऐस्थोनिया में एक राष्ट्रीय सरकार क़ायम हो जाने का एलान कर दिया था।

ऐस्थोनिया के नए राष्ट्र की राज-व्यवस्था गढ़ने के लिए व्यवस्थापक-सम्मेलन क़ायम होने तक एक काम-चलाऊ सरकार क़ायम कर ली गई थी। इस काम-चलाऊ सरकार को बड़े भयंकर संकटों का सामना करना पड़ा। पहले तो बोलशेविक रूस की सेनाओं ने ऐस्थोनिया को धर दबाया और फिर ब्रेस्ट-लिटोव्क की संधि के अनुसार ऐस्थोनिया में जर्मनी की सेनाओं ने जा कर अड्डा जमा लिया था जिस से मिटते हुए जर्मन ज़मींदारों का राज्य फिर से क़ायम हो गया था। मगर जर्मनी की हार होते ही ऐस्थोनिया के बंधन टूट गए। अप्रैल सन् १९१९ ई० में १२९ सदस्यों के एक 'राष्ट्रीय व्यवस्थापक सम्मेलन' का सारे नागरिकों के मतों से चुनाव हुआ। इस सम्मेलन ने ऐस्थोनिया को १९ मई को बाक़ायदा एक स्वाधीन प्रजातंत्र राष्ट्र एलान कर के; स्थायी राज-व्यवस्था बनने तक ऐस्थोनिया में एक काम-चलाऊ राज-व्यवस्था जारी कर दी। एक तरफ़ तो यह नई सरकार जर्मनी और रूस का मुक़ाबला करने, पड़ोसी राष्ट्रों को मदद करने, और उन से संधियां करने, तथा देश में सब प्रकार से सुव्यवस्था स्थापित करने का प्रयत्न करती रही और दूसरी तरफ़ नए राष्ट्र की नई राज-व्यवस्था रचती रही। आख़िरकार नई राज-व्यवस्था बन कर १५ जून सन् १९२० ई० को सम्मेलन में मंज़ूर हुई और दिसंबर में सम्मेलन अपना काम पूरा कर के भंग भी हो गया। बाद में ऐस्थोनिया की पहली राष्ट्रीय व्यवस्थापक सभा का नवंबर १९२० में चुनाव हुआ और ४ जनवरी सन् १९२१ को उस की बैठक हुई।

ऐस्थोनिया प्रजातंत्र की राज-व्यवस्था बड़ी सीधी-सादी और छोटी-सी है। एक सभा की एक छोटी-सी व्यवस्थापक-सभा में क़ानून बनाने की सत्ता रक्खी गई है। व्यवस्थापक-सभा ही कार्यकारिणी और राष्ट्रीय अदालत के न्यायधीशों को चुनती है। प्रजा को प्रस्तावना और हवाले का अधिकार दे कर व्यवस्थापक-सभा पर प्रजा का अंकुश और व्यवस्थापक-सभा के द्वारा कार्यकारिणी और न्यायसत्ता पर प्रजा की हुकूमत रखने का साफ़ तौर पर इस राज-व्यवस्था में प्रबंध रक्खा गया है। सारे नागरिकों के लिए राष्ट्र की रक्षा में भाग लेना भी इस राज-व्यवस्था में अनिवार्य रक्खा गया है।

व्यवस्थापक-सभा—ऐस्थोनिया की एक सभा की व्यवस्थापक-सभा को 'रिज़ीकोगू' कहते हैं। इस में सौ सदस्य होते हैं, जिन को तीन साल के लिए अनुपात निर्वाचन की पद्धति से ऐस्थोनिया के २१ वर्ष से ऊपर के सारे मताधिकारी नागरिक चुनते हैं। यह सभा अपने अध्यक्ष और अधिकारियों का खुद चुनाव करती, क़ानून बनाती, राष्ट्र की आय-व्यय तय करती और राष्ट्रीय शासन की देख-रेख करती है। सभा का काम चलाने के लिए कम से-कम ५० सदस्यों की हाज़िरी की ज़रूरत होती है। सभा

के एक तिहाई सदस्यों की माँग पर किसी भी मंज़ूर हो जानेवाले क़ानून पर दो मास के लिए अमल स्थगित किया जा सकता है। इस दो मास के भीतर पच्चीस हज़ार मताधिकारी नागरिकों की माँग पर, उस क़ानून पर, प्रजा का हवाला लिया जा सकता है और फिर उस क़ानून का मज़ूर होना या नामंज़ूर होना प्रजा के मत पर निर्भर हो जाता है।

कार्यकारिणी—राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा कार्यकारिणी को नियुक्त करती है और कार्यकारिणी व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार होती है। कार्यकारिणी के सदस्यों में एक राष्ट्रपति और सात मंत्री होते हैं। कार्यकारिणी राष्ट्रीय बजट तैयार कर के व्यवस्थापक-सभा के सामने पेश करती, विदेशों से संधियां करती और उन को आखिरी मंजूरी के लिए सभा के सामने रखती और सभा के निश्चय के अनुसार युद्ध और संधि की घोषणा करती है। राष्ट्रपति को प्रजातंत्र का प्रतिनिधि-स्वरूप माना जाता है और उस में व्यवस्थापक-सभा का विश्वास क़ायम रहने की ज़रूरत होती है।

राजनैतिक दलबंदी—ऐस्थोनिया के मुख्य राजनैतिक दलों में एक 'कृषि-संघ दल' नाम का किसानों का दल है। दूसरा 'ईसाई लोकदल' है, जो स्कूलों में धार्मिक शिक्षा देने का पक्षपाती है। तीसरा ऐस्थोनिया में आ कर बस जानेवालों का एक 'प्रवासी और पट्टेदारों का दल' है। चौथा नरम प्रजासत्तात्मक विचार के लोगों का एक 'लोकदल' है। पाँचवा गरम समाजी विचारों का एक 'गरम दल' है। छठा इंगलैंड के मज़दूर दल से मिलता-जुलता एक 'समाजी मज़दूर दल' है। इन दलों की १९२९-३१ की व्यवस्थापक-सभा में इस प्रकार ताक़त थी :—

दल	सदस्यों की संख्या	दल	सदस्यों की संख्या
समाजी दल	२५	मज़दूर दल	६
कृषि-संघ दल	२४	ईसाई लोकदल	४
प्रवासी और पट्टेदारों का दल	१४	रूसी राष्ट्रीय दल	२
गरम दल	१०	जर्मन बाल्टिक दल	३
लोकदल	९	मकान मालिकान-संघ	३

लिथूनिया की सरकार

राज-व्यवस्था—ऐस्थोनिया की तरह लिथूनिया भी रूस और जर्मनी की अधीनता में रह कर, बहुत दिनों तक गुलाम और बँटा रहने के बाद, आखिरकार रूस की राज्य-क्रांति के बाद फ़रवरी सन् १६१८ ई० में स्वतंत्र राष्ट्र बना था। लिथूनिया के राजनैतिक नेताओं की एक सभा के लिथूनिया को स्वतंत्र राष्ट्र घोषित कर देने के बाद एक राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सम्मेलन की रचना की गई थी, जिस की रची हुई राज-व्यवस्था पर पहली अगस्त सन् १६२२ ई० से अमल शुरू हुआ था और जिस में बाद में सन् १६२८ ई० में संशोधन किया गया था। इस राज-व्यवस्था के अनुसार लिथूनिया एक स्वतंत्र प्रजासत्तात्मक प्रजातंत्र है, जिस में प्रभुता प्रजा की मानी गई है। प्रजा को अपने प्रतिनिधियों की व्यवस्थापक-सभा के द्वारा हुकूमत करने के अतिरिक्त, पचीस हज़ार मतदारों के हस्ताक्षरों से व्यवस्थापक-सभा के विचार के लिए मसविदे पेश करने का अधिकार भी दिया गया है। राज व्यवस्था के संशोधन के प्रस्ताव 'सीमास' या सरकार या पचास हज़ार नागरिकों की तरफ़ से पेश किए जा सकते हैं। उन की मज़ूरी के लिए सीमास के ३/५ सदस्यों की संख्या के मतों की ज़रूरत होती है और इस मंज़ूरी के तीन मास के भीतर, प्रजातंत्र के प्रमुख या पचास हज़ार नागरिकों की माँग आने पर, उस संशोधन पर प्रजा का हवाला लिया जाता है। हवाले की माँग न आने पर तीन मास खत्म हो जाने पर संशोधन क़ानून बन जाता है।

व्यवस्थापक-सभा—इस देश की व्यवस्थापक-सभा को 'सीमास' कहते हैं जिस की सिर्फ़ एक ही सभा होती है। इस सभा में क़रीब ८० सदस्य होते हैं, जिन को अनुपात-निर्वाचन की पद्धति से पाँच साल के लिए, पचीस वर्ष के ऊपर के लिथूनिया के

सारे स्त्री और पुरुष नागरिक चुनते हैं। सभा के लिए उम्मीदवारों की उम्र कम से कम तीस वर्ष होनी चाहिए और एक सभा का काल पूरा होने से पहले ही दूसरी सभा का चुनाव हो जाना चाहिए। 'सीमास' को लिथूनिया की लिखित राज-व्यवस्था के विरुद्ध कोई क़ानून पास करने का अधिकार नहीं है और उस के मंज़ूर या नामंज़ूर किए हुए क़ानून के खिलाफ़ प्रजा से हवाले द्वारा, अपील भी की जा सकती है। 'सीमास' और प्रजासत्तात्मक देशों की व्यवस्थापक-सभाओं की तरह क़ानून बनाती, राष्ट्रीय बजट मंज़ूर करती और देश के शासन की देख-भाल करती है। सीमास की मज़ूरी के बाद ही लिथूनिया प्रजातंत्र का प्रमुख दूसरे राष्ट्रों से संधिया कर सकता है। युद्ध और सधि की घोषणा भी सीमास खुद करती है, मगर एकदम संकट खड़ा हो जाने पर प्रमुख और मंत्रिमंडल को आवश्यकतानुसार कार्रवाई करने का अधिकार होता है। सीमास की आमतौर पर साल भर में दो बार बैठकें होती हैं और प्रमुख या सदस्यों की ⅓ संख्या की माँग पर उस की खास बैठकें भी बुलाई जा सकती हैं। नए क़ानूनों को देखने और उन के मसविदे तैयार करने तथा प्रचलित क़ानूनों को क्रमबद्ध करने के लिए एक स्टेट कौंसिल भी है।

कार्यकारिणी—प्रजातंत्र के प्रमुख और मंत्रिमडल के हाथ में राष्ट्र की कार्यकारिणी सत्ता होती है। सीमास के बनाए हुए क़ानून के तरीके के अनुसार प्रजा के खास तौर पर चुने हुए प्रतिनिधि, प्रजातंत्र के प्रमुख को सात वर्ष के लिए चुनते हैं। प्रमुख पद के लिए उम्मीदवार चालीस वर्ष से कम उम्र के नहीं हो सकते हैं और न उन का दो बार से अधिक इस पद के लिए चुनाव हो सकता है। प्रमुख 'राष्ट्रीय नियंत्रकों'[1] और प्रधान मंत्री को नियुक्त करता है और प्रधान मंत्री के चुने हुए मत्रिमंडल को मंज़ूर करता है। 'राष्ट्रीय नियत्रकों' का लिथूनिया की सरकार में क़रीब-क़रीब वही काम होता है जो इंगलैंड की सरकार में कंट्रोलर जनरल और ऑडीटर जनरल का होता है। राष्ट्रीय नियंत्रक और मंत्रि-मंडल तभी तक पद पर रह सकते हैं, जब तक सीमास का उन पर विश्वास रहता है। राष्ट्रीय नियंत्रकों को मंत्रिमंडल की बैठकों में बैठने और उन की कार्रवाई में भाग लेने का अधिकार होता है। सीमास में मंज़ूर हो जाने के बाद क़ानूनों को प्रमुख एक महीने के अंदर जारी कर देता है, मगर इस समय के भीतर ही, अपनी राय के साथ किसी क़ानून को सीमास के पास पुनः विचार के लिए लौटा देने का भी उस को हक़ होता है। इस प्रकार पुनः विचार के लिए लौटाए क़ानून को सीमास के दो तिहाई मतों से फिर मंज़ूर करने पर प्रमुख उस क़ानून को जारी करने के लिए मजबूर हो जाता है। प्रजातंत्र के प्रमुख को सीमास भंग करने और सीमास की बैठकें न होने के समय में क़ानून जारी करने का भी अधिकार होता है और यह क़ानून सीमास द्वारा न बदले जाने तक बाक़ायदा माने जाते हैं। प्रजातंत्र का प्रमुख मंत्रिमंडल के अध्यक्षस्थान पर बैठ कर मंत्रिमंडल की कार्रवाई में भाग ले सकता है, और उस के माँगने पर हर एक मंत्री को उस के सामने रिपोर्ट रखनी होती है। प्रजातंत्र

---

[1] स्टेट कंट्रोलर्स।

का प्रमुख ही प्रजातंत्र की सारी सेना का सेनापति होता है। मंत्रिमंडल के सदस्य सम्मिलित तौर से और अलग-अलग सरकार की सारी कार्रवाई के लिए व्यवस्थापक सभा को जवाबदार होते हैं।

राजनैतिक दलबंदी—इस नए राष्ट्र के क़ायम होने से आज तक इस देश की राजनैतिक हालत बराबर डॉवाडोल रही है। मज़बूत राजनैतिक दल न होने से सरकारें जल्दी-जल्दी बनती और बिगड़ती रहती रहती हैं। सन् १९२६ ई० में कर्नल ग्लोवास्टकी ने सेना की सहायता से उस समय में मंत्रिमंडल को उलट दिया था। उस के बाद भी एक प्रधान मंत्री को फिर क़त्ल करने का प्रयत्न किया गया था।

लिथूनिया के मुख्य राजनैतिक दलों में 'ईसाई प्रजा-सत्तात्मक संघ' नामक एक नरम दल है। दूसरा एक 'उदार दल' है, जिस के सन् १९३१ ई० की सीमास में २२ सदस्य थे। इस दल में ईसाई प्रजासत्तात्मक, कृषि संघ और मज़दूर-संघ तीन छोटे-छोटे दल शरीक हैं और सन् १९३१ की सीमास में कुल मिला कर इस दल के तीस सदस्य थे। दूसरे दो 'राष्ट्रीय दल' और 'पौपुलिस्ट' नाम के छोटे-छोटे दल हैं। यूरोप के अन्य देशों की तरह एक 'समाज प्रजासत्तात्मक दल' भी है, जिस के सीमास में १५ सदस्य थे। एक 'अल्प संख्याओं का दल' भी है, जिस के कुल मिला कर १३ सदस्य व्यवस्थापक-सभा में थे।

लटविया की सरकार

सन् १७७२ ई० में लटविया का एक भाग पहले-पहल रूस को मिला था और सन् १७६५ ई० में शेष भाग पर भी उस का अधिकार हो गया था। इस समय से रूस की राज्यक्रांति होने तक इस देश पर ऐस्थोनिया और लिथूनिया की तरह रूस का अधिकार था। सन् १६१७ ई० में पहले-पहल लटविया के जनमत ने लटविया को एक स्वाधीन राष्ट्र बनाने की आवाज़ उठाई थी और बाद में जनवरी, सन् १६१८ ई० में रूस के व्यवस्थापक-सम्मेलन के सामने यह माँग रक्खी गई थी। लटविया को एक स्वाधीन राष्ट्र बनाने के लिए एक संगठन क़ायम कर लिया गया था जिस ने १८ नवंबर, सन् १६१८ ई० में रीगा में लटविया के स्वाधीन राष्ट्र बन जाने का आखिरकार एलान कर दिया था। नए राष्ट्र की राज-व्यवस्था गढ़ने के लिए एक व्यवस्थापक-सम्मेलन बना लिया गया था, जिस ने १५ फ़रवरी, सन् १६२२ ई० को आखिरी सूरत में राज-व्यवस्था को मंज़ूर किया था। इस राज-व्यवस्था के अनुसार लटविया एक स्वाधीन और प्रजासत्तात्मक प्रजातंत्र है। जिस में प्रभुता प्रजा को है। सब नागरिकों को क़ानून की नजर में बराबर अधिकार है और अल्पसंख्यक जातियों के जातीय और धार्मिक अधिकारों को राज-व्यवस्था में सुरक्षित माना है।

व्यवस्थापक-सभा—लटविया की व्यवस्थापक-सभा को 'साइमा' कहते हैं। इस में सौ सदस्य होते हैं, जिन को अनुपात-निर्वाचन की पद्धति से तीन साल के लिए, इक्कीस वर्ष के ऊपर के सब स्त्री-पुरुष नागरिक चुनते हैं। 'साइमा' राष्ट्र के क़ानून बनाने और शासन की देख-रेख का सारा काम करती है। वही सारे सदस्यों के बहुमत से प्रजातंत्र के प्रमुख को भी चुनती है।

कार्यकारिणी—प्रजातंत्र का प्रमुख तीन साल के लिए चुना जाता है। उस की उम्र कम से कम चालीस वर्ष की होनी चाहिए और छः साल से अधिक लगातार कोई प्रमुख नहीं रह सकता है। प्रमुख प्रजातंत्र की सारी सेनाओं का सेनाधिपति भी होता है। परंतु युद्ध छिड़ने पर वह एक सेनापति की नियुक्ति कर देता है। वही प्रधान मंत्री को नियुक्त करता है और प्रधान मंत्री नौ सदस्यों का एक ऐसा मंत्रि-मंडल नियुक्त करता है जिस पर 'साइमा' का विश्वास होता है। 'साइमा' की मंज़ूरी से प्रमुख युद्ध की घोषणा कर सकता है। प्रमुख, 'साइमा' और मंत्रि मंडल में संघर्ष हो जाने पर प्रमुख को 'साइमा' को भंग करने का प्रस्ताव करने का हक़ होता है। मगर इस प्रस्ताव की मंज़ूरी के लिए, प्रजा के मत लिए जाते हैं और प्रजा का मत प्रमुख के प्रस्ताव के विरुद्ध होने पर प्रमुख को इस्तीफ़ा रख देना होता है। प्रमुख के इस प्रकार इस्तीफा देने पर 'साइमा' फ़ौरन ही बैठ कर नए प्रमुख का चुनाव कर लेती है। प्रजा का मत प्रमुख के प्रस्ताव के पक्ष में होने पर 'साइमा' भंग कर दी जाती है और नया चुनाव किया जाता है।

राजनैतिक दलबंदी—'समाजवादी दल' लटविया का सब से बड़ा राजनैतिक दल है। सन १९३१ ई० में साइमा में क़रीब एक तिहाई सदस्य इसी दल के थे। फिर भी बाक़ी सदस्य कई छोटे-छोटे दलों के होने से मंत्रि-मंडलों को बनाने में बराबर कठिनाई रहती है।

लटविया के दूसरे राजनैतिक दलों की 'संघों' में मुख्य एक 'गरम मध्य-संघ' है जिस के कुल ११ सदस्य व्यवस्थापक-सभा में थे। एक 'किसान संघ' है जिस के कुल २९ सदस्य थे। एक 'राष्ट्रीय संघ' है जिस के कुल ८ सदस्य थे। एक 'अल्प-संख्या जातियों की संघ' है जिस के कुल १८ सदस्य थे। इन दल-संघों में निम्न प्रकार दल और सदस्य सन १९३१ ई० की साइमा में थे:—

'समाजी प्रजासत्तात्मक दलसंघ' : कुल ३६ सदस्य

समाजी प्रजासत्तात्मक दल	२६ सदस्य
स्वतंत्र समाजवादी दल	१ ,,
लटगालियन समाजी किसान-दल	१ ,,
गरम मज़दूर-संघ दल	६ ,,
समाजी प्रजासत्तात्मक मेंशेविकी दल	२ ,,

'गरम मध्य-दलसंघ' : कुल ११ सदस्य

प्रजा सत्तात्मक मध्य-दल	३ सदस्य
लटगालियन प्रगतिशील दल	३ ,,
मज़दूर संघदल	३ ,,
अन्य	२ ,,

'किसान-दलसंघ' : कुल २९ सदस्य

किसान संघदल	१६ सदस्य

नए किसान और छोटे किसानों का संघदल	४ ,,
लटगालियन प्रजासत्तात्मक किसान दल	३ ,,
लटगालियन ईसाई किसान दल	३ ,,

(नरम) 'राष्ट्रीय दल संघ' : कुल ८ सदस्य

राष्ट्रीय मध्य दल	३ सदस्य
ईसाई राष्ट्रीय दल	४ ,,
मकान-मालिक दल	१ ,,

अल्प संख्या दलसंघ : कुल १८ सदस्य

जर्मन दल	६ सदस्य
सनातनी रूसी दल	२ ,,
पुराने विश्वासियों का दल	२ ,,
नरम प्रगतिशील रूसी दल	२ ,,
आगडास इसराईल यहूदी दल	२ ,,
मिसराखी यहूदी दल	१ ,,
पोलिश दल	२ ,,
अन्य	१ ,,

इन दलों के अतिरिक्त स्त्रियों की एक 'राष्ट्रीय स्त्री-संघ' भी है।

आस्ट्रिया और हंगरी की सरकार

पुरानी द्वराजाशाही

दूसरा एक साम्राज्य जिस के पिछली यूरोप की लड़ाई में अंग-भंग हो गए, रूस के दक्षिण का आस्ट्रिया-हंगरी का साम्राज्य था। इस साम्राज्य में जर्मन, हंगारियन, क्रोटस्, स्लोवेंस् और इटेलियन जातियों के लोग रहते थे, जो एक दूसरे से बिलकुल भिन्न थे और अपनी-अपनी स्वतंत्रता चाहते थे। साम्राज्य की राज-व्यवस्था भी, जैसा एक लेखक ने लिखा है—दुनिया के राजनैतिक अजायबघर की एक अजीब चीज़ थी। आस्ट्रिया और हंगरी दो देशों की राजशाही को मिल कर आस्ट्रिया-हंगरी में द्वराजाशाही थी। दोनों देश आपस के एक समझौते के अनुसार स्वतंत्र थे। हर एक की अलग-अलग राज-व्यवस्था, अलग-अलग व्यवस्थापक-सभाएं, मंत्री और अदालतें थीं। भीतरी शासन में दोनों देशों को पूरी स्वतंत्रता थी। एक को दूसरे के भीतरी काम-काज में दखल देने का हक़ नहीं था। मगर साम्राज्य का शासन दोनों देश मिल कर करते थे। दोनों का एक ही राजा था एक झंडा था, एक नागरिकता थी और दोनों के प्रतिनिधियों के मिल कर साम्राज्य का शासन चलाने के लिए एक ही संस्था थी। इस प्रबंध के दो देशों की संघ भी मामूली अर्थ में नहीं कह सकते हैं। आस्ट्रिया-हंगरी की इस द्वराजाशाही की राज-व्यवस्था के सन् १९१८ ई० तक तीन अंग थे। एक आस्ट्रिया की राज-व्यवस्था, दूसरा हंगरी की राज-व्यवस्था और तीसरा दोनों देशों के साझीदारी की शर्तों के क़ानून थे।

आस्ट्रिया की राज-व्यवस्था में शहंशाह को मौरूसी तौर पर कार्यकारिणी का मुख्य माना गया था। शहंशाह के द्वारा एक मंत्रिमंडल के नियुक्त किए जाने की भी योजना थी। सन् १८६७ ई० के व्यवस्थापक कानूनों के अनुसार शहंशाह के हर हुक्म

पर किसी न किसी मंत्री के दस्तखत की क़ैद भी रक्खी गई थी। मगर मंत्री व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार नहीं होते थे। धीरे-धीरे मंत्रियों की व्यवस्थापक-सभा को जवाबदारी की प्रथा भी बढ़ी। मगर फिर भी आस्ट्रिया की व्यवस्थापक-सभा के राजनैतिक-दलों के आपस के झगड़ों के कारण शहंशाह को अपने हाथ में ताक़त रखने का हमेशा मौक़ा रहता था और वही अपनी इच्छा के अनुसार मंत्रियों को नियुक्त करता था। इन मंत्रियों के आधीन एक ज़बरदस्त नौकरशाही होती थी और इस लिए उन की पुरानी आस्ट्रिया में बड़ी ताक़त होती थी। सन् १८६७ ई० के व्यवस्थापक क़ानूनों के अनुसार आस्ट्रिया में दो सभाओं की एक व्यवस्थापक-सभा भी क़ायम की गई थी। इंगलैंड की तरह एक सभा 'हाउस ऑव् पीयर्स' कहलाती थी जिस में मौरूसी लार्ड्स, बड़े पादरी,[1] और कुछ शहंशाह के नियुक्त किए हुए सदस्य होते थे। नियुक्त किए हुए सदस्यों की बाद में संख्या बढ़ती गई और उन का 'हाउस ऑव् पीयर्स' में सब से बड़ा गुट्ट बन गया था। दूसरी सभा में जिस को 'प्रतिनिधि-सभा' कहते थे—पहले प्रांतिक धारा-सभाओं से चुन कर सदस्य आते थे। बाद में 'प्रतिनिधि-सभा के सदस्यों को चुनने का अधिकार प्रजा को दे दिया गया था। मगर सन् १६०७ ई० तक इन सदस्यों को चुनने का अधिकार, कर देने के अनुसार विभाजित, प्रजा के पाँच भागों को था। प्रत्येक भाग को प्रतिनिधियों की एक खास संख्या चुनने का अधिकार था। सन् १६०७ ई० में इस अटपटी व्यवस्था को तोड़ कर सब मर्दों को मताधिकार दे दिया गया और सदस्यों की संख्या में भी फेर-फार किया गया। व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं को लगभग एक से ही अधिकार थे। सिर्फ़ रुपए पैसे और अनिवार्य सैनिक सेवा से संबंध रखनेवाले मसविदों की पहले प्रतिनिधि-सभा में शुरू होने की क़ैद ज़रूर थी। हर एक क़ानून को पास होने के लिए दोनों सभाओं की स्वीकृति आवश्यक होती थी। मगर रुपए-पैसे से संबंध रखनेवाले मसविदों पर दोनों सभाओं में मतभेद होने पर जिस सभा से कम संख्या का प्रस्ताव आता था, उसी को स्वीकार मान लिया जाता था। व्यवस्थापक-सभा की बैठकें न होने के समय में शहंशाह को मंत्रियों की सलाह से हर प्रकार के आवश्यक क़ानून बनाने का अधिकार था। मगर व्यवस्थापक-सभा के दूसरी बार बैठते ही उन क़ानूनों को सभा की मंज़ूरी के लिए सभा के सामने रक्खे जाने की क़ैद थी। मंत्रियों से व्यवस्थापक-सभा में उन के काम के बारे में प्रश्न पूछे जा सकते थे। परंतु व्यवस्थापक-सभा के उन में अविश्वास दिखाने पर भी मंत्री फ्रांस इत्यादि देशों की तरह पद त्याग करने के लिए मजबूर नहीं होते थे, क्योंकि वे उन देशों की तरह व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार नहीं होते थे। अस्तु, प्रजासत्तात्मक राज्य का दिखावा तो था मगर प्रजासत्तात्मक राज्य नहीं था। जर्मनी की तरह आस्ट्रिया में भी पिछली लड़ाई से पहले शहंशाह की मर्ज़ी के अनुसार चलने के लिए व्यवस्थापक-सभा के तैयार न होने पर भी मंत्री किसी न किसी तरह अपने नौकरशाही के बड़े झुंड की सहायता से शहंशाह की मर्ज़ी का पालन करा ही लिया करते थे। नौकरशाही का बड़ा ज़ोर था और उस को बड़े लंबे-चौड़े अधिकार थे, जिन का वह प्रजा की इच्छा या हित का खयाल न कर के निरंकुशता से उपयोग

[1] आर्च-बिशप।

करती थी। सभाओं, व्याख्यानों, लेखों पर नौकरशाही की तरफ़ से कड़ी दृष्टि रक्खी जाती थी। रिश्वतखोरी का भी बाज़ार गर्म रहता था। इसी प्रकार हंगरी की राज-व्यवस्था भी अलग थी। आस्ट्रिया का शहशाह हंगरी का भी राजा और हंगरी राष्ट्र का सिरताज होता था। हंगरी की राजधानी बुडापेस्ट में बैठ कर, राजा का चुना हुआ एक मंत्रि-मंडल हंगरी का शासन चलाता था। मगर हंगरी में मंत्रि-मंडल आस्ट्रिया की भाँति राजा को जवाबदार होने के बजाय हंगरी की व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार होता था। हंगरी की व्यवस्थापक-सभा की भी दो सभाएं थीं। एक 'हाउस ऑव् मेगनेट्स' अर्थात् 'बड़े लोगों की सभा' और दूसरी 'प्रतिनिधि-सभा' कहलाती थी 'बड़े लोगों की सभा' में मौरूसी और कुछ अधिकारी अपने पदों के कारण सदस्य होते थे। प्रतिनिधि सभा में प्रजा की तरफ़ से चुन कर प्रतिनिधि आते थे। सर्वसाधारण को 'प्रतिनिधि सभा' के सदस्य चुनने का अधिकार नहीं था। मताधिकार पाने के लिए थोड़े-से कर देने की शर्त रक्खी गई थी, मगर आस्ट्रिया से हंगरी की सरकार फिर भी अधिक प्रजा-सत्तात्मक थी।

आस्ट्रिया और हंगरी की इन अलग-अलग राज-व्यवस्थाओं के अतिरिक्त आस्ट्रिया हंगरी साम्राज्य या द्वराजाशाही की एक तीसरी राज-व्यवस्था थी। इस द्वराजाशाही की व्यवस्था में भी शहशाह सिरताज होता था और वह स्वयं अपने चुने हुए परराष्ट्र, युद्ध और अर्थ तीन सचिवों और एक हिसाब किताब की 'जाँच-अदालत' की सहायता से आस्ट्रिया और हंगरी दोनों राष्ट्रों का आम शासन चलाता था, जो दोनों भागों की मर्ज़ी से आम मान कर इस प्रबंध को सौंप दिया जाता था। द्वराजाशाही की कोई व्यवस्थापक-सभा नहीं थी। साठ-साठ प्रतिनिधि दोनों राष्ट्रों की व्यवस्थापक-सभाएं हर साल चुन कर भेजतीं हैं; इन प्रतिनिधियों की सभा बारी-बारी से दोनों देशों की राजधानियों, वियना और बुडापेस्ट से दोनों देशों के सम्मिलित काम काज के लिए धन मंज़ूर करने और उस काम-काज की आम नीति पर विचार और निश्चय करने के लिए होती थी। दोनों देशों के प्रतिनिधियों की अलग-अलग बैठकें होती थीं। किसी प्रश्न पर मतभेद होने पर दोनों में से कोई एक प्रतिनिधि-मंडल दोनों प्रतिनिधि-मंडलों की एक सम्मिलित-सभा की माँग कर सकता था। सम्मिलित-सभा में हर प्रश्न पर बहुमत से निश्चय होता था। इस द्वराजाशाही का प्रबंध का क्षेत्र बहुत लंबा-चौड़ा नहीं था, फिर भी परराष्ट्र और सेना जैसे ज़रूरी विभागों का शासन इस प्रबंध के हाथ में था। द्वराजाशाही प्रबंध का अर्थसचिव एक सम्मिलित बजट भी तैयार करता था, जिस पर दोनों प्रतिनिधि-मंडलों के मत लिए जाते थे। द्वराजाशाही की तरफ़ से किसी प्रकार के सीधे कर नहीं लगाए जाते थे। व्यापारी चुंगी, करों और दोनों देशों के खज़ानों से इमदाद ले कर द्वराजाशाही शासन का खर्च चलाया जाता था। मुद्रा, रेल और तार इत्यादि जैसी और भी बहुत-सी बातों के संबंध में दोनों देशों में एक से क़ानून पास करा के एक आम नीति बना ली जाती थी, मगर उन का निश्चय दोनों देशों की व्यवस्थापक-सभाएं करतीं थीं, प्रतिनिधि-मंडल नहीं।

इस विचित्र द्वराजाशाही से किसी देश को अधिक लाभ नहीं था, बल्कि उल्टी वह एक सरकार की कमज़ोरी का बायस थी। हां, इस प्रबंध से आस्ट्रिया में बसी हुई जर्मन-जाति और हंगरी में बसी हुई मेग्यार जाति के थुथले घमंड की पूर्ति अवश्य होती थी, मगर आस्ट्रिया हंगरी के राज्य में बसी हुई दूसरी जातियों को यह प्रबंध बिल्कुल पसंद नहीं था। वे द्वराजाशाही के बजाय जर्मनी की तरह एक संघ-साम्राज्य चाहती थीं, जिस में उन की हस्ती को भी जगह हो। दूसरे देशों से संबंध रखने में भी द्वराजाशाही कमज़ोरी दिखाती थी, क्योंकि परराष्ट्रों से संबंध रखनेवाले हर प्रश्न पर दो प्रतिनिधि-मंडलों की राय एक करनी होती थी। इस द्वराजाशाही की मूर्ख परराष्ट्र-नीति का ही यह नतीजा था कि सरबिया से युद्ध छेड़ कर पिछली यूरोप की लड़ाई की महामारी दुनिया में फैला दी गई थी। यूरोप के राजनैतिक काँटे का वज़न बराबर रखने के लिए इस द्वराजाशाही की रचना की गई थी। वरना राजनैतिक संगठन और व्यवस्था की दृष्टि से वह एक बिल्कुल निकम्मी चीज़ थी। लड़ाई के शुरू-शुरू में तो आस्ट्रिया-हंगरी में बसनेवाली सभी जातियों ने मिल कर लड़ने का निश्चय किया था। मगर बाद में द्वराजाशाही को दलदल में फँसा देख कर पोल, ज़ेक, स्लोवाक, जूगोस्लाव इत्यादि सारी जातियों ने अपने-अपने लिए स्वराज्य की माँग शुरू कर दी थी। आस्ट्रिया की सेनाएं भी जर्मनी की तरह लड़ाई के मैदान से, गोला-बारूद और रसद न मिलने के कारण, भाग उठी थीं। अस्तु, शहंशाह ने नैया डूबती हुई देख कर आखिरकार एक एलान निकाला कि, 'आस्ट्रिया की सरकार को संघीय राज-व्यवस्था क़बूल है, जिस में साम्राज्य की सभी जातियों को स्वराज्य होगा और सारी जातियां बराबर की हैसियत से संघ की सदस्य होंगी।' मगर इस प्रकार के एलानों का समय बीत चुका था। हंगरी ने द्वराजाशाही का प्रबंध खत्म हो जाने और अपने उस प्रबंध से अलग हो कर स्वतंत्र हो जाने का एलान कर दिया। आस्ट्रिया-हंगरी की द्वराजाशाही की, लड़ाई के धक्के से, कमर टूटते ही दूसरी जातियों ने भी अपनी-अपनी स्वतंत्रता का एलान कर दिया और अस्थायी संधि का एलान होते ही उन की स्वतंत्रता दूसरे देशों ने मंज़ूर कर ली। अस्तु, लड़ाई के बाद आस्ट्रिया-हंगरी की सरकार टूट कर आस्ट्रिया, हंगरी, पोलैंड, ज़ेकोस्लोवाकिया, जूगोस्लाविया और रूमानिया की छः स्वतंत्र सरकारों में बँट गई।

नई आस्ट्रिया

राज-व्यवस्था—आस्ट्रिया की नई सरकार का अधिकार आस्ट्रिया में बसनेवाले सिर्फ़ ६५ लाख जर्मनों पर रह गया है। इस नए राष्ट्र में वियना, ऊपरी आस्ट्रिया, निचली आस्ट्रिया, सेल्ज़बर्ग, स्टीरिया, बरजेंलैंड, कैरेंथिया, वोरेल्बेर्ग और टाइरोल के भाग शामिल हैं। ११ नवंबर सन् १६१८ को ही, जिस दिन जर्मनी और मित्र-राष्ट्रों में अस्थायी संधि हुई थी, आस्ट्रिया के शहंशाह ने अपनी कहानी खत्म समझ कर राजनीति के झगड़ों से अपना हाथ खींच लिया था और आस्ट्रिया के तीनों मुख्य राजनैतिक दलों—राष्ट्रीय जर्मन दल, ईसाई समाजवादी दल, समाजी प्रजासत्तात्मक दल—की एक अस्थायी

राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा ने क़ानून बना कर आस्ट्रिया के एक 'प्रजासत्तात्मक प्रजातंत्र' होने और उस में सारे अधिकार और सत्ता की जड़ प्रजा के होने का एलान कर दिया था। अस्थायी राजव्यवस्था में आस्ट्रिया—जो कि अब सिर्फ़ जर्मन आस्ट्रिया थी—को नए जर्मन प्रजातंत्र का एक अंग भी माना गया था। जर्मन प्रजातंत्र की राजव्यवस्था की ६१ वीं धारा में भी जर्मन आस्ट्रिया के जर्मन प्रजातंत्र में शरीक होने की योजना रक्खी गई थी। मगर मित्र राष्ट्रों ने जर्मनी और आस्ट्रिया का यह सम्मिलन नहीं होने दिया। वारसेल्ज़ की सुलह की ८० वीं धारा में जर्मनी को 'आस्ट्रिया की स्वाधीनता स्वीकार करने और आस्ट्रिया और मित्र-राष्ट्रों में तय हो जानेवाली आस्ट्रिया की सीमा स्वीकार करने तथा आस्ट्रिया की इस स्वाधीनता से बिना लीग ऑव नेशंस की मर्ज़ी के अभंग मानने' के लिए मजबूर कर दिया गया था। 'अस्थायी राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा ने जनवरी १९१९ में एक व्यवस्थापक-सम्मेलन के चुनाव की भी योजना की थी। इस 'व्यवस्थापक-सम्मेलन को दो साल के लिए चुनने और सारे जर्मन ज़िलों से २५० प्रतिनिधि चुनने का निश्चय किया गया था। बीस वर्ष के ऊपर के सब मर्द और स्त्रियों को अनुपात-निर्वाचन की सूची-पद्धति के अनुसार 'व्यवस्थापक सम्मेलन' के चुनाव में भाग लेने का अधिकार दे दिया गया था, पांच फ़रवरी को चुनाव हुआ जिस में चालीस लाख मतदारों ने भाग लिया और ४ मार्च सन १९१९ को 'व्यवस्थापक-सम्मेलन'[1] की बैठक शुरू हुई। अस्थायी राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा ने बहुत-से अस्थायी क़ानून पास कर के सरकार के विभिन्न विभागों का संगठन कर लिया था। 'व्यवस्थापक-सम्मेलन' के बैठते ही अस्थायी राष्ट्रीय सभा ने सरकार का भार उस को सौंप दिया और वह भंग हो गई। १२ मार्च को 'व्यवस्थापक-सम्मेलन' ने आस्ट्रिया के एक प्रजासत्तात्मक प्रजातंत्र होने और जर्मन प्रजातंत्र का अंग होने का फिर बाक़ायदा एलान किया और अपने हाथ में सारी राष्ट्रीय सत्ता होने की घोषणा की।

व्यवस्थापक सम्मेलन के सामने नए आस्ट्रिया के राष्ट्र की राज व्यवस्था तैयार करने के साथ-साथ मित्र-राष्ट्रों से सुलह करने, युद्ध के परिणाम-स्वरूप देश में फैली हुई बेकारी, अकाल, बीमारी और गिरती हुई मुद्रा की क़ीमत ठीक रखने की बहुत-सी जटिल समस्याएं थीं। इन सारी समस्याओं को सुलझाते हुए और मित्र राष्ट्रों से सितंबर सन् १९१९ में सुलह कर के, अक्टूबर सन् १९२० ई० में व्यवस्थापक-सम्मेलन ने आस्ट्रिया के नए राष्ट्र के लिए एक 'संघीय प्रजासत्तात्मक प्रजातंत्र' की राज व्यवस्था मंज़ूर की। यह राज-व्यवस्था स्विट्ज़रलैंड की संघीय और सीधे चुनाववाली राज-व्यवस्था तथा जर्मन प्रजातंत्र की राज-व्यवस्था के आर्थिक और सामाजिक अधिकारों के नमूने पर ढाली गई थी। उस पर नवंबर सन् १९२० ई० से अमल शुरू हुआ था और सन् १९२९ तक उस में प्रजातंत्र के प्रमुख के अधिकार बढ़ाने के लिए कई संशोधन भी हुए थे।

इस राज-व्यवस्था के अनुसार आस्ट्रिया नौ प्रांतों का एक संघीय राष्ट्र बना दिया गया है। विभिन्न प्रांत अपनी रक्षा, आर्थिक प्रबंध और व्यापारी चुंगीकरों के प्रबंध के लिए एक संघ में मिल गए हैं। संघ को बहुत-सी सत्ता है। परराष्ट्र विषय, पासपोर्ट

[1] नेशनल कौंसिल।

नियम, संघीय आय-व्यय और देश का आम शासन संघ के हाथ में होता है। नागरिकता, धंधों के प्रतिनिधित्व, व्यापार, दुहरे करों को और आर्थिक चलन में अड़चनों को रोकने, अस्त्र-शस्त्र और गोला-बारूद, मकानों और ज़ाब्ता फ़ौजदारी तथा शासन के संबंध में क़ानून-संघ बनाती है। मगर उन को अमल में प्रांत लाते हैं। प्रांतीय शासन, स्थानिक सरकार के काम-काज, पंचायती अदालतों, स्थानिक पुलिस, जंगलात, ज़मीन के सुधार के संबंध में सिद्धांत निश्चय करने की सत्ता संघ को है, मगर तफ़सीली हुक्म प्रांत निकालते हैं। सब प्रकार के करों को लगाने और उन की आमदनी को संघीय और प्रांतीय खज़ानों में बाँटने की भी पूरी सत्ता संघ के हाथ में होती है। कार्यकारिणी की जो सत्ता संघ को नहीं दी गई है, वह प्रांतों की स्वाधीन सत्ता में समाविष्ट मानी गई है। संघ और प्रांतों की सरकार का काम प्रजा के चुने हुए 'जन-संचालक' चलाते हैं। संघ और प्रांतों को अपने-अपने सेवकों पर पूरा अधिकार होता है।

व्यवस्थापक-सभा—संघीय व्यवस्थापक-सभा की 'राष्ट्रीय-सभा' और 'संघीय सभा'[1] दो सभाएं हैं। 'राष्ट्रीय सभा' के चुनाव में २१ वर्ष के ऊपर सब मर्द और स्त्री नागरिक अनुपात-निर्वाचन के अनुसार भाग लेते हैं और २४ वर्ष के ऊपर वे उम्मीदवार हो सकते हैं। किसी नागरिक का मताधिकार बिना अदालत के फ़ैसले के नहीं ज़ब्त किया जा सकता है। 'संघ-सभा' का चुनाव प्रांतिक धारा-सभाएं करती हैं। 'राष्ट्र-सभा' चार वर्ष के लिए चुनी जाती है। प्रजातंत्र का प्रमुख वसंत और पतझड़ में साल में दो बार उस की बैठकें बुलाता है। राष्ट्र-सभा के एक तिहाई सदस्यों की या संघीय सरकार की माँग होने पर भी राष्ट्र-सभा फ़ौरन बुलाई जाती है। संघ-सभा में हर प्रांत से आबादी के अनुसार इस प्रकार प्रतिनिधि चुन कर आते हैं कि सब से बड़ी आबादी के प्रांत से १२ सदस्य और दूसरे प्रांतों से उन की आबादी और सब से बड़े प्रांत की आबादी में जो निस्बत होती है, उतने। मगर हर प्रांत से कम से कम तीन प्रतिनिधि अवश्य आते हैं। वियना और आस्ट्रिया के प्रांतों की खास हैसियत मानी गई है। इन प्रतिनिधियों का चुनाव प्रांतिक धारा-सभाए प्रांत की धारा-सभा की ज़िंदगी भर के लिए करती हैं।

क़ानूनी मसविदे राष्ट्र-सभा के सदस्यों, संघीय सरकार और संघ-सभा की ओर से संघीय सरकार के द्वारा अथवा दो लाख मतदारों या तीन प्रांतों के आधे मतदारों की प्रस्तावना पर सरकार के द्वारा राष्ट्र-सभा में पेश किए जा सकते हैं। राष्ट्र-सभा में मंज़ूर हो जानेवाले मसविदों को प्रधान मंत्री या 'फ़ेडरल चांसलर' संघ-सभा के पास भेज देता है। अगर 'संघ-सभा' उस को जैसा का तैसा मंज़ूर कर लेती है, तो उस को अमल के लिए एलान कर दिया जाता है। अगर संघ सभा और राष्ट्र-सभा की राय नहीं मिलती है, तो वह मसविदा फिर राष्ट्र-सभा के पास पुनः विचार के लिए भेजा जाता है और राष्ट्र-सभा उस को जैसा चाहे वैसा अपनी सभा में बहुमत से पास कर

---

[1] फ़ेडरल कौंसिल।

सकती है, बशर्ते कि सभा में कम से कम आधे सदस्य हाज़िर हों। मगर संघ के आय-व्यय-संबंधी तख़मीनों या राष्ट्र-सभा के काम काज और भंग होने के संबंध के प्रस्तावों में फेरफार करने का अधिकार 'संघ-सभा' को नहीं है। 'राष्ट्र-सभा' अपने पास किए हुए क़ानून पर अमल के लिए एलान होने से पहले हवाले के ज़रिए से प्रजा की राय भी ले सकती है। किसी एक क़ानून के द्वारा राज-व्यवस्था में किसी प्रकार का संशोधन करने के लिए व्यवस्थापक-सभा के आधे सदस्यों की हाज़िरी और सदस्यों की दो-तिहाई संख्या की मंज़ूरी की ज़रूरत होती है। राज व्यवस्था के आम संशोधनों पर व्यवस्थापक-सभा की मंज़ूरी के बाद हवाले के द्वारा प्रजा की राय लेनी पड़ती है। अगर राज-व्यवस्था के सिर्फ़ किसी अंग का संशोधन होता है तो 'राष्ट्र-सभा' या 'संघ-सभा' के एक तिहाई सदस्यों की प्रार्थना पर हवाला लिया जाता है। आम तौर पर सारे प्रश्न दोनों सभाओं में बहुसंख्या से मंज़ूर होते हैं। राष्ट्रीय संधियों और उन संधियों की स्वीकृति के लिए, जिन में देश के क़ानून में फेरफार होता है, 'राष्ट्र-सभा' की मंज़ूरी आवश्यक होती है। 'राष्ट्र-सभा' और 'संघ-सभा' दोनों को सरकार की नीति और काम-काज में हस्तक्षेप करने का बहुत सा अधिकार होता है। पदार्थों की क़ीमतें तय करने, मजदूरी तय करने इत्यादि का काम और दूसरा आर्थिक काम काज 'राष्ट्र-सभा' अपनी एक 'ख़ास कमेटी' के ज़रिए करती है।

'राष्ट्र-सभा' की बैठक सिर्फ़ 'राष्ट्र-सभा' के ही प्रस्ताव से स्थगित की जा सकती है और उस को फिर मिलने के लिए बुलावा, सभा के अध्यक्ष की तरफ़ से भेजा जाता है। अपना चार वर्ष का समय पूरा होने से पहले भी, क़ानून पास कर के, राष्ट्र-सभा अपने आप को भंग कर सकती है। 'राष्ट्र-सभा' अपने सदस्यों में से एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष और एक नायब उपाध्यक्ष चुनती है। सभा का काम काज सभा के ही ख़ुद बनाए हुए एक क़ानून के नियमों के अनुसार चलाया जाता है। इस क़ानून को पास करने के लिए सभा के आधे सदस्यों की हाज़िरी और दिए गए मतों की दो तिहाई संख्या की आवश्यकता होती है। एक तिहाई सदस्य आम तौर पर सभा में हाज़िर न होने पर कोई भी सभा का फ़ैसला बाक़ायदा नहीं होता है। सभा की बैठकें प्रजा के लिए खुली होती हैं। मगर अध्यक्ष या सदस्यों के पांचवें भाग की प्रार्थना पर बंद बैठकें भी हो सकती हैं, बशर्ते कि दर्शकों के हट जाने के बाद सभा बहुमत से बंद बैठक करना स्वीकार कर ले।

'संघ-सभा' के सदस्यों का चुनाव तो अनुपात-निर्वाचन के अनुसार प्रांतीय धारा-सभाएं करती हैं; मगर कम से कम एक सदस्य उस दल का अवश्य चुने जाने की क़ैद रक्खी गई है, जिस दल की प्रांतीय धारा-सभा में सब से बड़े दल के बाद सब से अधिक संख्या हो, या कई दलों की बराबर संख्या होने पर, जिस को पिछले चुनाव में सब से अधिक मत मिले हों। कई दलों का एक-सा हक़ होने पर चिट्ठी डाल कर फ़ैसला कर लिया जाता है। 'संघ-सभा' के सदस्य किसी प्रांतिक धारा-सभा के सदस्य नहीं हो सकते हैं। मगर प्रांतिक धारा-सभा के लिए चुने जाने का उन को अधिकार अवश्य होना चाहिए। प्रांतीय धारा-सभाओं का काल पूरा हो जाने या उन के भंग हो जाने पर भी उन के चुने हुए 'संघ-

सभा' के सदस्य उस समय तक काम करते रहते हैं जब तक कि प्रांतीय धारा-सभाएं नए सदस्य 'संघ-सभा' के लिए न चुन लें। 'संघ-सभा' का अध्यक्ष हर छठे महीने बदल दिया जाता है। बारी-बारी से वर्णमालाक्रम से हर प्रांत के सब से अधिक मतों से चुने जाने वाले प्रतिनिधि को 'संघ-सभा' का अध्यक्ष बनाया जाता है। संघ-सभा की बैठकें भी सभा का अध्यक्ष उसी स्थान पर बुलाता है, जहां 'राष्ट्र-सभा' की बैठकें होती हैं। 'राष्ट्र-सभा की तरह 'संघ-सभा' का भी कोई निश्चय बिना एक तिहाई सदस्यों की हाज़िरी और बहुसंख्या की मर्ज़ी के बाक़ायदा नहीं होता है। काम-काज के नियम का प्रस्ताव भी संघ-सभा राष्ट्र-सभा की तरह ही आधे सदस्यों की हाज़िरी और उन की दो तिहाई संख्या की मज़ूरी से करती है। संघ-सभा की खुली बैठकों के संबंध में भी वही शर्तें रक्खी गई हैं, जो राष्ट्र-सभा के संबंध में। आस्ट्रिया की व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों को भी वही सारे अधिकार और रियायतें होती हैं जो आम तौर पर प्रजासत्तात्मक देशों में व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों को होती हैं अर्थात् बोलने और मत देने की स्वतंत्रता तथा सभा की बैठकों के समय में गिरफ़ारी से आज़ादी इत्यादि। कोई सदस्य 'राष्ट्र-सभा' और 'संघ-सभा' दोनों का सदस्य एक साथ नहीं हो सकता है, मगर आस्ट्रिया में कोई भी सेना या सरकार का नौकर व्यवस्थापक सभा का उम्मीदवार हो सकता है। सदस्य हो जाने पर सभा की बैठकों में जाने के लिए उसे बराबर छुट्टी दी जाती है। 'राष्ट्र-सभा' को 'जाँच कमेटियां' नियुक्त कर के अधिकारियों और सरकारी विभागों के काम-काज की जाँच करने का अधिकार होता है और इस प्रकार की जाँच-कमेटियों के आगे, माँगने पर, अधिकारियों और अदालतों को हर प्रकार के काग़ज़ात रखने होते हैं। 'राष्ट्र-सभा' की एक स्थायी 'मुख्य-कमेटी' भी होती है जो 'राष्ट्र-सभा' की बैठकें न होने पर, ज़रूरत पड़ने पर, संघीय सरकार के सदस्यों की, सभा की बैठक में बाक़ायदा उन का चुनाव होने तक, अस्थायी नियुक्ति कर सकती है। राष्ट्र-सभा और संघ-सभा की मिल कर राष्ट्र-सभा के स्थान पर 'संघीय-सम्मेलन' की बैठक आस्ट्रिया प्रजातंत्र के प्रमुख का चुनाव करने और उस से प्रजातंत्र के प्रति राजभक्ति की शपथ लेने के लिए भी 'संघीय सम्मेलन' की बैठक बुलाई जाती है। राष्ट्र-सभा के प्रजातंत्र के प्रमुख पर अभियोग चलाने का निश्चय कर लेने पर या प्रमुख का स्थान किसी कारण से स्थायी रूप से खाली हो जाने पर, नए प्रमुख का चुनाव करने के लिए या प्रजातंत्र के प्रमुख से 'राष्ट्र-सभा' की माँग पर उस के कामों के लिए जवाब तलब करने के लिए, संघीय-सम्मेलन' की बैठक संघीय चांसलर बुलाता है। अन्यथा सम्मेलन की बैठकें प्रजातंत्र का प्रमुख ही बुलाता है। सम्मेलन की अध्यक्षता का स्थान पहले 'राष्ट्र-सभा' का अध्यक्ष लेता है और फिर 'संघ-सभा का अध्यक्ष। बाद में बारी-बारी से दोनों सम्मेलन के अध्यक्ष होते हैं। 'राष्ट्र सभा के काम काज के नियमों के अनुसार सम्मेलन का काम-काज चलाया जाता है।

कार्यकारिणी

प्रजातंत्र का प्रमुख—प्रजातंत्र के प्रमुख का संघ के सारे मतदार सीधा छः वर्ष के लिए चुनाव करते हैं। छः वर्ष का समय पूरा होने पर वह सिर्फ़ एक बार और

फ़ौरन ही दूसरे छः वर्ष के समय के लिए चुना जा सकता है। प्रमुख पद के लिए चुनाव में ३५ वर्ष की उम्र से अधिक का कोई भी मतदार खड़ा हो सकता है। आस्ट्रिया के प्रमुख को फ्रांस के प्रजातत्र के प्रमुख की तरह ही अधिकार होते हैं। मगर आस्ट्रिया के प्रमुख को 'राष्ट्रीय संकट' के समय में जरूरी क़ानून पास करने का अधिकार भी होता है। 'राष्ट्रीय संकट' की राज-व्यवस्था में, प्रमुख के इस अधिकार का उपयोग करने के लिए, इस प्रकार व्याख्या की गई है कि, 'अगर समाज को हानिकारक कोई ज़ाहिर खतरा पैदा हो जाय और उस समय राष्ट्र सभा की बैठक न हो रही हो, या उस की बैठक करना असंभव हो या उस की बैठक ज़बरदस्ती रोक दी गई हो तो प्रमुख को ऐसी हालत में मौक़े के अनुसार आवश्यक क़ानूनों को एलान और जारी करने का अधिकार है।' यह 'आवश्यक क़ानून' संघीय सरकार की तरफ़ से 'राष्ट्र-सभा' की स्थायी कमेटी की राय से प्रमुख के सामने जारी करने के लिए पेश होने चाहिए। ऐसे 'आवश्यक क़ानून' राज-व्यवस्था, उद्योगी संगठन,[1] आर्थिक विषय और किसानों की रक्षा के संबंध में जारी नहीं हो सकते हैं, और उन को जल्दी से जल्दी 'राष्ट्र सभा' की बैठक के सामने, एक हफ़्ते के अंदर, मंज़ूरी के लिए पेश करने की भी शर्त रक्खी गई है। 'राष्ट्र-सभा' इन 'आवश्यक क़ानूनों' में अपनी मर्ज़ी के अनुसार संशोधन या जरूरत न रहने पर उन को सिर्फ़ बहुमत से रद्द कर सकती है। हर हालत में 'आवश्यक क़ानूनों' के जारी होने की तारीख़ से चार हफ़्ते के भीतर 'राष्ट्र-सभा' को उन के विषय में अपना फ़ैसला ज़ाहिर करना जरूरी माना गया है।

राज करने वाले राजघरानों या उन राजघरानों के लोग, जो पहले राज कर चुके हैं, प्रजातत्र के प्रमुख पद के लिए उम्मीदवार नहीं हो सकते हैं। जितने मत चुनाव में पड़ें, उन के आधे से अधिक जिस उम्मीदवार को मिलते हैं, वही प्रमुख चुना जाता है। जब तक किसी को आधे से अधिक मत नहीं मिलते हैं, तब तक बार-बार मत लिए जाते हैं। प्रजातंत्र का प्रमुख, प्रमुख-पद पर रहते हुए किसी सार्वजनिक संस्था का सदस्य नहीं हो सकता है और न वह और कोई धंधा कर सकता है। संघीय सम्मेलन प्रजातत्र के प्रमुख पर अभियोग चला सकता है। प्रमुख के काम करने के अयोग्य हो जाने या उस की जगह कुछ काल के लिए खाली हो जाने पर प्रमुख का काम संघीय चांसलर करता है। फ्रांस के प्रमुख की तरह आस्ट्रिया का प्रमुख बाहरी देशो के लिए प्रजातंत्र का प्रतिनिधि होता है, वही उन से संधियां करता है और उस को एलची भेजने और लेने, सेना और सरकारी अधिकारियों को नियुक्त करने, उन को खिताब देने अपराधियों को क्षमा करने के अतिरिक्त नाजायज़ बच्चों के माता-पिता की अर्ज़ी पर जायज़ क़रार देने का अधिकार होता है। प्रमुख अपना सरकारी अधिकारियों को नियुक्त करने का अधिकार खास क़िस्म के अधिकारियों के लिए संघीय सरकार के उचित सदस्यों को भी सौंप सकता है। उसी तरह खास क़िस्म की संधियां करने का अधिकार भी वह संघीय सरकार को सौंप सकता है। प्रमुख के सारे काम—सिवाय उन कामों के

---

[1] मज़दूर-संघों इत्यादि।

जो कि राज-व्यवस्था में उसी के लिए रक्खे गए हैं—आम तौर पर संघीय सरकार या संघीय सरकार से अधिकार-प्राप्त मंत्रियों के प्रस्ताव पर होते हैं। उस का कोई काम संघीय चांसलर या किसी अधिकार-प्राप्त मंत्री की सही के बिना बाक़ायदा नहीं होता है। प्रमुख अपने कामों के लिए संघीय सम्मेलन को जवाबदार होता है।

मंत्रि-मंडल—सरकार के सारे काम की ज़िम्मेदारी संघ के मंत्रियों पर होती है। मंत्रि-मंडल में एक चांसलर[1], एक नायब चांसलर गृह, न्याय, अर्थ, समाज-हितकारी, व्यापार, खेती और जंगलात, युद्ध तथा शिक्षा इन आठ विभागों के आठ मंत्री होते हैं। राष्ट्र-सभा की 'मुख्य कमेटी' के प्रस्ताव पर राष्ट्र-सभा उन को इकट्ठा चुनती है और प्रजातंत्र का प्रमुख उन को नियुक्त कर के उन से राज-भक्ति की शपथ लेती है। सरकार का जो काम राज-व्यवस्था में प्रमुख को सौंपा गया है, उस के अतिरिक्त सारा काम मंत्रि-मंडल करता है। 'संघीय चांसलर' की प्रधानता में सम्मिलित रूप से सारे मंत्री आस्ट्रिया प्रजातंत्र की संघीय सरकार होते हैं। चांसलर की ग़ैरहाज़िरी में नायब चांसलर उस का काम करता है। राष्ट्र सभा के सदस्य के होने के अधिकारी ही मंत्रि मंडल में चुने जा सकते हैं, मगर राष्ट्र-सभा के सदस्य, मंत्रि-मंडल के सदस्य नहीं बन सकते हैं। राष्ट्र-सभा की बैठक न होने पर राष्ट्र-सभा की 'मुख्य समिति सभा की बैठक होने तक अस्थायी रूप से मंत्रियों को नियुक्त कर देती है और फिर राष्ट्र-सभा की बैठक होने पर राष्ट्र-सभा उन को बाक़ायदा चुन लेती है। एक मंत्रि मंडल के निकल जाने पर, दूसरे के चुनाव तक, प्रजातंत्र का प्रमुख सरकार का काम जानने वाले मंत्रियों या विभागों के बड़े अधिकारियों को सौंप देता है और उन में से ही एक को अस्थायी मंत्रि-मंडल का प्रधान नियुक्त कर देता है। उसी तरह किसी एक-दो मंत्रियों के जाने पर वह उन की जगह भर या उन के किसी कारण से काम के अयोग्य हो जाने पर एवज़ी मंत्री रख सकता है। राष्ट्र-सभा के आधे सदस्यों की हाज़िरी में सभा में मंत्रि-मंडल या किसी एक-दो मंत्री में अविश्वास का प्रस्ताव पास होने पर प्रजातंत्र का प्रमुख मंत्रि-मंडल से या जिस मंत्री में अविश्वास दिखाया जाता है, उस से इस्तीफ़ा ले लेता है। मंत्रिमंडल अपनी इच्छा से भी प्रमुख को इस्तीफ़ा दे सकता है। अविश्वास का प्रस्ताव पास करने के लिए राष्ट्र-सभा में कम से कम आधे सदस्यों की हाज़िरी की जरूरत होती। मगर हाज़िर सदस्यों के पाँचवें भाग की माँग पर उस प्रस्ताव पर मत लेना तीसरे दिन के लिए स्थगित किया जा सकता है। बाद में भी बहुमत से मत लेना बंद किया जा सकता है। मंत्रि-मंडल के सदस्यों को राष्ट्र-सभा, संघ-सभा, संघीय सम्मेलन और इन सारी संस्थाओं की कमेटियों में भाग लेने तथा निमंत्रण मिलने पर, राष्ट्रसभा की 'मुख्य कमेटी' कार्रवाई में भी भाग लेने और बोलने का अधिकार होता है। इन संस्थाओं और कमेटियों को भी अपनी बैठकों में मंत्रि-मंडल के सदस्यों को हाज़िर रखने का अधिकार होता है। मंत्रि-मंडल अपने काम के लिए 'राष्ट्र-सभा' को जवाबदार होता है।

---

[1] प्रधान मंत्री।

स्थानिक-शासन और न्याय

स्थानिक-शासन—हर प्रांत में सब नागरिकों के मत से अनुपात-निर्वाचन के अनुसार चुनी हुई, प्रांतीय धारा-सभाएं होती हैं। प्रांतीय धारा-सभा के मंज़ूर किए हुए हर क़ानून को प्रांतीय गवर्नर एलान करने से पहले संघीय सरकार की मंज़ूरी के लिए भेजता है और संघ के हितों के विरुद्ध समझने पर संघीय सरकार उस क़ानून का विरोध कर सकती है। संघीय सरकार के उज्र को प्रांतीय धारा-सभा अपने सदस्यों के बहुमत से बशर्ते कि उस बैठक में कम से कम आधे सदस्य हाज़िर हों, रद्द कर सकती है। प्रजातंत्र का प्रमुख संघीय सरकार के प्रस्ताव और संघ सभा की कम से कम आधे सदस्यों की हाज़िरी में बहुमत से मंज़ूरी मिलने पर किसी भी प्रांतीय धारा-सभा को भंग कर सकता है। धारा-सभा भंग होने पर तीन हफ़्ते के अंदर नया चुनाव होता है। प्रांत के गवर्नर और प्रांतिक धारा-सभा द्वारा चुने हुए उस के साथी मंत्री स्थानिक शासन के लिए प्रांतीय धारा-सभाओं को और संघीय शासन की कार्रवाई के लिए संघीय अधिकारियों को जवाबदार होते हैं। प्रांत-शासन के कार्य के लिए, ज़िलों में बाँटे गए हैं और ज़िले कम्यूनों में। प्रांतीय शासन का सारा काम प्रांतीय धारा-सभा की चुनी हुई सरकार चलाती है। संघीय सरकार राज व्यवस्था में सौंपे हुए अपने ख़ास कामों को करने के लिए अपने अधिकारी प्रांतों में रख सकती है अथवा उन कामों को प्रांतीय सरकार को सौंप सकती है। प्रांतीय धारा-सभाओं के सदस्यों को भी वही अधिकार और रियायतें होती हैं जो संघीय व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों को होती हैं। प्रांतीय सरकार के सदस्य भी प्रांतीय धारा-सभा के सदस्यों में से नहीं चुने जा सकते हैं। सिर्फ़ एक 'लोअर आस्ट्रिया के प्रांत की धारा-सभा की दो शाखाएं होती हैं। एक 'प्रांत सभा' होती है, जिस में प्रांत के प्रतिनिधि होते हैं और दूसरी आस्ट्रिया की राजधानी वियना की 'नगर-सभा' होती है जिस में सिर्फ़ वियना शहर के प्रतिनिधि होते हैं। दोनों सभाओं के प्रतिनिधियों की संख्या दोनों की आबादी के लिहाज़ से तय की जाती है। दोनों सभाओं को मिला कर लोअर आस्ट्रिया की 'प्रांतीय धारा-सभा' होती है और वह प्रांत के सारे आम प्रश्नों का फ़ैसला करती है। जो विषय आम नहीं होते हैं उन में दोनों सभाएं अलग-अलग वियना प्रांत[1] और लोअर आस्ट्रिया प्रांत की प्रांतीय धारा-सभाओं की हैसियत से काम करती हैं। दोनों शाखाओं के संगठन की व्यवस्था और संघ-सभा के लिए प्रतिनिधियों का चुनाव दोनों भागों के लिए आम प्रश्न नहीं माने गए हैं। प्रांतीय करों को भी शहर के लिए वियना को 'नगर-सभा' और प्रांत के लिए दूसरी 'प्रांत-सभा' लगाती है। वियना की 'शहर-सभा' अर्थात् चुंगी का चुना हुआ प्रधान[2] वियना प्रांत का गवर्नर होता है और एक चुनी हुई समिति को उस के साथ मिला कर वियना प्रांत की सरकार बनती है। प्रांत का गवर्नर अलग होता है। आम शासन का कार्य प्रांतीय धारा-सभा का चुना हुआ एक 'शासन कमीशन' चलाता है जिस के वियना का गवर्नर और प्रांत का गवर्नर दोनों सदस्य होते हैं।

---

[1]वियना शहर को प्रांत माना गया है। [2]बर्गोमास्टर।

ज़िलों पर प्रांत का अधिकार और कम्यूनों पर ज़िलों का अधिकार होता है। मगर ज़िलों और कम्यूनों की अलग-अलग सभाएं और शासन-समितियां होती हैं। 'ज़िला सभाओं' और 'कम्यून सभाओं' को संघीय राज-व्यवस्था की शर्तों के अनुसार अपने क्षेत्रों के आर्थिक जीवन का नियंत्रण आय-व्यय का प्रबंध करने और कर लगाने का अधिकार होता है। कम्यूनों का मुख्य काम अपने क्षेत्र में बसनेवालों की जान-माल की रक्षा के लिए पुलिस का प्रबंध करना, सकटों में प्रजा की जान बचाने और उन को आराम पहुँचाने का काम करना, और सड़कों, सार्वजनिक स्थानों और पुलो को ठीक रखना और क़स्बों की 'सड़क पुलिस' गाँवों की पुलिस बाज़ार और खाद्य पदार्थों का प्रबंध करनेवाली पुलिस स्वास्थ्य-रक्षा पुलिस इमारतों और आग की पुलिस का प्रबंध करना होता है।

न्याय—दीवानी और फ़ौजदारी की अदालतें आस्ट्रिया में दूसरी प्रजासत्तात्मक देशों की तरह होती हैं। लंबी सज़ाओं और राजनैतिक अपराधों के फ़ैसले करने के लिए जज के साथ जूरी भी बैठती है। कुछ साल से अधिक सज़ा के अपराधों के न्याय के लिए जज के साथ असेसर बैठते हैं। फाँसी की सजा आस्ट्रिया में किसी को नहीं होती है, आस्ट्रिया की सब से बड़ी राष्ट्रीय अदालत, जिस में देश भर से अपीलें आती है वियना में बैठती है। दूसरी एक 'शासकी अदालत' भी वियना में बैठती है, जिस के सामने शासन अधिकारियों के खिलाफ़ नागरिकों की शिकायतों के मुक़दमे पेश होते हैं। तीसरी एक 'व्यवस्थापकी अदालत' वियना में बैठती है जो संघ और प्रांतों के झगड़ों, प्रांतों के आपस के झगड़ों, अदालतों और अधिकारियों के झगड़ों, मामूली अदालतों और शासकी अदालत के झगड़ों, शासकी अदालतों से अपने झगड़ों, चुनावों के झगड़ों और धारा-सभाओं द्वारा लगाए हुए अधिकारियों पर अभियोगों का न्याय करती है। चौथी एक हिसाब-किताब की 'जाँच-अदालत' होती है, जिस को साधारण अर्थ में अदालत कहना उचित नहीं है, क्योंकि उस का काम इंगलैंड के आडीटर-जनरल की तरह राष्ट्र का हिसाब-किताब तैयार कर के और उस की अच्छी तरह जाँच कर के राष्ट्र-सभा के सामने रखना होता है। यह अदालत राष्ट्र-सभा के अधीन होती है।

राजनैतिक दल—आस्ट्रिया का सब से बड़ा राजनैतिक दल 'समाजी प्रजा-सत्तात्मक दल' है। इस दल के सन् १६३१ ई० की राष्ट्रसभा में ७२ सदस्य और संघसभा में २० सदस्य थे। फिर भी यह दल व्यवस्थापक सभा में सरकार का विरोधी दल ही था, क्योंकि सरकार कई दलों की मिल कर बनी थी। यह दल आस्ट्रिया को जर्मनी से मिलाने का पक्षपाती है। मगर साथ ही साथ यह द्वितीय अंतरराष्ट्रीय[1] के अनुसार समाज-शाही का मानने वाला है। इस दल का ज़ोर अधिकतर उद्योगो स्थानों में और शहरों में है। वियना में तो इस दल की बिल्कुल तूती ही बोलती है। वहां की चुंगी पर उस का पूरा क़ब्ज़ा है और इस चुंगी के द्वारा उस ने अपनी रचनात्मक शक्ति का दुनिया के सामने

[1]सेकंड इंटरनेशनल नरम विचारों के समाजवादियों का अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन।

रूस की समाजशाही की तरह बड़ा अच्छा नमूना रक्खा है। इस दल के हाथ-पाँव आस्ट्रिया के नगरों में फैली हुई मज़दूर-संघें हैं। दल का एक भाग दूसरे दलों से मिल कर काम करने को राज़ी मालूम होता है, मगर डाक्टर औटो बोअर के नेतृत्व में बहु-संख्या बोल्शेविक विचारों की है। यह दल धर्म और सरकार के पृथक्करण, प्रत्यक्ष करों खास कर आमदनी और मौज-मज़े के करों और मुद्रानीति में सुधार, बेकारी कम करने के लिए सार्वजनिक कार्य, बड़ी ज़िम्मेदारियों का का छोटी में बटवारा, कृषि की उन्नति, ज़मींदारों से किसानों की रक्षा के क़ानूनों, समाजी क़ानूनों, खास कर बुढ़ापे के लिए बीमा, धार्मिक बातों से संबंध न रखनेवाली शिक्षा, उद्योगों, खानों, बैंकों और व्यापार में समाजशाही नियंत्रण का पक्षपाती है।

इस से छोटा दूसरा दल 'ईसाई समाजी दल' है, जिस के १९३० ई० के चुनाव में ६६ सदस्य राष्ट्रसभा में चुन कर आए थे। यह दल इंगलैंड के अनुदार या दक़ियानूसी दल के विचार रखता है और इस के राजनीति और शिक्षा-संबंधी विचारों में रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय के धार्मिक विचारों की बहुत कुछ छाप है। इस दल का एक अंग आस्ट्रिया में राजाशाही का पक्षपाती और दूसरा जर्मनी से एकीकरण का माननेवाला है। इस दल में अधिकतर मालदार लोग होते हैं। आर्थिक सुधारों की माँग यह दल सिर्फ़ मज़दूरपेशा लोगों को समाजवादियों की नास्तिकता से दूर रखने के लिए करता है। मगर यह दल सरकार के संघीय संगठन का पक्षपाती है और अपने दल का संगठन भी उस ने संघीय सिद्धांतों पर किया है।

दूसरे दलों में 'पैन, जर्मन दल' और 'कृषि-दल' का सन् १९३० से मिल कर 'राष्ट्रीय आर्थिक समूह' और 'कृषि-संघ'[1] नाम का एक दल बन गया है। यह दल कट्टर देशभक्ति, जर्मनी से एकीकरण और देश की आर्थिक उन्नति को माननेवाला है। इस दल के राष्ट्रसभा में सन् १९३० ई० के चुनाव में १९ सदस्य चुने गए थे। इटली के फ़ेसिस्टों से मिलता-जुलता एक और 'हीमाट ब्लाक' नाम का दल है, जो केवल शांतिमय उपायों से सरकार पर दबाव डालने में विश्वास नहीं रखता है। इस दल के पिछले चुनाव में सिर्फ़ आठ सदस्य व्यवस्थापक-सभा में चुन कर आए थे। मगर प्रांतों की धारा सभाओं में से इस दल के सदस्य काफ़ी संख्या में हैं।

हंगरी की नई सरकार

राज-व्यवस्था—आस्ट्रिया-हंगरी की राजाशाही की बेवक़ूफ़ियों और पराजय से हंगरी में भी सन् १९१८ ई० के अक्टूबर मास में जो क्रांति हो गई थी, जिस में आस्ट्रिया की तरह हंगरी को भी 'हंगरी की प्रजा का प्रजातंत्र' एलान कर दिया गया था। तेरह नवंबर को हंगरी के राजा चार्ल्स राज्य-त्याग की घोषणा कर देने के बाद काउंट माइकेल करोल्यी हंगरी की 'काम चलाऊ सरकार'[2] का प्रमुख बना था। मार्च में समष्टिवादी

[1] नेशनल एकानमिक ब्लाक एंड ऐग्रेरियन लीग।

[2] प्रोविज़नल गवर्नमेंट।

बोल्शेविक दल ने सरकार पर ज़बर्दस्ती अपना कब्ज़ा जमा लिया था, और उन का नेता बेलाकुन सरकार का प्रमुख बन बैठा था। मगर शीघ्र ही समष्टिवादी दल के ख़िलाफ़ एक दूसरी क्रांति हुई, जिस में उस के हाथों से सत्ता छीन ली गई। जनवरी सन् १९२० ई० में सर्वसाधारण के मत से एक 'राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा' चुनी गई और ऐडमिरल निकल-सहौर्थी को हंगरी राज्य का उत्तराधिकारी राज्य-प्रतिनिधि चुन लिया गया। हंगरी को प्रजातंत्र एलान कर के भी अभी राज-व्यवस्था के अनुसार राजाशाही ही गिना जाता है, गोकि अभी तक हंगरी का ताज किसी राजा के सिर पर रखना तय नहीं हुआ है। उत्तराधिकारी के अधिकार क़ानून बना कर निश्चय कर दिए गए हैं। उस को लगभग राजा के बराबर ही अधिकार हैं। मगर वह युद्ध और संधि की घोषणा नहीं कर सकता है और न किसी को 'पीयर' बना सकता है। वही हंगरी की व्यवस्थापक-सभा में मंज़ूर हो जाने वाले क़ानूनों को अपनी सही से जारी करता है। फिर भी माना जाता है कि शाही मंज़ूरी वह उन क़ानूनों के लिए नहीं दे सकता है। उत्तराधिकारी को कब तक रक्खा जायगा, यह भी अभी तक निश्चय नहीं हुआ है।

कार्यकारिणी—सरकार की कार्यकारिणी सत्ता प्रधानमंत्री और दूसरे आठ मंत्रियों के एक मंत्रि-मंडल में होती है जो अपने काम के लिए व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार होते हैं। इन मंत्रियों को राज्य-प्रतिनिधि मुख्य राजनैतिक दलों के नेताओं में से चुनता है। पुरानी स्थानिक संस्थाओं की सत्ता घटा कर नई राज-व्यवस्था में केंद्रीय सरकार की सत्ता बढ़ा दी है।

व्यवस्थापक-सभा—हंगरी की व्यवस्थापक-सभा की भी दो सभाएं होती हैं—एक 'प्रतिनिधि-सभा' और दूसरी 'बड़ी सभा'। प्रतिनिधि-सभा में २४५ सदस्य होते हैं, जिन को सार्वजनिक मताधिकार से पाँच वर्ष के लिए चुना जाता है। 'प्रतिनिधि-सभा' और 'बड़ी सभा' को मिल कर हंगरी में सारी प्रभुता मानी गई है। मगर रुपया-पैसा इकट्ठा करने और ख़र्च मंज़ूर करने की यानी राष्ट्रीय 'थैली की सत्ता' 'प्रतिनिधि-सभा' को ही होती है। अस्तु, उसी के हाथ में सरकार की लगाम रहती है। 'प्रतिनिधि-सभा' की बहुत-सी स्थायी कमेटियां होती हैं जो क़ानून बनाने का बहुत-सा काम करती हैं, क्योंकि सब प्रकार के मसविदों पर पहले इन कमेटियों में विचार होता है और फिर वह सभा के सामने लाए जाते हैं। हर एक २४ वर्ष की उम्र के ऊपर के मर्द को, जो दस वर्ष तक कम से कम हंगरी का नागरिक और दो वर्ष तक एक ही कम्यून में रह चुका है और जो चार वर्ष तक प्राथमिक-शिक्षा पा चुका है या जो उस शिक्षा के बराबर शिक्षा पाए होने का सबूत दे सकता है, हंगरी में मताधिकार होता है। हर एक तीस वर्ष के ऊपर की उस स्त्री को भी मताधिकार होता है, जो छः वर्ष तक प्राथमिक शिक्षा पा चुकी है या जिस ने चार वर्ष तक ही शिक्षा पाई है, और अपनी रोटी ख़ुद कमाती है या जिस के तीन बच्चे हो गए हैं। विश्वविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर चुकने वाले हर मर्द और स्त्री को उम्र इत्यादि की बिना किसी क़ैद के मताधिकार होता है। प्रतिनिधि-सभा के लिए खड़े होनेवाले उम्मीदवार के लिए, मताधिकार प्राप्त होने

के सिवाय, स्त्री और मर्द दोनों के लिए तीस वर्ष की उम्र की क़ैद रक्खी गई है।

'बड़ी-सभा' में २४२ सदस्य होते हैं। यह सभा पुरानी 'बड़ों की सभा' के स्थान में आधुनिक प्रजासत्तात्मक सिद्धांतों पर बनाई गई है। इस में कुछ अधिकारी अपने पदों के कारण कुछ लोग अपनी हैसियत के कारण, कुछ चुने हुए और कुछ नियुक्त किए हुए सदस्य होते हैं। देश की सब से बड़ी अदालत का अध्यक्ष और उपाध्यक्ष, राष्ट्रीय सेना का सेनापति, राष्ट्रीय बैंक का प्रधान इत्यादि क़रीब दस अधिकारी 'बड़ी सभा' के सदस्य अपने पद के कारण होते हैं। हंगरी पर राज करने वाले पुराने हेप्सबर्ग राजवंश के २४ वर्ष की उम्र से ऊपर के हंगरी के नागरिक और हंगरी में बसने वाले तीन सदस्य, पादरी, विभिन्न धर्मों के प्रधान और शाही अदालतों के कुछ अधिकारी मिला कर ४० सदस्य, अपनी हैसियत की वजह से होते हैं। पुरानी 'बड़ों की सभा' के मौरूसी सदस्यों के वंशों के ३८ सदस्य, विभिन्न नगरों की चुंगियों से ७६ सदस्य और विश्व-विद्यालयों, वैज्ञानिक संस्थाओं, उद्योग, व्यापार, कृषि संस्थाओं से और वकीलों इत्यादि के लगभग तीस प्रतिनिधि, उन संस्थाओं से चुन कर आते हैं। चालीस सदस्यों को ज़िंदगी भर के लिए राष्ट्रपति नियुक्त करता है।

राजनैतिक दल—हंगरी की सरकार आजकल जिस दल के हाथ में है उस का नाम 'राष्ट्रीय ऐक्य दल' है। यह दल सन् १६२१ ई० में हंगरी के पुराने 'कृषि-दल' और 'ईसाई राष्ट्र दल' दो दलों के मेल से बना था। सन् १६३१ ई० में इस दल के प्रतिनिधि-सभा में १५८ सदस्य थे। इस दल में छोटे ज़मींदार, सरकारी नौकर-पेशा लोग, कुछ कैथौलिक पादरी, प्रोटेस्टेंट लोग और मालदार किसान अधिकतर होते हैं। अस्तु यह दल इन्हीं वर्गों के हितों का अधिक ख़याल रखता है। इस दल के सदस्यों की बहुत बड़ी संख्या पुराने हेप्सबर्ग राजवंश को हंगरी की गद्दी पर बैठाने की पक्षपाती है। मगर दल ने इस विषय में अभी तक कोई पक्का निश्चय नहीं किया है और इस प्रश्न को खुला रक्खा गया है। इसी दल के प्रयत्न से हंगरी की नई व्यवस्थापक-सभा की ऊपरी सभा क़ायम की गई थी, जिस में धनिकों को ख़ास स्थान दिया गया है। यह दल कृषि और सामाजिक सुधारों, किसानों के सहकारी आंदोलन को सहायता देने, कृषि और शिक्षा की उन्नति करने और माल ढोने की सहूलियतें बढ़ाने का पक्षपाती है।

इस के बाद दूसरा ख़ास राजनैतिक दल 'ईसाई राष्ट्रवादी आर्थिक दल' है। जिस को 'ज़िची दल' भी कहते हैं। यह दल सन् १६२३ ई० में पुराने 'लोकदल' 'ऐक्यदल' और 'ईसाई समाजवादी दल' के सदस्यों ने मिल कर बनाया था। सन् १६३१ ई० में इस दल के प्रतिनिधि-सभा में ३२ सदस्य थे। इस दल के कार्य-क्रम और 'ऐक्य-दल' के कार्य-क्रम में अधिक फ़र्क़ नहीं है। परंतु इस दल में दक़ियानूसी लोगों की ही संख्या अधिक है। ख़ास तौर पर यह दल 'सामाजिक सुधारों' और 'ईसाई प्रजा के आर्थिक संगठन का' पक्षपाती है। यह दल सरकार का सहायक है।

तीसरा 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' है। यह दल पुराना है। इस का जन्म सन्

१८६४ ई० में हुआ था और इस की पुनंघटना सन् १६१६ में हुई थी। मगर सन् १६३१ ई० में इस दल के 'प्रतिनिधि-सभा' में सिर्फ़ १४ सदस्य थे। यह दल आजकल की सरकार का कट्टर विरोधी दल है। इस दल में अधिकतर उद्योगी मज़दूर वर्ग और मध्यम वर्ग के लोग होते हैं। इस दल का कार्यक्रम एक प्रकार की नरम वैध समाजशाही है और वह पड़ोस के नए राष्ट्रों से मित्रता के व्यवहार का पक्षपाती है। दूसरे छोटे दलों में मध्यम वर्ग के उदार यहूदियों का एक 'राष्ट्रीय प्रजासत्तात्मक दल', दूसरा एक 'राष्ट्रीय स्वाधीनता दल' है जिस को 'जाति-रक्षक' और 'जागृत मेग्यार्स' के नामों से भी पुकारा जाता है। यह दल कुछ-कुछ फ़ेसिस्टी दल से मिलता-जुलता है और वह हंगरी की पुरानी सीमाओं को प्राप्त करने और हेप्सबर्ग राजवंश को गद्दी पर बैठाने का पक्षपाती है। तीसरा एक 'लेजिटिमिस्ट दल' है जो फ़ौरन हेप्सबर्ग राजवंश को गद्दी पर बिठाना चाहता है। ख़ास प्रश्नों पर समाजी प्रजासत्तात्मक दल और पंद्रह या बीस दूसरे दलों के सदस्य हमेशा व्यवस्थापक-सभा में सरकार के विरुद्ध मत देते हैं।

पोलैंड की सरकार

राज-व्यवस्था

आजकल का पोलैंड राष्ट्र लड़ाई से पहले के आस्ट्रिया, जर्मनी और रूसी साम्राज्यों से लिए हुए भागों से बना है। अठारहवीं सदी तक पोलैंड एक स्वाधीन राजाशाही राष्ट्र था। सब से विचित्र बात इस राजाशाही की यह थी कि राजा अपने खांदानी मौरूसी हक़ से पोलैंड की राजगद्दी पर नहीं बैठता था। उस का चुनाव होता था। पोलैंड की पुरानी व्यवस्थापक-सभा में भी एक बड़ा विचित्र नियम यह था कि हर क़ानून की मंजूरी और कर की स्वीकृति के लिए सदस्यों की बहुसंख्या की मंज़ूरी काफ़ी नहीं होती थी, सर्वसम्मति की आवश्यकता होती थी। किसी एक सदस्य के विरोध करने पर ही हर मसविदा रद्द हो सकता था। सिर्फ़ एक सदस्य व्यवस्थापक-सभा की बैठकों में बराबर हाज़िर न हो कर व्यवस्थापक-सभा को भंग होने के लिए भी बाध्य कर सकता था। इस वाहियात राजनैतिक योजना के कारण पोलैंड की राजनैतिक उन्नति नहीं होती थी। राजा के चुनावों के झगड़ों से देश में कलह और फ़िसाद फैला रहता था और दूसरे लालची राजाओं को पोलैंड में दखल जमाने का लालच रहता था। आखिरकार पोलैंड के लालची पड़ोसी आस्ट्रिया, रूस और जर्मनी तीनों ने मिल कर सन् १७७२ ई० में पोलैंड के भाग का आपस में बटवारा कर लिया। पोलैंड की सीमा घटा दी गई, राजा को चुनने की प्रथा बंद करके मौरूसी राजाशाही स्थापित कर दी गई और व्यवस्थापक-सभा के एक सदस्य के विरोध से कार्रवाई बंद हो जाने की प्रथा भी खत्म कर दी गई। सन् १७९३ ई० में एक दूसरा बटवारा किया गया जिस में पुराने पोलैंड राष्ट्र का रहा-सहा भाग भी बाँट

लिया गया और पोलैंड का राष्ट्र ही यूरोप के नक़्शे से लुप्त हो गया। इस के बाद एक शताब्दी तक पोलैंड के लोग अपनी स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए लड़ते रहे। कई बार क्रांतियां भी हुई। मगर उन को कुचल दिया गया और पिछली यूरोप की लड़ाई के प्रारंभ तक पोलैंड पर इन्हीं तीन राष्ट्रों का अधिकार क़ायम था।

पिछली यूरोप की लड़ाई में सभी लड़नेवाले राष्ट्र दबी हुई क़ौमों को आज़ाद करने के लिए लड़ने का दावा करते थे। जिन राष्ट्रों का जिन देशों की हद्बंदी में हित था, वे उन देशों की स्वाधीनता का अपने आप को पक्षपाती एलान करने लगे थे। अस्तु, आस्ट्रिया, जर्मनी और रूस भी अपने आप को पोलैंड की स्वाधीनता का पक्षपाती एलान करने लगे थे। अगस्त सन् १९१५ ई० में पोलैंड पर जर्मनी का क़ब्ज़ा हो जाने के बाद, जर्मनी ने नवंबर में पोलैंड के एक स्वाधीन राष्ट्र हो जाने की घोषणा कर दी थी और घोषणा के बाद ही पोलैंड से सेना भर्ती करने का प्रयत्न शुरू कर दिया था। परंतु पोलैंड के लोगो ने सिर्फ़ घोषणा से संतुष्ट न हो कर स्वाधीन पोलैंड की राज-व्यवस्था क़ायम होने से पहले जर्मनी को सेनाएं देने से साफ़ इन्कार कर दिया। अस्तु, मजबूर हो कर जर्मनी को पोलैंड के लिए एक राज-व्यवस्था का फ़ौरन एलान करना पड़ा था, जिस में पोलैंड के उस भाग में जिस पर जर्मनी का क़ब्ज़ा था, एक ७० सदस्यों की धारा-सभा स्थापित किए जाने, धारा-सभा के सदस्यों को वारसा और लोड्ज़ नगरों की चुंगियों के द्वारा नियुक्त किए जाने, धारा-सभा द्वारा 'कौंसिल ऑव स्टेट' के आठ सदस्य और वारसा के गवर्नर-जनरल द्वारा कौंसिल के चार सदस्यों और प्रधान के नियुक्त किए जाने, पोलिश-भाषा राष्ट्रीय-भाषा होने, गवर्नर-जनरल के पास से आनेवाले प्रश्नों पर 'कौंसिल ऑव स्टेट के विचार करने और उस को धारा-सभा में मसविदे पेश करने का अधिकार होने तथा धारा-सभा को गवर्नर-जनरल के भेजे हुए प्रश्नों पर विचार करने और कर लगाने का अधिकार होने की योजनाएं की गई थीं। पोलैंड के लोगों ने इस राज-व्यवस्था को मंज़ूर नहीं किया। जर्मनों की स्थापित की हुई धारा-सभा की तरफ़ से मुख मोड़ कर उन्हों ने अपनी एक 'पोलिश राष्ट्रीय सभा' स्थापित कर ली। यह राष्ट्रीय सभा चाहती थी कि 'कौंसिल ऑव स्टेट' इस के मत से बने, 'कौंसिल ऑव स्टेट' को क़ानून बनाने और सेना के प्रबंध में भाग लेने के अधिकार हों, एक मित्र कैथौलिक राजवंश से पोलैंड के लिए एक राज्य-प्रतिनिधि नियुक्त किया जाय, और 'कौंसिल ऑव स्टेट' में बीस सदस्य हों जिन में से आठ उस भाग से हों, जिस पर जर्मनी का अधिकार था और चार उस भाग से जिस पर आस्ट्रिया का अधिकार था और सिर्फ़ एक सदस्य को गवर्नर-जनरल नियुक्त करे। आख़िरकार जर्मनी और आस्ट्रिया की ओर से एक 'अस्थायी स्टेट कौंसिल' स्थापित की गई और उस में कुछ दिनों तक पोलैंड के लोगों ने हिस्सा लिया। इस कौंसिल की तरफ़ से १७ जनवरी १९१७ ई० को ३१ सदस्यों की एक कमेटी पोलैंड के लिए राज-व्यवस्था तैयार करने के लिए बनाई गई। उस की तैयार की हुई राज-व्यवस्था छः महीने बाद 'स्टेट कौंसिल' में मंज़ूर भी हुई। मगर इसी बीच में पोलैंड में राष्ट्रीय स्वाधीनता का आंदोलन बहुत बढ़ गया। विद्यार्थियों ने हड़तालें कर दीं और मई

मास में समाजवादी दल ने 'स्टेट कौंसिल' से अपना संबंध तोड़ लिया। जुलाई में 'प्रजासत्तात्मक दल' के नेता पिल्सुड्स्की के साथ और भी बहुत-से सदस्य स्टेट कौंसिल से अलग हो गए। स्टेट कौंसिल के बाक़ी सदस्यों ने पोलैंड की सेना से राजभक्ति की शपथ लेने का प्रयत्न किया। मगर उन को उस में सफलता नहीं मिली। जुलाई के अंत में ही जर्मनों ने पिल्सुड्स्की को एक क़िले में क़ैद कर दिया; अस्तु, दूसरे मास से 'स्टेट कौंसिल' के शेष सदस्यों ने भी काम करना बंद कर दिया।

मजबूर हो कर जर्मनों को पोलैंड के लिए एक नई राज-व्यवस्था का सितंबर सन् १९१७ में एलान करना पड़ा। इस नई राज-व्यवस्था के अनुसार पोलैंड के सिरमौर, जर्मनी और आस्ट्रिया के शहंशाहों की नियुक्त की हुई। तीन सदस्यों की एक 'राज्य-प्रतिनिधि समिति[1]' मानी गई थी, और इस समिति के द्वारा नियुक्त किए हुए प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में एक मंत्रि-मंडल तथा प्रजा की चुनी हुई एक व्यवस्थापक-सभा की भी योजना की गई थी। 'राज्य प्रतिनिधि समिति' को पोलैंड में सब कुछ सत्ता दी गई थी और उस ने शीघ्र ही 'राडास्टानू' नाम की पोलैंड के लिए एक धारा-सभा बना दी, मगर यह राज-व्यवस्था भी अधिक दिन न चली और जर्मनी के हाथ से लड़ाई का मैदान निकल जाने पर 'अस्थायी संधि' होते ही 'राज्य प्रतिनिधि समिति' पोलैंड का अधिकार पिल्सुड्स्की को सौंप कर रफ़ूचक्कर हो गई। पिल्सुड्स्की के हाथ में सत्ता आते ही उस ने एक 'व्यवस्थापकसम्मेलन' बुलाने का एलान निकाल दिया और २६ जनवरी सन् १९१९ की तारीख़ उस सम्मेलन के चुनाव के लिए तय कर दी। सेना के आदमियों को छोड़ कर पोलैंड के और सब २१ वर्ष के ऊपर के स्त्री और पुरुषों को चुनाव में मत देने का अधिकार दे दिया गया था। इस 'व्यवस्थापक-सम्मेलन' की बैठक ९ फ़रवरी सन् १९१९ को हुई और २० फ़रवरी को सम्मेलन ने पोलैंड की राज-व्यवस्था के अस्थायी मूल क़ानून पास किए। पिल्सुड्स्की ने अधिकार त्याग कर के सारा अधिकार सम्मेलन को सौंप दिया। मगर सम्मेलन ने फ़ौरन ही उस को फिर राष्ट्रपति चुन लिया। व्यवस्थापक-सम्मेलन को पोलैंड की सारी प्रभुता और क़ानून बनाने की सत्ता होने का भी एलान किया गया। व्यवस्थापक-सम्मेलन के अध्यक्ष को सभा में मंज़ूर हुए क़ानूनों को राष्ट्रपति और एक मंत्री की सही से जारी करने का अधिकार दिया गया। राष्ट्रपति को राष्ट्र का प्रतिनिधि और व्यवस्थापक-सम्मेलन के सब प्रकार के फ़ैसलों को अमल में लाने का अधिकार माना गया। राष्ट्रपति को मंत्रि-मंडल नियुक्त करने की सत्ता भी दी गई और उस को और मंत्रि-मंडल को व्यवस्थापक-सम्मेलन के प्रति जवाबदार माना गया। राष्ट्र के नाम पर राष्ट्रपति के द्वारा निकलने वाले सारे हुक्मों पर किसी न किसी मंत्री के हस्ताक्षर होने की भी शर्त रक्खी गई थी। यह सारा प्रबंध अस्थायी था, क्योंकि व्यवस्थापक-सम्मेलन के सामने एक स्थायी राज-व्यवस्था का मसविदा रखने के लिए एक कमेटी बना दी गई थी। इस कमेटी के बनाए हुए राज-व्यवस्था के मसविदे पर महीनों तक विचार हो कर

[1] रिजेंसी कौंसिल।

आख़िरकार ८ जुलाई सन् १९२० को वह व्यवस्थापक-सम्मेलन के सामने पेश हुआ। फिर इस मसविदे पर व्यवस्थापक-सम्मेलन और देश की सारी संस्थाओं में आठ-नौ महीने तक खूब चर्चा हो कर, कट-छट कर सत्रह मार्च सन् १९२१ को पोलैंड की नई राज-व्यवस्था मंज़ूर हुई।*

इस राज-व्यवस्था के अनुसार पोलैंड राष्ट्र की प्रभुता एक राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा में मानी गई है, जिस की 'डाइट' और 'सिनेट' दो सभाएं हैं। पोलैंड प्रजातंत्र के प्रमुख को फ्रांस की तरह दोनों सभाएं मिल कर राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा की बैठक में चुनती हैं। सिनेट की राय से डाइट को भंग करने का अधिकार प्रमुख को दिया गया है, मगर राष्ट्र की सेना का मुख्य अधिकार व्यवस्थापक-सभा के हाथ में रक्खा गया है, प्रमुख के नहीं। डाइट के सदस्यों की दो-तिहाई संख्या की राय से इस राज-व्यवस्था में परिवर्तन किया जा सकता है। मगर राज-व्यवस्था के अमल में आने की तारीख़ से दस वर्ष बाद, हर पच्चीस वर्ष में एक बार डाइट और सिनेट की सम्मिलित सभा की बहुसंख्या से परिवर्तन हो सकेंगे।

व्यवस्थापक-सभा—पोलैंड प्रजातंत्र की व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाएं डाइट और सिनेट—प्रजा चुनती है। इक्कीस वर्ष के ऊपर के सब स्त्री और पुरुष डाइट के चुनाव में मत दे सकते हैं और २५ वर्ष के ऊपर के उस के लिए खड़े हो सकते हैं। डाइट का पाँच वर्ष के लिए अनुपात-निर्वाचन के अनुसार चुनाव होता है। सिनेट के सदस्यों का चुनाव पोलैंड के १६ प्रांतों से आबादी के हिसाब से होता है। सिनेट के सदस्य भी निर्वाचन के अनुसार चुने जाते हैं, मगर सिनेट के मतदारों की संख्या तीस वर्ष से अधिक होती है। सिनेट का चुनाव भी डाइट के काल, पाँच वर्ष के लिए ही किया जाता है और उस की ज़िंदगी डाइट के साथ ख़त्म हो जाती है। प्रजातंत्र का प्रमुख सिनेट के सदस्यों की ३/५ संख्या की राय से डाइट को उस की ज़िंदगी पूरी होने से पहले भी भंग कर सकता है, मगर डाइट भंग होने के साथ सिनेट भी भंग हो जाती है।

क़ानूनी मसविदे पहले डाइट में पेश होते हैं। डाइट में पास हो जाने के बाद हर मसविदा सिनेट में भेजा जाता है। अगर सिनेट डाइट के मंज़ूर किए हुए मसविदे में तीस दिन के अंदर कोई उज्र पेश नहीं करती है, तो तीस दिन की मियाद ख़त्म हो जाने पर प्रजातंत्र का प्रमुख उस को क़ानून एलान कर के अमल के लिए ज़ारी कर देता है; परंतु तीस दिन के अंदर सिनेट के मसविदे में कोई संशोधन पेश करने या उस का विरोध करने पर मसविदा फिर डाइट के पास विचार के लिए भेजा जाता है। उस संशोधन के डाइट में बहुसंख्या से मंज़ूर हो जाने या सदस्यों की ११/२० की राय से उस के रद्द हो जाने पर, जिस सूरत में अंत में वह डाइट से निकलता है, उसी सूरत में उस का क़ानून होना एलान कर दिया जाता है।

कार्यकारिणी—प्रजातंत्र की कार्यकारिणी सत्ता प्रजातंत्र के प्रमुख के हाथ

में होती है, जो डाइट को सम्मिलित रूप से जवाबदार एक मंत्रि-मंडल द्वारा सारा काम करता है। डाइट और सिनेट की एक सम्मिलित राष्ट्रीयसभा की बैठक में उस का सात वर्ष के लिए चुनाव होता है। प्रमुख युद्धकाल को छोड़ कर राष्ट्र की सेना का सेनापति माना गया है। प्रमुख दूसरे राष्ट्रों से व्यवहार करने के लिए पोलैंड प्रजातंत्र का प्रतिनिधि होता है और उस को उन से समझौते और संधियां करने का अधिकार होता है, जिन को पीछे से वह डाइट के सामने सूचना के लिए रख देता है। मगर बिना डाइट की राय के उस को लड़ाई या सुलह करने का हक़ नहीं होता है। राज-व्यवस्था को तोड़ने, राजद्रोह तथा फ़ौजदारी के अपराध के लिए सभा के आधे सदस्यों की हाज़िरी और हाज़िर सदस्यों की $\frac{3}{5}$ संख्या के मत से डाइट प्रजातंत्र के प्रमुख पर अभियोग चला सकती है। इस प्रकार का अभियोग सिर्फ़ उस 'स्टेट ट्रिबूनल' के सामने ही और तय किया जा सकता है, जिस को डाइट और सिनेट हर बैठक के प्रारंभ में चुन लेती हैं। प्रजातंत्र के प्रमुख की तरफ़ से ही आमतौर पर डाइट और सिनेट को बैठकों के लिए बुलावा भेजा जाता है। जिस काल में इन सभाओं की बैठकें नहीं होती हैं, उस में प्रमुख को ज़रूरत पड़ने पर फ़रमान निकालने का अधिकार होता है, जिन पर क़ानूनों की तरह ही अमल किया जाता है। मगर सभाओं की बैठक होते ही फ़ौरन यह फ़रमान सभा के सामने मंज़ूरी के लिए रख दिए जाते हैं। सभा उन को नामंज़ूर कर सकती है।

राष्ट्र के आर्थिक जीवन का एकीकरण कर के उस के योग्य संचालन के लिए राज-व्यवस्था के अनुसार एक सर्वोपरि आर्थिक समिति भी क़ायम की गई है, जिस के द्वारा राष्ट्र भर के सारे आर्थिक हितों का सरकार से सहकार होता है। स्थानिक शासन, स्थानिक सभाओं के प्रतिनिधि, और कार्यकारिणी के प्रतिनिधि मिल कर चलाते हैं। मगर राष्ट्रीय सरकार की राष्ट्रीय राज-व्यवस्था के अनुसार एक सर्वोपरि नियंत्रण-समिति भी होती है, जिस का काम प्रांतिक शासन की देख-रेख करना होता है। इस समिति के अध्यक्ष का स्थान राष्ट्रीय मंत्रियों की बराबरी का होता है; परंतु वह मंत्रि-मंडल का सदस्य नहीं होता है, स्वतंत्र रूप से अपने काम के लिए डाइट को जवाबदार होता है। इस समिति की देखरेख और डाइट के, जाँच-कमीशन नियुक्त कर के, स्वयं शासन की जाँच करने की सत्ता होने से, राष्ट्रीय सरकार की स्थानिक शासन पर काफ़ी दाब रहती है।

राजनैतिक दल—'सर्वदल-संघ' नामक राजनैतिक दल सरकारी दल है। इस दल का कोई ख़ास राजनैतिक प्रोग्राम नहीं है। वह पिल्सुड्स्की की पूरी सहायता करने और कार्यकारिणी की सत्ता बढ़ाने के लिए राज-व्यवस्था में परिवर्तन करने में विश्वास रखता है। इस दल में पुराने दलों के वे सारे लोग हैं, जो पिल्सुड्स्की के पक्षपाती हैं। पुरानी सेना के सदस्य और अधिकारी, गरम दल के लोग, प्रजासत्तात्मक दल के लोग, सरकार के साथी समाजवादी, अनुदार दल के बड़े ज़मीदार तथा अमीर, व्यापारी और दिमाग़ी धंधों के लोग इत्यादि सभी तरह के आदमी इस दल में हैं।

दूसरा एक राष्ट्रीय प्रजासत्तात्मक दल है, जिस में अधिकतर धनवान, व्यापारी, ज़मींदार, साहूकार, दूकानदार और मध्यमवर्ग के लोग और कुछ पुराने विचार के किसान और मज़दूर भी हैं। यह दल पिल्सूड्स्की का और पोलैंड में बसनेवाली अल्प-संख्या जातियों के स्थानिक स्वराज्य के आंदोलनों का विरोधी है। वह किसानों के संबंध में एकदम क्रांतिकारी सुधारों का भी विरोध करता है और क्रांति का विरोधी और कैथोलिक पंथ का पक्षपाती है। इस दल के अनुयायियों में विश्वविद्यालयों के बहुत-से विद्यार्थी हैं और यह दल 'बड़े पोलैंड का डेरा'[1] नाम की फ़ेसिस्ट संस्था से मिल कर काम करता है।

तीसरा एक किसान-दल है, जिस में धनवान, शांतिप्रिय, ज़मीन सुधारों के पक्षपाती और ज़मीन ज़ब्ती के विरोधी, धार्मिक किसानों का एक समूह, दूसरा एक छोटे ज़मींदारों और खेतों पर मज़दूरी करने वाले किसानों का एक गरम समूह जो बिना मुआवज़े के ज़मींदारी की ज़मीन ज़ब्त कर के किसानों में बाँट देने और राष्ट्रीय अल्प-संख्या जातियों के स्थानिक स्वराज्य और धार्मिक बातों को राजनीति से दूर रखने का हामी है और तीसरा एक गरम किसानों का समूह शामिल है। चौथा एक 'समाजवादी दल' है जो इन दलों में सब से पुराना है। यह दल वैध आंदोलन के द्वारा समाजशाही क़ायम करने में विश्वास रखता है। इस दल में उद्योग-संघों के लोग, गरम विचारों के शिक्षित लोग, छोटे किसान और खेतों पर काम करने वाले मजदूर अधिकतर हैं। यह दल राष्ट्रीय अल्प संख्याओं को स्थानिक स्वराज्य देने का पक्षपाती है और पिल्सूड्स्की ,उस की सरकार, और कम्यूनिज़्म दोनों का विरोधी है।

दूसरा एक 'ईसाई प्रजासत्तात्मक दल' है, जिस में अधिकतर मध्यमवर्ग के छोटे लोग, उद्योग-धंधों के मज़दूर, कारीगर और दूसरे पेशावर लोग होते हैं। यह दल नरम, प्रजासत्तात्मक और धार्मिक विचारों का अनुगामी है। एक राष्ट्रीय मज़दूर दल भी है जिस में मध्य-पोलैंड की उद्योग-संघों के सदस्य ही अधिकतर हैं। यह दल गरम देशभक्ति और कैथोलिक-पंथी का पक्षपाती है और 'ईसाई प्रजासत्तात्मक दल' से मिल कर काम करता है। एक समष्टिवादी दल भी है, जिस को सन् १६२८ और १६३० के चुनावों में ग़ैर-क़ानूनी क़रार दे दिया गया था।

पोलैंड में दूसरी लड़ाई के बाद बने हुए राष्ट्रों की तरह राष्ट्रीय अल्प-संख्याओं की कठिन समस्या खड़ी रहती है। 'यूक्रानी राष्ट्रीय प्रजासत्तात्मक संघ' यूक्रानी जाति का एक नया 'यूक्रानी राष्ट्र' चाहती है। इस संघ में भी एक छोटा-सा गरम दल भी है। ह्वाइट रशन, जर्मन और यहूदी जातियों के भी अपने अलग-अलग दल हैं।

---

[1] कैंप आफ़ ग्रेट पोलैंड।

ज़ेकोस्लोवाकिया की सरकार

राज-व्यवस्था—पिछली यूरोपीय लड़ाई में टूट जाने वाले सम्राज्यों के खंडहरों से पैदा होने वाला दूसरा नया राष्ट्र ज़ेकोस्लोवाकिया है। यह नया राष्ट्र पुराने बोहेमिया राज्य और मोरेविया, साइलेशिया, तथा स्लोवाकिया के सम्मेलन से बना है। लड़ाई से पहले स्लोवाकिया पर हंगरी का अधिकार था और दूसरे भागों पर आस्ट्रिया का अधिकार था। इस नए राष्ट्र की दो मुख्य जातियों—ज़ेक जाति और स्लोवाक जाति का, स्वाधीनता के लिए लड़ाई का इतिहास काफ़ी लंबा है, जो इस छोटे ग्रंथ की मर्यादा के बाहर है। ज़ेक जाति जर्मनों से अपनी स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए और स्लोवाक जाति मेग्यारों से अपनी स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए बहुत दिनों तक लड़ती रहीं और खास कर ज़ेक जाति की आज़ादी के लिए लड़ाई के फल-स्वरूप जेकोस्लोवाकिया आखिरकार एक स्वतंत्र राष्ट्र बना।

ज़ेक लोगों ने आज़ादी के लिए जब-जब सिर उठाया था, तब तब उन को कुचल दिया गया था। मगर सन् १८९० ई० में आस्ट्रियन डाइट के एक सदस्य प्रोफ़ेसर मेज़रिक की अध्यक्षता में जो 'हक़ीकी दल' नाम का दल बना था, उस ने राष्ट्रीय आज़ादी का झंडा खड़ा कर के धीरे-धीरे नौजवानों पर अपना कब्ज़ा जमा लिया था। इस दल ने बनते ही जर्मन दलों से झगड़े शुरू कर दिए थे, और सन् १९१३ ई० में तो यहां तक नौबत पहुँच गई थी कि जर्मन दलों ने इस दल के साथ मिल कर काम करने तक से इन्कार कर दिया था। लड़ाई छिड़ने के बाद राष्ट्रीय आंदोलन ने और भी ज़ोर पकड़ा। सरकार ने आंदोलन को कुचलना शुरू किया, बहुत-से आदमियों को जेल में ठूँस दिया और बहुत

से राष्ट्रीय अख़बारों को बंद कर दिया। प्रोफ़ेसर मेज़रिक को अपनी जान बचाने के लिए देश छोड़ कर भाग जाना पड़ा। मेज़रिक ने मित्रराष्ट्रों को जा कर अपने देश के दुःखों की कहानी सुनाई। मित्रराष्ट्र आस्ट्रिया के शत्रु थे ही; उन्हों ने मेज़रिक का स्वागत किया और ज़ेकोस्लोवाकिया को एक स्वाधीन राष्ट्र बनाना अपना ध्येय निश्चय कर के, मेज़रिक को भावी ज़ेकोस्लोवाकिया की राष्ट्रीय सरकार का राष्ट्रपति मान लिया। सन् १९१८ की छः जनवरी को, आस्ट्रिया की व्यवस्थापक-सभा में जितने 'ज़ेक' प्रतिनिधि थे, उन की और बोहेमिया, मोरेविया और आस्ट्रियन साइलेशिया की धारासभाओं के सदस्यों की, एक 'सम्मिलित-सभा' में, ज़ेकोस्लोवाकिया के लिए पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा करने और युद्ध के बाद 'संधि-सम्मेलन' में भाग ले कर अपने अधिकारों की रक्षा करने का प्रस्ताव मंज़ूर हुआ। मित्र-राष्ट्रों की विजय होते ही शत्रु साम्राज्याधीन जातियों की स्वाधीनता का मित्र-राष्ट्रों की तरफ़ से एलान कर दिया गया। ज़ेकोस्लोवाकिया की स्वाधीनता की शर्त तो अस्थायी सुलह तक में रक्खी गई। अस्तु, ज़ेकोस्लोवाकिया को अपनी स्वाधीन राज-व्यवस्था रचने के लिए रास्ता साफ़ हो गया और सितंबर का अंत होते एक ज़ेकोस्लोवाक-राष्ट्रीय सभा' बन गई। २८ अक्तूबर सन् १९१८ ई० को इस 'राष्ट्रीय सभा' ने नए राष्ट्र की सरकार की लगाम अपने हाथों में ले ली।

फ़ौरन ही राज-व्यवस्था गढ़ने के लिए प्रजा के प्रतिनिधियों का एक 'व्यवस्थापक-सम्मेलन' बुलाने की तैयारियां शुरू कर दी गईं। चुनाव करना उस समय की परिस्थिति में असंभव था, इस लिए सारे राजनैतिक दलों से व्यवस्थापक-सम्मेलन के लिए प्रतिनिधि चुन कर भेजने की प्रार्थना की गई। बोहेमिया के जर्मनों को छोड़ कर दूसरे सारे दलों के प्रतिनिधियों का व्यवस्थापक-सम्मेलन १४ नवंबर सन् १९१८ को बैठा, जिस में ज़ेकोस्लोवाकिया को एक 'स्वाधीन प्रजासत्तात्मक प्रजातंत्र' एलान कर दिया गया, और प्रोफ़ेसर मेज़रिक को जन्म भर के लिए प्रजातंत्र का प्रमुख चुन लिया गया। सरकार का कामकाज चलाने के लिए एक मंत्रि-मंडल भी चुना गया जो सम्मेलन को जवाबदार था। फ़िर एक साल तक एक तरफ़ तो यह सम्मेलन नए राष्ट्र की राज-व्यवस्था गढ़ने का काम करता रहा, और दूसरी तरफ़ देश में अस्थायी क़ानूनों के द्वारा सुव्यवस्था क़ायम करने और मित्रराष्ट्रों से ज़ेको-स्लोवाकिया राष्ट्र की सीमाएं निश्चित करने के प्रयत्न करता रहा। वारसेल्ज़, सेंट जर्मन और ट्रियानोन की संधियों में मित्र राष्ट्रों ने ज़ेकोस्लोवाकिया राष्ट्र की स्वाधीनता और सीमाओं पर अपनी स्वीकृति की आख़िरी छाप लगा दी। उस के बाद 'व्यवस्थापक-सम्मेलन' २० फ़रवरी सन् १९२० को नए राष्ट्र की नई राज-व्यवस्था स्वीकार कर के १५ अप्रैल को भंग हो गया। अप्रैल में ही नई राज-व्यवस्था के अनुसार ज़ेकोस्लोवाकिया की व्यवस्थापक-सभा का चुनाव हुआ। संधियों के अनुसार इस नए राष्ट्र में बोहेमिया, मोरेविया, स्लोवाकिया, साइलेशिया का एक भाग और कारपेथियन पहाड़ के दक्षिण का रूथेनिया का भाग मिला कर छः सौ मील लंबी ज़मीन शामिल की गई थी, जिस पर क़रीब डेढ़ करोड़ मनुष्य बसते हैं और जिन में से दो तिहाई ज़ेक जाति के लोग हैं।

ज़ेकोस्लोवाकिया राष्ट्र का जन्म एक अंतरराष्ट्रीय संधि की शर्तों के अनुसार होने के कारण वे शर्तें भी उस की राज-व्यवस्था का स्वभावतः एक अंग बन गई हैं। इन शर्तों में ज़ेकोस्लोवाकिया में बसी हुई अल्प संख्या जातियों के अधिकारों की रक्षा के अतिरिक्त रूथेनिया के लिए एक ऐसी योजना की गई है जो एक स्वाधीन राष्ट्र की राज-व्यवस्था में बिल्कुल नई चीज़ है। मित्र-राष्ट्रों और ज़ेकोस्लोवाकिया में होनेवाली सेंट जर्मन की संधि के अनुसार रूथेनिया को ज़ेकोस्लोवाकिया राष्ट्र का अंग मानते हुए भी उस को एक अलग धारासभा दी गई है, जिस को खास कर धार्मिक शिक्षा, भाषा और स्थानिक शासन के संबंध में क़ानून बनाने के अधिकार के अतिरिक्त उस सारी सत्ता के प्रयोग का भी अधिकार है, जो ज़ेकोस्लोवाकिया की धारासभा उस को देना पसंद करे। इस भाग के गवर्नर को ज़ेकोस्लोवाकिया प्रजातंत्र के प्रमुख के द्वारा नियुक्त किए जाने पर रूथेनिया की धारासभा को जवाबदार होने की शर्त भी रक्खी गई है। इस भाग को, जहां तक बने वहां तक अपने बाशिंदों में से ही अपने अधिकारियों को नियुक्त करने का भी अधिकार दिया गया है। इस भाग को दिए हुए सारे अधिकार लीग ऑव् नेशंस की रक्षा में रक्खे गए हैं और इस भाग को ज़ेकोस्लोवाकिया के खिलाफ़ लीग ऑव् नेशंस' से अपील करने का भी हक़ है। अस्तु, इस संधि में रूथेनिया को 'राष्ट्र के भीतर राष्ट्र' का राजनैतिक इतिहास में अनोखा स्थान दिया गया है और संधि की यह शर्तें ज़ेकोस्लोवाकिया की राज-व्यवस्था का अंग बन गई हैं।

व्यवस्थापक-सभा—जेकोस्लोवाकिया प्रजासत्तात्मक प्रजातंत्र होने से राष्ट्र की प्रभुता प्रजा में मानी गई है। प्रजा की चुनी हुई व्यवस्थापकसभा को राष्ट्र की सारी सत्ता होती है। राष्ट्रीयव्यवस्थापकसभा की दो सभाएं हैं—एक प्रतिनिधि-सभा, दूसरी सिनेट। प्रतिनिधि-सभा में तीन सौ सदस्य होते हैं, जिन को २१ वर्ष के ऊपर के सारे स्त्री और पुरुष नागरिकों को, अनुपात-निर्वाचन के अनुसार चुनने का हक़ होता है। प्रतिनिधियों की उम्र २६ वर्ष से अधिक होती है और उन को छः वर्ष के लिए चुना जाता है। छः वर्ष से पहले भी प्रतिनिधि-सभा को भंग किया जा सकता है। इसी प्रकार २६ वर्ष के ऊपर के तमाम स्त्री-पुरुष नागरिकों को सिनेट के सदस्यों को अनुपात निर्वाचन के अनुसार चुनने का अधिकार होता है। मगर सिनेट के उम्मीदवार कम से कम चालीस वर्ष की उम्र के होने के चाहिए। सिनेट में १५० सदस्य होते हैं और उन को आठ वर्ष के लिए चुना जाता है।

'प्रतिनिधि-सभा' में मंज़ूर हो जाने वाले मसविदे 'सिनेट' के नामंज़ूर कर देने पर प्रतिनिधि-सभा में लौट कर पुनः विचार के लिए आते हैं और हाज़िर सदस्यों की आधी से अधिक संख्या उन के पक्ष में फिर होने पर वे क़ानून बन जाते हैं। अगर 'सिनेट' के सदस्यों की तीन चौथाई संख्या 'प्रतिनिधि-सभा' के किसी मसविदे को नामंज़ूर करती है तो, 'प्रतिनिधि-सभा' में फिर उसे मंज़ूर कर के क़ानून बनाने के लिए प्रतिनिधि-सभा के कुल सदस्यों को $\frac{3}{5}$ संख्या की मंज़ूरी की ज़रूरत होती है। 'सिनेट' से प्रारंभ होनेवाले मसविदे एक बार प्रतिनिधि-सभा में नामंज़ूर हो जाने पर अगर 'सिनेट' में फिर पास हो कर,

प्रतिनिधि-सभा में दोबारा सदस्यों की आधी संख्या से अधिक के द्वारा नामंज़ूर होते हैं तो वे रद्द हो जाते हैं। राष्ट्रीय आय-व्यय से संबंध रखने वाले माल-मसविदों और देश की रक्षा से संबंध रखने वाले मसविदों का श्रीगणेश सिर्फ़ प्रतिनिधि-सभा में ही हो सकता है।

मंत्रि मंडल के सदस्य व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं और उपसमितियों की कार्रवाई में भाग ले सकते हैं। हर एक सभा में सभा के सारे सदस्यों की दो तिहाई संख्या की हाज़िरी होने पर ही, किसी प्रश्न पर मत लिए जा सकते हैं। राज व्यवस्था में संशोधन करने और युद्ध की घोषणा करने के लिए दोनों सभाओं के सारे सदस्यों की ३/५ संख्या की मंज़ूरी की ज़रूरत होती है। प्रजातंत्र के प्रमुख पर अभियोग चलाने की मंज़ूरी के लिए सारे सदस्यों की दो तिहाई संख्या के दो तिहाई मतों की ज़रूरत होती है। मसविदे सरकार या सभाओं, दोनों की तरफ़ से विचार के लिए पेश किए जा सकते हैं। हर प्रश्न के विचार के लिए साथ ही उस संबंध में होने वाले खर्च का तख़मीना भी, हमेशा विचार के लिए, पेश किया जाता है। मंत्रि-मंडल की ज़िंदगी व्यवस्थापक-सभा के उस में विश्वास पर निर्भर होती है। फिर भी राज-व्यवस्था में संशोधन के अतिरिक्त और किसी मसविदे को, व्यवस्थापक-सभा के नामंज़ूर कर देने पर भी, मंत्रि-मंडल अपने सदस्यों के सर्वमत से उस मसविदे पर हवाले के द्वारा प्रजा की राय ले सकता है और प्रजा के स्वीकार कर लेने पर वह मसविदा क़ानून बन जाता है। प्रजातंत्र के प्रमुख को भी पुनः विचार के लिए मसविदा व्यवस्थापक-सभा के पास अपनी राय के साथ वापस भेजने का अधिकार होता है और ऐसी हालत में व्यवस्थापक-सभा के सारे सदस्यों की आधी से अधिक संख्या के मसविदे के पक्ष में होने पर ही वह मसविदा अपनी पहली सूरत में अर्थात् बिना परिवर्तन के पास हो सकता है। मगर प्रजातंत्र का प्रमुख चाहे तो प्रतिनिधि-सभा को भंग कर के और भी विचार करने के लिए दबाव डाल सकता है। मंत्रि-मंडल में अविश्वास का प्रस्ताव पास करने के लिए प्रतिनिधि-सभा के सारे सदस्यों की बहुसंख्या की हाज़िरी और हाज़िर सदस्यों के बहुमत की ज़रूरत होती है। अविश्वास का प्रस्ताव पास हो जाने पर मंत्रि-मंडल इस्तीफ़ा रख देता है, और प्रमुख नए मंत्रि-मंडल को नियुक्त करने की कोशिश करता है।

प्रजातंत्र के प्रमुख के नियुक्त किए हुए तीन जजों के, बड़ी शासन की अदालत के नियुक्त किए हुए, दो जजों और 'राष्ट्रीय' न्यायालय के किए हुए, दो जजों कुल सात जजों की एक 'व्यवस्थापकी अदालत' भी होती है जिस के सामने 'व्यवस्थापक-सभा' के पास किए हुए प्रस्ताव और मसविदों के क़ानूनी या ग़ैर-क़ानूनी होने का विचार और फ़ैसला हो सकता है।

कार्यकारिणी—राज व्यवस्था के अनुसार आम तौर पर प्रजातंत्र का प्रमुख सात वर्ष के लिए, 'व्यवस्थापक-सभा' की दोनों सभाओं की एक सम्मिलित, बैठक में चुना जाता है और उस का दो बार से अधिक चुनाव नहीं हो सकता है। मगर प्रोफ़ेसर मेज़रिक की देश के प्रति अमूल्य सेवाओं के कारण प्रोफ़ेसर मेज़रिक को जन्म भर तक

बार-बार प्रजातंत्र का प्रमुख चुना जा सकता है। मगर चुनाव बाक़ायदा होने के लिए व्यवस्थापक-सभा के सारे सदस्यों की बहुसंख्या की हाज़िरी और हाज़िर सदस्यों की ३/५ संख्या की मंज़ूरी की क़ैद रक्खी गई है। प्रमुख के अधिकारों के प्रयोग की जवाबदारी मंत्रि-मंडल पर होती है। प्रमुख राष्ट्र का राष्ट्रपति होता है और दूसरे देशों से व्यवहार के लिए ज़ेकोस्लोवाकिया राष्ट्र का प्रतिनिधिस्वरूप होता है। प्रमुख राष्ट्र की सेनाओं का सेनापति भी होता है। मगर युद्ध की घोषणा वह सिर्फ़ व्यवस्थापक-सभा की मंज़ूरी ले कर ही कर सकता है। प्रजातंत्र का प्रमुख मंत्रि-मंडल और प्रधान मंत्री को नियुक्त करता है। मगर मंत्रि-मंडल जवाबदार व्यवस्थापक-सभा को होता है। प्रमुख को व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं को उन की ज़िन्दगी से पहले भंग कर देने का भी अधिकार होता है। मगर अपने समय के आख़िरी छः मास में प्रमुख अपने इस अधिकार का प्रयोग नहीं करता है। मंत्रि-मंडल के सदस्यों में प्रधान मंत्री, परराष्ट्र-सचिव, गृह-सचिव, अर्थ-सचिव, राष्ट्रीय रक्षा (सेना) सचिव, न्याय-सचिव, शिक्षा-सचिव, व्यापार-सचिव, सार्वजनिक कार्य-सचिव, डाक-तार सचिव, रेल-सचिव, कृषि-सचिव, क़ानून और सार्वजनिक शासन संगठन-सचिव, समाज हितकारी कार्य-सचिव और सार्वजनिक स्वास्थ्य-सचिव होते हैं। 'हिसाब-किताब जाँच-अदालत' का अध्यक्ष सरकार का सदस्य होता है, मंत्रि-मंडल का नहीं। एक प्रमुख विभाग का अध्यक्ष भी होता है।

अदालतें—पोलैंड की तरह ज़ेकोस्लोवाकिया में भी एक बड़ी 'हिसाब-किताब जाँच-अदालत' होती है, जो राष्ट्रीय राजधानी प्राग में बैठती है और जिस का काम राष्ट्रीय आय-व्यय, राष्ट्रीय क़र्ज़ा, सार्वजनिक संस्थाओं और हज़ारों, राष्ट्र के ख़ज़ाने से दिए जाने वाली इमदादों और राष्ट्रीय शासन के अंतर्गत सार्वजनिक धन पर केंद्रीय नियंत्रण रखना होता है। पोलैंड की तरह ही यह अदालत वास्तव में अदालत नहीं होती है। एक मंत्रियों की हैसियत के स्वतंत्र अधिकारी की अध्यक्षता में यह विभाग सीधा व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार होता है।

ज़ेकोस्लोवाकिया की सब से बड़ी न्याय की अदालत प्राग में बैठती है। इस के अतिरिक्त प्राग में बोहेमिया की प्रांतीय अदालत भी होती है, जिस की दीवानी, फ़ौजदारी और व्यापारी तीन प्रांतीय शाखाओं के सिवाय १५ ज़िला अदालतें और २३१ स्थानिक अदालतें हैं। मोरेविया और साईलेशिया की एक अलग प्रांतिक अदालत है। उसी प्रकार स्लोवाकिया और रूमेनिया का भी अलग न्याय-विभाग है।

इस के अतिरिक्त प्राग में एक बड़ी 'शासकी अदालत' दूसरी एक चुनाव के झगड़ों के लिए 'चुनाव अदालत', तीसरी एक 'पेटेंट अदालत', चौथी एक 'व्यवस्थापकी-अदालत' और पाँचवीं एक 'बड़ी फ़ौजी अदालत' भी होती है।

राजनैतिक दल—यूरोपीय युद्ध के बाद उत्पन्न हुए तमाम यूरोप के नए राष्ट्रों की तरह ज़ेकोस्लोवाकिया में भी अल्प-संख्याओं का प्रश्न खड़ा रहता है। छोटे-से इस राज के अर्ज़ को देखते हुए राजनैतिक दलों की संख्या बहुत अधिक है। मोरेविया

के कैथोलिक-पंथी किसानों का 'ज़ेकोस्लोवाक कैथोलिक लोकदल' है। स्लोवाकिया के कट्टर रोमन कैथोलिक लोगों का 'स्लोवाक कैथोलिक लोकदल' है। बड़े व्यापारियों और साहूकारों और समाजवाद के विरोधी मालदार मध्यम वर्ग के लोगों का 'ज़ेकोस्लोवाक राष्ट्रीय प्रजासत्तात्मक दल' है। मध्यम-वर्ग के व्यापारियों ने इस दल से अलग हो कर अपना एक अलग 'ज़ेकोस्लाव मध्यम-वर्ग व्यापारी दल' बना लिया है। छोटे ज़मीदारों और किसानों का 'प्रजातंत्रीय कृषिदल' है। क्रांति और समष्टिवादियों के विरोधी समाजवादी उद्योगी वर्ग का 'ज़ेकोस्लोवाक समाजी प्रजासत्तात्मक उद्योगी दल' है, जिस की स्थापना सन् १८७८ ई० में हुई थी और जिस ने प्रजातंत्र के प्रारंभ से ही सरकार का रचनात्मक कार्यों में साथ दिया है। इसी से मिलता-जुलता दूसरा एक 'ज़ेकोस्लोवाक राष्ट्रीय समाजी दल' है, जिस की स्थापना सन् १८९७ ई० में हुई थी और जिस में उद्योगी वर्ग के सिवाय दूसरे वर्गों के लोग भी हैं। देश भर में समष्टिवादियों का एक 'समष्टिवादी दल' भी है। 'ज़ेकोस्लोवाक राष्ट्रीय समाजवादी दल' के कुछ असंतुष्ट लोगों ने सन् १९२८ ई० में इस दल से अलग हो कर एक नया 'स्लाव राष्ट्रीय समाजवादी दल' बना लिया है, जो जर्मनों की परवाह न कर के स्लोवाक जाति से घनिष्ठता रखने का पक्षपाती है।

इन के अतिरिक्त जर्मन और मेग्यार जातियों के दलों में ज़ेकोस्लोवाकिया में बसने वाले पुराने विचारों के कैथोलिक जर्मन भाषाभाषी लोगों का एक 'जर्मन ईसाई समाजवादी लोक-दल' है, उसी के मुक़ाबले का दूसरा मेग्यार जाति का 'मेग्यार ईसाई समाजवादी दल' है। प्रजातंत्र और समाजवादी विचारों के विरोधी, राष्ट्रीय विचारों के जर्मन लोगों का एक 'जर्मन राष्ट्रीय दल' है, उस के मुक़ाबले का दूसरा एक 'मेग्यार राष्ट्रीय दल' है। ज़ेक प्रजातंत्रीय कृषिदल की नक़ल का जर्मनों का एक 'किसान-दल' भी है। समाज-सुधारों, राष्ट्रीय मामलों में कट्टर राष्ट्रीयता और जातीय स्वराज्य मानने वाले जर्मन लोगों का एक 'जर्मन राष्ट्रीय समाजवादी दल' है। ज़ेकोस्लोवाकिया में बसने वाले समष्टिवादियों के विरोधी और राष्ट्रीय प्रश्नों में कट्टर जर्मन उद्योगी वर्ग का एक 'जर्मन समाजी प्रजासत्तात्मक उद्योगी दल' है। सारे जर्मन दलों से निकले हुए नरम राष्ट्रीय विचारों के लोगों का सन् १९२८ ई० में 'जर्मन आर्थिक संघ' नाम का भी एक नया दल और बन गया है।

ज़ेकोस्लोवाकिया में इतने बहुत से राजनैतिक दल होने के दो मुख्य कारण हैं। एक तो अल्प-संख्या जातियों की संख्या काफ़ी बड़ी है—सारी आबादी के २३ फ़ी सदी जर्मन हैं, और ५½ मेग्यार हैं। दूसरे राज-व्यवस्था के अनुसार चुनाव अनुपात-निर्वाचन की पद्धति के अनुसार होते हैं, जिस से छोटे-छोटे दलों को भी अपनी क़िस्मत आज़माने का लालच रहता है। नए छोटे-छोटे दलों की बाढ़ रोकने के लिए हाल में एक क़ानून पास किया गया था, जिस के अनुसार हर एक दल को कम से कम एक चुनाव-क्षेत्र से एक निश्चित संख्या मतों की जिस को उस क़ानून में 'चुनाव के मतों की कम से कम संख्या' माना गया था, मिलने पर ही दूसरी जगहों पर उस दल के लिए, दिए गए मत उस के पक्ष में गिने जायँगे। इस क़ानून से अब नए बिल्कुल ही छोटे-छोटे दलों का बनना अवश्य

कठिन हो गया है। मगर फिर भी व्यवस्थापक-सभा में इतने दल रहते हैं कि किसी एक दल को साफ़ बहुसंख्या मिलना या उस को अकेले अपनी ताक़त पर सरकार की रचना करना नामुमकिन होता है। अस्तु, आमतौर पर हमेशा कई दलों को मिला कर सरकार बना करती है। ज़ेकोस्लोवाकिया में राजनैतिक दलों की बुनियाद भी दो ही कारणों पर होती है एक तो राजनैतिक और आर्थिक हितों का संघर्ष, दूसरे जातीय भेद-भाव। सन् १९२६ ई० तक अधिकतर राजनैतिक दल जातीय भेदभावों पर बनते थे। ज़ेकोस्लोवाकिया राष्ट्र के जन्म के बाद की पहली आठ सरकारें सिर्फ़ ज़ेक और स्लोवाक जातियों के दलों के मेल से ही बनी थीं; क्योंकि जर्मन प्रजातंत्र के विरोधी थे और उन्हों ने सरकार से एक प्रकार का असहकार-सा कर रक्खा था। सन् १९२६ ई० से जर्मन असहकार छोड़ कर सरकार के काम में भाग लेने लगे हैं और तब से जो मंत्रि-मंडल बने हैं, उन सब में 'जातीय' बातों का विचार न रख कर सिर्फ़ 'राजनैतिक' बातों का विचार रक्खा गया है।

ज़ेकोस्लोवाकिया राष्ट्र की उत्पत्ति से अब तक उस की राजनीति के रंग में कोई क्रांतिकारी फेरफार नहीं हुआ है। सन् १९२५ में समष्टिवाद की अवश्य बाढ़ आई थी और समष्टिवादी दल की एकदम ताक़त बढ़ गई थी। मगर सन् १९२९ ई० में फिर उन के विरुद्ध धारा बह उठी थी। 'व्यवस्थापक-सम्मेलन' में 'कृषि-दल' के ४५, 'राष्ट्रीय प्रजासत्तात्मक दल' के ४६, 'कैथौलिक दल' के २४, 'समाजी प्रजासत्तात्मक के ५३, 'राष्ट्रीय समाजवादी दल' के ३५, और 'स्लोवाक दलों' के ४१ सदस्य थे। जर्मन और मेग्यार जातियों का असहकार के कारण एक भी प्रतिनिधि न था। सन् १९२० ई० में पहली बाक़ायदा व्यवस्थापक-सभा का चुनाव होने पर 'ज़ेकोस्लोवाक दलों' के १९२ सदस्य और 'जर्मन और मेग्यार दलों' के कुल ८२ चुन कर आए थे। सिर्फ़ एक 'समष्टिवादी दल' का एक भी सदस्य नहीं था। सन् १९२५ ई० के चुनाव में 'ज़ेकोस्लोवाक दलों' के १९१ सदस्य चुन कर आए थे और 'जर्मन और मेग्यार दलों' के कुल ७५ सदस्य। और 'समष्टिवादी दल' के एक दम ४१ सदस्य चुन कर आ गए थे। सन् १९२९ के चुनाव में 'ज़ेकोस्लोवाक दलों' के २०५ सदस्य और 'जर्मन और मेग्यार दलों' के ८६ सदस्य चुन कर आए थे। 'समष्टिवादी दल' से कम हो कर ३१ सदस्य रह गए थे। 'ज़ेकोस्लोवाक दलों' में कृषिदल के ४६, 'कैथौलिकों' के ४४, 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' के ४३, और 'राष्ट्रीय समाज-वादियों' के ३२ सदस्य थे। 'जर्मन और मेग्यार दलों' में 'कृषिदल' के १६, 'कैथौलिकों' के १६, 'राष्ट्रीय दल' के १४, और 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' के २१ सदस्य थे। 'ज़ेकोस्लोवाकिया के सिर्फ़ एक 'समष्टिवादी दल' में सब जातियों के सदस्य होते हैं। जर्मन और मेग्यार दलों के सरकार में भाग लेने के बाद से दोनों जातियों के एक-से दल मिल कर एक होने लगे हैं।

यूगोस्लाविया की सरकार

राज-व्यवस्था

पोलैंड और ज़ेकोस्लोवाकिया की तरह यूगोस्लाविया का नया राष्ट्र भी यूरोपीय युद्ध के बाद बना है। यूगोस्लाविया में पुरानी सरबिया की रियासत आ जाती है, जो पहले स्वयं एक स्वतंत्र राजाशाही थी और जिस में लड़ाई के बाद क़रीब दुगना और क्षेत्र मिला कर नया यूगोस्लाविया का राष्ट्र बनाया गया है। इस नए यूगोस्लाविया राष्ट्र का सरकारी नाम 'सर्ब, क्रोट्स, और स्लोवेंस की रियासत' रक्खा गया है। सरबिया पर बहुत दिनों तक टर्की का अधिकार था। मगर दूसरी बाल्कन रियासतों की तरह सरबिया भी सन् १८७८ ई० में स्वाधीन हो गया था। मगर सरबिया में बसी हुई जूगोस्लाव जाति की बहुत-सी संख्या सरबिया के बाहर आस्ट्रिया और हंगरी के साम्राज्य में भी फैली हुई थी। सरबिया के राजनैतिक नेता बहुत दिनों से अपनी बिखरी हुई जाति को मिला कर, एक बड़ा राष्ट्र बनाना चाहते थे। उन का यह उद्देश, बिना आस्ट्रिया-हंगरी का हेप्सबर्ग साम्राज्य टूटे पूरा होना अशक्य था, और इस लिए हमेशा सरबिया और आस्ट्रिया में मनमुटाव रहा करता था। मित्र-राष्ट्रों ने अपने शत्रु आस्ट्रिया-हंगरी का साम्राज्य छिन्न-भिन्न कर देने के इरादे से अपने लड़ाई के उद्देशों में 'स्लाव जातियों की स्वतंत्रता' का भी एलान किया था। इस एलान से स्लाव जातियों की स्वाधीनता के आंदोलन को लड़ाई के ज़माने में बड़ी उत्तेजना मिली और मित्र-राष्ट्रों की विजय होते ही बिखरी हुई दक्षिण यूरोप की सारी स्लाव जातियों का आख़िरकार एक 'सर्ब, क्रोट्स, और स्लोवेंस का राष्ट्र' बना ही दिया गया।

सरबिया का राजनैतिक इतिहास, सन् १८३० ई० से ले कर सन् १८७८ ई० तक, राज-व्यवस्थाएं बनने और मिटने, निरंकुश राजाओं के राजत्याग और क़त्लों और तुर्किस्तान की अधीनता से मुक्त होने के प्रयत्नों की तथा अंत में सन् १८७८ ई० में स्वाधीनता प्राप्त कर लेने की एक लंबी भूल-भुलैयों की कहानी है। सन् १८८८ ई० में सरबिया को इतिहास में पहली बार एक ऐसी राज-व्यवस्था दी गई थी, जिस के अनुसार सरकार के मंत्रियों को व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार माना गया था। मगर यह राज-व्यवस्था बहुत दिनों तक काग़ज़ पर ही रही; अमल में नहीं आई। सन् १९०३ ई० में इस राज-व्यवस्था को अमल के लिए पुनर्जीवित किया गया था। पिछली लड़ाई में स्लाव जातियों को गुलामी में जकड़े रखने वाले हेप्सबर्ग साम्राज्य के टूटते ही, नवंबर सन् १९१८ ई० में स्लाव जातियों के क्रोशिया, स्लावोनिया, अल्बानिया, इस्ट्रिया, बोस्निया, हर्ज़ेगोविना, दक्षिण हंगरी, सरबिया और मोंटेनीग्रो से आने वाले प्रतिनिधियों की एक सभा में इन सब भागों के मिल कर एक हो जाने और एक स्वाधीन राष्ट्र बन जाने की घोषणा कर दी गई थी। इस नई संघ का केंद्र सरबिया की रियासत थी। फ़ौरन ही चुनाव कर के व्यवस्थापक-सम्मेलन बुला लेना संभव नहीं था, इस लिए इस 'संघ' की सरकार का काम फ़िलहाल सरबिया की सरकार को सौंप दिया गया था और वही इस कमज़ोर, असंगठित 'राजनैतिक संघ' का एक साल तक काम चलाती रही। मगर यह अव्यवस्थित हालत बहुत दिनों तक नहीं चल सकती थी। अस्तु, सारी कठिनाइयों का सामना करते हुए सन् १९२० ई० में एक 'व्यवस्थापक-सम्मेलन' के चुनाव का प्रबंध किया गया। नवंबर सन् १९२० ई० में इस नए राष्ट्र के विभिन्न भागों से ४२० प्रतिनिधि चुन कर आ गए। इन प्रतिनिधियों में क़रीब आधे 'गरम दल' और 'प्रजासत्तात्मक दल' दो दलों के सदस्य थे। बाक़ी दूसरे छोटे-छोटे दलों के लोग थे, जिन में 'क्रोशियन किसान दल' और 'क्रोशियन राष्ट्रीय दल' बड़े दल थे।

व्यवस्थापक-सम्मेलन के सामने राज-व्यवस्था गढ़ने के संबंध में ख़ास प्रश्न यह था कि वह संघीय सिद्धांत पर रची जाय या केंद्रीयता के सिद्धांत पर। दोनों पक्षों के लिए काफ़ी राय थी, मगर इटली की नज़र इस नए राष्ट्र के कई भागों पर होने से सब के मन में एक-सा डर बैठा हुआ था। अस्तु, केंद्रीयता के एक मुख्य पक्षपाती एम० एम० पैशिच से सन् १९२१ ई० में मंत्रि-मंडल रचने की प्रार्थना की गई। डाक्टर लाज़ार मार्कोविश की अध्यक्षता में सम्मेलन की एक ख़ास उपसमिति को राज-व्यवस्था तैयार करने और राजव्यवस्था से संबंध रखने वाले सारे प्रश्नों पर विचार और निश्चय करने का अधिकार दे दिया गया। छः महीने के अंदर ही इस समिति की बनाई हुई राज-व्यवस्था तैयार हो कर व्यवस्थापक-सम्मेलन में मंज़ूर भी हो गई। इस राज-व्यवस्था में बहुत-सी ख़ास बातें हैं, मगर सब से ख़ास बात यह है कि व्यवस्थापक-सभा की सिर्फ़ एक ही सभा है। यूगोस्लाविया राष्ट्र बहुत-से बिखरे हुए भागों से बनने के कारण, व्यवस्थापक-सभा की दो सभाओं की इस राष्ट्र के लिए ख़ास ज़रूरत होनी चाहिए थी, जिस से कि एक सभा में राष्ट्र की प्रजा के प्रतिनिधि और दूसरी में विभिन्न

संयुक्त क्षेत्रों के प्रतिनिधि रह सकते थे। मगर न जाने क्यों ऐसी व्यवस्था नहीं की गई। विभिन्न क्षेत्रों की सरकारों के प्रचलित क़ानूनों और शासन के ढंगों को मिला कर इस राज-व्यवस्था में एक करने का भी प्रयत्न किया गया है। राष्ट्रीय एकता का प्रचार करने के लिए राज-व्यवस्था में तय की हुई शिक्षापद्धति तक में राष्ट्रीय एकता पर ज़ोर दिया गया है। राज-व्यवस्था मंज़ूर हो जाने के बाद व्यवस्थापक-सम्मेलन ही यूगोस्लाविया की पहली व्यवस्थापक-सभा बन कर काम चलाने लगा था।

राजाशाही—इस राज-व्यवस्था के अनुसार यूगोस्लाविया में वैध[1], व्यवस्थापकी[2] और मौरूसी राजाशाही है। क़ानून, शासन और न्याय इत्यादि के संबंध की सारी सत्ता और अधिकारों का जन्मदाता राजछत्र माना गया है। राजछत्र और यूगोस्लाविया की व्यवस्थापक-सभा को, जिस को स्कूपस्टीना कहते हैं, क़ानून बनाने का अधिकार माना गया है, और राजछत्र और मंत्रियों को शासन का अधिकार है। न्याय-शासन राजा के नाम पर होता है। दूसरे देशों से संबंध के लिए राजा ही राष्ट्र का प्रतिनिधिस्वरूप होता है। वही युद्ध की घोषणा करता और संधि करता है। दूसरे किसी देश पर हमला करने के लिए अवश्य स्कूपस्टीना की मंज़ूरी ले लेने की ज़रूरत होती है, मगर यूगोस्लाविया पर हमला होने पर, बिना किसी इजाज़त और मंज़ूरी के, फ़ौरन राजा के नाम पर युद्ध की घोषणा की जा सकती है। राज की दूसरे राष्ट्रों से की हुई संधियों के लिए भी आम तौर पर स्कूपस्टीना की मंज़ूरी की ज़रूरत होती है, मगर जिन राजनैतिक समझौतों के अनुसार यूगोस्लाविया की ज़मीन किसी दूसरे के कब्ज़े में न चली जाती हो, या उस पर से किसी दूसरे राष्ट्र की सेनाएं न गुज़रती हों, उन समझौतों को करने के लिए राजा को व्यवस्थापक-सभा की मंज़ूरी लेने की ज़रूरत नहीं होती है। व्यवस्थापक-सभा को खोलने, स्थगित करने और भंग करने के, राजा के एलानों पर, उस विभाग के जवाबदार मंत्री के सही की ज़रूरत होती है, जिस का यह काम होता है। व्यवस्थापक-सभा में मंज़ूर हो जाने वाले क़ानून को अमल के लिए एलान न करने का अधिकार राजा को नहीं होता है।

व्यवस्थापक-सभा—यूगोस्लाविया की व्यवस्थापक-सभा को 'स्कूपस्टीना' कहते हैं। उस की सिर्फ़ एक ही सभा होती है। जिस में ३११ प्रजा के चुने हुए प्रतिनिधि होते हैं। इन प्रतिनिधियों को २१ वर्ष के ऊपर के सारे मर्द नागरिक, अनुपात-निर्वाचन के अनुसार चार साल के लिए चुनते हैं। सभा के लिए उम्मीदवारों की कम से कम तीस वर्ष की उम्र होने की शर्त रक्खी गई है। सभा की सालाना बैठकों के सिवाय विशेष बैठकें भी होती हैं। मसविदे सभा में पेश हो जाने के बाद, सभा की उपसमितियों के पास विचार के लिए भेजे जाते हैं। उपसमितियों में से वापिस आ जाने पर फिर उन पर सभा में तफ़सीलवार विचार होता है। यूगोस्लाविया में जाति-भेद का बहुत ज़ोर होने के कारण वहां की व्यवस्थापक-सभा में, प्रश्नों पर निष्पक्ष विचार न हो कर आमतौर पर जाति-भेद के विचार से ही चर्चा होती है, जिस का नतीजा यह होता है कि सभा और सरकार में

---

[1]कॉंस्टिट्यूशनल। [2]पार्लमेंटरी।

हमेशा सना बनी रहती है, मंत्रि-मंडल जल्दी-जल्दी टूटते और बनते हैं और किसी प्रश्न पर अच्छी तरह विचार नहीं हो पाता है। राज-व्यवस्था में संशोधन का प्रस्ताव पेश करने का अधिकार राजा और व्यवस्थापक-सभा दोनों को होता है। राजा की तरफ़ से संशोधन का प्रस्ताव आने पर व्यवस्थापक-सभा भंग हो जाती है और नया चुनाव होता है। व्यवस्थापक-सभा में से ही संशोधन का प्रस्ताव उठने पर, उस प्रस्ताव पर साधारण मसविदों की तरह विचार होता है और सारे सदस्यों की ३/५ संख्या के मतों से प्रस्ताव मंज़ूर होने पर व्यवस्थापक-सभा भंग हो जाती है और नया चुनाव होता है। नई चुन कर आने वाली व्यवस्थापक-सभा में दोनों हालतों में संशोधन के प्रस्ताव की आखिरी मंज़ूरी के लिए सारे सदस्यों की बहुसंख्या की ज़रूरत होती है।

कार्यकारिणी—यूगोस्लाविया की सरकार की एक और विचित्र बात यह है कि मंत्री, राजा और व्यवस्थापक-सभा दोनों, जवाबदार माने गए हैं। प्रधान मंत्री और क़रीब चौदह मंत्रियों का मिला कर एक मंत्रि-मंडल होता है, जो राजा के नीचे काम करता है और जिस को राजा ही नियुक्त करता है। प्रधान मंत्री की नियुक्ति भी राजा ही करता है। व्यवस्थापक-सभा, मंत्रियों पर, ग़ैर क़ानूनी कार्रवाई के लिए, एक ख़ास राष्ट्रीय अदालत के सामने मुक़दमा चला सकती है। मंत्रियों को क़ानूनों के अमल के लिए फ़रमान निकालने का अधिकार भी होता है; मगर उन के इस अधिकार पर व्यवस्थापक-सभा का नियंत्रण रहता है और सभा के बनाए हुए इस संबंध के क़ानून की सीमा के अंदर ही वह फ़रमान निकाल सकते हैं।

स्थानिक शासन और न्याय—स्थानिक शासन प्रांतों, ज़िलों और कम्यूनों द्वारा चलाने की सुंदर व्यवस्था की गई है। प्रांतों को स्वाभाविक, सामाजिक और आर्थिक विशेषताओं की बुनियाद पर बनाने और आठ लाख की आबादी से अधिक का कोई प्रांत हरगिज़ न बनाने की शर्त भी राज-व्यवस्था में रक्खी गई है। केंद्रीय सरकार, केंद्रीय शासन चलाने और यह देख-रेख रखने के लिए कि प्रांतिक अधिकारी बाक़ायदा और राज-व्यवस्था के अनुसार चलते हैं, हर प्रांत में एक-एक गवर्नर रखती है। ज़िलों का स्थानिक शासन वहां की चुनी हुई स्थानिक संस्थाएं करती हैं।

अधिकारियों के आपस के झगड़े और अधिकारियों और नागरिकों के झगड़ों का फ़ैसला करने के लिए 'शासकी अदालतें' होती हैं। साधारण न्याय का शासन साधारण अदालतें करती हैं, जिन के न्यायाधीश हर प्रकार से स्वाधीन होते हैं। हर ज़िले के मुख्य नगर में एक अदालत होती है, जिस में पहले मुक़दमे जाते हैं। यहां से 'अपील अदालत' में अपील जा सकती है। अपील की अदालतें देश भर में चार हैं, जिन के चार अलग-अलग क्षेत्र हैं। अपील की अदालतों की अपीलें भी 'बड़ी अदालतों' में जा सकती हैं, 'बड़ी अदालतें' देश भर में तीन हैं, जिन के तीन क्षेत्र हैं। बेलग्रेड प्रांत में व्यापारी झगड़ों के लिए एक 'व्यापारी अदालत' भी है। सरबिया, मेसीडोनिया और मांटीनेग्रो में 'धार्मिक अदालतें' भी हैं जिन में सनातन रीति से विवाह करने वालों के

तलाक़ के झगड़े तय होते हैं। क्योंकि इन तीन प्रांतों में 'सिविल मैरेज' जायज़ नहीं मानी जाती है। दूसरे प्रांतों में तलाक़ के झगड़ों का फ़ैसला साधारण दीवानी की अदालतों में होता है। यूगोस्लाविया में अपराधियों को अधिक से अधिक फाँसी या बीस वर्ष की सख़्त सज़ा दी जा सकती है।

दलबंदी और सरकार—दुर्भाग्य से यूगोस्लाविया की नई राज-व्यवस्था के प्रारंभ से ही यूगोस्लाविया में जाति-भेद की बड़ी कलह रही। यहां तक कि जातिगत झगड़ों और क्रोशिया के लिए स्वराज्य आंदोलन के कारण व्यवस्थापकी सरकार का चलना तक यूगोस्लाविया में नामुमकिन हो गया। मंत्रि-मंडलों को चुनने और उन को क़ायम रखने में तो शुरू से ही बड़ी कठिनता रहती थी। मगर सन् १६२८ ई० में व्यवस्थापक-सभा के भवन में ही क्रोशियन नेताओं का वध हो जाने के बाद से, क्रोशिया के प्रतिनिधियों ने व्यवस्थापक-सभा का बहिष्कार कर दिया और एलान कर दिया कि, "जब तक क्रोशिया को क़ानून बनाने और शासन करने की पूरी आज़ादी नहीं मिल जायगी, तब तक क्रोशिया के प्रतिनिधि यूगोस्लाविया की व्यवस्थापक-सभा में क़दम नहीं रखेंगे।"

सन् १६२६ ई० में राजा ने एक घोषणा निकाली कि "अब राजा और प्रजा के बीच में कोई चीज़ न रहेगी। मैंने निश्चय किया है कि २८ जून, सन् १६२१ की राज-व्यवस्था पर अब से अमल न होगा। अस्तु, आजकल इस राष्ट्र की अवस्था बड़ी अनिश्चित है। राजनैतिक दलों को काम करने की स्वतंत्रता नहीं है। उन को भंग कर दिया गया है। शाही फ़रमान ही क़ानून समझे जाते हैं।" ३ अक्टूबर, सन् १६२६ के एक फ़रमान के अनुसार इस राष्ट्र का नाम 'सर्ब्स, क्रोट्स और स्लोवेंस की रियासत' के बजाय 'यूगोस्लाविया रियासत' एलान कर दिया गया है, जिस से राजा के केंद्रीय अधिकार को ही क़ायम रखने के मज़बूत इरादे का पता चलता है। दूसरे एक फ़रमान में 'राष्ट्र की रक्षा के विचार से' अख़बारों और राजनैतिक संस्थाओं की आज़ादी बिल्कुल कम कर दी गई है। नए मंत्रि-मंडल में क्रोट जाति के लोगों ने भी भाग लिया है। न मालूम आगे इस राष्ट्र के भाग्य में क्या है।

रूमानिया की सरकार

राज-व्यवस्था

रूमानिया का राष्ट्र भी यूगोस्लाविया की तरह लड़ाई के बाद बनने वाला बिल्कुल नया ही राष्ट्र नहीं है। मगर हां, लड़ाई के बाद इस राष्ट्र में बेस्सारेबिया, ब्यूकोविना और ट्रांसलवानिया की ज़मीन मिल जाने से यह राष्ट्र लगभग दुगुना हो गया है, और उस की सरकार की भी कायापलट हो गई है। रूमानिया में पुरानी सन् १८६६ की बनी हुई राज-व्यवस्था जिस का सन् १८७८ और १८८४ ई० में दो बार संशोधन भी हुआ था सन् १९२३ तक क़ायम थी। उस के अनुसार रूमानिया में राजाशाही थी जो जवाबदार मंत्रियों के द्वारा राजकार्य चलाती थी। दो सभाओं की एक व्यवस्थापक-सभा थी। 'प्रतिनिधि-सभा' को माल और शिक्षा की बुनियाद पर मताधिकार प्राप्त मतदारों के तीन वर्ग चुनते थे। दूसरी सभा 'सिनेट' को बड़े मालदार मतदारों के दो वर्ग चुनते थे। मगर लड़ाई के बाद रूमानिया का राष्ट्र दुगना हो जाने पर मार्च सन् १९२३ ई० में रूमानिया के नए विस्तृत राष्ट्र के लिए नई राज-व्यवस्था बनाई गई थी।

कार्यकारिणी—इस नई राज-व्यवस्था के अनुसार भी रूमानिया में मौरूसी राजाशाही क़ायम है जो राज-व्यवस्था में दिए गए अपने अधिकारों का एक व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार मंत्रि-मंडल के द्वारा प्रयोग करती है। राजा दूसरे राष्ट्रों से राजनैतिक समझौते कर सकता है। मगर जिन समझौतों से राष्ट्र के व्यापार और जल-पर्यटन[1]

[1] नेविगेशन।

इत्यादि पर असर पड़ता है, उन के लिए व्यवस्थापक-सभा की मंज़ूरी की ज़रूरत होती है। राज-व्यवस्था के अनुसार, राज-व्यवस्था में दिए गए अधिकारों के अतिरिक्त राजा को और कोई अधिकार नहीं होते हैं।

मंत्रि-मंडल व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार होता है। मगर मंत्रि-मंडल के सदस्य व्यवस्थापक-सभा के बाहर से भी लिए जा सकते हैं। मंत्रि-मंडल के वे सदस्य जो व्यवस्थापक-सभा के सदस्य नहीं होते हैं, सभा की चर्चाओं में भाग ले सकते हैं, मगर सभा में मत नहीं दे सकते हैं। कम से कम एक मंत्री भी सभा में हाज़िर न होने पर किसी प्रकार की चर्चा सभा में नहीं चल सकती है। मंत्रियों की व्यवस्थापक-सभा के प्रति जवाबदारी का राज-व्यवस्था में ज़िक्र नहीं है। मगर इंगलैंड की तरह रिवाज के अनुसार उन को सरकार के सारे कामों के लिए व्यवस्थापक-सभा के सामने जवाबदार माना जाता है और उन की इस जवाबदारी से राजा उन को बचा नहीं सकता है।

व्यवस्थापक-सभा—क़ानून बनाने की सत्ता राजा और व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं—'प्रतिनिधि सभा' और 'सिनेट' में होती है। इन तीनों की तरफ़ से क़ानूनी मसविदे विचार के लिए पेश किए जा सकते हैं। बिना तीनों की मंज़ूरी के कोई मसविदा क़ानून नहीं बन सकता है। रूमानिया की राज-व्यवस्था की एक विशेषता यह है कि व्यवस्थापक-सभा में मंज़ूर हो जाने वाले क़ानूनों को, राजा के बजाय, न्याय-सचिव अमल के लिए एलान करता है। दोनों सभाएं जाँच-पड़ताल, पूछ-ताछ और अर्ज़ी के द्वारा सरकार के शासन पर हुकूमत रखती हैं।

प्रतिनिधि-सभा के सदस्यों का चुनाव, २१ वर्ष के ऊपर के सारे नागरिक, अनुपात-निर्वाचन की पद्धति के अनुसार करते हैं। रूमानिया में, स्विटज़रलैंड के कुछ भागों की तरह, मतदारों के लिए चुनाव में अपने मत का प्रयोग करना क़ानूनन अनिवार्य होता है। 'प्रतिनिधि-सभा' के उम्मीदवारों की उम्र कम से कम २५ वर्ष की होनी चाहिए। 'सिनेट' में दो प्रकार के सदस्य होते हैं—एक चुने हुए और दूसरे अपने अधिकारों और पदों के कारण। चुने हुए सदस्यों के एक भाग को ४० वर्ष के ऊपर के मतदार उसी ढंग पर चुनते हैं, जिस प्रकार प्रतिनिधि-सभा के सदस्य चुने जाते हैं। दूसरे एक भाग को, एक डिपार्टमेंट[1] के लिए एक सदस्य के हिसाब से, सारे स्थानिक सभाओं के सदस्य चुनते हैं। तीसरे एक भाग को व्यापारी, उद्योगी, मज़दूरों और कृषि-संस्थाओं के ख़ास तौर पर बनाए गए छः क्षेत्र अलग-अलग अपनी बैठकों में चुनते हैं। चौथे एक भाग को विश्वविद्यालयों के अध्यापक, हर विश्वविद्यालय के लिए एक सदस्य के हिसाब से, चुनते हैं। अपने अधिकारों और पदों के कारण 'सिनेट' के सदस्य बन कर बैठने वालों में ऊँचे धार्मिक संस्थाओं के अधिकारी, विद्वान संस्थाओं के सदस्य, गत प्रधान मंत्री और धारा-सभाओं के अध्यक्ष और कुछ पेंशनयाफ़्ता जेनरल होते हैं। मगर इस सब सदस्यों की उम्र कम से कम चालीस वर्ष होने की शर्त होती है।

---

[1] स्थानिक शासन का सबसे बड़ा क्षेत्र।

सरकार और व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों के मसविदे तैयार करने और क़ानूनों का क्रम ठीक रखने के लिए सभा की एक 'धारा समिति' भी होती है। आय-व्यय संबंधी मसविदों को छोड़ कर और सारे मसविदों पर इस समिति की पहले राय ली जाती है। राज-व्यवस्था के संशोधन के प्रस्ताव भी राजा या दोनों सभाओं में से किसी सभा की ओर से उठ सकते हैं। संशोधन का प्रस्ताव पेश होने पर पहले दोनों सभाएं, अलग-अलग अपनी बैठकों में, सारे सदस्यों की बहुसंख्या से, यह निश्चय करती हैं कि उस संशोधन के प्रस्ताव की ज़रूरत है या नहीं। उस की ज़रूरत के बारे में दोनों सभाओं का एकमत हो जाने के बाद दोनों सभाओं के सदस्यों का एक 'मिश्रित कमीशन' उस संशोधन का रूप तय कर के सभा में पेश करता है। उस संशोधन को दोनों सभाओं में अलग-अलग पंद्रह दिन के अंतर से दो-दो बार पढ़ा जाता है। फिर दोनों सभाओं की एक सम्मिलित बैठक में दोनों सभाओं के कम से कम दो तिहाई सदस्यों की हाज़िरी और हाज़िर सदस्यों की दो तिहाई संख्या के मतों से उस संशोधन का आख़िरी रूप निश्चय होता है। इस के बाद दोनों सभाएं भंग हो जाती हैं और नया चुनाव होता है। नई चुन कर आने वाली सभाएं और राजा मिल कर फिर उस संशोधन पर विचार करते हैं और इन सभाओं में फिर उस को मंज़ूर करने के लिए दोनों सभाओं के दो तिहाई सदस्यों की हाज़िरी और हाज़िर सदस्यों की दो तिहाई संख्या के मतों की ज़रूरत होती है। इन वाहियात भूल-भुलैयों में से राज-व्यवस्था के बड़े आवश्यक और बहुत थोड़े संशोधन ही सफलतापूर्वक निकल पाते हैं।

स्थानिक शासन और न्याय—प्रारंभ में स्थानिक शासन भी बिल्कुल केंद्रीय सरकार के ही हाथों में था। मगर अब स्थानिक शासन के प्रबंध में सुधार हो गया है और स्थानिक संस्थाओं को स्थानिक शासन के बहुत कुछ अधिकार दे दिए गए हैं।

रूमानिया की सब से बड़ी 'राष्ट्रीय अदालत' के नीचे बारह अपील की अदालतें, हर ज़िले के लिए एक अदालत और हर तहसील और क़स्बे के लिए एक-एक मजिस्ट्रेट की अदालतें होती हैं। सब से बड़ी अदालत सिर्फ़ इस बात पर विचार करती है कि अभियोगों के विचार में क़ानून का पालन हुआ है कि नहीं।

राजनैतिक दल—बड़ी जागीरों और ज़मीदारियों के सन् १६१६ ई० में टूट जाने पर और सर्वसाधारण को मताधिकार मिल जाने पर पुराना 'अनुदार दल' टूट गया था। मगर पुराने 'उदार दल' पर किसानों के गरम दल और समाजवादी दल के हमलों के कारण वह दल लड़ाई के बाद 'अनुदार दल' बन गया था, यह दल अमीर व्यापारियों और साहूकारों का दल होने से उस को उन्हीं हितों का अधिक ख्याल रहता है और इसी लिए वह पुरानी मर्यादाओं को क़ायम रखने का पक्षपाती है। खेती-बारी के हितों से संबंध रखने वाला दूसरा एक 'राष्ट्रीय कृषि-दल' है। रूमानिया की ८० फ़ी सदी आबादी किसानों की होने और सारे देश की ज़मीन का लगभग ८५ फ़ी सदी भाग छोटे-छोटे किसानों के

हाथ में होने से इस दल का रूमानिया में सब से अधिक ज़ोर है। इस दल का राजनैतिक कार्य-क्रम उदार है और आर्थिक कार्य-क्रम में देश की हालत के अनुसार 'सहकारी कार्य-क्रम का पक्षपाती है।

उदार दल से मिलता-जुलता पुरानी तबियत का एक दूसरा 'लोकदल' भी है। सर्वदल मंत्रि-मंडल का बनना असंभव होने पर राष्ट्रीय उदार दल के हाथ में सरकार की बागडोर सन् १९२७ ई० में आ गई थी। मगर रूमानिया के राजा फ़र्डीनेंड के मर जाने के बाद उत्तराधिकारी राजकुमार करोल के एक स्त्री को ले कर देश से भाग जाने और रूमानिया के तख्त पर न बैठने के कारण राज्य का काम चलाने के लिए जो राज्य-प्रतिनिधि क़ायम हुआ था, उस ने 'उदार दल' के मंत्रि-मंडल को बर्खास्त कर दिया था और सरकार की बाग़डोर 'राष्ट्रीय कृषि-दल' को सौंप दी थी, दूसरे चुनाव में 'उदार दल' की जिस के हाथ में लड़ाई के बाद से बराबर रूमानिया की सरकार की बागडोर रही थी, भयंकर हार हुई थी और राज्य-प्रतिनिधि का 'उदार दल' के हाथ से सरकार ले लेना प्रजा मत के अनुसार साबित हुआ। मगर जून सन् १९३० ई० में राजकुमार करोल के रूमानिया लौट आने और तख्त पर बैठ जाने के बाद रूमानिया के राजनैतिक दलों में बड़ी गड़बड़ मच गई। हर राजनैतिक दल में राजा करोल के पक्षपातियों और विरोधियों के दो गिरोह बन गए थे। 'राष्ट्रीय कृषि-दल' की बहुसंख्या करोल की समर्थक थी। मगर कृषि-दल के भीतरी झगड़ों और आर्थिक संकटों में फँस जाने से कृषि-दल के मंत्रि मंडल को अक्टूबर सन् १९३० ई० में इस्तीफ़ा रख देना पड़ा था, फिर भी 'कृषि-दल' का ही एक दूसरा मंत्रि-मंडल बनाया गया। मगर उस को भी ८ अप्रैल, सन् १९३१ ई० को इस्तीफ़ा दे देना पड़ा। अंत में प्रोफ़ेसर की अध्यक्षता में १९ अप्रैल को सब दलों से सदस्यों को ले कर एक 'संयुक्त सरकार' बनाई गई थी।

रूमानिया के मुख्य राजनैतिक दलों में एक 'उदार दल' है जिस का ऐतिहासिक और आर्थिक दृष्टि से मज़बूत संगठन रहा है और जिस के हाथ में लड़ाई के बाद से सन् १९२८ ई० तक लगातार सरकार की लगाम रही थी। दूसरा एक 'लोकदल' है जो सन् १९२० ई० तक मुख्तलिफ़ विचारों के लोगों की एक सघ की तरह था, सन् १९२० ई० के बाद से वह एक बाक़ायदा दल बन गया है। तीसरा 'राष्ट्रीय कृषि-दल' है जो लड़ाई के बाद बने हुए 'किसान-दल' और ट्रांसलवेनिया के 'राष्ट्रीय वादियों' के मेल से बना था। चौथा एक 'राष्ट्रीय दल' है जो राष्ट्रीय कृषि-दल से मिलने का विरोधी होने से अलग एक छोटा-सा दल बन कर रह गया है। पाँचवां रूमानिया के सारे समाजवादियों का एक 'समाजवादी दल' है। मगर इस दल का एक भी सदस्य व्यवस्थापक-सभा में नहीं है। छठा एक 'ईसाई रक्षा-संघ दल' है जिस का 'राष्ट्रीय प्रजासत्तात्मक दल' के नाम से सन् १९०७ ई० में जन्म हुआ। सातवां एक जर्मन लोगों का 'जर्मन व्यवस्थापकी दल' है। हंगरी और बलगेरिया की अल्प-संख्या जातियों के भी 'मेग्यार दल' और 'बलगेरियन दल' नाम के दो छोटे-छोटे दल हैं।

टर्की की सरकार

राज-व्यवस्था—हमारे महाद्वीप एशिया को यूरोप से मिलाने वाले एशिया के यूरोप की सीमा पर द्वारपाल टर्की की सरकार की भी लड़ाई के बाद बिल्कुल सूरत बदल गई है। तुर्क लोगों ने एक ज़माने में अपनी तलवार के ज़ोर से टर्की साम्राज्य मध्य यूरोप और मिश्र तक फैला लिया था, मगर बाद में टर्की के सुल्तानों को हरम और दस्तरख़्वानों से ही फ़ुरसत न रहने के कारण और यूरोप के ईसाई राष्ट्रों के भयंकर हमलों और कूट राजनीति के कारण तथा अपने घरेलू झगड़ों और दग़ाबाज़ियों के कारण टर्की की हालत इतनी कमज़ोर हो गई थी कि यूरोप के राष्ट्रों में उस का नाम 'यूरोप का बीमार' पड़ गया था। लड़ाई के ज़माने तक इस साम्राज्य की सरकार निरी सुल्तान-शाही अर्थात् निपट राजाशाही थी। यूरोपीय राष्ट्रों के ज़ोर डालने पर टर्की के सुल्तान अब्दुलहमीद द्वितीय ने सन् १८७६ ई० में अपने देश के लिए एक राज-व्यवस्था का एलान किया था। इस राज व्यवस्था के अनुसार टर्की में आजन्म नियुक्त सदस्यों की 'सिनेट' और प्रजा के चुने हुए प्रतिनिधियों की 'प्रतिनिधि-सभा', दो सभाओं की एक व्यवस्थापक-सभा क़ायम की गई थी। व्यवस्थापक-सभा की पहली बैठक भी १६ मार्च, सन् १८७७ ई० हुई थी, मगर उसी साल टर्की और रूस का युद्ध छिड़ जाने के कारण बाद में व्यवस्थापक-सभा की बैठकें बंद कर दी गईं और फिर सन् १९०८ ई० में 'नौजवान तुर्क दल' ने टर्की में क्रांति कर के सुल्तान अब्दुलहमीद को तख़्त से उतार दिया था, और पुरानी राज-व्यवस्था पर सरकार को अमल करने के लिए मजबूर कर दिया था। दूसरे साल इस राज-व्यवस्था में संशोधन भी हुआ था; मगर सरकार में फिर भी

लड़ाई के ज़माने तक निपट निरंकुशशाही ही चलती रही और 'प्रतिनिधि-सभा' का सरकार पर कुछ क़ाबू नहीं था।

मगर यूरोप की लड़ाई में जर्मनी के साथ ही टर्की की कमर टूट जाने पर मित्र-राष्ट्रों से संधि करने में सुल्तान ने जो कमज़ोरी दिखलाई और उन को जो-जो बेइज़्ज़तियां सहनी पड़ीं, उस ने तुर्कों के दिलों में एक आग लगा दी। सुल्तान की मित्र-राष्ट्रों से की हुई सन् १९१६ ई० की 'सेव्र की संधि' को तुर्कों ने मंज़ूर नहीं किया। उन्हों ने मुस्तफ़ा कमाल पाशा की अध्यक्षता में अंगोरा को अपना केंद्र बना कर टर्की की स्वाधीनता क़ायम रखने के लिए ऐसी भयंकर लड़ाई की कि आखिरकार मित्र राष्ट्रों को मजबूर हो कर टर्की के राजनैतिक नेताओं से लूज़ान में सन् १९२२-२३ ई० में एक दूसरी संधि करनी पड़ी, जिस के अनुसार क़ुस्तुनतुनिया और थ्रेस पर तुर्कों का अधिकार क़ायम रहा। जिस समय तुर्क अपनी हस्ती क़ायम रखने के लिए जान हथेली पर रख कर लड़ रहे थे, उसी समय उन के नेता मुस्तफ़ा कमाल की ओर से सन् १९०८ ई० की राज-व्यवस्था के अनुसार जो व्यवस्थापक-सभा बनी थी, उस के सदस्यों को अंगोरा में मिलने के लिए बुलावा भेज दिया गया था। इस सभा ने एकत्र हो कर अप्रैल सन् १९२० ई० में 'एशिया माइनर की राष्ट्रीय टर्की सरकार' को तुर्क जाति की प्रभुता का 'एक मात्र प्रतिनिधि' एलान कर के सुल्तान की सरकार और क़ुस्तुनतुनिया में बैठने वाली व्यवस्थापक-सभा को तुर्कों की सरकार न होने का एलान कर दिया। फिर नवंबर सन् १९२२ ई० में इसी सभा ने सुल्तान को टर्की की गद्दी से उतार देने, तुर्क साम्राज्य के ख़त्म हो जाने और उस के हाथों में नए 'तुर्क राष्ट्र' की स्थापना होने का एलान किया। बाद में इस सभा ने अंगोरा में बैठ कर २९ अक्टूबर सन् १९२३ को पुरानी टर्की की राज-व्यवस्था में इतने फेर-फार किए कि उस को बिल्कुल बदल कर नया ही बना दिया। नए तुर्क राष्ट्र को 'प्रजातंत्र' घोषित कर के इसी सभा में मुस्तफ़ा कमाल को नए प्रजातंत्र का प्रमुख घोषित कर दिया गया। बाद में सन् १९२४ ई० में इस राज-व्यवस्था की फिर पुनर्घटना कर के उस को बिल्कुल 'यूरोपीय सरकारों' के साँचे में ढाल दिया गया।

व्यवस्थापक-सभा—नए तुर्क प्रजातंत्र की व्यवस्थापक-सभा को 'बड़ी राष्ट्रीय सभा'[1] के नाम से पुकारते हैं। यूगोस्लाविया की तरह इस व्यवस्थापक-सभा की भी एक ही सभा होती है, जिस को क़ानून बनाने और कार्यकारिणी की सारी प्रभुता होती है। अठारह वर्ष के ऊपर के हर तुर्क नागरिक को राष्ट्रीय सभा के चुनाव में मत देने और तीस वर्ष से ऊपर के हर तुर्क मतदार को राष्ट्रीय सभा के लिए उम्मीदवार होने का हक़ होता है। सभा का चुनाव चार साल के लिए किया जाता है और उस की आम तौर पर साल में एक बार बैठक होती है, मगर साल भर में चार मास से अधिक सभा की बैठकें बंद नहीं रह सकती हैं और इस चार मास की छुट्टी का कारण राज-व्यवस्था में 'सदस्यों को अपने चुनाव के क्षेत्रों में जा कर सरकार पर हुकूमत करनेवाली शक्तियों को संगठित

---

[1]ग्रैंड नेशनल एसेंबली।

करने और आराम और तफ़रीह का मौक़ा देना' बताया गया है। सभा के सदस्यों के पाँचवें भाग की माँग पर या प्रजातंत्र के प्रमुख या मंत्रि-मंडल के प्रधान की माँग पर राष्ट्रीय-सभा की खास बैठकें भी बुलाई जा सकती हैं। राष्ट्रीय-सभा प्रश्नों, पूछ-ताछ, और जाँच के द्वारा सरकार पर अपनी देख-रेख और हुकूमत रखती है। साधारण क़ानूनों को बनाने की सत्ता के अतिरिक्त 'राष्ट्रीय सभा' को सुलह की संधियां और समझौते, युद्ध की घोषणा, 'बजट', कमीशन के बनाए हुए क़ानूनों को जाँच कर के मंज़ूर करने, सिक्का गढ़ने, एक हद तक अपराधियों को आम माफ़ी देने, व्यक्तिगत अपराधियों की सज़ा कम करने और माफ़ी देने और फाँसी की सज़ाओं को बहाल करने के अधिकार भी दिए गए हैं।

राष्ट्रीय-सभा के एक तिहाई सदस्यों की राय से राज-व्यवस्था में संशोधन का कोई मसविदा पेश किया जा सकता है, मगर उस के मंज़ूर होने के लिए सभा के दो तिहाई सदस्यों के मतों की ज़रूरत होती है; परंतु टर्की की राज-व्यवस्था की पहली धारा—जिस में टर्की के प्रजातंत्र होने की घोषणा की गई है—के सबंध में कोई संशोधन पेश नहीं हो सकता है।

कार्यकारिणी—प्रजातंत्र के प्रमुख को राष्ट्रीय-सभा अपनी ज़िंदगी यानी चार साल के लिए चुनती है। प्रमुख का समय पूरा हो जाने पर उस को फिर खड़ा होने का अधिकार भी होता है। राष्ट्रीय-सभा में पास होने वाले क़ानूनों को प्रमुख दस दिन के अंदर जारी करता है, मगर उन को जारी न कर के अपने वजूहात के साथ उन को राष्ट्रीय-सभा के पास फिर विचार करने के लिए भी वह भेज सकता है। राष्ट्रीय-सभा उस के वजूहातों की परवाह न कर के उन क़ानूनों को फिर जैसा का तैसा पास कर सकती है, और उस हालत में प्रमुख को मजबूरन उन्हें जारी करना पड़ता है, मगर राज-व्यवस्था के संशोधन और आय-व्यय संबंधी प्रस्तावों को रोकने का अधिकार बिल्कुल प्रमुख को नहीं होता है। प्रजातंत्र के प्रमुख के सारे हुक्मों पर प्रधान मंत्री और जिस विभाग से वह हुक्म संबंध रखता है, उस विभाग के मंत्री के हस्ताक्षर होते हैं। राज-द्रोह के अपराध के लिए प्रमुख सिर्फ़ राष्ट्रीय-सभा को जवाबदार होता है, किसी अदालत में उस पर मुक़दमा नहीं चलाया जा सकता है। टर्की प्रजातंत्र के प्रमुख को बड़ी ताक़त होती। राज-व्यवस्था में उस को जो अधिकार दिए गए हैं, उन के अनुसार वह किसी क़दर फ्रांस के और किसी क़दर स्विट्ज़रलैंड की फ़ेडरल कौंसिल के प्रमुख की तरह कहा जा सकता है। मगर ताक़त में इन दोनो देशों के प्रमुखों और अमेरिका प्रजातंत्र के प्रमुख से भी टर्की का प्रमुख ज़बरदस्त होता है। टर्की का प्रमुख व्यवस्थापक-सभा में सब से बड़े दल का नेता भी होता है; क्योंकि अपने दल की सहायता से ही व्यवस्थापक-सभा में वह चुना जाता है। राष्ट्र-सभा के बहुसंख्या दल का नेता होने से वह जैसा चाहे वैसा राष्ट्र-सभा को चला सकता है, मगर इस के अलावा राष्ट्र-सभा के अध्यक्ष को भी वही चुनता है। अस्तु, टर्की प्रजातंत्र के प्रमुख को चतुर्मुख की सत्ता होती है—प्रजातंत्र के प्रमुख की, मंत्रि-मंडल के प्रधान को नियुक्त करने वाला होने अर्थात् मंत्रि-मंडल के प्रमुख

की, उसी तरह राष्ट्र-सभा को प्रमुख की और राष्ट्र-सभा के सब से बड़े दल के प्रमुख की। अतएव जितनी उस को सत्ता होती है, उतनी किसी प्रजासत्तात्मक प्रजातंत्र के प्रमुख को दुनिया में नहीं होती है।

प्रजातंत्र का प्रमुख 'संचालकों की समिति' के प्रधान को नियुक्त करता है। 'संचालक' इंगलैंड के मंत्रियों की तरह होते हैं और उन के प्रधान की हैसियत इंगलैंड के प्रधान मंत्री के बराबर की होती है। प्रधान राष्ट्र-सभा के सदस्यों में से 'संचालकों' को चुन कर उन को अपने प्रोग्राम के सभा के सामने पेश करता है और अपनी नियुक्ति के एक सप्ताह के भीतर ही राष्ट्र-सभा से 'विश्वास का मत' माँगता है। अस्तु, 'संचालकों की समिति' ही टर्की का मंत्रि-मंडल होता है और उस के सदस्य सम्मिलित रूप से और अलग-अलग राष्ट्र-सभा को जवाबदार होते हैं।

राष्ट्र-सभा अनुभवी और खास बातों में दक्ष लोगों की एक 'कौंसिल ऑव स्टेट' भी चुनती है। यह सभा शासन-संबंधी प्रश्नों को तय करती है और ठेकों, रियायतों और सरकार की तरफ़ से पेश होने वाले मसविदों पर सरकार को सलाह देती है। संचालकों के बनाए हुए नियमों और हुक्मों को भी इस सभा की सलाह ले लेने के बाद जारी किया जाता है।

राजनैतिक दल और सरकार—टर्की में बस एक 'लोकदल' का ही तूती बोलता है। इस दल को मुस्तफ़ा कमाल पाशा ने सन् १९२३ ई० में बनाया था और इस दल ने सरकार पर क़ब्ज़ा जमा कर मुस्तफ़ा कमाल पाशा को एक तरह से टर्की का कर्ता-धर्ता बना दिया है। इटली और रूस की तरह टर्की में प्रजासत्तात्मक सरकार की धज्जियां खुल्लम-खुल्ला तो नहीं उड़ाई जाती हैं। मगर उन दोनों देशों की तरह टर्की में भी एक ही दल का राज है। अस्तु, सरकार का रूप प्रजासत्तात्मक होने पर भी मुस्तफ़ा कमाल का मुसोलनी और स्टेलिन की तरह बिल्कुल 'स्वाधीन शासक' की सत्ता है।

लोकदल का आज कल प्रधान टर्की का एक दूसरा प्रख्यात राजनीतिज्ञ इस्मत-पाशा है। इस दल की शाखाएं और क्लब टर्की के सारे प्रांतों में फैले हुए हैं और यह दल टर्की की कायापलट करने में वैसा ही संलग्न है जैसा कि इटली का फ़ेसिस्ट और रूस का समष्टिवादी दल। यह दल कट्टर राष्ट्रीयता और आधुनिक विचारों को मानने वाला है। टर्की का सुलतान हमेशा से दुनिया भर के मुसलमानों का खलीफ़ा माना जाता था। मगर इस दल की मदद से मुस्तफ़ा कमाल पाशा ने धर्मांध मुसलमानों के चीखने-चिल्लाने की कुछ परवा न कर के मार्च सन् १९२४ ई० में ही टर्की के कंधों से खिलाफ़त का जुआ उतार कर फेंक दिया था, उसी प्रकार उस ने शिक्षा-विभाग को मुल्लों के पंजों से निकाल कर शिक्षा-मंत्री और धार्मिक अदालतों को न्याय-मंत्री के अधिकार में रख दिया था और 'पाक क़ानून' की व्याख्या करने वाले शेखुल इस्लाम को मंत्रि-मंडल से ही निकाल दिया था। इस दल के हाथ में टर्की की सरकार आने के समय से बराबर यह दल टर्की को यूरोप के दूसरे आधुनिक राष्ट्रों के बराबर प्रगतिशील बनाने का प्रयत्न कर रहा है। पर्दा-नशीन औरतों के मुँह पर से क़ानूनों के द्वारा बुर्क़ा उतार कर फेंक दिया गया है, जिस के

कारण स्त्रियों को भी मैदान में आ कर टर्की के निर्माण में हिस्सा लेने का मौक़ा मिला है। तुर्की भाषा की लिपि तक बदल दी गई है। आधुनिक टर्की का निर्माता मुस्तफ़ा कमाल अपने लोकदल की फ़ौलादी कैंची से काट-छाँट कर मुर्झाए हुए टर्की को हर प्रकार से चमन बनाने का बड़ा प्रयत्न कर रहा है। मगर इस होशियार बाग़बान के बाद भी लोकदल और टर्की की सरकार का न मालूम यही रूप रहेगा या नहीं।

अल्बानिया की सरकार

सन् १६१२ ई० तक अल्बानिया टर्की के अधीन था। २८ नवंबर, सन् १६१२ ई० को भयंकर लड़ाई के बाद अल्बानिया ने टर्की से अपना पल्ला छुड़ा लिया था। मगर उस के स्वाधीन होते ही लालची बाल्कन रियासतें, अल्बानिया को आपस में बाँटने का प्रयत्न करने लगीं थीं जिस के परिणाम-स्वरूप बाल्कन युद्ध हुआ था और बाद में आस्ट्रिया, हंगरी और इटली के बीच में पड़ने से अंत में अल्बानिया की स्वाधीनता सब ने क़बूल कर ली थी। अंतर्राष्ट्रीय संरक्षण में अल्बानिया को एक स्वतंत्र रियासत जुलाई सन् १६१३ में घोषित किया गया था और बाद में वीड के शाहज़ादा विलियम को उस का मौरूसी राजा बना दिया गया था। मगर टर्की, बाल्कन रियासतों, और दूसरे राष्ट्रों के षड्यंत्रों के कारण विलियम का राज न चल सका और एक साल के भीतर ही वह राज-त्याग कर के चला गया। उस के चले जाने के बाद अल्बानिया बहुत-से स्वतंत्र भागों में बँट गया। पिछली यूरोप की लड़ाई में यूनानी, इटालियन, मोंटेनेग्रिन, सर्ब, आस्ट्रिया, हंगेरियन, बल्गेरियन और फ्रेंच सेनाओं का अल्बानिया पर अधिकार रहा। अस्थायी संधि होने के समय अल्बानिया के अधिकतर भाग पर इटली का और बाक़ी भाग पर फ्रांस और यूगोस्लाविया का क़ब्ज़ा था। फिर भी एक अस्थायी सरकार की घोषणा कर दी गई थी जो इटली के सहकार से काम करना चाहती थी। ईसाइयों के दो पंथों के दो आदमी ले कर चार सदस्यों की एक 'राज्य-प्रतिनिधि समिति' भी नियुक्त कर दी गई थी।

संधि-सम्मेलन में राष्ट्रों का अल्बानिया को बाँट लेने का इरादा देख कर अल्बानिया में राष्ट्रीयता की लहर उठ खड़ी हुई और अल्बानिया के लोगों ने 'राज्य-प्रतिनिधि समिति' के नीचे एक 'राष्ट्रीय सरकार' क़ायम कर ली। उन्हों ने क्रांति कर के इटालियनों और फ्रांसीसियों को भी सन् १९२० ई० में अल्बानिया से हट जाने के लिए मजबूर कर दिया। मगर यूगोस्लाव सन् १९२१ ई० तक नहीं हटे और उन्हों ने उत्तरी अल्बानिया पर भी क़ब्ज़ा जमाने की कोशिश की, जिस पर 'लीग ऑव नेशंस्' ने हस्तक्षेप कर के राष्ट्रों से कुछ परिवर्तनों के साथ युद्ध के पूर्व की अल्बानिया की सीमाओं को मंज़ूर करा लिया। मगर अल्बानिया की सीमाओं का आख़िरी फ़ैसला सन् १९२६ ई० में ही एक समझौते से हो पाया था। आख़िरकार पहली सितंबर, सन् १९२८ ई० को अहमद बे ज़ोगू प्रथम को अल्बानिया का मौरूसी राजा घोषित कर के अल्बानिया को यूरोप के दूसरे स्वाधीन राष्ट्रों की तरह एक स्वाधीन राष्ट्र घोषित कर दिया गया था। अल्बानिया राष्ट्र की राज व्यवस्था के अनुसार अल्बानिया में मौरूसी प्रजासत्तात्मक और व्यवस्थापकी राजाशाही है। राज-व्यवस्था के संशोधन का प्रस्ताव राजा और व्यवस्थापक-सभा दोनों की ओर से आ सकता है। मगर राज-व्यवस्था के संशोधन का काम हर ७५०० की आबादी के लिए एक प्रतिनिधि के हिसाब से चुना हुआ एक व्यवस्थापक-सम्मेलन ही कर सकता है।

सरकार—क़ानून बनाने की सत्ता राजा और एक सभा की एक व्यवस्थापक-सभा में है, जिस के सदस्यों को १५००० की आबादी के लिए एक प्रतिनिधि के हिसाब से प्रजा चुनती है। राष्ट्र की कार्यकारिणी सत्ता राजा और सात मंत्रियों के एक मंत्रि-मंडल में होती है। न्याय-शासन व्यवस्थापक-सभा और कार्यकारिणी से अलग राजा के नाम पर होता है। राजा राष्ट्र की सेनाओं का सेनाधिपति माना गया है। सेना-विभाग के अतिरिक्त राजा के सारे फ़रमानों पर प्रधान मंत्री और एक मंत्री के दस्तख़त होते हैं। टर्की की तरह बारह सदस्यों की एक 'कौंसिल ऑव् स्टेट' भी होती है। तीन अल्बानियन दो अँग्रेज़ और एक इटालियन, छः सदस्यों की, सिर्फ़ राजा को जवाबदार, एक 'राजमहल की मंत्रि-मंडली' भी होती है।

बलगेरिया की सरकार

राज-व्यवस्था—सन् १९०८ ई० तक बलगेरिया भी टर्कों के अधीन एक रियासत थी, जिस को एक हद तक अपने शासन की स्वतंत्रता थी। सन् १९०८ ई० के बाद से बलगेरिया भी एक स्वाधीन राष्ट्र हो गया। उस की राज-व्यवस्था पुरानी सन् १८७९ ई० की राज-व्यवस्था पर बनी है, जिस में सन् १८९३ ई० और सन् १९०१ ई० में बहुत-से फेरफार किए गए थे। सन् १८७९ ई० की राज-व्यवस्था काफ़ी उदार थी, मगर प्रजा के प्रतिनिधियों की सेब्रान्ये नाम की राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा को वास्तव में बहुत कम सत्ता रहती थी। बालकन युद्धों की प्लेग के कारण भी बलगेरिया को शांतिमय राजनैतिक जीवन बिताने का मुश्किल से ही समय रहता था। सन् १८८७ ई० तक बलगेरिया पर रूस का अधिकार रहने से बलगेरिया की व्यवस्थापक-सभा के नेताओं को एक स्वतंत्र राष्ट्रीय नीति बनाना असंभव था। फिर राज-व्यवस्था में राजा की सत्ता बढ़ा देने के बाद राजा की सारी सत्ता का प्रयोग व्यवस्थापक-सभा में विरोधी दलों को कुचलने में किया जाने लगा था।

व्यवस्थापक-सभा—अल्बानिया की तरह बलगेरिया में भी सिर्फ़ एक सभा की एक राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा है, जिस को सेब्रान्ये कहते हैं। इस राष्ट्रीय सभा में क़रीब २७४ सदस्य होते हैं; जिन को बलगेरिया के सारे मर्द नागरिक चुनते हैं। सदस्यों की उम्र कम से कम तीस वर्ष की होती है, और उन को चार वर्ष के लिए चुना जाता है। राष्ट्रीय सभा को क़ानून बनाने और आय-व्यय के तथा कार्यकारिणी के हुक्मों पर नियं-

सभा के सारे अधिकार होते हैं। सारे मसविदे और प्रस्ताव राष्ट्रीय सभा के सामने पेश किए जाते हैं। सभा को शासन की जाँच-पड़ताल करने के लिए उपसमितियां नियुक्त करने और सरकार से प्रश्न पूछने का हक़ होता है। सभा की साधारण बैठक के अतिरिक्त, ज़रूरत पड़ने पर खास बैठकें भी होती हैं।

राज-व्यवस्था में फेरफार करने और राजछत्र के अधिकार-संबंधी नियम बनाने के लिए एक खास राष्ट्रीय सभा बैठती है, जिस को राष्ट्रीय सभा की तरह ही चुना जाता है। बस, इतना फ़र्क़ होता है कि राष्ट्रीय सभा के एक निर्वाचन-क्षेत्र से एक के बजाय दो प्रतिनिधि आते हैं।

कार्यकारिणी—बलगेरिया राष्ट्र की कार्यकारिणी की सारी सत्ता का केंद्र राजछत्र माना गया है। सन् १९११ ई० तक राजा, बलगेरिया के प्रतिनिधि की हैसियत से दूसरे राष्ट्रों से संधियां कर सकता था, मगर उन संधियों की आख़िरी मंज़ूरी के लिए राष्ट्रीय-सभा की मंज़ूरी की ज़रूरत होती थी। सन् १९२१ ई० में सभा की मंज़ूरी की क़ैद सभा की राय से ही हटा ली गई। राजा को मंत्रियों के द्वारा क़ानूनी मसविदे और प्रश्न राष्ट्रीय-सभा में पेश करने का अधिकार होता है। राष्ट्रीय-सभा में मंज़ूर किए गए सारे मसविदों को क़ानून बनाने के लिए राजा की मंज़ूरी की ज़रूरत होती है। व्यवस्थापक-सभा को भंग करने का हक़ भी राजा को होता है। राज-व्यवस्था के अनुसार राजा और व्यवस्थापक-सभा या मंत्रि-मंडल और व्यवस्थापक-सभा में भयंकर झगड़ा होने पर ही राजा व्यवस्थापक-सभा को भंग कर सकता है, मगर कौन-सा झगड़ा भयंकर है और कौन-सा नहीं। इस का फ़ैसला राजा और मंत्रि-मंडल करता है। अस्तु, व्यवस्थापक-सभा की ज़िंदगी बहुत हद तक कार्यकारिणी की कृपा पर निर्भर रहती है। सभा भंग होने के दो मास के भीतर ही नया चुनाव हो जाता है। देश के भीतर या बाहर से ख़तरा उत्पन्न हो जाने पर और व्यवस्थापक-सभा की बैठकें बुलाना असंभव हो जाने पर राजा को सारे प्रश्नों का फ़ैसला करने, क़ानून बनाने और सारा शासन का काम-काज चलाने का, राज-व्यवस्था के अनुसार हक़ माना गया है, मगर ऐसी हालत में राजा प्रजा पर नए कर नहीं लगा सकता है तथा मंत्रि-मंडल की राय राजा के कामों से मिलनी चाहिए और मंत्रि-मंडल को राजा के सारे कामों की जवाबदारी अपने सिर पर ले लेनी चाहिए। फिर भी जितनी जल्दी मुमकिन हो उतनी जल्दी मंत्रि-मंडल को अपने सारे काम व्यवस्थापक-सभा के सामने मंज़ूरी के लिए रख देने चाहिए।

मंत्रि-मंडल के सदस्यों और प्रधान मंत्री को राजा नियुक्त करता है। यह मंत्री सम्मिलित रूप से और अलग-अलग राष्ट्र-सभा को जवाबदार होते हैं। मंत्रियों के राजा के हर फ़रमान पर दस्तख़त रहते हैं और इस लिए वह क़ानूनी और राजनैतिक तौर पर राजा और व्यवस्थापक-सभा दोनों को जवाबदार होते हैं।

स्थानिक शासन—बलगेरिया में स्थानिक-शासन बिलकुल फ़्रांस के ढंग पर होता है। केंद्रीय सरकार के नियुक्त किए हुए प्रीफ़ेक्ट के अधीन डिपार्टमेंट का शासन एक

स्थानिक चुनी हुई समिति की सलाह से होता है। उसी प्रकार ज़िलों का नायब प्रीफ़ेक्ट शासन चलाते हैं। सब से छोटा शासन-क्षेत्र कम्यून होती है। जिस में लगभग बिल्कुल पंचायती शासन चलता है और जो राष्ट्र के राजनैतिक जीवन की इकाई और बुनियाद होती है।

राजनैतिक दल—बलगेरिया के लोग हमेशा से बेचैन तबियत के हैं, मगर पिछली लड़ाई में और उस से पहले की कई लड़ाइयों में भी बलगेरिया का बुरा हाल हो जाने से वहां के लोगों में और भी अधिक अशांति और असंतोष फैला था, जिस के फलस्वरूप इस देश में समाजवादी, समष्टिवादी और किसानवादी गरम विचारों की जैसी हवा बही, वैसी यूरोप के दक्षिण-पूर्व के और किसी देश में नहीं बही।

लड़ाई खत्म होने के बाद एक बहादुर और होशियार किसान ऐलेक्ज़ेंडर स्टांबूलिस्की की अध्यक्षता में किसान-दल ने बलगेरिया में बहुत ज़ोर पकड़ा था। दो बार प्रयत्न करने पर भी जब कई दल की सरकार न चल सकी, तो किसान-दल ने व्यवस्थापक-सभा भंग करा के नया चुनाव कराया, जिस में उन्हें छोटी-सी संख्या व्यवस्थापक-सभा में मिल गई थी। मगर इस दल के हाथ में सत्ता आते ही राजनैतिक दलों की भयंकर कलह शुरू हो गई और स्टांबूलिस्की और उस का दल इस रार में और भी कट्टर बन गया। उन्हों ने समाज-सुधारों के एक गरम कार्य-क्रम पर अमल करना और गाँवों को शहरों के खिलाफ़ उभाड़ना शुरू कर दिया, जिस से कुछ ही समय में इस दल ने दूसरे सारे राजनैतिक दलों, अखबारों और धंधा-पेशा लोगों को अपना दुश्मन बना लिया। स्टांबूलिस्की का समाज-सुधार का कार्य-क्रम तो अच्छा था, मगर उस का शासन का ढंग अच्छा नहीं था। उस ने सारे पुराने दलों के भूतपूर्व मंत्रियों को पकड़ कर उन पर लड़ाई छेड़ने के इलज़ाम के लिए एक खास अदालत के सामने अभियोग भी चलाया था। इस दल का फ़ेसिस्टों की तरह अपना एक अलग 'नारंजी दल' था और कहा जाता है कि यह दल बलगेरिया के राजा ज़ार बोरिस को गद्दी से उतार फेंकने की तैयारी कर रहा था। स्टांबूलिस्की की 'चालीस वर्ष तक गाँवों का राज क़ायम रखने' के इरादे की शेखी और उस के दल अंड-बंड कामों के विरुद्ध बलगेरिया के सभी दलों ने खास कर शिक्षितवर्ग ने आवाज़ उठाई। मगर स्टांबूलिस्की ने चुनाव के नए क़ानून बना कर विरोधियों का वैध आंदोलन तक करना असंभव कर दिया, जिस के फलस्वरूप गुप्त षड्यंत्र-कारी आंदोलन बढ़ने लगा। आखिरकार अध्यापकों और सेना के अधिकारियों के एक गुट्ट ने लगभग सारे शिक्षितवर्ग और सेना की सहायता से स्टांबूलिस्की की सरकार को ९ जून, सन् १९२३ ई० को उखाड़ कर फेंक दिया और प्रोफ़ेसर ऐलेक्ज़ेंडर ज़ानकौफ़ की अध्यक्षता में एक प्रकार की अर्ध-निरंकुश सरकार की स्थापना कर दी। जहां-तहां किसानों ने अपने दल की सत्ता क़ायम रखने के लिए हथियार उठाए, मगर उन को शीघ्र ही दबा दिया गया। स्टांबूलिस्की को बुरी तरह क़त्ल कर डाला गया।

इस के बाद भी बलगेरिया में शांति नहीं हुई। बहुत दिनों तक इधर-उधर मार-काट होती रही। सितंबर सन् १९२३ ई० को समष्टिवादियों की, जिन की बलगेरिया

में बहुत काफ़ी संख्या थी, क्रांति हुई और उस को भी भयंकर क्रूरता से कुचल दिया गया। फिर ज़ानकौफ़ सरकार के पक्षपाती सारे मध्यम-वर्ग के पुराने दलों ने मिल कर एक 'प्रजासत्तात्मक मैत्री' नाम की दलों की एक संघ का संगठन किया, जिस को बड़ी मार-काट के बाद दूसरे चुनाव में आखिरकार व्यवस्थापक-सभा में बहुसंख्या मिल गई।

मगर दूसरे वर्ष भी हत्याओं और क़त्लों की भरमार जारी रही। किसानों और समष्टिवादियों की 'संयुक्त सामना' नाम की एक संस्था ने ख़ास कर सरबिया के प्रवासियों की सहायता से बलगारिया में षड्यंत्रकारी आंदोलन जारी रक्खा। इस संस्था का इरादा ज़ानकौफ़ सरकार को उलट देना था। इसी संस्था की ओर से नववर्ष के दिन, बलगेरिया की राजधानी सोफ़िया का मुख्य क्लब, जिस में उसी दिन सरकारी अफ़सरों, अध्यापकों और मंत्रियों की एक भीड़ आनंदोत्सव मना रही थी और स्वयं राजा भी गया हुआ था, उड़ा देने का प्रयत्न किया गया था। दूसरी बार एक पहाड़ी रास्ते पर राजा की मोटर पर हमला किया गया था, जिस में राजा तो बच गया था, मगर उस के एक नौकर की जान चली गई थी। मगर इस संस्था की सब से भयंकर करतूतों में ईस्टर के दिन सोफ़िया के एक गिरजेघर को उड़ा देना था, जिस में एक सैनिक अफ़सर की मृतक-क्रिया में—जिस को कम्यूनिस्टों ने मार डाला था—भाग लेने वाले १५० आदमी ख़त्म हो गए थे। कहा जाता है कि इस गिरजाघर को कम्यूनिस्टों ने उड़ाया था। कुछ भी हो, इस घटना के बाद से सरकार की ओर से भयंकर अत्याचार शुरू हुआ, और किसान और समष्टिवादी दलों के नेताओं की बुरी तरह से जानें ले ली गईं। क़ानून बना कर बलगेरिया में समष्टिवाद तक को ग़ैरक़ानूनी करार दे दिया गया; परंतु इन षड्यंत्रों, क़त्लों और अत्याचारों से थक कर, बाद में ज़ानकौफ़ मंत्रि-मंडल के पक्षपाती दलों ने स्वयं इस मंत्रि-मंडल के हाथ से सरकार की बागडोर ले ली और जनवरी सन् १९२६ ई० में ऐंड्रा लियापचेफ़ को नए मंत्रि-मंडल का भार सौंपा। ऐंड्रालियापचेफ़ ने अहिंसात्मक और षड्यंत्रों में भाग न लेने वाले लोगों का एक मंत्रि-मंडल तैयार किया। उस की नीति धीरे-धीरे शांतिमय और नरम उपायों से परिस्थिति को ठीक करने की थी। मगर उस के समर्थकों में मेल न होने और उस का व्यवस्थापक-सभा में बहुत विरोध होने से सन् १९३१ ई० के चुनाव में इस मंत्रि-मंडल की भी हार हो गई थी, और आखिरकार उदार-दल, प्रजासत्तात्मक दल, किसान दल और गरम दल के सदस्यों में से प्रजासत्तात्मक दल के नेता एम० मेलीनौफ़ ने चार दलों का नया मंत्रि-मंडल रचा था।

बलगेरिया के मुख्य राजनैतिक दलों में एक 'राष्ट्रीय उदार दल' और 'उदार दल' दोनों को मिला कर 'उदार दल' है। यह दल पुराने दलों के मेल से बना था। दूसरा 'प्रजासत्तात्मक मैत्री' नाम का दल है, जो स्टांबूलिस्की को निकालने के बाद बहुत-से दलों को मिला कर बना था और जिस के मंत्रि-मंडल की सन् १९३१ ई० में हार हो गई थी। इस दल का कार्य-क्रम सरकार की सत्ता बढ़ाना, सरकारी ख़र्च कम करना, शिक्षा में सुधार करना और पड़ोस के राष्ट्रों से मिल-जुल कर रहना है। आजकल यह दल सरकार के विरोधी दलों में से मुख्य दल है।

तीसरा 'प्रजासत्तात्मक दल' है जिस के हाथ में सन् १९०९-११ और १९१८ से १९१९ तक सरकार थी। यह दल न तो बिल्कुल गरम ही है और न बिल्कुल नरम ही। इसी दल के नेता मेलीनौफ़ ने 'प्रजासत्तात्मक मैत्रीदल' की हार हो जाने पर सन् १९३१ में प्रधान मंत्री बन कर नया मंत्रि-मंडल बनाया था। यह दल सब दलों के मिलने और देश में शांति क़ायम करने का पक्षपाती है। चौथा एक 'गरम दल' है जिस की सन् १९०६ ई० में प्रजासत्तात्मक दल से निकले हुए लोगों को ले कर ज्ञानकौफ़ ने स्थापना की थी। इस दल का कार्य-क्रम सहकारी संस्थाओं की रक्षा करना, करों में सुधार करना और बाल्कन राष्ट्रों की एक संघ बनाना है। इस दल का भी एक सदस्य मेलीनौफ़ मंत्रि-मंडल में था। पाँचवां एक 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' है इस की स्थापना सन् १८९३ ई० में हुई थी और दूसरे इसी नाम के यूरोपीय दलों की तरह यह दल शांतिमय उपायों से समाजशाही स्थापित करने में विश्वास रखता है। इसी दल के गरम लोगों ने अलग हो कर १९०३ में एक अलग दल बना लिया था, जो सन् १९१८ ई० में 'कम्यूनिस्ट दल' कहलाने लगा था।

छठा दल 'किसान दल' है जिस की स्थापना सन् १८९९ ई० में हुई थी। उस की लड़ाई के बाद एकदम ताक़त बढ़ जाने और उस के नेता स्टांबूलिस्की का हाल पाठकों को बताया ही जा चुका है। यह दल खेती की रक्षा करने और किसानों की ताक़त बढ़ाने में विश्वास रखता है। स्टांबूलिस्की की हार के बाद इस दल में दो नेताओं की अध्यक्षता में हिंसा की विरोधी दो शाखाएं भी बन गई हैं। इन दलों के अलावा सातवां एक 'मज़दूर दल' भी है जो सन् १९२४ में 'कम्यूनिस्ट दल' ग़ैरक़ानूनी ठहरा दिए जाने पर इस नए नाम से उठ खड़ा हुआ है। इस दल की नीति और प्रोग्राम बिल्कुल पुराने 'कम्यूनिस्ट दल' का-सा ही है।

यूनान की सरकार

राज-व्यवस्था—पंद्रहवीं सदी के उत्तरार्द्ध से यूनान टर्की का एक प्रांत बन गया था, मगर उन्नीसवीं सदी में क्रांति कर के यूनान ने टर्की से अपनी स्वाधीनता छीन ली थी। क्रांति के ज़माने में फ्रांस की तरह कई राज-व्यवस्थाएं यूनान के लिए बनाई और बिगाड़ी गईं थीं, और किसी पर भी अमल नहीं हो पाया था, मगर यूरोपीय राष्ट्रों की लंदन में होने वाली सन् १८३० ई० की कांफ्रेंस में इंग्लैंड, फ्रांस और रूस के संरक्षण में यूनान एक स्वाधीन राष्ट्र क़रार दे दिया गया था। बवेरिया के राजकुमार ओटो को यूनान ने सन् १८३२ ई० की संधि में अपना राजा स्वीकार कर लिया था, और २५ जनवरी, सन् १८३३ ई० में वह यूनान के तख़्त पर बैठ गया था। उस ने ग्यारह वर्ष तक बिना किसी निश्चित राज-व्यवस्था के, सिर्फ़ एक सलाहकार समिति की राय से राज-काज चलाया था, मगर सन् १८४३ ई० में यूनान में फिर क्रांति हो जाने पर राजधानी एथेन्स में एक व्यवस्थापक-सम्मेलन की बैठक बुलाई गई थी, जिस ने बेल्जियम और फ्रांस की सन् १८३० ई० की राज-व्यवस्था के नमूने पर यूनान के लिए एक राज-व्यवस्थापक व्यवस्था गढ़ कर फ़रवरी सन् १८४४ ई० में मंज़ूर की थी।

सन् १८६२ ई० में यूनान से राजा ओटो को निकाल दिया गया और उस के स्थान पर डेनमार्क के शाहज़ादा जार्ज को यूनान की गद्दी पर प्रथम राजा जार्ज के नाम से बिठा दिया गया था। दूसरे साल जिस राष्ट्रीय सम्मेलन ने जार्ज को गद्दी पर बिठाया था, उसी ने पुरानी राज-व्यवस्था की पुनर्घटना कर के अक्तूबर सन् १८६४ ई० में यूनान के लिए एक नई प्रजासत्तात्मक राज-व्यवस्था मंज़ूर की। इस राज-व्यवस्था के

अनुसार यूनान में एक व्यवस्थापकी वैध और मौरूसी राजाशाही मानी गई थी, यूनान के राजा को क़रीब-क़रीब इंग्लैंड के राजा का-सा स्थान दिया गया था। राज-व्यवस्था के एक अध्याय में प्रजा के अधिकारों का एलान था। राष्ट्र की प्रभुता राष्ट्र की प्रजा में मानी गई थी। क़ानून बनाने की सत्ता, राजा और व्यवस्थापक-सभा में मानी गई थी। कार्यकारिणी की सत्ता राजा को थी, मगर वह उस का प्रयोग सिर्फ़, व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार, मंत्रियों के द्वारा ही कर सकता था। न्याय-शासन राजा के नाम पर स्वतंत्र न्यायाधीश करते थे। व्यवस्थापक-सभा की सिर्फ़ एक सभा थी, जिस को सोलह सौ की आबादी के लिए एक प्रतिनिधि के हिसाब से चार वर्ष के लिए यूनान देश के सारे नागरिक चुनते थे। सन् १९११ ई० में इस राज-व्यवस्था में संशोधन कर के व्यवस्थापक-सभा की एक दूसरी सभा की तरह 'कौंसिल ऑव स्टेट' भी स्थापित की गई थी, जिस के तमाम क़ानूनी प्रस्तावों को जाँचने और ग़ैरक़ानूनी सरकारी फ़ैसलों को रद्द कर देने का अधिकार दिया गया था।

मगर यूनान भी बलगारिया की तरह क्रांतियों, घरेलू कलह और झगड़ों और विदेशों के आक्रमणों और कूटनीति तथा मार-काट का शिकार रहा है। इन लगातार प्रहारों से, १८६४ की स्थापित यूनान की राजाशाही बिल्कुल जर्जर बन गई थी। अस्तु, इस राष्ट्र की कमज़ोर सरकार पिछली लड़ाई के तूफ़ान से बच कर निकल आती तो बड़े अचंभे की बात होती। सन् १९२१ ई० तक किसी प्रकार पुरानी राज-व्यवस्था चली। सन् १९२३ ई० के चुनाव में व्यवस्थापक-सभा के ४०१ सदस्यों में से ३७० सदस्य प्रजातंत्रवादी वेनेज़ेलोस के दल के सदस्य चुन कर आए। उन्हों ने मार्च सन् १९२४ में राजाशाही को खत्म कर के यूनान के प्रजातंत्र राष्ट्र हो जाने की घोषणा कर दी और अप्रैल में प्रजा ने अपने मतों से व्यवस्थापक-सभा के इस निश्चय का समर्थन किया। फिर इसी व्यवस्थापक-सभा ने यूनान प्रजातंत्र की नई राज-व्यवस्था रची जो २६ सितंबर, सन् १९२६ ई० को मंज़ूर हो जाने के बाद जारी कर दी गई। सन् १९२६ ई० में चुनी जाने वाली व्यवस्थापक-सभा ने उस पर फिर विचार किया और जून सन् १९२७ ई० में वह अंतिम रूप में छाप दी गई। यह राज-व्यवस्था अंग्रेज़ी, फ़्रांसीसी और बेलजियम की राज-व्यवस्थाओं के सिद्धांतों पर गढ़ी गई है। मगर इस राज-व्यवस्था के अनुसार प्रजातंत्र का रूप बदलने के बारे में कोई संशोधन पेश नहीं हो सकता है।

व्यवस्थापक-सभा—यूनान राष्ट्र की प्रजा की प्रभुता इस राष्ट्र की व्यवस्थापक-सभा में मानी गई है। क़ानून बनाने की सत्ता व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाएं—एक 'प्रतिनिधि-सभा' और दूसरी 'सिनेट'—में रक्खी गई है। 'प्रतिनिधि-सभा' में कम से कम दो सौ और अधिक से अधिक ढाई—सौ सदस्य होते हैं। सभा के लिए उम्मीदवारों की उम्र कम से कम २५ वर्ष की होनी चाहिए और उन का चुनाव चार साल के लिए यूनान के सारे बालिग़ मर्द नागरिक करते हैं। 'सिनेट' में १२० सदस्य होते हैं, जिन में से ९२ सदस्यों को प्रजा चुनती है। हर ६८९४० जन-संख्या की आबादी के एक निर्वाचन-क्षेत्र से सिनेट का एक सदस्य चुना जाता है। सिनेट के दस सदस्यों को प्रति-

निधि-सभा और सिनेट मिल कर चुनती है, और अठारह सदस्यों को व्यापारी, तिजारती, उद्योगी और वैज्ञानिक संस्थाओं के मंडल चुनते हैं।

साधारण क़ानूनी मसविदे व्यवस्थापक-सभा में सरकार और सदस्यों की ओर से पेश हो सकते हैं। मगर आर्थिक मसविदे सिर्फ़ सरकारी सदस्य ही पेश कर सकते हैं। 'प्रतिनिधि-सभा' से आने वाले मसविदे पर 'सिनेट' को अपना मत चालीस दिन के अंदर दे देना पड़ता है। 'सिनेट' को 'प्रतिनिधि-सभा' के मसविदों को बदलने और नामंज़ूर करने का अधिकार होता है। यदि 'प्रतिनिधि-सभा' अपने मसविदे को जैसा का तैसा ही पास करने पर अड़ जाती है तो दो महीने तक चुप रह कर बहुसंख्या से फिर 'प्रतिनिधि-सभा' में मसविदा पास हो जाने पर, क़ानून बन जाता है, और सिनेट के विरोध का उस पर कुछ असर नहीं होता है; परंतु 'सिनेट' की माँग पर दो महीने का समय बीतने के पहले दोनों सभाओं की एक सम्मिलित बैठक में मसविदे पर विचार हो कर, सारे सदस्यों की बहुसंख्या से भी फ़ैसला किया जा सकता है। राष्ट्रीय बजट 'प्रतिनिधि-सभा' में पेश होता है, और 'सिनेट' को उस पर अपनी राय एक मास के अंदर ज़ाहिर कर देनी पड़ती है, उस के बाद 'प्रतिनिधि-सभा' में बजट की आख़िरी सूरत सभा की साधारण बहुसंख्या से तय की जाती है। यूनान की राज-व्यवस्था की ४६ वीं धारा में क़ानून बनाने के ज़ाब्ते की सारी तफ़सीलों का जितना ज़िक्र किया गया है, उतना किसी दूसरी राज-व्यवस्था में नहीं है।

यूनान का मंत्रि-मंडल व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार होता है। फ़्रांस की तरह यूनान में भी क़ानूनी और शासन के प्रश्नों का विचार करने के लिए व्यवस्थापक-सभा की समितियां रहती हैं। व्यवस्थापक-सभा के सामने आने से पहले सारे क़ानूनी मसविदों पर वह समितियां विचार कर लेती हैं। व्यवस्थापक-सभा की एक 'परराष्ट्र विषय समिति' भी होती है। शासन की जाँच-पड़ताल के लिए ख़ास तौर पर सभा जाँच-समितियां भी नियुक्त कर सकती है।

कार्यकारिणी—कार्यकारिणी की सत्ता फ़्रांस की तरह प्रजातंत्र के प्रमुख में मानी गई है और यूनान के प्रमुख को भी फ़्रांस के प्रमुख के मुक़ाबले के अधिकार होते हैं। व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाएं एक सम्मिलित-सभा में सारे सदस्यों की कम से कम ३/५ संख्या की हाज़िरी और हाज़िर सदस्यों की आधी से अधिक संख्या के मतों से यूनान प्रजातंत्र के प्रमुख का पाँच वर्ष के लिए चुनाव करती हैं। पहली बार मत पड़ने पर कोई न चुना जाने पर सब से अधिक मत पाने वाले उम्मीदवारों के लिए दूसरी और तीसरी बार तक मत पड़ते हैं। एक काल पूरा हो जाने पर फ़ौरन ही दूसरे काल के लिए कोई प्रमुख नहीं हो सकता है। प्रमुख का कोई हुक्म बिना किसी जवाबदार मंत्री की सही के बाक़ायदा नहीं होता है। व्यवस्थापक-सभा के क़ानूनों को उलटने या नामंज़ूर करने का हक़ प्रमुख को नहीं होता है। व्यवस्थापक-सभा की बैठकें न होने पर प्रमुख—अगर सभा ने उस को यह अधिकार सौंपा है तो—फ़रमानी क़ानून भी जारी कर सकता है, जिस को फ़ौरन ही दोनों सभाओं के सदस्यों की 'मिश्रित समितियां' मंज़ूर कर लेती हैं।

मंत्रि-मंडल के सदस्य प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में प्रमुख के सारे और एलानों के लिए व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार होते हैं। यूनान में मंत्रि-मंडल की कार्रवाई भी इंग्लैंड के मंत्रि-मंडल की तरह चलती है। प्रतिनिधि-सभा के विश्वास पर मंत्रि-मंडल की ज़िंदगी निर्भर रहती है। सरकार की आम नीति के लिए मंत्री सम्मिलित रूप से और अपने विभागों के लिए अलग-अलग प्रतिनिध-सभा को जवाबदार होते हैं।

राजनैतिक दल और सरकार—ऊपर की राज-व्यवस्था यूनान में क़ायम तो है, मगर काम बिल्कुल भिन्न व्यवस्था पर चलता है; क्योंकि ऊपर की राज-व्यवस्था बनने के समय से बराबर यूनान में अशांति और मार-काट मची रहती है। राजनैतिक नेताओं की व्यक्तिगत एक दूसरे से स्पर्द्धा और सैनिकों और खेवटों के झगड़ों के कारण, एक के बाद दूसरी सरकारें जल्दी-जल्दी बदलती रहती हैं। सन् १९२५ ई० में पंगेलोस नामक एक सेनापति ने तलवार के ज़ोर से सरकार पर अपना अधिकार जमा कर राष्ट्रीय व्यवस्थापक-सभा को भंग कर दिया था। उस ने यूनान के लिए शुद्ध शासन और नई व्यवस्थापक-सभा के चुनाव का वादा किया था, मगर उस के एवज़ में मार्शल ला और अख़बारों पर सरकारी देख-रेख क़ायम कर दी थी। अस्तु, फिर यूनान में क्रांति हुई। पंगेलोस भाग गया, और पुरानी राज-व्यवस्था फिर क़ायम हुई।

यूनान के मुख्य राजनैतिक दलों में एक 'लोक-दल' है, जो व्यवस्थापकी सरकार की पुनःस्थापना, कृषि और व्यापार की उन्नति, उद्योगों को सरकारी सहायता, मालिकों और मज़दूरों में संघीय सहकार और मज़दूरों के बुढ़ापे के बीमे का पक्षपाती है। पिछले चुनाव में इस के १९ सदस्य प्रतिनिधि-सभा में चुने गए थे। दूसरा कृषि-हितों का पक्षपाती एक 'कृषि-दल' है। अनुदार प्रजातंत्रवादियों और प्रगतिशील उदार लोगों का एक 'उदार संघ' नामक दल है। अनुदार प्रजातंत्रियों की संख्या बहुत कम है। प्रगतिशील उदारों का नेता वेनीज़ेलोज़ है और उन का कार्य-क्रम शासन का अधिकार विभाजन[1] क़ानून बनाने के लिए व्यवस्थापक-सभा के बड़े-बड़े कमीशनों की स्थापना, आर्थिक पुर्नघटना, कृषि-उन्नति, उद्योग को काफ़ी सरकारी सहायता और सरकारी ख़र्च में कमी करना है।

दूसरा एक 'प्रजातंत्र संघ' नाम का दल है, जो पहले 'उदार दल' का गरम अंग था और जिस के सदस्यों को सन् १९२२ ई० में प्रजातंत्र के पक्षपाती होने के कारण जेलों की हवा खानी पड़ी थी। सन् १९२३ ई० में पहली बार इस दल के नाम में बाक़ायदा प्रजातंत्र शब्द जुड़ा था, तब से यह दल प्रजातंत्र का मुख्य सहारा रहा है। इस दल का कार्य क्रम यूनान की आम पैदावार बढ़ाना और मज़दूर पेशावर्ग को उठाना है। इस के अतिरिक्त एक 'समष्टिवादी दल' और दूसरा एक 'आज़ादराय दल' भी है। 'आज़ादराय दल' पुराने 'राजापक्षी दल' का अंग है और पूँजी और व्यक्तिगत मिलकियत की रक्षा, कृषि और व्यापार की उन्नति स्विट्ज़रलैंड की सेना-पद्धति और लीग ऑव् नेशन्स में मानता है।

---

[1] डिसेंट्रलाइज़ेशन आफ़ ऐडमिनिस्ट्रेशन।

डेन्मार्क की सरकार

राज-व्यवस्था—डेन्मार्क को ५ जून, सन् १८४६ ई० में 'ग्रंडलोव' नाम की राज-व्यवस्था प्राप्त हुई थी। इस राज-व्यवस्था के अनुसार डेन्मार्क में एक मौरूसी राजाशाही और 'रिग्सडाग' नाम की व्यवस्थापक-सभा की स्थापना की गई थी। 'रिग्सडाग' की दो सभाएं थीं एक 'लैंड्सटिंग' और दूसरी 'फोकटिंग'। लैंड्सटिंग में ४० वर्ष की उम्र से ऊपर के मालदारवर्ग के ६८ सदस्य होते थे, जिन को राजा नियुक्त करता था। फोकटिंग के सदस्यों को ३० वर्ष के ऊपर के डेन्मार्क के सारे मर्द नागरिक चुनते थे। कार्यकारिणी प्रजा के प्रतिनिधियों को जवाबदार नहीं होती थी। अस्तु, 'फोकटिंग' की राजा और 'लैंड्सटिंग' के मुक़ाबले में कुछ नहीं चलती थी। 'लैंड्सटिंग' मालदारों का अड्डा होने से हमेशा 'फोकटिंग' का विरोध करती थी। सन् १८६४ ई० तक दोनों सभाओं में हमेशा झगड़ा होता रहता था। आम-तौर पर प्रजा के प्रतिनिधियों की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ सरकार का काम चलाया जाता था और कर लगाए जाते थे। बीस वर्ष तक 'राजा' और 'लैंड्सटिंग' के समर्थन से एक मंत्रि-मंडल ने 'फोकटिंग' के विरोध में सरकार चलाई थी, और इस बीस वर्ष में एक बार भी फोकटिंग ने कभी सरकार के लिए एक कौड़ी मंज़ूर नहीं की थी। सन् १८६४ ई० में पहली बार दोनों सभाओं में समझौता हुआ था; मगर फिर भी दोनों सभाओं का झगड़ा क़ायम ही रहा, जिस में फोकटिंग और उस के गरम दल की ताक़त प्रजा की सहायता से बढ़ती गई और लैंड्सटिंग की ताक़त कम होती गई। पिछली यूरोपीय लड़ाई शुरू होने के बाद डेन्मार्क में राजनैतिक स्थिति काफ़ी भयंकर हो गई थी, जिस के कारण राज व्यवस्था में सन् १६१५ ई० में फेर-फार करना पड़ा था। लड़ाई के बाद वारसेल्ज़ की संधि के

अनुसार डेन्मार्क का क्षेत्र बढ़ जाने पर फिर राज-व्यवस्था में संशोधन हुआ था और इस के बाद के रूप में अभी तक वह डेन्मार्क में जारी है। इस राज-व्यवस्था के अनुसार डेन्मार्क में सीमित राजाशाही और व्यवस्थापकी सरकार है। राज-व्यवस्था में संशोधन के प्रस्ताव व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं में मंज़ूर हो जाने के बाद रिग्सडाग को भंग कर दिया जाता है और नया चुनाव किया जाता है। नई रिग्सडाग के फिर उन प्रस्तावों के मंज़ूर करने पर संशोधनों पर प्रजा के मतदारों का हवाला लिया जाता है। सारे मतदारों की कम से कम ४५ फ़ी सदी संख्या और मत देने वालों की बहुसंख्या के संशोधनों के पक्ष में होने पर संशोधन मंज़ूर होते हैं।

कार्यकारिणी—राष्ट्र की कार्यकारिणी सत्ता राजा में मानी गई है। राजा को, राज-व्यवस्था की शर्तों के अंदर, सारे राष्ट्रीय मामलों में सब कुछ अधिकार होता है। मगर इस अधिकार का प्रयोग वह अपने मंत्रियों के द्वारा करता है। राज-व्यवस्था के अनुसार सरकार का काम चलाने के लिए मंत्री 'जवाबदार' होते हैं। मगर व्यवस्थापक-सभा को वे जवाबदार माने गए हैं या किस को, इस का कहीं कुछ साफ़ जिक्र नहीं है। यह ज़रूर सच है कि क़ानूनों और शासन से संबंध रखने वाले फ़ैसलों पर, उन के बाक़ायदा होने के लिए, राजा और किसी न किसी मंत्री दोनों के दस्तख़तों की जरूरत होती है। फिर भी यह बिल्कुल साफ़ नहीं है कि उस मंत्री के हस्ताक्षर कर देने से उस की किस को जवाबदारी हो जाती है। शायद मंत्रियों की जवाबदारी का अभी तक डेन्मार्क में सिर्फ़ यही अर्थ होता है कि ग़ैरक़ानूनी कामों के लिए उन पर अदालत में मुक़दमा चलाया जा सकता है। मगर धीरे-धीरे डेन्मार्क में भी दूसरे देशों की तरह एक दिन मंत्रियों की व्यवस्थापक-सभा, ख़ास कर प्रतिनिधि-सभा, को जवाबदारी का रिवाज अवश्य क़ायम हो जायगा।

मंत्रियों को नियुक्त करना और निकालना भी राजा का काम होता है। मंत्रियों की सभा को डेन्मार्क में 'कौंसिल ऑव स्टेट' कहते हैं और उस के अध्यक्ष के स्थान पर राजा स्वयं बैठता है। युवराज भी बालिग़ होने पर मंत्रियों की सभा में बराबर बैठता है। राजा के न आने पर, राजा मंत्रियों की सभा के प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में काम-काज चलाने का प्रबंध करता है। मगर इस हालत में प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में बैठने वाली मंत्रियों की सभा सिर्फ़ 'मंत्र सभा' कहलाती है। और राजा को इस सभा के फ़ैसलों का विरोध करने और उन को पुनः विचार के लिए 'कौंसिल आव् स्टेट' की दूसरी सभा में रखने का हक़ होता है। बिना रिग्सडाग की मर्ज़ी के राजा को युद्ध छेड़ने, संधि करने, दूसरे राष्ट्रों से मैत्री जोड़ने और व्यापारी समझौते करने, राष्ट्रीय ज़मीन देने, और कोई इस प्रकार का समझौता करने का जिस से देश के प्रचलित क़ानूनों पर असर पड़े, हक़ नहीं होता है।

व्यवस्थापक-सभा—डेन्मार्क की व्यवस्थापक-सभा को 'रिग्सडाग' कहते हैं और 'फ़ोकटिंग' और 'लैंडसटिंग' उस की दो शाखाएं होती हैं। 'फ़ोकटिंग' में क़रीब १४९

सदस्य होते हैं, जिन को २५ वर्ष के ऊपर के सारे नागरिक चार साल के लिए चुनते हैं। हर मतदार को उम्मीदवार होने का हक़ होता है। लेंड्सटिंग में ७८ सदस्य होते हैं, जिन को विस्तृत निर्वाचन-क्षेत्रों से और टेढ़े चुनाव से ३५ वर्ष के ऊपर के मतदारों-द्वारा आठ साल के लिए चुना जाता है। मगर लेड्सटिंग के सारे सदस्यों का एक साथ चुनाव नहीं होता है। हर चार साल बाद इस सभा के आधे सदस्य चुने जाते हैं। रिग्सडाग की सभाओं की बैठकें हर साल अक्टूबर के पहले मंगलवार से शुरू हो कर छः-सात महीने तक होती रहती हैं। रिग्सडाग के सदस्यों को राजधानी कोपेनहेगन में रहने पर ४२०० क्रोनर सालाना और प्रांतों में रहने पर ५००० क्रोनर सालाना भत्ता मिलता है।

रिग्सडाग की दोनों सभाओं की साधारण और खास बैठकें बुलाने और स्थगित करने का काम राजा करता है। राजा 'फोकटिंग' को भंग भी कर सकता है। एक बार फोकटिंग भंग हो कर नई चुन आने के बाद भी, किसी मसविदे पर उस का और 'लेंड्सटिंग' का मतभेद क़ायम रहने पर, 'लेंड्सटिंग' भी भंग की जा सकती है। राजा को 'रिग्सडाग' में क़ानून पेश करवाने का अधिकार होता है और रिग्सडाग में मंज़ूर हुए क़ानून के लिए राजा की मंजूरी की ज़रूरत होती है। 'रिग्सडाग' की दूसरी बैठकों तक, राजा के किसी क़ानून को मंज़ूर न करने पर, वह क़ानून रद्द हो जाता है। 'रिग्सडाग' की बैठकें न होने के समय राजा को फ़रमानी क़ानून जारी करने का भी अधिकार होता है। मगर यह फ़रमान राज-व्यवस्था के विरुद्ध नहीं हो सकता है और उन को रिग्सडाग की सभा होते ही सभा की मंज़ूरी के लिए रख दिया जाता है। डेन्मार्क में कर सिर्फ़ कर-संबंधी क़ानूनों के अनुसार ही लगाए जा सकते हैं।

राजनैतिक दल और सरकार---डेन्मार्क हमारे देश की तरह कृषि-प्रधान देश है। मगर कुछ वर्षों से वहां उद्योग की भी बड़ी उन्नति हो गई है, जिस से देश की आबादी का लगभग एक तिहाई भाग अब उद्योग और कारीगरी पर ज़िंदगी बसर करता है। ज़मींदार और अमीर किसान डेन्मार्क में 'उदार दल' के पक्षपाती हैं। छोटे किसान आम तौर पर 'गरम दल' के पक्षपाती होते हैं। 'समाजी प्रजासत्ता दल' का बाहुबल 'उद्योग संघ' हैं। मालदार लोग 'अनुदार दल' के समर्थक हैं।

'अनुदार दल' लेंड्सटिंग को फोकटिंग के बराबर शक्तिशाली बनाने और सेना को मज़बूत करने में विश्वास रखता है। सन् १९२० ई० से यह दल 'उदार दल' का 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' और 'गरम दल' के विरोध में बराबर साथ देता है। 'उदार दल' फोकटिंग को लेंड्सटिंग से अधिक शक्तिशाली रखने, स्वतंत्र व्यापार नीति, सरकार के कम से कम हस्तक्षेप और मजदूरों के बीमे का पक्षपाती है। 'गरम दल' सन् १९०५ में उदार 'दल' से टूट कर बना था। यह दल समाज सुधारों, सेना की कमी और ज़मीन को छोटे-छोटे पट्टों में बाँटने का हामी है। 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' यूरोप के दूसरे इसी नाम के दलों के समाजवादी कार्य-क्रम को मानने वाला है। दूसरे छोटे दलों में एक

'सत्यवादी राष्ट्र दल' है, जो 'एक कर'[1] के सिद्धांतों का पक्षपाती है। दूसरा जर्मन अल्प संख्या का जर्मनों के हितों की चिंता रखने वाला एक 'स्लेसविग दल' है। सन् १९२९ ई० के चुनाव के बाद रिग्सडाग में विभिन्न दलों के इस प्रकार सदस्य थे:—

दल	फोकटिंग	लैंडस्टिंग
अनुदार दल	२४	१२
गरम दल	१६	८
समाजी प्रजासत्तात्मकदल	६१	२७
उदार दल	४४	२८
सत्यवादी राष्ट्रदल	३	०
स्लेसविग दल	१	०

इस साल का मंत्रि-मंडल समाजी प्रजासत्तात्मक दल और गरम दल के मेल से बना था।

डेन्मार्क में सहकारी संस्थाओं का बड़ा ज़ोर है। सहकारी संगठन से डेन्मार्क की खेती को बड़ा फ़ायदा पहुँचा है। सन् १३२९ ई० के एक साल में इन सहकारी संस्थाओं के द्वारा क़रीब डेढ़ अरब का व्यापार हुआ था।

---

[1] सिंगिल टैक्स।

हालैंड की सरकार

राज-व्यवस्था—हालैंड की स्वाधीनता का इतिहास भी बड़ा ज्वलंत और रोमांचकारी है, मगर हमारे मतलब के लिए इतना काफ़ी होगा कि सन् १८१४ ई० से हालैंड बेलजियम के साझे मे 'संयुक्त राज्य नेदरलैंडस्' का सदस्य था और सन् १८४० ई० में बेलजियम के अलग हो जाने पर उस की राज-व्यवस्था अलग हो गई थी। मगर सन् १८४८ ई० तक इस राज-व्यवस्था में; मंत्रियों की जवाबदारी तथा ऊपरी सभा के सदस्यों की नियुक्ति के स्थान में चुनाव के प्रजासत्तात्मक सिद्धांतों का समावेश नहीं हुआ था। सन् १८८७ ई० और सन् १८९६ ई० की योजना के अनुसार सिर्फ़ हैसियत वाले वर्गों को मताधिकार था। मगर सन १९१९ के एक सुधार में २३ वर्ष के ऊपर के सब स्त्री और पुरुषों को मताधिकार दे दिया गया है। हालैंड की राज-व्यवस्था के अनुसार इस देश में राजाशाही और प्रजासत्तात्मक और जवाबदार सरकार है। राजगद्दी के उत्तराधिकारियों के संबंध में भी राज-व्यवस्था में बड़ी तफ़सील से योजना की गई है। सन् १९२० ई० के एक '*शाही राज-व्यवस्था संशोधन कमीशन*' ने राजवंश का कोई उत्तराधिकारी न रहने पर हालैंड में बिना राजा की सरकार की स्थापना का प्रस्ताव किया था। मगर इस प्रस्ताव को मंज़ूर न कर के सन् १९२२ ई० में राजछत्र के बारे में यह योजना की गई थी कि राजछत्र का कोई उत्तराधिकारी न रहने पर हालैंड की व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं के '*सम्मिलित सम्मेलन*' के हाथ में सारी सत्ता आ जायगी और *यही सम्मेलन नया उत्तराधिकारी नियुक्त करेगा।*

व्यवस्थापक-सभा—हालैंड की व्यवस्थापक-सभा को 'स्टेट्स जेनरल' कहते हैं और उस में 'ऊपरी' और 'निचली' दो सभाएं होती हैं। 'निचली सभा' में १०० सदस्य होते हैं, जिन को सारे मताधिकारी नागरिक चार साल के लिए, अनुपात-निर्वाचन की पद्धति से चुनते हैं। 'ऊपरी सभा' में ५० सदस्य होते हैं, जिन को प्रांतिक धारा सभाएं चुनती हैं। सन् १६२२ ई० तक 'ऊपरी सभा' के सदस्यों को नौ वर्ष के लिए चुना जाता था और सदस्यों की एक तिहाई संख्या का हर तीसरे वर्ष चुनाव होता था। सन् १६२२ के एक संशोधन के बाद से ऊपरी सभा का चुनाव छः वर्ष के लिए होता है और आधे सदस्य हर तीसरे साल बदल जाते हैं। क़ानून बनाने की सत्ता 'स्टेट्स जेनरल' और राजा दोनों में मानी गई है। हर एक क़ानून की मंज़ूरी के लिए दोनों सभाओं की राय की ज़रूरत होती है। सारे क़ानून 'निचली सभा' में पेश होते हैं। उन को मंज़ूर करने और रद्द करने का अधिकार 'ऊपरी-सभा' को होता है। बजट भी पहले निचली सभा में ही पेश होता है।

कार्यकारिणी—सरकार के सारे कामों के लिए मंत्री जवाबदार होते हैं। राजा को किसी क़ानून को नामंज़ूर कर देने और व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं का एक सभा को भंग करने का हक़ ज़रूर होता है। मगर जवाबदारी मंत्रियों की होने से राजा अपने इस अधिकार का प्रयोग भी मंत्रि-मंडल और व्यवस्थापक-सभा की राय के अनुसार ही करता है। सन् १६२२ ई० तक मंत्रि-मंडल की राय से युद्ध छेड़ने और दूसरे राष्ट्रों से संधियां मंज़ूर करने का भी अधिकार राजा को था। मगर अब इस सत्ता के प्रयोग के लिए भी व्यवस्थापक-सभा की आज्ञा की आवश्यकता होती है। राज-व्यवस्था में राजा के मंत्रियों को नियुक्त करने और निकालने के अधिकार का ज़िक्र है; प्रधान मंत्री या मंत्रि-मंडल का कहीं कोई ज़िक्र नहीं है। परंतु इंग्लैंड की तरह डेन्मार्क में भी प्रजासत्तात्मक सरकार का विकास होने के कारण वहां भी यह एक व्यवस्थापक रिवाज बन गया है कि राजा निचली सभा के बहुसंख्या-दल के नेता को प्रधान मंत्री नियुक्त करता है तथा उस की राय से मंत्रि-मंडल नियुक्त करता है। मगर डेन्मार्क में मंत्रियों को दोनों सभाओं की चर्चाओं में भाग लेने का अधिकार होता है, जो इंग्लैंड में नहीं होता है। मगर किसी सभा के सदस्य न होने पर, उस में मत देने का उन को अधिकार नहीं होता है। दूसरे प्रजासत्तात्मक राष्ट्रों की तरह मंत्रियों की सभाओं में आलोचना की जाती है और उन के काम-काज के विषय में उन से प्रश्न पूछे जाते हैं। व्वस्थापक-सभा का साल में आम-तौर पर एक बार जलसा होता है। मगर मंत्रि-मंडल की राय से राजा अधिक जल्से भी बुला सकता है।

चौदह सदस्यों की एक 'कौंसिल ऑव् स्टेट' भी होती है, जिस को राजा राष्ट्र के प्रख्यात पुरुषों में से चुनता है और जिस का अध्यक्ष वह स्वयं होता है। क़ानूनों और शासन की नीति और फ़रमान निकालने के विषय में राजा और मंत्रि-मंडल इस सभा से सलाह लेता है।

स्थानिक-शासन—स्थानिक-शासन प्रांतों और कम्यूनों के द्वारा चलाया जाता है। हालैंड में कुल ग्यारह प्रांत और ११०० कम्यूनें हैं। हर प्रांत में प्रजा की चुनी हुई एक 'धारा-सभा' होती है और इस सभा के सदस्यों की एक छोटी 'कार्यकारिणी समिति' प्रांतीय सरकार का काम-काज चलाने के लिए होती है। 'कार्यकारिणी समिति' को 'धारा-सभा' की राय से प्रांत के हित में सब प्रकार के फ़रमानी क़ानून भी जारी करने का अधिकार होता है। मगर केंद्रीय सरकार की मंज़ूरी इन फ़रमानों के लिए ज़रूरी होती है। केंद्रीय सरकार 'कौंसिल ऑव् स्टेट' की राय से इन फ़रमानों को मंज़ूर करने से इन्कार कर सकती है। एक 'शाही कमिश्नर' हर प्रांतीय 'धारा-सभा' और उस की 'कार्यकारिणी समिति' का अध्यक्ष होता है और वही प्रांतीय अधिकारियों के काम-काज की देख-भाल करता और केंद्रीय सरकार के हुक्मों का पालन करता है।

कम्यूनों की भी चुनी हुई सभाएं होती हैं। उन को शासन के ऐसे उपनियम बनाने का अधिकार होता है जो प्रांतीय सरकार की सत्ता के विरुद्ध न हों। कम्यून की सभा का मेयर अर्थात् अध्यक्ष केंद्रीय सरकार नियुक्त करती है, जिस से केंद्रीय सरकार की कम्यून पर हुकूमत क़ायम रहती है। 'प्रांतीय कार्यकारिणी समिति' को कम्यून का बजट नामंज़ूर कर देने का हक़ होता है।

न्याय—न्याय-शासन के लिए हेग में एक सब से बड़ी 'राष्ट्रीय अदालत' होती है, जो नीचे की अदालतों से अपीलों और व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों, मंत्रियों और दूसरे बड़े अधिकारियों के शासन-संबंधी अपराधों के मुक़दमों पर विचार करती है। उस के नीचे पाँच 'अपील की अदालतें', इक्कीस 'ज़िला अदालतें' और १०१ स्थानिक 'छोटी अदालतें' होती हैं। न्यायधीशों को जन्म भर के लिए राजा चुनता है। 'राष्ट्रीय अदालत' के न्यायधीशों को वह व्यवस्थापक-सभा की ऊपरी सभा की बनाई हुई एक सूची में से नियुक्त करता है।

शासन के झगड़ों के लिए एक 'शासकी अदालत' और सैनिक अपराधों के लिए एक 'सैनिक अदालत' भी हेग में होती हैं।

राजनैतिक दलबंदी—हालैंड के नरम सरकारपक्षी दलों में अधिकतर धार्मिक दल हैं, जिन में से एक 'रोमन कैथौलिक राष्ट्रीय दल', दूसरे 'क्रांति-विरोधी दल' और तीसरे 'ईसाई ऐतिहासिक संघ' तीन दलों का सन् १६०० से १६२५ ई० तक सम्मिलित समूह था। इन दलों के भी गरम अंग हैं। मगर व्यवस्थापक-सभा के गरम दलों में एक 'उदार दल', दूसरा 'उदार प्रजासत्तात्मक दल', तीसरा 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' और चौथा 'समष्टिवादी दल' है। ये दल विचारों में एक दूसरे से इतने भिन्न हैं कि कभी इन सब का मिल कर एक मज़बूत सरकार का विरोधी समूह नहीं बनता है। फिर भी एक बात में ये सारे दल एक-मत हैं कि सरकार को धार्मिक प्रभावों से दूर रहना चाहिए और सरकार को धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। हालैंड के दल धार्मिक,

अनुदार, प्रजासत्तात्मक और समाजवादी इत्यादि; सब प्रकार के विचारों पर बने होने के कारण इस देश में मंत्रिमंडलों का बनाना बड़ा कठिन हो जाता है। एक बार तो यहां तक नौबत पहुँच गई थी कि अक्टूबर सन् १९२३ से जनवरी सन् १९२४ ई० तक हालैंड में कोई मंत्रिमंडल ही नहीं बन सका था। मजबूर हो कर राजा को पुराने मंत्रिमंडल का इस्तीफ़ा नामजूर करना पड़ा था; क्योंकि इतना समय बीत जाने पर भी कोई प्रधान मंत्री नया मंत्रि-मंडल नहीं बना सका था।

रोमन कैथोलिक दल—निरा धार्मिक दल है। 'क्रांति-विरोधी दल' उदारवाद[1] और समाजवाद का विरोधी, आरेंज विलियम के सिद्धांतों पर राष्ट्रीय सरकार का पक्षपाती, अनुदार, कट्टर राष्ट्रीयवादी, आरेंज-वंश का समर्थक, मज़बूत जल और थल सेना रखने, रविवार के दिन पूरी शांति रखने और पूजा पाठ करने, मौत की सज़ा को पुनर्जीवित करने, जबरदस्ती टीका लगाना बंद करने और मुर्दा जलाना बंद करने का तरफ़दार है। इसी दल के प्रजासत्तात्मक विचारों के विरोधी सदस्यों ने अलग हो कर एक 'ईसाई ऐतिहासिक संघ दल' बनाया था। जिस के राजनैतिक और धार्मिक विचार भी 'क्रांति-विरोधी दल' से मिलते-जुलते हैं, मगर आर्थिक विचारों में यह दल 'उदार दल' से मिलता है।

उदार दल—में अधिकतर बड़े व्यापारी और विद्वान लोग होते हैं। यह दल उदार सिद्धांतों यानी स्वतंत्र व्यापार, कम से कम सरकारी हस्तक्षेप खास कर उद्योग में और मज़दूरों के हितकारी क़ानूनों का हामी है। इस दल के गरम लोगों ने सन् १९०१ में अलग-अलग होकर 'उदार प्रजासत्तात्मक दल' बना लिया था, जो अब मज़दूरों के लिए बहुत-से सुधारों का पक्षपाती और सेना बढ़ाने का विरोधी है। दूसरे दो 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' और 'समष्टिवादी दल' इसी नाम के यूरोप के दूसरे दलों की तरह है।

---

[1] लिबरलिज़्म।

नार्वे की सरकार

राज-व्यवस्था—यूरोप के बिल्कुल उत्तर-पश्चिम कोने में, हाथी की सूँड़ की तरह लटकने वाले स्कैंडीनेवियन पेनिनशुला के दोनों राष्ट्रों, नार्वे और स्वीडन, की सरकारें यूरोप की पुरानी सरकारों में हैं। नार्वे की राज व्यवस्था सन् १८१४ ई० में बनी थी। उस के बाद उस में कुछ संशोधन भी हुए हैं। इस राज-व्यवस्था के अनुसार नार्वे एक स्वाधीन राष्ट्र है जिस में अखंड मौरूसी राजाशाही सरकार है।

कार्यकारिणी—राष्ट्र की कार्यकारिणी सत्ता राज-व्यवस्था के अनुसार राजा में मानी गई है। मगर बहुत दिनों के राजा और प्रजा में झगड़े के बाद अब ऐसा रिवाज बन गया है कि राजा की सत्ता का प्रयोग प्रजासत्तात्मक और प्रजा को जवाबदारी के के सिद्धांत पर होता है। राजा की सहायता करने के लिए एक प्रधान मंत्री और कम से कम सात और मंत्रियों का एक मंत्रि मंडल होता है। राजा के हर हुक्म पर, उस के बाक़ायदा होने के लिए, किसी न किसी मंत्री के हस्ताक्षर होने हैं। राजा को व्यवस्थापक-सभा भंग करने का हक़ नहीं होता है। उस व्यवस्थापक सभा में मंज़ूर हुए किसी भी क़ानून को नामंज़ूर कर देने का हक़ ज़रूर होता है। मगर राजा के नामंज़ूर कर देने पर भी वही क़ानून तीन व्यवस्थापक-सभाओं में बराबर पास होने पर क़ानून बन जाता है और राजा की नामंज़ूरी का तीन बार के बाद फिर कुछ भी असर नहीं होता है। राज्य के सारे अधिकारियों को, मंत्रि-मंडल की सलाह से, राजा नियुक्त करता है। मगर नियुक्ति के ख़ास नियम होते हैं, जिन के अनुसार सिर्फ़ ख़ास योग्यता के मुख्य लोग ही अधिकारी बन सकते हैं। मंत्रि-मंडल में बिना कम से कम आधे सदस्यों की हाज़िरी के कोई फ़ैसला

नहीं किया जा सकता है। मंत्रि-मंडल का जीवन व्यवस्थापक-सभा के विश्वास पर निर्भर होता है, क्योंकि क़ानून बनाने और रुपए पैसे के सारे अधिकार व्यवस्थापक-सभा को होते हैं।

व्यवस्थापक-सभा—नार्वे की व्यस्थापक-सभा को 'स्टोरटिंग' कहते हैं। हर २३ वर्ष के स्त्री और मर्द नार्वे के नागरिक को जो देश में कम के कम पाँच साल बस चुका हो और चुनाव के समय भी देश में रहता हो, व्यवस्था-सभा के लिए मत देने का अधिकार होता है। व्यवस्था-सभा में कुल १५० सदस्य होते हैं, जिन को तीन साल के लिए, गाँवों की निस्बत शहरों से दुगने के हिसाब से, अनुपात-निर्वाचन की पद्धति के अनुसार नागरिक चुनते हैं। व्यस्थापक-सभा के उम्मीदवारों को तीस वर्ष के ऊपर की उम्र का, देश में दस वर्ष तक बस चुकने वाला, और जिस क्षेत्र से वह उम्मीदवार हो वहां मताधिकार होना ज़रूरी होता है।

स्टोरटिंग—को क़ानून बनाने और रद्द करने, कर लगाने और हटाने, सरकारी आय-व्यय का फ़ैसला करने, और राजा की दूसरे राष्ट्रों से की हुई तमाम संधियों और मैत्रियों का मुलाहिज़ा करने का अधिकार होता है। 'स्टोरटिंग' की एक 'स्थायी उपसमिति' होती है जो सभा के सामने आने वाले क़ानूनी और आर्थिक मसविदों पर पहले विचार कर के सभा को अपना मत उन विषयों पर भेज देती है। व्यवस्थापक-सभा की 'चुनाव-समिति' कई समितियां नियुक्त करती है, जिन के पास विभिन्न विभागों के आय-व्यय के प्रस्ताव विचार के लिए जाते हैं। एक 'परराष्ट्र-विषय समिति' भी होती है। 'स्टोरटिंग' को सारी सरकारी संधियों, रिपोर्टों और काग़ज़ातों को दाखिल दफ़्तर करा लेने का हक़ होता है, क्योंकि सारे सरकारी शासन पर उस का अंकुश माना गया है। विदेशों से किए गए आवश्यक समझौतों के लिए भी 'स्टोरटिंग' की मंजूरी की ज़रूरत होती है। मंत्रिमंडल के सदस्यों के 'स्टोरटिंग' की कार्रवाई में हिस्सा लेने का हक़ होता है। मगर वे मत नहीं दे सकते हैं। मंत्रि-मंडल के सदस्य हो कर वे व्यवस्थापक-सभा में प्रजा के चुने हुए प्रतिनिधियों की तरह नहीं बैठ सकते हैं। फिर भी उन को दूसरे सदस्यों की तरह क़ानून-मसविदे पेश करने का हक़ होता है।

व्यस्थापक-सभा की दो सभाओं के विषय में नार्वे में विचित्र योजना की गई है। स्टोरटिंग अपने सदस्यों में से एक चौथाई को चुन कर उस की 'लैगटिंग' नाम की व्यवस्थापक-सभा की एक सभा बना लेती है। और स्टोरटिंग के बाक़ी तीन चौथाई सदस्यों की, 'ओडेल्सटिंग' नाम की, व्यवस्थापक-सभा की दूसरी सभा बन जाती है। इन दोनों सभाओं की कार्रवाई के चलाने के लिए, हर एक में, कम से कम दो तिहाई सदस्यों की हाज़िरी की ज़रूरत होती है। दोनों सभाएं अपने-अपने अध्यक्ष और मंत्री को ख़ुद चुनती हैं। क़ानून बनाने का ढंग भी नार्वे में विचित्र है। सब मसविदे 'ओडेल्सटिंग' में पेश होते हैं, और इस सभा में मंज़ूर हो जाने के बाद 'लैगटिंग' में भेजे जाते हैं। फिर लैगटिंग उस पर विचार कर के उस को मंज़ूर या नामंज़ूर करती है। नामंज़ूर करने

पर 'लेंगटिंग' अपने बजूहात बताती है। लेंगटिंग से पुनःविचार के लिए वापस आने पर 'ओडेल्सटिंग' मसविदों पर फिर विचार करती है और उस को वैसा ही या संशोधित कर के फिर लेंगटिंग के पास भेज देती है। इस प्रकार ओडेल्सटिंग का मंज़ूर किया हुआ कोई मसविदा जब दो बार लेंगटिंग के सामने रक्खा जा कर दोनों बार नामंज़ूर हो जाता है, तब 'स्टोरटिंग' की पूरी सभा की बैठक होती है और दो-तिहाई सदस्यों के मत से उस मसविदे का आख़िरी फ़ैसला कर दिया जाता है। क़ानून बनाने के इस ढंग को बहुत-से राजनीति के विद्वान पसंद करते हैं। वास्तव में इस ढंग से व्यवस्थापक-सभा की 'दो सभाओं की समस्या' का अच्छा हल हो जाता है।

राज-व्यवस्था में संशोधन के प्रस्तावों को पास करने के लिए 'स्टोरटिंग' के दो-तिहाई मतों की ज़रूरत होती है। मगर इस प्रकार के संशोधन चुनाव के बाद, 'स्टोरटिंग' की सभा में पहले या दूसरे साल में ही पेश और मंज़ूर हो सकते हैं, तीसरे वर्ष में नहीं।

स्थानिक शासन, सेना और न्याय—नार्वे के स्थानिक शासन की ख़ास बात यह कही जा सकती है कि वहां केंद्रीय सरकार का स्थानिक शासन में बहुत ही कम दख़ल होता है। राष्ट्रीय रक्षा के ख़ास प्रश्नों का विचार एक 'राष्ट्रीय रक्षण समिति' करती है। इस समिति का अध्यक्ष 'राष्ट्रीय रक्षण सचिव' होता है और दूसरे सदस्य जल और थल सेना के सब से बड़े चार अधिकारी होते हैं। न्यायशासन नार्वे में दूसरे सभ्य देशों की तरह ही है। मगर जेलख़ाने वहां के आधुनिक और मानवी पद्धति पर होते हैं। जेलख़ानों को, अपराधियों को तकलीफ़ें देने की जगह न मान कर, सुधारने की जगह माना जाता है। स्त्रियों और पागलों की जेलें अलग होती हैं। आवाराओं को भी आवारागर्दी में पकड़ कर जेल में नहीं डाल दिया जाता है; उन के लिए ख़ास खेती-बारी के उपनिवेश बना दिए गए हैं।

राजनैतिक दलबंदी—नार्वे के राजनैतिक दलों में एक 'सरकार-पक्षी दल' है। यह दल उदार, अनुदार और राष्ट्रीय विचारों के लोगों का मिश्रण है और समष्टिवादियों और शराबबंदी के आंदोलन का विरोधी है। यह दल राष्ट्र के आर्थिक जीवन और आय-व्यय की ख़ासतौर पर उन्नति करने और प्रजासत्तात्मक सरकार और व्यक्तिगत मिल्कियत की रक्षा करने का हामी है। दूसरा एक 'उदार दल' है जो 'सरकार-पक्षी दल' से मिल कर काम करता है। यह दल उदार, राष्ट्रीय विचारों का है और लोगों के सामाजिक, आर्थिक और संस्कृति के व्यक्तिगत अधिकारों में मानता है। तीसरा एक 'किसान दल' है जो प्रजासत्तात्मक सरकार, अमन और क़ानून में विश्वास रखता है और क्रांतिकारी हमलों से सरकार की रक्षा करना और सरकार का ख़र्च कम करना चाहता है। यह दल यह भी मानता है कि नार्वे की उन्नति और हित के लिए नार्वे में एक, स्वाधीन और आर्थिक दृष्टि से मज़बूत, किसान वर्ग का बनाना आवश्यक है।

दूसरे दलों में एक चौथा 'प्रजापक्षी दल' है जो आज कल की सरकार के ढंग पर

ही, धीरे-धीरे आर्थिक, सामाजिक, और संस्कृति के सुधारों के द्वारा 'राष्ट्रीयता' और प्रजासत्ता की उन्नति करना चाहता है। यह दल राष्ट्रीय-भाषा आंदोलन का पक्षपाती है। पाँचवां एक 'गरम लोकदल' है। जो 'प्रजापक्षी दल' से बहुत कुछ मिलता-जुलता है। यह दल राष्ट्रीय और गरम प्रजासत्तात्मक नीति अंतर-राष्ट्रीय शांति और समझौता, पड़ोसी देशों से मैत्री, स्वतंत्र व्यापार श्रमजीवियों को आर्थिक स्वाधीनता देने वाले सुधारों, शराबबंदी और राष्ट्रीय-भाषा आंदोलन का पक्षपाती है।

छठा एक 'नार्वेजियन श्रमजीवी दल' है। इस दल में नार्वे का 'समाजी प्रजा-सत्तात्मक दल' भी मिल गया है। यह दल समाजशाही क़ायम करने में मानता है और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए, सिर्फ़ व्यवस्थापक सभा का ही इस्तेमाल न कर के, सब प्रकार के ज़रियों और ख़ास कर 'वर्ग-युद्ध' का पक्षपाती है। सातवां दूसरे देशों से मिलता-जुलता एक 'समष्टिवादी दल' है।

इन दलों का नार्वे के प्रजामत पर असर का स्पष्ट ज्ञान पाठकों को सन् १९३० ई० के चुनाव के अंकों से हो जायगा। विभिन्न दलों को इस चुनाव में निम्न प्रकार मत मिले थे और उन के सदस्य 'स्टोरटिंग' में निम्न प्रकार चुने गए थे—

दल	मत	प्रतिनिधि
सरकार पक्षी दल और उदार दल	३५४५७८	४४
किसान दल	१८७८१६	२५
प्रजा-पक्षी दल और गरम लोकदल	२४८०१०	३४
नार्वेजियन श्रमजीवी दल	(सन् १९२७ के चुनाव में ३६८१०० मत और सदस्य ५९)	४८
समष्टिवादी दल	(सन् १९२७ के चुनाव में ४००६१ मत और सदस्य ३)	०

स्वीडन की सरकार

राज-व्यवस्था—स्कैंडीनेविया पेनिन्सुला के दूसरे राष्ट्र स्वीडन की राज-व्यवस्था सन् १८०९ ई० से प्रारंभ होती है। इस के अनुसार इस देश में मौरूसी राजाशाही की सरकार है। मगर इस राज-व्यवस्था के बाद के संशोधनों और परिवर्तनों से राजा की सत्ता बिल्कुल घट गई है और व्यवस्थापक-सभा की सत्ता बहुत बढ़ गई है, जिस से स्वीडन में राजाशाही क़ायम रहते हुए भी सरकार इंग्लैंड की तरह, प्रजासत्तात्मक बन गई है।

राजा और मंत्रि-मंडल - स्वीडन की राज-व्यवस्था के अनुसार राष्ट्र की कार्यकारिणी और न्यायसत्ता राजा और मंत्रि-मंडल में मानी गई है। धारासत्ता अर्थात् क़ानून बनाने की सत्ता राजा और व्यवस्थापक-सभा में मानी गई है। मंत्रि-मंडल की कार्रवाई के सारे काग़ज़ातों को व्यवस्थापक-सभा की एक समिति देखती है जिस से मंत्रि-मंडल पर व्यवस्थापक-सभा का पूरा अंकुश रहता है। व्यवस्थापक-सभा मंत्रि-मंडल के सदस्यों पर ग़ैरक़ानूनी कार्रवाई के लिए अभियोग भी चला सकती है। स्वीडन का राजा, राज-व्यवस्था के अनुसार, 'लूथरन चर्च' का अनुयायी होना चाहिए। उस को परराष्ट्र-नीति के संचालन का अधिकार होता है। मगर इस विषय में भी उस को मंत्रि-मंडल और 'परराष्ट्र विषय समिति' की सलाह से ही काम करना पड़ता है और सारे काग़ज़ातों को व्यवस्थापक-सभा की 'परराष्ट्र विषय समिति' के सामने रखना होता है। विदेशों से होने वाले तमाम ज़रूरी समझौतों को आख़िरी मंज़ूरी के लिए व्यवस्थापक-सभा के सामने रखना होता है।

सारे ज़रूरी मसविदे हमेशा सरकार की तरफ़ से व्यवस्थापक-सभा में पेश होते हैं। व्यवस्थापक-सभा में मंज़ूर हो जाने के बाद राजा की मंज़ूरी से मसविदे क़ानून बन सकते हैं। साधारण सदस्यों के मसविदों की तरह सरकारी मसविदों में भी सभा आज़ादी से संशोधन करती है। बजट और कर-संबंधी मसविदे पेश तो ज़रूर राजा की तरफ़ से होते हैं; मगर उन के संबंध में पूरा अधिकार व्यवस्थापक सभा को होता है। 'सालिसिटर-जेनरल' और 'सैनिक सालिसिटर जेनरल' नाम के दो ख़ास अधिकारियों के द्वारा भी व्यवस्थापक-सभा शासन पर अंकुश रखती है। स्वीडन के 'राष्ट्रीय बैंक' और 'राष्ट्रीय क़र्ज़ा बोर्ड' पर भी व्यवस्थापक-सभा का सीधा अधिकार होता है।

व्यवस्थापक-सभा—स्वीडन की व्यवस्थापक-सभा को 'रिक्सडाग' कहते हैं। इस की 'ऊपरी' और 'निचली' दो सभाएं होती है। दोनों सभाओं को क़रीब-क़रीब सारे प्रश्नों में एक-सी सत्ता और अधिकार होता है। 'ऊपरी सभा' में १५ सदस्य होते हैं, जिन को ज़िला सभाएं और नगरों में ख़ास तौर पर नियुक्त किए हुए मतदार आठ साल के लिए चुनते हैं। 'ऊपरी सभा' के चुनाव के लिए देश भर में १६ चुनाव-क्षेत्र हैं। इन चुनाव-क्षेत्रों को आठ भागों में बाँट दिया गया है, जिन में हर एक भाग हर साल बारी-बारी से आगामी आठ साल के लिए ऊपरी सभा के सदस्यों की संख्या के आठवें भाग को चुनता है। ऊपरी सभा के उम्मीदवारों को ३५ वर्ष की उम्र का और पचास हज़ार क्रोनर की क़ीमत की मिलकियत का मालिक या तीन हज़ार क्रोनर की सालाना आमदनी वाला होने की ज़रूरत होती है। अट्ठाइस वर्ष के ऊपर के मतदारों को अनुपात-निर्वाचन के अनुसार 'ऊपरी सभा' के चुनाव में मत देने का हक़ होता है। दूसरी 'निचली सभा' में २३० सदस्य होते हैं। उन को २४ वर्ष के ऊपर के सारे स्त्री-पुरुष नागरिक मतदार चार साल के लिए चुनते हैं। 'निचली सभा' के सारे हक़दार मतदारों को देहात में अपने चुनाव-क्षेत्रों से और शहरों में किसी एक चुनाव-क्षेत्र से उम्मीदवार होने का हक़ होता है। इस सभा का चुनाव भी अनुपात-निर्वाचन की पद्धति पर होता है।

दोनों सभाएं अपने-अपने अध्यक्षों को ख़ुद चुनती हैं। दोनों सभाओं में एक-एक अध्यक्ष और दो-दो उपाध्यक्ष होते हैं और उन को इस हिसाब से चुना जाता है कि स्वीडन के तीनों बड़े राष्ट्रीय दलों के बारी-बारी से अध्यक्ष होते हैं। 'रिक्सडाग' के सामने आने वाले विभिन्न प्रश्नों पर विचार करने के लिए बहुत-सी 'स्थायी समितियां' होती हैं जिन में दोनों सभाओं से आधे-आधे और राजनैतिक दलों से अनुपात-निर्वाचन के सिद्धांत पर सदस्य लिए जाते हैं। इन समितियों में मुख्य 'परराष्ट्र विषय समिति' 'व्यवस्थापक समिति' 'बजट समिति' 'कर समिति' 'बैंक समिति' 'क़ानून समिति' और 'कृषि समिति' होती हैं। 'व्यवस्थापक समिति' मंत्रि-मंडल की कार्रवाई के काग़ज़ों को देखती-भालती है और राज-व्यवस्था तथा स्थानिक शासन से संबंध रखने वाले मसविदों का विचार और प्रस्ताव करती है। 'बजट समिति' राष्ट्रीय आय-व्यय के सारे प्रश्नों पर विचार करने के कारण सब से आवश्यक समिति गिनी जाती है। इन समितियों का स्वीडन की 'रिक्सडाग'

के काम-काज में खास स्थान होता है, क्योंकि उन में दोनों सभाओं के सदस्य मिल कर साथ-साथ काम करते हैं। अगर किसी ऐसे विषय पर जिस पर कोई समिति विचार करती है, रिक्सडाग की दोनों सभाओं का मत एक-दूसरे से भिन्न होता है तो वह समिति जहां तक बने वहां तक ज़रूर कोई न कोई ऐसा प्रस्ताव पेश करने की कोशिश करती है जिस से दोनों सभाओं में समझौता हो जाय। हर मसविदे की आखिरी मंज़ूरी के लिए दोनों सभाओं की मंज़ूरी की ज़रूरत होती है; परंतु आय-व्यय संबंधी प्रश्नों पर दोनों सभाओं का मतभेद होने पर दोनों सभाओं की एक 'सम्मिलित बैठक' में सारे सदस्यों के बहुमत से फ़ैसला किया जाता है। अस्तु; राष्ट्रीय आय-व्यय के प्रश्नों का आखिरी फ़ैसला रिक्सडाग की निचली सभा के हाथ में ही रहता है; क्योंकि निचली सभा के सदस्यों की संख्या ऊपरी सभा के सदस्यों से कहीं अधिक होती है।

हर चौथे वर्ष 'रिक्सडाग' देश के छः प्रसिद्ध विद्वानों की एक 'सलाह समिति' सालिसिटर जेनरल को 'अखबारी आज़ादी' क़ायम रखने में सहायता करने के लिए भी नियुक्त करती है।

स्थानिक शासन और न्याय—प्रांतीय शासन चलाने के लिए राजा स्वीडन की राजधानी स्टाकहोम के लिए एक बड़े गवर्नर और देश के शेष चौबीस प्रांतों के लिए एक-एक प्रीफ़ेक्ट को नियुक्त करता है। इन प्रीफ़ेक्टों के नीचे काम चलाने के लिए नायब होते हैं। प्रांतों की छोटी-छोटी कम्यूनों और क़स्बों में मतदारों की 'सार्वजनिक सभाएं' और बड़ी जगहों में चुनी हुई 'स्थानिक सभाएं', स्थानिक 'शासन' 'पुलिस' और 'आर्थिक जीवन' के सारे प्रश्नों का फ़ैसला करती हैं। प्राथमिक शिक्षा और धार्मिक प्रश्नों का फ़ैसला स्थानिक 'धार्मिक सभाएं' करती हैं। हर प्रांत में प्रांत का भीतरी काम-काज चलाने के लिए एक चुनी हुई 'प्रांतीय सभा' होती है, जिस की अपने चुने हुए अध्यक्ष की अध्यक्षता में सालाना बैठकें होती हैं। स्थानिक सभा का चुनाव भी अनुपात-निर्वाचन के अनुसार होता है और उन में स्त्री, मर्द दोनों भाग लेते हैं।

न्याय-शासन कार्यकारिणी से बिल्कुल स्वतंत्र होता है और उस का संचालन राष्ट्र के दो बड़े अधिकारियों, चांसलर ऑव् जस्टिस् और एटार्नी जेनरल के हाथों में होता है। चांसलर आव् जस्टिस् को स्वयं राजा नियुक्त करता है और वही राजा का वकील भी होता है। एटार्नी जेनरल को व्यवस्थापक-सभा नियुक्त करती है और वह सारी अदालतों के काम की देख-भाल रखता है। स्वीडन की सब से बड़ी अदालत स्टाकहोम में बैठती है। उस में चौबीस न्यायाधीश होते हैं, जिन की सात-सात की तीन अदालतें होती हैं। इन तीन राष्ट्रीय अदालतों के नीचे तीन अपील की अदालतें और उन के नीचे २१४ ज़िला अदालतें हैं, जिन में लगभग ९१ शहरी अदालतें और १२३ गाँवों की अदालतें हैं। अपील की अदालतों में अदालत का एक अध्यक्ष, न्यायाधीश, और असेसर होते हैं। ज़िला अदालतों में, शहरों में, मेयर और शहर सभा के दो सदस्यों की अदालत बन जाती है; और मुफ़स्सिल की अदालतों में एक न्यायाधीश और छः साल के लिए प्रजा के चुने हुए १२ पंच होते

हैं। पंचों को क़ानूनी और गवाही दोनों के प्रश्नों का न्यायाधीश के साथ मिल कर फ़ैसला करने का हक़ होता है। मगर पंचों में मत-भेद होने पर फ़ैसला न्यायाधीश के ऊपर रहता है। सारे पंचों का एक मत होने पर न्यायाधीश का मत विरुद्ध होने पर भी फ़ैसला पंचों के मतानुसार होता है। बड़े शहरों में जहां शहर सभाएं होती हैं; हर निर्वाचन-क्षेत्र में तीन सदस्यों की एक अदालत होती है। आबपाशी के झगड़ों का फ़ैसला करने के लिए 'खास अदालतें' और 'कोर्ट मार्शल' और 'पुलिस अदालतें' भी होती हैं। शासन के झगड़ों का आम तौर पर फ़ैसला शासन अधिकारी करते हैं। मगर एक बड़ी 'शासन अदालत' भी है जिस के सामने अभियोग जा सकते हैं।

राजनैतिक दल—स्वीडन की व्यवस्थापक-सभा की प्रथा के अनुसार स्वीडन के मंत्रि-मंडलों के रचने में देश के सभी बड़े दलों का हाथ होता है। किसी एक दल की व्यवस्थापक-सभा में बहुसंख्या न होने से मंत्रि-मंडल दलबंदी के अनुसार नहीं बन पाते हैं।

स्वीडन के मुख्य राजनैतिक दलों में एक 'सरकार-पक्षी दल' है जो सन् १८६५ ई० से पहले भी था। यह मज़बूत राष्ट्रीय रक्षा और प्रचलित सामाजिक और आर्थिक जीवन को क़ायम रखने का पक्षपाती है। दूसरा एक 'किसान संघ दल' है जो संकुचित पुराने विचारों का है और खास कर किसानों की आर्थिक सामाजिक और राजनैतिक उन्नति का ख़याल रखता है। 'उदार दल' और 'लोक-दल' नाम के दो दल सन् १९२३ ई० में शराब-बंदी के प्रश्न पर पुराने 'संयुक्त उदार दल' से टूट कर बन गए थे। यह दोनों दल समाज-सुधार, स्वतंत्र व्यापार, लीग आव् नेशंस और शांति के पक्षपाती हैं।

दूसरे यूरोपीय राष्ट्रों की तरह स्वीडन में एक 'समाजी प्रजासत्तात्मक दल' भी है। इस दल के सन् १९२०, १९२१, १९२४ और सन् १९२५ में मंत्रि-मंडल थे। एक 'समष्टिवादी दल' भी है। विभिन्न राजनैतिक दलों का सरकार पर प्रभाव जानने के लिए व्यवस्थापक-सभा में उन की संख्या जान लेना उपयोगी होगा। यह सन् १९३२ ई० में निम्न प्रकार थी—

	ऊपरी सभा	निचली सभा
सरकार-पक्षी दल	५०	७३
किसान-संघ दल	१६	२७
उदार दल	८	४
लोकदल	२३	२८
समाजी प्रजासत्तात्मक दल	५२	९०
समष्टिवादी दल	१	८

पुर्तगाल की सरकार

राज-व्यवस्था—यूरोप के शेष पुराने राष्ट्रों में यूरोप के दक्षिण पश्चिम कोण में निकले हुए आइबेरियन पेनिन्सुला के दो देशों, पुर्तगाल और स्पेन, की सरकारों का बयान करना और रह गया है। पुर्तगाल १२वीं सदी से एक स्वतंत्र राष्ट्र है। इसी देश के मुसाफ़िर वेस्कोडिगामा ने पहले-पहल हमारे देश और यूरोप से व्यापारिक संबंध जोड़ा था। हिंदुस्तान के व्यापार के लिए जी तोड़ कर लड़ने वाले यूरोपीय देशों में यह देश भी था, जिस की, फ्रांस की तरह उन लड़ाइयों में हार हो जाने के कारण, भारतवर्ष में सिर्फ़ अब गोआ, डामन और डिउ इन तीन छोटे-से स्थानों में जागीरें रह गई हैं। फिर भी इस देश की संस्कृति की छाप हमारे देश के बंबई की तरफ़ कइ वाल्हो, डीसोज़ा, फर्नेडीज़ और अल्वा जैसे नामों के हिंदुस्तानी रोमन केथौलिक ईसाइयों के एक छोटे समूह में और पुर्तगाल के अधिकार और संसर्ग की निशानी बंबई के सांताक्रुज़ा और विलेपार्ले नाम के स्थानों के पुर्तगीज़ नामों और मशहूर गुजराती आफ़ूस आम[1] में रह गई है। पुर्तगाल में सन् १९१० ई० तक राजाशाही सरकार थी। सन् १९१० ई० में राजाशाही को ख़त्म कर के प्रजातंत्र की स्थापना कर दी गई थी; मगर प्रजातंत्र राज-व्यवस्था क़ायम हो जाने पर भी पुर्तगाल में अभी तक वही पुरानी घिसघिस और अव्यवस्था चली आती है जो प्रजातंत्र क़ायम होने से पहले सौ वर्ष तक थी।

---

[1] इस आम को भारतवर्ष में शायद पुर्तगाल से लाया गया था। इस का असली नाम अल्फ़ोंज़ो था जिस का गुजराती अपभ्रंश आफ़ूस हो गया है।

प्रजातंत्र क़ायम होने से पूर्व राजा और प्रजा का आए दिन झगड़ा होता रहता था। कभी क्रांति हो जाती थी और राजा गद्दी से उतार दिया जाता था या उस से ज़बर्दस्ती प्रजासत्तात्मक राज-व्यवस्था मंज़ूर करा ली जाती थी ; कभी राजा मंज़ूर की हुई राज-व्यवस्था को तोड़ कर फिर अपनी पुरानी चाल पर चलने लगता था। इन झगड़ों और राजनैतिक उथल-पुथल ने देश का आर्थिक सर्वनाश कर रक्खा था, जिस के परिणामस्वरूप आख़िरी क्रांति हुई और प्रजातंत्र की स्थापना हुई। राजाशाही के ज़माने के पुराने पेशावर राजनीतिज्ञों को देश के हित की अपेक्षा ख़ुद अधिकार की कुर्सियों पर बैठने ही की अधिक चिंता रहती थी। चुनावों के प्रबंध में बड़े होशियार होने के कारण वे आपस के गुट्टों में समझौते कर के किसी न किसी तरह, कभी प्रजातंत्रवादी और स्वतंत्र सदस्यों का चुनाव नहीं होने देते थे।

सरकार का खुला और बाक़ायदा विरोध दबा दिया जाने से स्वाधीनता के लिए लालायित आत्माएं मजबूर हो कर क्रांति के घाट उतरने का प्रयत्न करतीं थीं। सन् १९०३ ई० में भी पुर्तगाल में प्रजातंत्र की स्थापना करने के लिए एक क्रांति हुई थी। मगर वह निष्फल गई थी। राजा को आम तौर पर किसी न किसी तरह रुपया प्राप्त करने की चिंता रहती थी, और राजनैतिक नेताओं को किसी न किसी प्रकार पद प्राप्त करने की चिंता रहती थी। दोनों में से किसी को राष्ट्रीय कोष की हालत ठीक करने का कभी ख़्याल नहीं रहता था। सरकार को हर साल बजट में नुक़सान होता था। चुनाव में मतदारों को स्थानिक गिरजों में जा कर मत डालने पड़ते थे। पादरी, धनवान और ज़मींदार लोग आपस में मिल कर इस बात का इंतज़ाम कर लेते थे कि चुनावों में देहाती ज़िलों में उन की ताक़त क़ायम रहे।

अस्तु, प्रजातंत्र को लाठी के ज़ोर पर क़ायम करना पड़ा था; परंतु पुर्तगाल के दुर्भाग्य से अभी तक वहां लाठी का ज़ोर क़ायम है। शहरों में ज़रा-ज़रा बात में बखेड़े हो जाते हैं। राजनैतिक नेताओं का क्रांतिकारी गुट्ट बनाने की तरफ़ रुझान रहता है। कई बार लाठी के ज़ोर से राजाशाही को पुनः स्थापित करने का प्रयत्न भी किया जा चुका है। आगे भी डर है कि इस बात के प्रयत्न किए जायँगे। दुर्भाग्य से नए राजनैतिक नेता भी, पुरानों की तरह, अपनी व्यक्तिगत वृद्धि और अपने लिए पद और अधिकार प्राप्त करने तथा अपनी होशियारी दिखाने की चेष्टा में ही अधिक संलग्न रहते हैं। राष्ट्र-हित के लिए नीति-निर्माण करने की बहुत कम चिंता करते हैं। सन् १९०८ ई० में पुर्तगाल के राजा का वध हुआ था और उस के उत्तराधिकारी राजा के राज्य-त्याग कर के भाग जाने पर प्रजातंत्र का एलान किया गया था। फिर सन् १९११ ई० में, २१ वर्ष के ऊपर के पुर्तगाल के सारे मर्दों के मतों से एक व्यवस्थापक-सम्मेलन का चुनाव किया गया था। इस सम्मेलन ने एकमत से राजाशाही के पुर्तगाल में ख़त्म हो जाने का एलान किया था और राजवंश को देश निकाला दे कर प्रजातंत्र की नई राज-व्यवस्था रच कर पुर्तगाल में स्थापित की थी। सम्मेलन के चुनाव में राजाशाही में विश्वास रखने वालों को मत देने

का अधिकार नहीं दिया गया और गिरजों में मत डालना भी बंद कर दिया गया था। नई राज-व्यवस्था की हर दसवें साल पुनर्घटना की जा सकती है।

व्यवस्थापक-सभा—पुर्तगाल की व्यवस्थापक-सभा को कांग्रेस कहते हैं और उस की दो सभाएं होती हैं। 'प्रतिनिधि-सभा' और 'सिनेट'। प्रतिनिधि-सभा में १६४ सदस्य होते हैं, जिन को तीन साल के लिए पुर्तगाल के सारे मर्द नागरिक चुनते हैं। सिनेट में ७१ सदस्य होते हैं, जिन को छः साल के लिए देश भर की चुंगियां चुनती हैं। सिनेट के आधे सदस्यों का हर तीसरे साल चुनाव होता है। प्रतिनिधि-सभा के उम्मीदवारों की २५ साल उम्र और सिनेट के उम्मीदवारों की ३५ साल उम्र होने की शर्त रक्खी गई है। आर्थिक मसविदे, सरकारी मसविदे और जल और थल सेना के संगठन से संबंध रखने वाले मसविदे पहले प्रतिनिधि-सभा के सामने पेश होते हैं। सिनेट को सारे मसविदों के संशोधन और नामंज़ूर करने का अधिकार होता है। हर मसविदे की मंज़ूरी के लिए दोनों सभाओं के एकमत की ज़रूरत होती है, और दोनों सभाओं का एकमत करने के लिए, मत-भेद होने पर, दोनों सभाओं की सम्मिलित बैठक भी की जाती है। दोनों सभाओं से मंज़ूर हो जाने पर क़ानून प्रजातंत्र के प्रमुख के हस्ताक्षर से जारी किए जाते हैं। क़ानून नामंज़ूर करने का अधिकार प्रमुख को नहीं होता है। व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं में मिला कर राष्ट्र की सारी क़ानून बनाने की, व्यवस्थापक और शासन-सत्ता मानी गई है। मगर शासन-सत्ता का प्रयोग व्यवस्थापक-सभा एक जवाबदार मंत्रि-मंडल के द्वारा करती है। प्रजातंत्र की स्थापना होने के बाद कई बार व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाओं को लंबे-लंबे समय के लिए भंग भी किया जा चुका है।

कार्यकारिणी—पुर्तगाल प्रजातंत्र के प्रमुख का चुनाव, चार साल के लिए, व्यवस्थापक-सभा की दोनों सभाएं मिल कर करती हैं। प्रमुख पुर्तगाल का अधिकार-प्राप्त नागरिक और ३५ वर्ष से ऊपर की उम्र का होना चाहिए। एक काल पूरा हो जाने पर फिर दूसरे काल के लिए कोई प्रमुख नहीं चुना जा सकता है। प्रमुख मंत्रि-मंडल को नियुक्त और बरख़ास्त करता, व्यवस्थापक-सभा की सालाना और ख़ास बैठकें बुलाता, क़ानूनों को एलान और जारी करता और मंत्रि-मंडल के फ़रमानों को अमल में रखता है। प्रमुख व्यवस्थापक-सभा को मंत्रि-मंडल की सलाह से भंग भी कर सकता है। परदेशों से व्यवहार करने के लिए प्रमुख पुर्तगाल राष्ट्र का प्रतिनिधिस्वरूप होता है। मगर युद्ध की घोषणा करने, संधि करने और दूसरे राष्ट्रों से समझौते करने के लिए प्रमुख को पहले व्यवस्थापक-सभा की मंज़ूरी ले लेनी होती है; क्योंकि इन सारी बातों के लिए जवाबदार मंत्रि-मंडल ही माना जाता है।

मंत्रि-मंडल को राजनैतिक और क़ानूनी तौर पर भी सारे कामों के लिए जवाबदार माना जाता है। मंत्रियों को व्यवस्थापक-सभाओं की बैठकों में हाज़िर रहना पड़ता है और प्रधान-मंत्री को मंत्रि-मंडल की आम नीति के लिए जवाब देना होता है। पुर्तगाल के मंत्रि-मंडल मज़बूत, योग्य और टिकाऊ नहीं होते हैं। एक १९२० के साल में ही नौ

मंत्रि-मंडल बने और बिगड़े थे। बहुत-से छोटे-छोटे दलों से मिला कर मंत्रि-मंडल बनाए जाते हैं। इन दलों को अधिकतर चुनावों के फल लूटने की अधिक अभिलाषा रहती है और वह इतने छोटे-छोटे और कुसंगठित होते हैं कि न तो उन से मतदारों के समूह को ही कोई शिक्षा मिलती है और न मंत्रि-मंडल ही टिकाऊ और ज़ोरदार बन पाते हैं। व्यवस्थापक-सभा की चंचलता का खेल पुर्तगाल में जारी रहता है। एक सन् १९२६ ई० में ही पहले तो जेनरल कौस्टा ने सेना की सहायता से सरकार पर क़ब्ज़ा जमा लिया था और बाद में उस को निवार्सित कर के जेनरल केमेना ने सरकार को अपने हाथ में कर लिया था। सन् १९२८ ई० में प्रजा का मत लिए जाने पर प्रजा ने जेनरल केमेना की सरकार में अपना विश्वास अवश्य ज़ाहिर किया था। मगर इस सरकार ने प्रजा का मत लेने से पहले ही अपने विरोधियों को ख़त्म कर दिया था, जिस से प्रजा को किसी और के पक्ष में मत देने का मौक़ा नहीं था। यह सरकार एक प्रकार से निरी सेना की निरंकुश-शाही है। अस्तु, इस को भी टिकाऊ नहीं कहा जा सकता है। सन् १९३० ई० में पुर्तगाल के सारे अनुभवी शासकों का, सरकार की तरफ़ से राजधानी लिसबन में, साधारण राजनैतिक जीवन को पुनः स्थापित करने का विचार करने के लिए एक सम्मेलन बुलाया गया था। मुमकिन है इस सम्मेलन के परिणामस्वरूप पुर्तगाल में एक मज़बूत सरकारी दल क़ायम हो जाय। जो अपने हाथ में जेनरल केमेना की सरकार को लेकर भविष्य में उस की नीति पर क़ानूनी रीति से अमल शुरू करे।

राजनैतिक दल—पुर्तगाल के मुख्य राजनैतिक दलों में एक 'राजाशाही दल' है जो पुर्तगाल में पुनः राजाशाही स्थापित करने का इरादा रखता है। दूसरा कैथौलिक लोगों का एक 'कैथौलिक दल' है। तीसरा एक 'राष्ट्रीय दल' है, जिस में संकुचित विचारों के प्रजातंत्रवादी होते हैं। चौथा एक 'उदार प्रजातंत्र संघ' नाम का दल है, जिस में उदार विचारों के प्रजातंत्रवादी होते हैं। पाँचवां एक 'आर्थिक हितों की संघ' नामक दल है, जिसमें राष्ट्रीय और संकुचित प्रजातंत्र विचारों के व्यापारी लोग होते हैं। छठा 'प्रजातंत्र दल' है, जो प्रजातंत्रवादियों का दल है और जिस के गरम और नरम दो भाग हैं। एक 'समाजवादी दल' और दूसरा एक 'समष्टिवादी दल' भी है।

स्पेन की सरकार

राज-व्यवस्था—पुर्तगाल के पड़ोसी आइबेरियन पेनिन्सुला के दूसरे देश स्पेन की सरकार यूरोप की सब से आखिरी प्रजातन्त्र सरकार है, जिस ने प्रजातन्त्र का रूप सिर्फ़ सन् १९३१ ई० में धारण किया था। सन् १८७६ ई० से स्पेन में व्यवस्थापक राजाशाही चली आती थी। इस राज-व्यवस्था के अनुसार व्यवस्थापक सभा और मतदारों को जो कुछ सत्ता थी उस को सन् १९२३ ई० में १२ सितंबर के दिन जेनरल प्राइमो डे रिवेरा ने सेना की सहायता से अपने हाथ में कर लिया था। राजाशाही को क़ायम रक्खा गया था; मगर सरकार का काम एक डाइरेक्टरी के हाथों में आ गया था।

पुरानी राजाशाही राज-व्यवस्था देखने में काफ़ी उदार थी। इस राज-व्यवस्था के अनुसार क़ानून बनाने का अधिकार राजा और 'कौर्टेस' नाम की एक व्यवस्थापक-सभा को था। 'कौर्टेस' की दो सभाएं थीं एक 'प्रतिनिधि सभा' और दूसरी 'सिनेट'। दोनों सभाओं को बराबर के अधिकार थे। 'सिनेट' में तीन वर्ग के सदस्य होते थे। एक वर्ग को राजा ज़िंदगी भर के लिए नियुक्त करता था; दूसरा वर्ग अपने हक़ से सिनेट का सदस्य होता था; और तीसरे वर्ग को स्थानिक अधिकारी, गिरजों के अधिकारी, विश्व विद्यालय और दूसरी विद्वान संस्थाएं चुनती थीं। 'प्रतिनिधि सभा' में ४१७ सदस्य होते थे, जिन को देश के सारे मर्द नागरिक चुनते थे। मन्त्री गण व्यवस्थापक-सभा को जवाबदार होते थे। इस राज-व्यवस्था में प्रजा को मिलने-बैठने की स्वतंत्रता, अपनी तबियत के अनुसार शिक्षा लेने की स्वतन्त्रता, अख़बारी आज़ादी, व्यक्तिगत संरक्षण, अखंड गृह-स्वतन्त्रता और गुप्त

पत्र-व्यवहार के अधिकार भी दिए गए थे। मगर इस राज-व्यवस्था का जैसा उदार रूप लगता था वैसा व्यवहार में नहीं था। कई बार सेना की मदद से भी यह राज-व्यवस्था उल्टी-पुल्टी जा चुकी थी। अस्तु, उस की स्थिरता में लोगों का बहुत विश्वास नहीं रहता था। स्पेन के क़रीब आधे लोग अपढ़ थे; अख़बार प्रजासत्ता को क़ायम रखने के अयोग्य थे; देश के एक भाग को दूसरे से संबद्ध रखना मुश्किल था क्योंकि रास्ते ख़राब थे; और देश के दोनों बड़े दल—अनुदार दल और उदार दल—आपस के झगड़ों के कारण बहुत-से छोटे-छोटे फ़िरक़ों में बँटे हुए थे। यह सारे फ़िरक़े और दल समाजवादियों के मुक़ाबले के लिए अवश्य मिल कर एक हो जाते थे। मगर आम तौर पर मंत्रि-मंडल जल्दी-जल्दी बनते और बिगड़ते थे, और स्पेन की राजनीति में हमेशा गड़बड़ और अस्थिरता रहती थी।

इस अस्थिर राजनीति का अंत सन् १६२३ ई० में सेना ने कर दिया। सन् १६१८ ई० से सैनिक अधिकारियों के सेना के हितों की रक्षा और सैनिक संगठन में उन्नति करने के बहाने से गुट्ट बन रहे थे। सन् १६२१ ई० में मोरोक्को की घटनाओं के बाद से सेना ने व्यवस्थापकी राज-व्यवस्था का खुला विरोध शुरू कर दिया। १३ सितंबर, सन १६२३ को स्पेन के राजा ने आख़िरकार चालू मंत्रि-मंडल से इस्तीफ़ा ले लेने की जेनरल प्राइमो डे रिवेरा की माँग स्वीकार की और मंत्रि-मंडल को बरख़ास्त कर के राजा ने अपने फ़रमान से प्राइमो डे रिवेरा की अध्यक्षता में जेनरलों की एक अस्थायी डाइरेक्टरी को सरकार का भार सौंप दिया। इस अस्थायी डाइरेक्टरी को राजा की मंज़ूरी के लिए ऐसे फ़रमान बना कर पेश करने का हक़ माना गया था जो डाइरेक्टरी की समझ में प्रजा के हित के लिए ज़रूरी हों और इन फ़रमानों की, जब तक कि 'कौर्टेस' उन को तबदील कर के राजा से मंज़ूर न करा ले तब तक, साधारण क़ानूनों की तरह ताक़त मानी गई थी। रिवेरा ने स्पेन का सार्वजनिक जीवन शुद्ध करने के लिए तीन महीने की मुहलत माँगी और फ़रमान निकाल कर उस ने 'कौर्टेस' और मंत्रि-मंडल को भंग कर दिया और राज-व्यवस्था में प्रजा को दिए गए सारे अधिकारों को भी ख़त्म कर दिया। सिर्फ़ युद्ध और परराष्ट्र-विभाग के दो मंत्रियों को उस ने क़ायम रक्खा। पुराने दलों को इस सैनिक अधिकार का विरोध करने की हिम्मत नहीं पड़ी। रिवेरा ने यह भी घोषणा की थी कि उस का कार्य-क्रम पूरा करने के लिए सात वर्ष की ज़रूरत होगी और डाइरेक्टरी ने उस के कार्य-क्रम को मंज़ूर कर के, सन् १६२४ ई० में 'धर्म, देश और राजा' के झंडे के नीचे 'स्वदेशभक्त संघ' नाम के एक नए दल की स्थापना की थी।

तीन दिसंबर सन् १६२५ ई० को रिवेरा ने एक फ़रमान निकाल कर स्पेन में फिर डाइरेक्टरी भंग कर के मंत्रि-मंडल की स्थापना की। मगर मंत्रि-मंडल को क़ायम कर के भी रिवेरा ने पुनः व्यवस्थापकी सरकार क़ायम नहीं की। केवल देश का सामाजिक और आर्थिक संगठन सुधारने के विचार से उस ने सैनिक शासन के स्थान में अहलेक़लम शासन क़ायम करने का निश्चय किया था। यह सरकार भी उतनी ही कड़ी और निरंकुश थी जितनी पहली सैनिक सरकार, और मंत्रियों के फ़रमानों की भी वैसी ही भरमार क़ायम

रही। परंतु धीरे-धीरे रिवेरा की समर्थक शक्तियां क्षीण होने लगीं थीं। सेना और पादरियों को प्रजा के प्रतीकार का भय हो उठा था, और व्यापारी लोग व्यापार की कमी की शिकायतें करने लगे थे। अस्तु, उदार दल को सरकार से मिलाने का प्रयत्न किया गया। मगर वह सफल नहीं हुआ। सन् १६३० ई० में रिवेरा का विरोध इतना बढ़ गया कि राजा को रिवेरा से आखिरकार इस्तीफ़ा रखा लेना पड़ा।

जेनरल बेरेंगुइर की अध्यक्षता में नई सरकार बनी। मगर सरकार के ढंग में कोई खास सुधार करने का प्रयत्न नहीं किया गया और राजनैतिक असंतोष क़ायम रहा। देश भर में इधर-उधर बराबर हड़तालें होती रहीं, जिन को रोकना असंभव हो गया। विद्यार्थियों में भी राजनैतिक असंतोष फैला और विश्व-विद्यालयों में आए दिन हड़तालें होने लगीं। इस असंतोष को दूर करने के लिए नए मंत्रि-मंडल ने व्यवस्थापक-सभा के आम चुनाव का मार्च सन् १६३१ में वादा किया। उद्योगी क्षेत्रों में फिर भी उत्पात होते रहे। १७ दिसम्बर, को वायुयानों के एक अड्डे पर विद्रोह हो गया जो कहा जाता है कि क्रांति का प्रयत्न था। मगर इस विद्रोह को फ़ौरन दबा दिया और बहुत-से प्रजातंत्र-वादियों को पकड़ कर जेलों में डाल दिया गया। जनवरी में 'उदार दल' समाजवादी दल और प्रजातंत्रवादियों ने एलान किया कि वे आनेवाले सरकारी चुनावों में भाग न लेंगे। अस्तु, फ़रवरी में ही एक शाही एलान के द्वारा पुरानी राज-व्यवस्था में दिए गए अधिकारों को चुनाव के ज़माने तक के लिए क़ायम कर दिया गया, और 'उदार दल' ने चुनाव में भाग न लेने का अपना निश्चय बदल दिया। मगर १२ फ़रवरी को ही 'उदार दल' की तरफ़ से सरकार से कह दिया गया कि चुनाव के बाद नई व्यवस्थापक-सभा बैठने पर 'उदार दल' एक 'व्यवस्थापक सम्मेलन' बुलाने की माँग रक्खेगा। इस खबर को पाते ही १४ फ़रवरी को राजा ने एक दूसरा फरमान निकाल कर आनेवाले चुनाव को बंद कर दिया और मंत्रि-मंडल ने इस्तीफ़ा रख दिया।

अखबारों की आज़ादी पर फिर सरकारी अंकुश लगा दिया गया। मंत्रि-मंडल बनाने के कई प्रयत्नों के बाद आखिरकार १८ फ़रवरी को, राजाशाही के पक्षपाती नेताओं की एक सभा में, एक 'संयुक्त दल' की स्थापना की गई, जिस ने अपनी सेवा राजा के क़दमों में रक्खी और ऐडमिरल अज़नार की अध्यक्षता में एक नया मंत्रि-मंडल क़ायम हुआ। इस मंत्रि-मंडल के ज़माने में, १२ अप्रैल को, सारे स्पेन में चुंगियों के चुनाव हुए, जिस में 'प्रजातंत्रवादियों' को हर जगह अभूतपूर्व सफलता मिली। इस नई हवा से पैदा हुई परिस्थिति पर विचार करने के लिए मंत्रि-मंडल की जल्दी-जल्दी बैठकें हुई और राजा के राज त्याग की अफ़वाहें फैलने लगीं। आखिरकार १४ अप्रैल को ७ बजे ब्रॉडकास्ट पर एलान हुआ कि, स्पेन में प्रजातंत्र की विजय हुई है और सरकारी दफ़्तरों पर प्रजातंत्रवादियों का शांतिमय क़ब्ज़ा हो गया है। इस एलान के एक घंटे के बाद राजा अपने कुटुंब के साथ स्पेन छोड़ कर चला गया। मगर दूसरे दिन उस की तरफ़ से एलान निकला कि उस ने अपने किसी अधिकार का त्याग नहीं किया है, और देश छोड़ कर वह सिर्फ़ खून-खराबा बचाने के लिए चला गया है।

डौन अल्काला ज़ेमोरा की अध्यक्षता में एक 'काम-चलाऊ सरकार' बना ली गई। इस सरकार को बहुत-से शासन, आर्थिक और धार्मिक संकटों का सामना करना पड़ा और उस ने सारी समस्याओं को सफलता से सुलझाया। अगस्त में नई राज-व्यवस्था का मसविदा 'कौर्टेस' के सामने पेश हुआ और उस पर कई हफ़्ते तक उस सभा में विचार होता रहा। अक्टूबर में कौर्टेस ने जेजुइट-पंथी लोगों को स्पेन से निकाल देने और उन की माल और जायदाद जब्त कर लेने तथा दूसरे धार्मिक पंथों पर सरकार की कड़ी देख-रेख रखने और उन की जायदाद भी ज़ब्त कर ली जाने की संभावना का और व्यापार, उद्योग और शिक्षा के कामों में उन को भाग न लेने-देने का निश्चय किया। इस पर डौन अल्काला ज़ेमोरा और गृह-मंत्री ने इस्तीफ़ा दे दिया और डौन मेन्युइल अज़ाना की अध्यक्षता में दूसरी नई सरकार बनी। २० नवंबर, को एक प्रस्ताव पास कर के 'कौर्टेस' ने स्पेन के भूतपूर्व राजा को देशद्रोह का अपराधी ठहराया और उस को मुजरिम क़रार दे कर उस की जायदाद ज़ब्त कर ली। नवंबर के अंत में नई राज-व्यवस्था 'कौर्टेस' ने मंज़ूर कर ली। बारह दिसंबर को डौन अल्काला जेमोरा को छः साल के लिए स्पेन के नए प्रजातंत्र का प्रमुख चुन लिया गया। दूसरे ही दिन काम चलाऊ सरकार ने इस्तीफ़ा रख दिया और १५ दिसंबर को डौन आज़ाना की अध्यक्षता में स्पेन का प्रथम व्यवस्थापक मंत्रि-मंडल बना।

पारिभाषिक शब्दों की सूची

Adjournment of the House	स्थगित, सभा स्थगित
Administration	शासन
Administrative	शासकी
Alliance	मैत्री
Aristocracy	कुबेरशाही, अमीरशाही
Aristocratic	कुबेरपंथी, अमीरपंथी या अमीरी
Article, Act	धारा
Auditor	हिसाब-परीक्षक
Authority	सत्ता या सत्ताधारी
Bill	मसविदा
Bourgeois, Middle Class	मध्यम वर्ग
Cabinet or Council of Ministers	मंत्रिमडल
Capitalism	पूँजीशाही
Centralisation	केंद्रीकरण, केंद्रीयता
Class struggle or Class war	वर्गसंघर्ष, वर्गयुद्ध या वर्गसंग्राम
Compulsory Referendum	लाचारी हवाला
Communism	समष्टिवाद
Communist	समष्टिवादी
Conservative	पुरातन, दक्षिणानुगी, अनुदार
Constituency	निर्वाचन या चुनावक्षेत्र
Constituent Assembly	व्यवस्थापक सम्मेलन
Constitution	राजव्यवस्था
Constitutional Monarchy	व्यवस्थापकी राजाशाही
Crown	राजछत्र या राजगद्दी
Decree	फ़रमान, हुक्म
Delegate, Representative	प्रतिनिधि
Delegation	प्रतिनिधि-मंडल या प्रतिनिधित्व
Democracy	प्रजासत्ता, प्रजासत्तात्मक राज, या प्रजाशाही
Democratic	प्रजासत्तात्मक
Dictatorship of the Proletariat	निरंकुश मजदूर पेशाशाही
Direct Democracy.	प्रत्यक्ष या सीधी प्रजासत्ता

Direct Election	प्रत्यक्ष निर्वाचन या सीधा चुनाव
Dissolve	सभाभंग
Dual Monorchy	द्वराजाशाही
Executive	कार्यकारिणी, कारगुज़ार
Executive Committee	कार्यकारिणी, कार्यवाहक, कारगुज़ार समिति
Executive Officer	कारगुज़ार हाकिम या अफ़सर
Executive Power	कार्यकारिणी सत्ता
Feudalism	नवाबशाही, नवाबी
First Ballot	पहला पर्चा
Freedom of the Press	लेख स्वतंत्रता, लिखने की या अख़बारी आज़ादी
Freedom of Speech	वाक् स्वतंत्रता, बोलने की आज़ादी
Free Trade	स्वतंत्र व्यापार
Fundamental	मूल
Indirect Election	परोक्ष निर्वाचन या टेढा चुनाव
Initiative	प्रस्तावना
Judiciary	न्यायसत्ता
Jurisdiction	अधिकार सीमा
Labour Minister	श्रमसचिव
Law, Act	क़ानून
Learned profession	विद्वानपेशा
Learned Societies	विद्वान संस्थाएं
Left Parties	प्रजापक्षीदल या गरमदल
Legislative Power	धारा-सत्ता या क़ानून बनाने की सत्ता
Liberalism	उदारवाद
Limited Monarchy	सीमित राजाशाही
Lower Chamber	निचली सभा
Majority	बहुसंख्या, बहुमत
Migration	प्रवास
Militia	जनसेना
Ministerial party	मंत्रिदल
Ministry	मंत्रिमंडल
Minority	अल्पसंख्या
Monarchy	राजाशाही
Money Bill	मालमसविदा, अर्थात् मसविदा

Monopoly	इजारा
Motion of Adjournment	चर्चास्थगित प्रस्ताव
National Minorities	राष्ट्रीय अल्प-संख्याएं
Optional Refrendum	इख्तियारी हवाला
Ordinances	फ़रमानी, क़ानून, फ़रमान
Parliament	व्यवस्थापक-सभा
Parliamentary	व्यवस्थापकी
People's Commissaries	जनसंचालक
Popular Government	प्रजाराज, जनराज, जनसत्ता
Prohibition	शराबबंदी
Proletariat	उद्योगीवर्ग, मज़दूरपेशा
Promulgate the Law	क़ानून ऐलान या जारी करना
Proportional Representation	अनुपात-निर्वाचन
Prorogue	सभा-विसर्जन
Public Opinion	जनमत
Pure Democracy	ख़ालिस प्रजासत्ता या प्रजाशाही
Radical	गरम
Reactionary	उल्टी बुद्धि
Referendum	हवाला
Reformist	सुधारी
Republic	प्रजातंत्र राज्य, प्रजातंत्र
Right Parties	सरकार पक्षीदल या नरमदल
Representative Government	प्रतिनिधि सरकार
Residuary Power	शेष सत्ता
Responsible Government	जवाबदार या ज़िम्मेदार सरकार
Settlement	निवास
Social welfare	समाजहित
Socialism, Socialist State	समाजशाही
Socialists	समाजवादी
Standing Army	स्थायी सेना
Suffrage, Franchise	मताधिकार
Supreme Authority	सर्वोपरि सत्ता, सर्वोपरि सत्ताधारी
Trade Union	मज़दूरसंघ या उद्योगसंघ
Unanimous	सर्वमत
Universal Suffrage	सार्वजनिक मताधिकार